विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र

र्ष २३ | जनवरी १९४७ ई० | पौष २००३ | दयानन्दाब्द १२२ | अङ्क ११

वैदिक प्रार्थना

ओश्म् मयीदमिन्द्र इन्द्रियं दधात्वस्मान् रायो
वानः सचन्ताम्। अस्माकं सन्त्वाशिषः सत्याः
ना नः सन्त्वाशिषः॥ यजु० २।४७

अर्थ—(इन्द्रः) परमेश्वर (मयि) मुझ में
म् इन्द्रियम्) इस आत्मिक शक्ति अथवा
हव बल को (दधातु) धारण करावे (अस्मान्)
(रायः) ज्ञानादि ऐश्वर्य और (मघवानः)
र्य सम्पन्न सज्जन (सचन्ताम्) प्राप्त हों।
स्माकम् आशिषः) हमारी कामनाएं (सत्याः
) सत्य युक्त ही हों।

विनयः—हे जगदीश्वर! आप हमें उत्तम शारीरिक और आत्मिक बल प्रदान करें। आपकी कृपा से हमें ज्ञानादि उत्तम ऐश्वर्य की प्राप्ति हो और ऐश्वर्य सम्पन्न श्रेष्ठ महानुभावों की सङ्गति भी हमें प्राप्त होती रहे। उनका हमारे साथ प्रेम मय सम्बन्ध हो। हे परमेश्वर! हम चाहते हैं कि हमारी सब कामनाएं सत्य युक्त और अतएव आपकी कृपा से सफल हों जिससे हम पूर्णतया सत्यनिष्ठ बनें।

वैदिक भावना

मातृभूमि के प्रति

[अथर्व० काण्ड १२, सूक्त १ से]

(ले०—प्रो० रामनाथ जी वेदालङ्कार, गुरुकुल कांगड़ी)

१ पृथिवी नः प्रथतां राध्यतां नः।
हमारी मातृ भूमि हमारे लिये बहुत विशाल और समृद्ध हो।

२ सा नो भूमिर्गोष्वप्यन्ने दधातु।
हमारी मातृभूमि हमें गौओं और अन्न के मध्य में ला बिठाये।

३ भग वर्चः पृथिवी नो दधातु।
हमारी मातृभूमि हमें भरपूर ऐश्वर्य और तेज प्रदान करे।

४ विश्वम्भरा वसुधानी प्रतिष्ठा, हिरण्यवक्षा जगतो निवेशनी।
हमारी मातृभूमि विश्वम्भरा हो, धन की खान हो, प्रतिष्ठित हो, स्वर्णवक्षा हो, जगत् की आश्रय हो।

५ सा नो मधु प्रिय दुहाम।
हमारी मातृभूमि हमारे लिये मधुर और प्रिय वस्तुओं की कामधेनु हो।

६ सा नो भूमिस्त्विषिं बलं राष्ट्रे दधातूत्तमे।
हमारी मातृभूमि राष्ट्र मे कान्ति और बल भर देवे।

७ सा नो भूमिर्भूरिधारा पयो दुहाम्।
हमारी मातृभूमि हमे भूरि भूरि धाराओं में दुग्ध पान कराये।

८ सा नो भूमिर्विसृजतां माता पुत्राय मे पयः
माता भूमि मुझ पुत्र को अपना पयःपान करावे।

९ गिरयस्ते पर्वता हिमवन्तोऽरण्यं ते पृथिवी स्योनमस्तु।
हे मातृभूमि! तेरी पहाड़ियां, तेरे हिमाच्छादित पर्वत, तेरे वन-उपवन हमारे लिये सुखदायी हों।

१० माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः।
भूमि मेरी माता है, मै उसका पुत्र हूँ।

११ सा नो भूमिर्वर्धयद् वर्धमाना।
मेरी मातृभूमि उन्नति के शिखर पर आसीन हो और मुझे भी उन्नत करे।

१२ वाचो मधु पृथिवि धेहि मह्यम्।
हे मातृभूमि मुझे वाणी का माधुर्य प्रदान कर।

१३ शिवा स्योना मनुचरेम् विश्वहा
कल्याणकारिणी, सुखदायिनी अपनी मातृभूमि के हम सदा सेवक बनें।

१४ सा नो भूमे प्ररोचय हिरण्यस्येव संदृशि।
हे मातृभूमि! तू हमे सोने सा चमका दे।

१५ अग्निवासाः पृथिव्यसितज्ञूः।
तेजस्विता की साड़ी ओढे, स्वतन्त्रता का पाठ पढ़ाने वाली मेरी मातृभूमि है।

१६ सा नो भूमिः प्राणमायुर्दधातु।
मेरी मातृभूमि मुझे प्राण और दीर्घायुष्य प्राप्त करावे।

१७ जरदष्टिं मा पृथिवी कृणोतु।
मातृभूमि मुझे चिरंजीवी करे।

१८ पृथिव्या अकरं नमः।

मातृभूमि को मेरा नमस्कार हो ! वन्दे मातरम् !!

१९ मा व्यथिष्महि भूम्याम्।
अपनी मातृभूमि पर रहते हुए हम कभी दुःख न पावें।

२० ऊर्जं पुष्ट बिभ्रतीमन्नभाग, घृत त्वाभिनिषीदेम भूमे।
हे मातृभूमि ! बल, पुष्टि, अन्न, घी से भरी हुई तुझ मा की गोदी मे हम बैठें।

२१ पवित्रेण पृथिवीमोत्पुनामि।
हे मातृभूमि ! पवित्र विचार से मैं अपने को पुनीत करता हूँ।

२२ मा न पश्चान्मा पुरस्तान्नुदिष्ठा, मोत्तरा दधरादुत।
हे मातृभूमि ! पश्चिम, पूर्व, उत्तर, दक्षिण किसी भी दिशा में तू हमें अपनी गोद से धक्का मत दे।

२३ स्वस्ति भूमे नो भव।
हे मातृभूमि ! तू हमारे लिये कल्याण कारिणी हो।

२४ सा नो भूमिरादिशतु यद्धन कामयामहे।
जिस धन की हमें कामना है हमारी मातृभूमि उसे लाकर हमें दे देवे !

२५ सा नो भूमि प्रणुदता सपत्नान्।
हमारी मातृभूमि शत्रुओं को दूर भगादे।

२६ असपत्न मा पृथिवी कृणोतु।
मातृभूमि मुझ शत्रु रहित कर देवे।

२७ भूम्यै पर्जन्यपत्न्यै नमोऽस्तु
पर्जन्य पालिता मातृभूमि को मेरा नमस्कार है

२८ मणिं हिरण्य पृथिवी ददातु मे।
मातृभूमि मुझे मणि-मुक्ता, हिरण्यादि देवे।

२९ वसूनि नो वसुदा रासमाना देवी दधातु सुम स्यमाना।
हमारी वसुदा मातृभूमि हमें धन धान्य प्रदान करती हुई प्रसन्न मन से हमारा पालन करे।

३० सहस्र धारा द्रविणस्य मे दुहाम्।
मातृभूमि मेरे लिये धन की सहस्र धारायें दुह देवे।

३१ यच्छिव तेन नो मृड।
हे मातृभूमे ! जो शिव है उससे हमे सुखी कर।

३२ पिशाचान्त्सर्वा रक्षासि तानस्मद् भूमे यावय।
जो पिशाच हैं, राक्षस हैं उन सबको हे मातृ भूमि तू हम से दूर कर दे।

३३ चारु वदेम ते।
हे मातृभूमि ! हम सब जगह तेरा यशोगान करें।

३४ उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्य सन्तु पृथिवि प्रसूता।
हे मातृभूमि ! तेरी गोदिया हमारे लिये आरोग्यदायिनी, असन्तापकारिणी हों— हम तेरी सन्तान हैं।

३५ वय तुभ्य बलिहृत स्याम
हे मातृभूमि हम तेरे हित बलिदान हो जावें।

३६ भूमे मातर्निधेहि मा भद्रया सुप्रतिष्ठितम्।
हे मातृभूमि तू हमे भली प्रकार सुप्रतिष्ठित बनाये रख।

३७ श्रिया मा धेहि भूत्याम्।
हे मातृभूमि ! तू मुझे शोभा और ऐश्वय की गगा मे नहला दे।

———

अध्यात्म सुधा

सच्ची आत्मिक उन्नति के साधन

(लेखक—वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर निवासी एक वीतराग महात्मा)

नव० १९४६ के अङ्क से आगे

(१८) भलाई के नवीन अनुभव-पाप से मुक्ति ज्ञान, शोक और पश्चात्ताप का अभाव, लोभ कषाय से निवृत्ति, जिन दशाओं और अवस्थाओं में पहले महान् दुःख होता था, उनमें परम आनन्द का होना, मन को सदैव शान्त रखना। चिन्ता, भय, शंका, घृणा, द्वेष, शत्रुता से बचे रहना, आपत्ति के समय संतोष रखना, जो लोग शत्रु हैं उनके साथ प्रेम रखना, बुराई के बदले भलाई करना जिसमें सब गुण पाये जावें, वह उत्कृष्ट जीवन है।

(१९) अच्छे आदमी का चाहे शरीर बन्धन में हो, परन्तु उस का मन स्वच्छन्द रहता है चाहे शरीर मे रोग हो, परन्तु हृदय मे हर्ष और आनन्द रहता है। उत्कृष्ट जीवन का विकाश क्रमशः होता है।

मन को सदैव शांत रखना चाहिये, तुम्हारे चारों ओर कितना ही विषाद हो और कितने ही क्लेश जन्य कारण हों, परन्तु उस दशा में भी तुम्हारे हृदय में अशान्ति न होनी चाहिए। जहां वासना है वहां शांति नहीं और जहां शान्ति है वहां वासना नहीं। ये दोनों साथ साथ नहीं रह सकतीं।

(२०) निःसन्देह वह मनुष्य वीर है जो दूसरे पर विजय प्राप्त करता है परन्तु वह उससे कहीं अधिक वीर है और सच्चा वीर है जो अपने आपको वश में कर लेता है और अपने ऊपर विजय प्राप्त कर लेता है। जिस मनुष्य ने दूसरे पर विजय प्राप्त की है सम्भव है कि कभी स्वयम् परास्त होजावे, परन्तु जिस मनुष्य ने अपनी इन्द्रियों को वश में कर लिया है और अपने ऊपर विजय प्राप्त करली है उसकी कभी पराजय नहीं हो सकती। अपने ऊपर विजय प्राप्त करने से पूर्ण और परम शान्ति प्राप्त होती है। यदि किसी मनुष्य ने काम, क्रोध, द्वेष, अहंकार, स्वार्थ और लोभ को जीत लिया है तो उसने संसार को जीत लिया है, शान्ति के शत्रुओं को नष्ट कर दिया है और शांति उसको प्राप्त हो गई है॥

(२१) यदि कोई मनुष्य अपने पापमय विचारों को त्याग दे,तो सारी दुनियां उसके आगे नम्र हो जावेगी और उसकी सहायता करने को तय्यार रहेगी। यदि कोई मनुष्य निराशा और निर्बलता के विचारों को त्याग दे, तो उसको चारों ओर से सबल विचारों को दृढ़ करने के मौके मिलेंगे। हर एक मनुष्य को उचित है कि अपना निश्चित उद्देश्य बनाले और उसकी पूर्ति में सर्वदा उद्योग करता रहे। हमेशा उसी का विचार करते रहना चाहिये।

(२२)मनुष्य को उचित है कि उद्देश्य को अपना परम कर्तव्य समझे और उसकी प्राप्ति में खूब प्रयत्न करे यहां तक कि अपने जीवन को भी उसके निमित्त अर्पण करदे। हिम्मत के आगे काम भी आसान हो जाता है। शांति आत्मोन्नति का सबसे अन्तिम पाठ है। वह वही वस्तु है जिसे

जीवन का फूलना और आत्मा का फलना कहते हैं। शांति मय जीवन के सामने रुपया पैसा कमाने की इच्छा नीच और तुच्छ जान पड़ती है, शांति का जीवन वह जीवन है कि सचाई के समुद्र की तह में लहरों से इतना नीचा रहता है कि वहां सदैव सुनसानी बनी रहती है और आंधी तूफ़ान का गुज़र भी नहीं होता। जिस मनुष्य ने अपने मन को अपने वश में कर लिया है और अपने विचारों को पवित्र बना लिया है वही मनुष्य भूकम्पों पर विजय प्राप्त कर सकता है अर्थात् अपनी कषाय और वासनाओं को दबा सकता है कषाय और वासनायें आत्मा के गुण को नाश करदेती हैं और उसे नरक के गढ़े में डाल देती हैं ॥

(२३)अरे कषाय और दुर्वासनाओं के वशीभूत हुई आत्माओ! और चिन्ता में पड़े हुये भ्राताओं तुम चाहे कहीं हो और चाहे किसी अवस्था में हो, इस बात को अच्छी प्रकार जान लो कि जीवन रूपी समुद्र में सुख के टापू लहरा रहे हैं और तुम्हारे आदर्श का प्रकाशमान तट तुम्हारे आने की बाट देख रहा है तुम अपने मन रूपी पतवार को दृढ़ता से पकड़े रखो, अर्थात् अपने मन को चंचल और चलायमान न होने दो ॥

(२४) तुम्हारी आत्मरूपी नौका के भीतर सबसे बड़ा नाविक विश्राम कर रहा है वह केवल सो रहा है उसे जगाओ अर्थात् अपने मन को जीतो और उसके अन्दर जो परमात्मा मौजूद है उसकी ओर देखो। इन्द्रिय में बल है। सद्विचारों में विजय है और शांति में शक्ति है अपने मन से कहो कि शांत हो, शांत हो, शांत हो, जब तक मनुष्य स्वार्थ युक्त विचारों में डूबता रहता है तब तक वह कदापि सुखी और संतोषी नहीं हो सकता और जब तक मनुष्य निःस्वार्थ भाव में रहता है तब तक वह कभी दुःखी नहीं हो सकता ॥

(२५)दुःख मनुष्य के लिये वही काम करता है जो अग्नि स्वर्ण को शुद्ध करने में करती है जो मनुष्य विशुद्ध है उसे क्या दुःख हो सकता है? जिस प्रकार सोने को तपाने से उस में से खोट और मल निकल जाता है उसे फिर आग में तपाने की ज़रूरत नहीं रहती वैसे ही जो मनुष्य पवित्र, विशुद्ध, निर्दोष और निष्पाप है उसे दुःख हो ही नहीं सकता। मनुष्य में कारण के बदलने की शक्ति अवश्य है परन्तु यदि वह कार्य को बदलना चाहे तो नहीं बदल सकता। मनुष्य स्वयं अपने लिये दुःख उत्पन्न करता है कार्य में हानि पहुंचाने की शक्ति नहीं है कार्य से यदि हानि पहुंचती है तो केवल उसके करने वाले को न कि दूसरे को ॥

उदाहरण—जिस मनुष्य की निन्दा की जाती है वह वस्तु के स्वभाव से अपरिचित होने के कारण आवेश में आजाता है और इस बातका भरसक प्रयत्न करता है कि किसी प्रकार उस निन्दा को मिटा दे। परिणाम यह होता है कि निन्दा को रोकने के स्थान में उसे वह मनुष्य सत्य का रूप दे देता है। उसे निन्दा सुन कर जो दुःख होता है वह निन्दा से नहीं, बल्कि इस बात से कि निन्दा को उसने किस भाव से ग्रहण किया है। विजयी (इन्द्रियों पर क़ाबू पाये हुए, ज्ञानी) मनुष्य को दूसरे की करनी से कुछ भी दुःख नहीं होता, जिस प्रकार सूर्य पर धूल फेंकने से कोई सूर्य को गंदला नहीं कर सकता। इसी प्रकार विजयी मनुष्य को कोई हानि नहीं पहुंचा सकता। वह

इन बातों की परवा भी नही करता कि लोग मेरी प्रशंसा करें अथवा निन्दा।

बुद्धदेव भी इसी अवस्था की प्राप्ति के लिये नित्य अपने चेलों कोउपदेश दिया करते थे कि जिस मनुष्य के मन मे यह भावना बनी हुई है कि मुझे अमुक मनुष्य ने धोखा दिया, अमुक ने मेरा निरादर किया, वह अभी विजयी नहीं हुआ, उसने अभी सत्य को प्राप्त नहीं किया।

(२६) बुरी आदतों को छोड़ने और उनके स्थान मे अच्छी आदतों को ग्रहण करने में समय की ही आवश्यकता है यदि धैर्य और दृढ़ता के साथ श्रम और उद्योग किया जायगा तो सफलता अवश्य होगी।

धर्म मार्ग को ग्रहण करते ही कोई मनुष्य धर्मात्मा नहीं बन सकता, किन्तु धीरे धीरे उस अवस्था को प्राप्त करता है और प्रायः उस अवस्था की प्राप्ति के लिये समय समय पर उसे अनेक कष्ट भी सहन करने पड़ते हैं।

महापुरुष निर्धनता को मानसिक उन्नति का मुख्य कारण समझते हैं उनकी निर्धनता सबको प्रिय और सुन्दर मालूम होती है यहा तक कि निर्धन साधु सन्यासियों को देखकर बड़े बड़े धनी मानी भी उनका आदर करते हैं इससे सिद्ध होता है कि निर्धनता मे बुराई का कारण नहीं है। मूर्ख मनुष्य अपना तथा दूसरों का सुख केवल बाहरी पदार्थों मे ही ढूढा करते हैं परन्तु यह उनका भ्रम है।

सासारिक पदार्थों से मनुष्य को कभी स्थायी सुख नहीं मिल सकता, और न इनसे ज्ञान ही प्राप्त हो सकता है पाप पक मे लिप्त शरीर कभी सुख और शान्ति नहीं पहुंचा सकता, इसके विपरीत ज्ञानी मनुष्य इस बात को भली भांति समझते हैं कि जब तक अपने ऊपर अधिकार नहीं प्राप्त हो जाता, तब तक सच्चा सुख नहीं मिल सकता। आत्म विजय करने से मनुष्य मानसिक राज्य का अधिपति बन जाता है और कुत्सित विचारों के दूर करने से वह पूर्ण सुख और शान्ति का भोग करता है।

आत्म उन्नति करते करते मनुष्य उन महात्माओं जैसा बन जाता है जिन्होंने अज्ञान और मानसिक विकारों को चूर चूर कर दिया है,

(२८) लोभ लालच से आत्म रक्षा करने की शक्ति भी मनुष्य मे नहीं रहती, और न वह शांति ही रहती है जो उस मनुष्य मे पाई जाती है जिसका मन भलाई मे भीगा रहता है। एक दिन अपना रोजाना अभ्यास न करने से तो अधिक हानि नहीं होगी, परन्तु दूसरे दिन उसका चित पर जो असर पड़ता है वह सचमुच भयंकर है अरुचि, बल और उत्साह की कमी पूरी होना कठिन होजाता है। बस ऐसा ही प्रत्येक दैनिक आदत के विषय मे समझो।

(२९) आत्मा, परमात्मा, इसलोक और परलोक सम्बन्धी प्रश्नों को हल करने का वास्तविक साधन केवल दर्शन शास्त्रों का पाण्डित्य नहीं है। इनमे उलझ कर मनुष्य जीवन भर अपने सर को खुजलाता हुआ सम्भव है कि उपरोक्त गूढ़ प्रश्नों के रहस्य को जरा भी न समझ सके। इस मार्ग का सच्चा पथ प्रदर्शक तो स्वयम् किया हुआ अनुभव ही है। अपने विचार द्वारा अनुभव करने पर आध्यात्मिक प्रश्न जितनी जल्दी हल हो सके हैं उतने और प्रकार से नहीं हो सके। जीवन मरण के विकट प्रश्नों के सम्बन्ध में सम्भावनाय

की शरण लेना तो मानों मूर्खता ही है। वास्तविक सिद्धान्त को समझने के लिये न्याय और दर्शन शास्त्रों की लम्बी २ शृंखलाबद्ध तर्क पूर्ण सूत्रश्रेणी की इतनी आवश्यकता नहीं है। अनुभवी महात्माओं के पदों द्वारा इस विषय का जैसा ज्ञान प्राप्त हो सकता है वैसा कठिन शास्त्रों से नहीं। संसार के सभी बड़े बड़े महात्माओं ने इस प्रश्न को हल करने के लिये सरल और थोड़े शब्दों का उपयोग करना ही उचित समझा है।

(३०) अहंकार के कारण मनुष्य अपने मानसिक विकारों और वृत्तियो का गुलाम बन कर इन्ही को अपना रूप समझता है। जड़ जगत की चलती फिरती, उठती बैठती वस्तुएं मनुष्य के हृदय को अपनी ओर ऐसा आकर्षित कर लेती है कि चर्म चक्षुओ द्वारा दिखाई देने वाले इस ससार के परे क्या है इस बात की उसे सुध भी होने नहीं पाती अपने भविष्य को स्थिर करना और वैसा ही उसे बना लेना हर एक व्यक्ति के अधिकार मे है यदि विचारों की शुद्धि के कारण मनुष्य की चरित्र उन्नति की भावना न होती, तो ससार के सभी धर्म केवल विडम्बना मात्र ही होते। क्योकि हर एक धर्म के सबसे उत्तम भाग मे मन और हृदय दोनो को शुद्ध करने की चेष्टा की गई है आजकल के कुछ धर्म गुरु इस असली तत्व को भूल कर केवल बाह्य क्रिया काण्ड को ही धर्म के नाम से पुकारने लगे हैं किन्तु हमारे प्राचीन महा ऋषि हजारों सालों से मन वचन कर्म की शुद्धि को ही आत्म उन्नति का राज्य मार्ग बताते आये हैं।

बाहरी कर्म काण्ड को ही आत्म उन्नति का कारण समझ बैठना भूल है अपने हृदय की ओर निरन्तर ध्यान रखने से समझ मे आवेगा कि चित्त को वश करना कितना कठिन है, आत्म उन्नति के इच्छुक पुरुष को सच्चे मार्ग प्रदर्शक उपदेशक की जरूरत है। साधारण जन पूर्ण दुर्गम वन मे भूले हुये पथिक की तरह कभी इस ओर कभी उस ओर भटकते हुये जीवन काल के अन्त समय तक भी अपने आप को नहीं पहचान पाते इसीलिये वे बेचारे अपनी वासनाओं के दास बनकर हमेशा दुःखित हृदय रहकर चिन्ताओ और इच्छाओं की दहकती हुई अग्नि मे जला करते है। उन्हें यह विदित नहीं है कि सच्चा सुख इच्छाओं की पूर्ति मे नहीं, बल्कि इच्छाओं के विजय करने मे है।

योग्य उपायों का अवलम्बन करने पर मनुष्य अपनी आत्मा और उसकी उन्नति के मार्ग को भली भांति जान सकता है। इसका सर्वोत्तम उपाय यही है कि केवल शब्दाडम्बर को दूर से ही नमस्कार किया जाय और सिर्फ अपनी आत्मा का चिन्तन किया जाए। (क्रमशः)

माता का शासन

(श्रीमती विद्यावती देवी जी धर्मपत्नी पं० धर्मदेवजी विद्यावाचस्पति देहली)

सारे शरीर पर हो जाए, शासन मा तेरा।
रग रग पर लग रहा हो बस, आसन मा तेरा ॥
तव सङ्ग का हर अङ्ग पर, रग ऐसा चढ़ जाए।
तन के सब तन्तुओं पर नित, हो नर्तन मा तेरा ॥
अम्मा समा ऐसी कि समता, आ जाए मुझमें।
सुमिरन अरपन के पुष्पन से, करूँ पूजन मा तेरा ॥
सब कामना मिट जाए केवल, काम यह रहे।
हर श्वास मे हर ग्रास मे, हो चिन्तन मा तेरा ॥

उपास्य ईश्वर में श्रद्धा

(लेखिका—श्रीमती कमलकुमारी जी विशारदा ज्वालापुर)

भारतवर्ष परम पावन आर्यावर्त भूमि है। एक समय ऐसा था, जब सम्पूर्ण भारतवर्ष मे आर्यों का एक छत्र साम्राज्य था और आर्यों की विजय पताका सर्वत्र गौरव के साथ फहराती थी। उस समय वर्तमान युग की भांति जाति पाति का भेद नहीं था केवल वर्णाश्रमो के विचार से थे। चार वर्ण थे—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। इन चारो वर्णों के कर्म वेद विहित थे। परन्तु आजकल इन चारों वर्णों के स्थान मे अनेको जातिया उपजातिया बन गई है सब अपने नैमित्तिक कर्मो को विस्मृत कर चुके है जो जिसकी इच्छा होती है वह वही कार्य करता है। ध्यान पूर्वक देखने से ज्ञात होगा कि कौन ऐसा सत्यव्रती ब्राह्मण है जो वेदों का पठन पाठन करता है। ईश्वर की निशिदिन उपासना करता है। वेद विहित कर्मो को करता है गौओं की रक्षा करता है प्रायः ७० फी सदी ऐसे ब्राह्मण हैं जो वेदों का प्रचार करने के बजाय वेदों का अनादर करते है उनको अवहेलना की दृष्टि से देखते है। इसी प्रकार क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र भी प्राय. अपने कर्मों को भूल चुके है।

हम लौकिक कर्मों के साथ साथ उस दयालु परमेश्वर को भी भुला बैठे है। जिसने हमे उत्पन्न किया है हमारे हित के लिये सब प्रकार की सुख सामग्रिया दी हैं। हम जिस वायु से श्वास लेकर जीते हैं यह उसी की देन है, जो भोजन हम खाते हैं और अमृत के समान जल पीते और उपयोग में लाते हैं क्या यह सब उस परम पिता प्रभु की कृपा नहीं है? वह सबका कल्याण करने वाला है उसके बराबर कोई दूसरा नहीं है।

हम मत मतान्तरो के चक्कर मे पड़ कर इतने बुद्धि हीन हो गये है कि सत्यासत्य निर्णय नहीं कर सकते। हमारे हिन्दू भाइयो मे राम के पुजारी राम को भगवान् कहते है। योगिराज कृष्ण के उपासक कृष्ण जी को सृष्टि का निर्माता बना बैठे है। शैव शिवजी को जगदुत्पादक कहते है, वैष्णव सम्प्रदाय के मनुष्य विष्णु को ही सर्वस्व मानते है। कहा तक वर्णन किया जाय हर एक व्यक्ति अपने सम्प्रदाय की, अपने मत की उन्नति चाहता है यह अहंभाव हमारे अन्दर अज्ञान के कारण घुसा हुआ है जिसको हम सहज ही समझ नहीं पाते। भिन्न २ मतो की, सम्प्रदायों की उत्पत्ति तब हुई जब हमारा वास्तविक ज्ञान बिल्कुल नष्ट हो गया वेदो को हम बिल्कुल भूल गये। निरन्तर यह हमारा बढता हुआ अज्ञान जब चरम सीमा पर पहुच गया तो मत मतान्तरों की उत्पत्ति हुई। पाखडी ब्राह्मणो ने जिसे जैसा भी उपदेश दिया उचित अथवा अनुचित सत्य वा असत्य, उसी पर सब निर्बुद्धि पशुओ की तरह चलने लगे।

बहुधा सुनने मे आता है कि भारत के अधिकाश व्यक्ति राम कृष्ण को ईश्वर का अवतार मानते है। ईश्वर सर्व शक्तिमान सर्वज्ञ और सर्व व्यापक है उसको अवतार धारण करने की आवश्यकता ही क्या है? उसके

किसी विशेष कार्य के लिये विशेष रूप धारण करने की आवश्यकता ही क्या है ? यह तो अल्पज्ञ जीवों के विचार हैं। ईश्वर की शक्ति अनंत है उसकी शक्ति का कोई भी ठीक ठीक अनुमान नहीं लगा सकता। कहते हैं कि प्रह्लाद के पिता हिरण्यकशिपु को मारने के हेतु भगवान् ने नरसिंह का अवतार लिया था। सम्भवतः अवतारवाद की दृष्टि से यह बात सत्य हो परन्तु आस्तिकवाद की दृष्टि में सर्वथा निमूल भ्रान्ति जनक है। क्या ईश्वर नरसिंह का रूप धर कर ही उसको मार सकता था वैसे नहीं ? नहीं, ईश्वर को इन छोटे छोटे कामों के लिये इतने प्रयास की आवश्यकता नहीं है। वह सर्व व्यापक होने के कारण उस दुष्ट राक्षस मे भी विद्यमान है मर्मच्छेदन करके उसका नाश कर सकता था। ईश्वर कभी अवतार नहीं लेता क्योंकि वेद का वचन है कि "अज एकपाद् व:" वह कभी जन्म नहीं लेता वह एक है उसके बराबर कोई दूसरा नहीं है। "स पर्य्यगाच्छुक्रकायम-व्रणम स्नाविरं शुद्ध मपापविद्धम। कवि र्मनीषी परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छा-श्वतीभ्यः समाभ्यः।

वह ईश्वर सर्व व्यापक है जगत् उत्पादक, शरीर रहित, शारीरिक विकार रहित, नाड़ी और नस के बन्धन से रहित, पवित्र, पाप से रहित, सूक्ष्मदर्शी, ज्ञानी, सर्वोपरि वर्तमान, स्वयं सिद्ध अनादि, प्रजा जीव के लिये ठीक ठीक कर्मों का विधान करता है। हम ये सब धर्म ईश्वर के अति-रिक्त कहीं भी नहीं पाते। ईश्वर के सदृश न भूतो न भविष्यति' न कोई हुआ है न होगा। इसलिये हमें उसकी ही उपासना करनी चाहिये। जैसे शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास जाने से शीत दूर हो जाता है। वैसे ही परमेश्वर के समीप प्राप्त होने से सब दोष और दुःख छोड़कर परमेश्वर के गुण कर्म स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण कर्म स्वभाव पवित्र हो जाते हैं। उसका आत्मिक बल इतना बढ़ जाता है कि वह कठिन से कठिन आपत्तियो का भी धैर्य से सामना करता है जो मनुष्य ईश्वर की उपासना नहीं करता वह कृतघ्न और महामूर्ख होता है, क्योंकि जिसने हमारे सुख के हेतु सब वस्तुऐं प्रदान की हैं हम उसकी स्तुति उपासना क्यों न करें ?

नई समाज व्यवस्था
नैतिक दृष्टिकोण से
(लेखक—श्री रघुनाथप्रसाद जी पाठक)

(६)

जैसा कि पिछले पृष्ठों में विचार किया गया है, पूंजीवाद का रोग केवल आर्थिक ही नहीं प्रत्युत नैतिक भी है। इसीलिये वह मृत्यु की ओर अग्रसर हो रहा है। इस पर बनी हुई हमारी वर्तमान अर्थ-प्रणाली और समाज व्यवस्था से मनुष्य समाज का बहुत अधिक अपकार हुआ है। इन व्यवस्थाओं में मानवीय तत्त्वों (Human-Interest) और सामाजिक प्रेरणाओं को नाम मात्र का स्थान प्राप्त होने से मनुष्य की आत्मा ने इनके विरुद्ध विद्रोह का झगड़ा खड़ा कर दिया है। हमारा समाज उस वृक्ष के सदृश देख पड़ता है जिसकी जड़ में पोषक तत्त्वों का ह्रास हो गया हो।

समाज के इस ढांचे की रक्षा के लिए नए २ 'इज्म' (Ism) का उद्भव और परीक्षण हुआ परन्तु वे सब असफल सिद्ध हुए। लीग आव् नेशन्स के द्वारा जो यत्न हुआ और उसकी जो गति हुई वह सब पर विदित है। अब (U.N.O.) यूनाइटेड नेशन्स आरगनीजेशन द्वारा नया प्रयत्न हमारे सामने आया है। इसका जीवन भी कच्चे धागे पर लटका हुआ देख पड़ता है। इन संगठनों की असफलता का कारण इनके सूत्र-संचालकों की मानवीय दुर्बलताएं है। समाज के निर्माण और संचालन में यदि मानवीय तत्त्वों को प्रमुखता नहीं मिलती तो परिणाम भयंकर होते हैं।

इस सम्बन्ध में श्री राजेन्द्र बाबू के बनारस विश्वविद्यालय के इस वर्ष के दीक्षान्त भाषण की निम्न पंक्तियां उल्लेखनीय हैं:—

To day we have lost faith in human personality and depend upon externtl forces for reforming the Society. The effort is bound to fail. For the progress of the Society development of the individual is necessary, without that Society can not advance.

अर्थात् समाज की उन्नति के लिए व्यक्ति का विकाश आवश्यक है। इसके बिना समाज उन्नति नहीं कर सकता।

पिछले दिनों महात्मा गांधी की ॅ का कराची में उद्घाटन करते समय सर सर्व पल्ली राधाकृष्णन ने अपने ऐतिहासिक भाषण में वास्तविक नैतिकता (Real morlily) पर समाज के भवन की नीव रखे जाने की आवश्यकता पर विशेष बल दिया था। नई २ प्रणालियों का परीक्षण, आश्चर्य मे डालने वाले वैज्ञानिक अन्वेषण और अभूतपूर्व औद्योगिक उन्नति, इन सबका आयोजन जन-समाज के कल्याण की बड़ी-बड़ी आशाओं के साथ हुआ परन्तु इससे मनुष्य को सुख और शान्ति का मिलना तो दूर रहा उल्टा इनके द्वारा मनुष्य के कष्टों में वृद्धि हुई। इसका कारण सर राधाकृष्णन् के शब्दों मे इस प्रकार है।

"यह संतप्त संसार जीना तो चाहता है परन्तु वह नहीं जानता कि जिया किस प्रकार जाता

है। जीवन के पुनर्निर्माण का कार्य बड़ी बड़ी आशाओं के साथ आरम्भ हुआ परन्तु उसका अन्त निराशा और असफलता में हुआ। हमारे दुःखों और कष्टों ने दूसरा रूप ग्रहण किया। इसमें सन्देह नहीं राजनैतिक और आर्थिक तत्व, भूगोल, भूगर्भ शास्त्र, वैज्ञानिक अन्वेषण और औद्योगिक विकास महत्त्वपूर्ण हैं।परन्तु इनसे महत्त्वपूर्ण मानवीय तत्त्व हैं जो ज्ञान, विवेक, निस्पृहता, सत्य, न्याय आत्म-संयम और इनके विरोधी लोभ, स्वार्थ, अहंकार, ईर्ष्या, द्वेष आदि तत्त्वों का संघात है।"

वस्तुतः वास्तविक समस्या मानवीय है

प्रसन्नता की बात है कि पाश्चात्य लेखक और विचारक भी इस सचाई को स्वीकार करने लग गए हैं। उनका मत है सचाई का वृक्ष नैतिकता के जल के बिना जीवित नहीं रह सकता। Guide to the new age के रचयिता श्रीयुत केनिथ ने भावी समाज संगठन के मूल तत्त्वों पर निम्न प्रकार प्रकाश डाला है:—

Your task is therefore much greater than if it were a question of organising a decent economic system and a sensible social order. You have got to show people how to make best use of their sensible order. You have to break down their inhibitions and their moral blindness and enlarge and purify their outlook so that they can be nifit by the new economic system. You have got to open their eyes to higher values, to the further possibilities of life to the real source of human happiness.

अर्थात् तुम्हारा कार्य्य महान है। तुम्हें न केवल उत्तम अर्थ प्रणाली की रचना करनी है। प्रत्युत समाज का बुद्धि संगत संगठन भी करना है। तुम्हें प्रजा को इनका सर्वोत्तम प्रयोग सिखाना है। तुमको उनका नैतिक अन्धापन दूर करना है। तुम्हें उनका दृष्टि बिन्दु विस्तृत और पवित्र करना है जिससे वे नूतन अर्थ-व्यवस्था से लाभ उठा सकें। तुम्हें उनकी धर्म्म-भावना को जागृत करना है जो मानवीय सुख का अक्षय स्रोत है।

मानवीय समस्या का सम्यक् समाधान या हल मनुष्य के सर्वाङ्गीण विकास से होता है। कहा जाता है आर्थिक शक्तियों से इतिहास का निर्माण होता है। यह धारणा भ्रममूलक है। यह धारणा भी मानवीय समस्या को बिगाड़ने के लिये जिम्मेदार है। वस्तुतः इतिहास के निर्माण में मानवीय प्रेरणाएं अधिक काम करती हैं। समाज की उन्नति वा अवनति बहुत कुछ मानवीय सामग्री पर निर्भर करती है। आज इस बात की आवश्यकता है कि मनुष्य को मनुष्य बनाया जाय। हमारा वास्तविक रोग अधार्मिकता (Irreligion) है। आत्मा के विकास स्वरूप प्रयत्न द्वारा मनुष्य का कायाकल्प कर देना इस अधार्मिकता का एक मात्र इलाज है।

धर्म तत्त्व

मनुष्य स्वभाव में अच्छाई के लिए जो प्रेम और आदर और बुराई के लिए घृणा पाई जाती है यही धर्म वा धर्मतत्त्व है। हो सकता है हमारे

धार्मिक विश्वास भिन्न २ हों, हमारे अनुष्ठानों की विधि भिन्न २ हों। हमारा किन्हीं देवी देवताओं में विश्वास हो या न हो परन्तु यदि कोई हमें झूठा, अन्यायी, कपटी, बेईमान कहदे तो हमारे क्रोध की सीमा नहीं रहती। सत्य, न्याय और ईमानदारी आदि सद्गुणों के प्रति स्वाभाविक प्रेम धर्म कहलाता है।

मनुष्य के काया कल्प से अभिप्राय उसके वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय विकास से है। उसका व्यक्तित्व अपनी तथा दूसरों की दृष्टि में ऊंचा उठा होना चाहिये। उसका पारिवारिक जीवन दूसरों की स्पर्धा और आदर्श का विषय होना चाहिए। उसका सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन समाज और राष्ट्र के लिए एक देन होनी चाहिये।

उसमें शारीरिक बल निर्बलों और असहायों की रक्षा के लिए हो, उनको सताने के लिए न हों। वह विद्या, ज्ञान और विज्ञान से सम्पन्न हो परन्तु उससे संसार के हर्ष समुदाय में वृद्धि होनी चाहिए। उसे किसी दशा में भी अपने ज्ञान को मानव समाज के विनाश और अकल्याण में प्रयुक्त नहीं होने देना चाहिए। उसके पास सम्पत्ति और सम्पदा हो परन्तु उससे दूसरों की सेवा होनी चाहिए न कि उनकी असेवा। संक्षेप में उसका ज्ञान, विज्ञान, बुद्धि, प्रतिभा, बल, धन इत्यादि उसको अपने आत्मबल की प्राप्ति में सहायक होने चाहियें।

पारस्परिक व्यवहार का आदर्श

मनुष्य को दूसरों के साथ वैसा व्यवहार करना चाहिए जैसा वह दूसरों से अपने प्रति कराना चाहता है। बर्बर जातियां भी इस सिद्धांत को स्वीकार करती हैं। अवश्य उसका प्रयोग उनकी जाति के लोगों तक सीमित रहता है वे जातियां अपनी जाति के बाहर के प्राणियों को मनुष्य नहीं मानतीं परन्तु ज्यों ज्यों उनका मानसिक क्षितिज (Mental Horizon) विस्तृत होता है और उनकी धर्म भावना दृढ़ होती है। वे अनुभव करने लग जाते हैं कि यह सिद्धान्त समस्त मानव जाति पर लागू होने योग्य है।

इस सिद्धान्त की पृष्ठभूमि (Background) मानव प्रेम है जो मनुष्य मे स्वभावतः पाया जाता है।

प्रत्येक नवजात बालक संसार की वायु में प्रवेश करते ही यह विश्वास दिलाता है कि प्रेम जीवन का आधार है। दूसरों के साथ हमें प्रेम, दया और सहानुभूति से काम लेना चाहिये। हमें अपना यह दृढ़ विश्वास बना लेना चाहिये कि संसार के सब मनुष्य एक ही पिता की सन्तान और एक ही परिवार के सदस्य हैं। सब आपस में भाई २ हैं। मनुष्य में जब यह भावना घर कर जाती है तब जन्म की छुटाई-बड़ाई, अमीरी-गरीबी, कालापन-गोरापन, वंशाभिमान-जात्यभिमान, रंग जाति और देश का अहम्भाव और भेद-भाव, प्रेम मय व्यवहार के प्रबल प्रवाह में तृणवत् बह जाते हैं। उस समय मनुष्य की धार्मिकता विजयी होती है।

वेद कहता है:—

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सम्भ्रातरो वावृधुः सौभगाय।

युवा पिता स्वपा रुद्र एषां सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः॥ ऋग् ५।६०।५

सब मनुष्य आपस में भाई २ हैं। उनमें कोई छोटा बड़ा नहीं। वे सौभाग्य के लिए परस्पर मिलकर बढ़ें। उनका पिता इन्द्र अर्थात् दुष्टों को दण्ड देने वाला और संसार का शासक है। उनकी माता प्रकृति या पृथ्वी है जो उनको सब प्रकार के भोज्य पदार्थ तथा सुख की सामग्री देने वाली है।

प्रेम मय व्यवहार में सत्य और न्याय का पुट लग जाने से वह और भी चमक जाता है। ये दोनों जीवन के प्रेरक तत्त्व हैं और समाज के भवन की प्रारम्भिक सीढ़ियां हैं। इनके द्वारा समाज में बुरे और भले तत्त्वों के बीच उचित समता रक्खी जाती है।

प्रसिद्ध जर्मन तत्त्ववेत्ता कान्ट ने कहा "मन को जितना प्रबल धक्का अन्याय से लगता है उतना अन्य किसी बुराई से नहीं लगता। इस बुराई के मुकाबले में हमें दुःख देने वाली अन्य बुराइयां हेच हैं।" एक अन्य स्थल पर वही तत्त्ववेत्ता कहता है "यदि सत्य और न्याय का लोप हो जाय तो पृथ्वी पर मनुष्यों के रहने की कोई उपयोगिता न होगी।"

मनुष्य वही है जो अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाने में आगा पीछा नहीं करता। सत्य, असत्य, न्याय, अन्याय के बीच में उदासीनता धारण कर लेना नैतिक दुर्बलता का लक्षण समझा जाता है। अन्याय और अत्याचार भले ही कुछ समय के लिए सफल होते देख पड़ें परन्तु वे सदैव सफल नहीं होते क्योंकि ये दोनों स्वयम् आत्म विघातक (Self-destructive) होते हैं। जिन जातियों ने दूसरी जातियों पर अत्याचार किये हैं इतिहास साक्षी है वे सदैव के लिये मिट गईं। यही सचाई व्यक्तियों पर चरितार्थ होती है।

(शेष फिर)

चतुर्दश समुल्लास विमर्श

महर्षि की समीक्षा की यथार्थता

(लेखक—श्री पं० शिवशर्मा जी महोपदेशक संभल)

श्री महर्षि दयानन्द जी महाराज ने जो चौदहवें समुल्लास में १५९ संख्या में आक्षेप किये हैं। मुस्लिम लीगी सिन्ध सरकार कहती है कि महर्षि जी ने अर्थ अशुद्ध किये हैं और साथ २ आक्षेप भी अनुचित किये हैं। आयतों के शुद्ध अर्थ सिद्ध करने के लिये हमने चौदहवें समुल्लास की समस्त ही आयतों के ६, ७, विद्वान् मौलवियों के किये हुए अर्थ प्रस्तुत करके यह सिद्ध कर दिया है कि श्री महर्षि जी ने कोई भी अर्थ मन माना नहीं किया है। अब हम महर्षि जी की की हुई समीक्षा की पुष्टि में लेख आरम्भ करते हैं। स्मरण रहे कि महर्षि जी के समय में जो २ क़ुरान की टीकायें विद्यमान थीं, उनके अनुसार आक्षेप करने से आक्षेप कर्त्ता का दोष नहीं। आगे चलकर चाहे और किसी प्रकार के अर्थ अथवा आशय, अन्य मौलवियों ने किये वा निकाले हों, उनका भार पूर्ण आक्षेपकर्ता के कन्धों पर नहीं। उनके उत्तर तत्कालीन आर्य विद्वान् दे सकते हैं। पूर्व के टीकाकारों और भाष्यकारों का उत्तरदायित्व स्वयं उन टीकाकारों और भाष्यकारों पर ही है।

बिस्मिल्ला ही ग़लत

पहला आक्षेप महर्षि जी ने "बिस्मिल्ला" पर ही किया है और यह पूछा है कि वह कौनसा दूसरा अल्लाह है जो क़ुरान को अल्लाह के नाम से आरम्भ करता है?

श्री महात्मा गान्धी जी ने भी यही महर्षि जी की समीक्षा पर दोष दिया था कि सारे ही मुसलमान टीकाकार "शुरू साथ नाम अल्लाह के" करते हैं, परन्तु महर्षि जी ने "शुरू करता हूँ" यह अपनी ओर से कैसे लिख दिया? वास्तव में यह महर्षि जी पर दोषारोपण, उस समय के टीकाकारों की टीका न देखने से ही, किया गया है। ज्ञात होता है कि महर्षि जी ने शाह रफी-उद्दीन मुहद्दिस की टीका का अनुसरण किया है। प्रशंसित शाह जी अपनी टीका में यही अनुवाद करते हैं—"शुरू करता हूँ साथ नाम अल्लाह बख़शिश करने वाले मेहरबान के", हम इसकी पुष्टि में क़ुरान से ही सिद्ध करते हैं कि शाह जी और महर्षि जी दोनों ही ने ठीक अर्थ किये हैं। क़ुरान में सूरए 'नम्ल'-न्यूटी है। उसमें ह० सुलेमान के मलिका बिलक़ीस को एक चिट्ठी लिखने की चर्चा है। यह मलिका यमन बादशाह *शराख़ील की बेटी थी। उसके वीर्य से एक परी के पेट से कन्या उत्पन्न हुई थी उस कन्या का नाम "बिलक़ैस" रक्खा था। शराख़ैल के कोई पुत्र न था, इसलिये यह कन्या बिलक़ैस ही राज्य की अधिकारिणी बनी थी। इस पर ह० सुलेमान मोहित हो गये थे। ह० सुलेमान ने इसके पास एक आज्ञा पत्र भेजा था कि तू मुझ से विवाह करले। उस पत्र के आरम्भ में उसके मुन्शी ने यह लिखा था:—

"इन्नहू मिन् सुलैमान व इन्नहू बिस्मिल्ला-हिर्रहमानिर्रहीमे अल्ला तअलू अल्लैय्य वातूनी मुस्लिमीन" ॥ सू० नम्ल स० १ ॥

अर्थात्-बेशक यह ख़त सुलैमान की तरफ से है, और यह ख़त लिखा है ख़ुदा ताला के नाम से जो वह खुदा ताला बड़ा मेहरबान रहम करने वाला है, और मुद्दआ ख़त का यह है कि जो बड़ाई अपनी न कर मुझ पर और आनकर हाजिर हो तावेदार हुक्म मानने वाली होकर। तफसीर मूजः, सुफा ३६८ ॥

* तफ़सीर मदारकुल तंज़ील मे इसका नाम शराहील लिखा है।

* दूसरा कारण और भी है—सुलह हुदैबिया के समय हज़रत ने "बिस्मिल्लाह्" लिखवाई थी। सहील मक्की अफसर ने कहा यह (२) ठीक नहीं है। "बिस्मकल्लहुम्"—साथ नाम तेरे जो अल्लाह् है, लिखो। ह० अली ने अपने हाथ से "बिस्मिल्लाह्" करदी।

कहने का आशय यह कि यह बिस्मिल्लाह् क़ुरान के आने से पूर्व ही विद्यमान थी। अतः यह क़ुरान ने दूसरे से—सुलैमान के मुंशी से ली है। साथ २ इससे यह भी सिद्ध होता है कि मनुष्य भी अल्लाह् के समान फ़सीह—ललित भाषा लिख सकता है, फिर क़ुरान की फ़साहत की क्या विशेषता रही? ह० सुलैमान के मुंशी की भाषा में भी यह अपनी कृति नहीं, क्योंकि ह० सुलैमान से पूर्व यह जिन्दावस्था की भाषा में इस प्रकार विद्यमान है—जैसा आतिश-परस्तों की शुरू किताब में है कि "बनाम ,एज़द बख़शाइन्दः बख़ शायशगर' जो बजिन्सहू बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम" के मानी हैं—

देखो—तफ़्ज़ीहुल् काज़िबीन, सैयद अमीर काज़िम जी लिखित, ख़्वाजे फ़ैज़ छापेख़ाने नगीने में छपी सुफ़ा ३१ ॥ यह सैयद साहब भी नगीना निवासी थे।

यही आक्षेप पादरी साहबान ने किया है। देखो—"फ़साहतुल क़ुरान" पंजाब रिलिजियस बुक सोसायटी, छापी फ़ैजबख़्श प्रेस फ़िरोजपुर शहर। सन् १९०६ ई० सु० ५६, ६० ॥

'बिस्मिल्लाह' क़ुरान का भाग नहीं है

साहबे मदारक लिखते हैं—"मदीनः बसरः" और शाम के क़ारियों—क़ुरान पाठकों और फ़ुक़्हा का कौल है कि 'बिस्मिल्लाह्' न सू० फ़ातिहा का कोई भाग है और न किसी क़ुरान की सूरत का। इसको वहां इसलिये लिख दिया गया है कि सूरतें अलग २ हो जावें, या आरम्भ में बरकत के विचार से। और इमाम आज़म (अबूहनीफ़ा) और उनके अनुयायियों का भी यही मत है, और इसी कारण वे लोग बिस्मिल्लाह् को नमाज मे नहीं पढ़ते।" साहबे मदारक कहते हैं कि सू० फ़ातिहा का आरम्भ 'अलहमदु' से हुआ जो इस बात का प्रमाण है कि बिस्मिल्लाह् सू० फ़ातिहा का भाग नहीं। और यदि सू० फ़ातिहा का भाग नहीं तो यह सिद्ध हुआ कि अन्य सूरतों का भी भाग नहीं हो सकता।" वास्तव में यह 'बिस्मिल्लाह्' ह० सुलेमान के मुंशी ने पारसियों से ली है। हदीस में ह० अब्बास का कथन और स्वयं आं हज़रत का वचन भी 'इत्क़ान' में 'बिस्मिल्लाह्' की बहस में विद्यमान है।

(शेष पृष्ठ ४३३ पर देखिए)

महिला जगत

वेदों में मां का स्थान—स्त्री की महत्ता

(लेखक—प० सत्यभूषण जी वेदालकार गुरुकुल कुरुक्षेत्र)

वाशिंगटन को उसकी माता ने बनाया। नैपोलियन माता की कृपा से नैपोलियन बना। शिवाजी माता जीजाबाई के बचपन मे डाले हुए सस्कारों से छत्रपति बने। मिल्टन ने लिखा है कि आदम ईश्वर के लिये बना और हव्वा पुरुष और ईश्वर दोनो के लिये। प्राचीन ऋषियो ने कहा था "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता जहा नारियो की पूजा होती है, वहा देवता वास करते हैं।

पर आज क्या हमारे घर सुखी है ? क्या हमारा गृहस्थ जीवन जसा होना चाहिये वैसा है ? हमने नारी क साथ अत्याचार किया है। हम उसे शिक्षा से वचित रखना चाहते है उसे घर के चौके से बाहर नहीं निकलने देना चाहते, पढ़ाना लिखाना तो दूर रहा। मनुष्य को सब करने का अधिकार है, वह पढ सकता है, लिख सकता है और विद्वान् होकर भी नारी को तलाक भी दे सकता है, उसे अबला समझकर उसक साथ विश्वासघात भी कर सकता है, पर नारी कुछ नहीं कर सकती उसे तो बाहर निकलने का अधिकार ही नहीं। एक समय था, जबकि हिन्दू समाज मे नारी का महत्त्व था, वे अबला न होकर सबला थी। इसीलिये ही महाराज जनक के दरबार मे श्री रामचन्द्र जी ने धनुष तोडकर सीता जी का पाणिग्रहण किया, अर्जुन ने परछाई देखकर मछली को निशाना बनाया और द्रौपदी को वरा।

इसी भारतवर्ष मे कितनी विदुषी नारिया हो गुजरी है। गार्गी, अनसूया जैसी उच्चकोटि की स्त्रिया थीं, लीलावती ने ज्यामिति पर कितना विद्वत्तापूर्ण ग्रन्थ लिखा। इसी प्रकार कई विदुषी नारिया अतीतकाल मे अपना प्रकाश देकर विलीन हो गई है। शकराचार्य का जब मण्डन मिश्र से शास्त्रार्थ हुआ और वह हार गया तो उसकी स्त्री ने भी शकराचार्य से शास्त्रार्थ किया।

(पृष्ठ ५३७ का शेष)

कुरान मे 'बिस्मिलाह' ११४ बार आई है—११३ बार सूरतो के आरम्भ मे और १ बार सू० नमल मे। सब स्थानो पर अलिफ के बिना ऐसा पाठ आया है। परन्तु एक स्थान पर सू० अलक मे अलिफ सहित ऐसा लिखा है। परन्तु हम पूछते हैं कि ११४ स्थानो पर अलिफ का लोप क्यों किया गया ? अरबी क व्याकरण का कोनसा विषय है ? वास्तव म इसका रूप है—'ब+इस्म'=साथ नाम। 'इस्म' के अलिफ अक्षर का लोप कैसे हुआ ? इस ही लिये यह कहावत विख्यात हो गई कि 'बिस्मिल्ला ही गलत'। लेख का साराश यह है कि 'बिस्मिल्लाह' वाक्य कुरान से पूर्व इसही रूप मे विद्यमान था जिसको सुलेमान के मुंशी ने लिखा था। अत यह मनुष्य का वाक्य अच्छा जानकर कुरानकर्त्ता ने कुरान म सम्मिलित कर लिया। सुलेमान से भी पूर्व पारसियों की जिन्दावस्था मे उनकी भाषा मे विद्यमान था।

ऐसी नारियों के होने का क्या कारण था ? यही कि हिन्दू समाज उनका मान करता था। यद्यपि कैकेयी ने रामचन्द्र को बनवास दिलवाया और भरत को राजगद्दी दी, पर जब रामचन्द्र वन से लौटे तो उन्होंने सर्वपूर्व कैकेयी को ही प्रणाम किया। यद्यपि प्रजा के अनुरंजनार्थ यह कहा जाता है कि राम ने सीता जैसी पतिव्रता पत्नी का परित्याग किया, तथापि अश्वमेध यज्ञ के समय उन्होंने उसकी सोने की मूर्ति बनाकर रक्खी। यह समझा जाता था कि पत्नी के बिना यज्ञ पूरा नहीं हो सकता था। महारानी पद्मिनी ने अपने पति भीमसिंह की किस प्रकार रक्षा की और किस प्रकार अपने सतीत्व की रक्षा करके चिता में जलकर सती हो गई।

जब मानव नारी का आदर करता है, तो नारी भी मानव का यथोचित सत्कार करती है। पर हा शोक ! आज हमने पश्चिमी सभ्यता की रोशनी में नारी के स्वतन्त्र गुणों को न लेकर पश्चिमी नारी के प्रति व्यवहार को ही अपनाकर उसे भोग लीला का साधन मात्र बनाने का यत्न किया है। इसलिये आज हमारी साधना सफल नहीं हो रही। हम जो भी कदम उठाना चाहते हैं, जिस भी सामाजिक सुधार में प्रवेश करना चाहते हैं उसमें नारी हमारा यथोचित सहयोग नहीं देती, यदि देती है तो हम उसे परखते नहीं। कितनी सुशील नारियों के विचारों को उनके पति पनपने ही नहीं देते उनको विकास का अवसर ही प्रदान नहीं करते। सचमुच हमारे गुलामी के अभिशाप का एक कारण यह भी है, कि हमने नारी को यथोचित अधिकार प्रदान नहीं किये। यदि मानव को जीवित रहने का अधिकार है, तो नारी को भी उतना ही जीवित रहने का अधिकार है। सचमुच हमने नारी के भावों को कुचला है उसको प्रायः अशिक्षिता रक्खा है, ताकि वह अपने को जान न पाये।

हमारी नारी का भूत उज्ज्वल था। भूतकाल हमें यह शिक्षा देता है। बौद्ध सन्यासी उपगुप्त ने वासवदत्ता जैसी पतित स्त्री के घावों को भर कर उसे शिक्षा दी, जिसका उसके जीवन पर इतना प्रभाव पड़ा कि उसने अन्य सैकड़ों स्त्रियों को बौद्ध धर्म में दीक्षित कर लिया। इसी प्रकार अशोक ने जहां अपने अनेक सम्बन्धियों को बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ चीन व लङ्का आदि में भेजा वहां कुमार के साथ संघमित्रा को भी भेजा जिसने वहां जाकर स्त्रियों मे बौद्धधर्म की नीव डाली। इसी प्रकार भारतवर्ष में अनेक बड़े २ कार्यों में हाथ बटाने वाली उच्चकोटि की नारियां हुई है। नारी की महत्ता इसी बात में है, कि वह अपने अस्तित्व को खो देती है, पुरुष की तरह अभिमान नहीं करती वह अपमान के प्याले को भी पीना जानती है। आज वह प्राचीन काल नहीं, प्राचीन परिस्थितियां नहीं। एक ऐसा भी युग आया है जब नारियों की मान-मर्यादा पुरुष नहीं कर रहा, तभी से वह ठोकरें खाने लगा है। आज आप खद्दर पहनने के लिये, ग्राम सुधार करने के लिये बड़े २ भाषण झाड़ते हैं। पर आपकी पत्नी आपका साथ नहीं देती। आप धार्मिक सुधार करना चाहते हैं पर पत्नी आपका विरोध करती है। इसका दोष किसके माथे पर है ? सच पूछो, पुरुष पर। नारी को शिक्षा देना हमारा धर्म था, पर हमने उसे अपना कर्तव्य

समझ कर पूरा नहीं किया। यही कारण है कि आप दूसरों को उपदेश देते फिरते हैं, पर आपका घर मैला है। आज हम अपने ऊपर स्त्री के प्रति कर्त्तव्य पालन का भार उठाने को तैयार नहीं। जब यह युगल, स्त्री पुरुष का जोड़ा, जोकि समाज रूपी गाड़ी के दो पहियों के समान है, ठीक नहीं चलता तो समाज में वह स्फूर्ति, वह उत्साह जाता रहता है। इन्हीं नारियों के बल पौरुष से ही संसार टिका हुआ है। बड़े २ वीर योद्धा दिग्गज विद्वान् इन्हीं की कोख में जन्म लेते रहे हैं।

अब हमने विचार यह करना है कि आर्य साहित्य का सबसे प्राचीन ग्रन्थ वेद इस बारे में क्या कहता है? वेद उसे घर की रानी समझता है। ऋग्-मं० १०। ८५। २५ में वधू को कहा गया है—

"गृहान् गच्छ गृह पत्नी यथासो वशिनी त्वं विदथ मावदासि।"

घर की मालकिन बनने को घर जावो और जितने २ पुरुष वहां एकत्र हों उनसे रानियों की भांति वार्त्तालाप करो।

आज जिसे हिन्दू समाज घृणा के रूप में देखता है, वेद उसे घर की रानी के रूप मे रखता है। वेद नारी के महत्त्व को-उसकी प्रतिष्ठा को खुले शब्दों में स्वीकार करता है।

"इह प्रियं प्रजया ते समृध्यतामस्मिन्गृहे गार्हपत्याय जागृहि।"

पति कहता है तू प्रसन्न रहे और अपने भावी बालकों समेत समृद्ध रहे। गृहस्थ में आकर घर में सावधानता से राज्य करे। वेद केवल इतने कहने में ही चुप नहीं हो जाता वह तो उसे सम्राज्ञी बनाने को कहता है।

मं० ४५

सम्राज्ञी श्वशुरे भव, सम्राज्ञी श्वश्र्वां भव।
ननान्दरि सम्राज्ञी भव, सम्राज्ञी अधि देवृषु॥

अपने सास ससुर पर पूरा शासन रख, अपनी नन्द देवरों पर पूर्ण राज्य कर।

वेद के ये शब्द केवल नारी की महत्ता को ही घोषित नहीं करते, परन्तु उसे समय के अनुसार यथोचित स्थान भी देते हैं। वेद उसे घर की मालकिन, रानी तथा सम्राज्ञी के रूप में याद करता है। वेद कहता है, तू कोई छोटी मोटी चीज नहीं, हस्ती नहीं, मनुष्य के पैर की जूती नहीं, पर तू घर की रानी है, सम्राज्ञी है। तू मनुष्यों के हृदय में वास करने वाली देवी है। तू हमेशा प्रसन्न रहे, खुश रहे, क्योंकि तेरे प्रसन्न रहने से ही घर चल सकता है, सारा परिवार आनन्दित एवं हर्षित रह सकता है। तेरी कोख में ही बच्चे जन्म लेते हैं, तू अपने आप गीले कपड़े पर सोकर भी बच्चे को सूखे कपड़े पर सुलाती है। तू मां है, जननी है पर इसके साथ ही घर की रानी और सम्राज्ञी भी है। यह तो रानी और सम्राज्ञी कहा, पर वेद इसे जगज्जननी का रूप देने को भी तैयार है—आप पूछेंगे कैसे? यजुर्वेद पहले अध्याय के ३० वें मन्त्र में स्पष्ट प्रतीत होता है कि यज्ञ में स्त्री का भागी होना आवश्यक था। जब अध्वर्यु स्त्री की कटि में मौजी बन्धन करता है, तो एक मन्त्र पढ़ता है—

"अदिते रास्नासि विष्णोर्वेष्योस्यूर्ज्जेत्वादब्धेन"

"स्त्री को अदिति, अखण्डनीय धरती माता के समान समझकर मुंज की रस्सी को कहता है।

"तू अदिति की पेटी है, तू विष्णु अर्थात्

यज्ञ में व्यापक है "फिर स्त्री कहती है" मै तुझे महाबल के निमित्त धारण करती हूँ।"

वेद नारी को अबला नही कहता, चाहे आज का हिन्दू समाज भले ही उसे अबला समझे। वह तो उसे धरती माता के समान स्थान देता है। जैसे धरती में उत्पादन शक्ति है वैसे स्त्री में भी उत्पादन शक्ति है। जैसे हम धरती माता की पूजा करते हैं, वेद उसी प्रकार उसकी पूजा करने को कहता है नहीं तो वह मुंज की रस्सी को यह क्यों कहता कि तू अदिति की पेटी है। इसका तात्पर्य यही है, कि तू अखण्डनीय है, तुझे कोई काट नहीं सकता, तेरा कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता। तू तो जगज्जननी है, तेरी ओर कोई दुष्ट आंख उठाकर देख ही नहीं सकता। तेरे में दुर्गा-शक्ति है, तू भवानी है, तू ही क्षत्रियों की जन्मदात्री है। तू अखण्डनीय है। धरती माता की जैसे सीमा नहीं की जा सकती, उसे काटा नहीं जा सकता उसी प्रकार तुझे कोई सीमित घेरे में नहीं रख सकता और तेरा अपमान नहीं कर सकता। पाठकगण! वेद की नारी सबला है, देवतुल्य जगदम्बा है, जिसको देखकर सैंकड़ों मानव एक साथ नतमस्तक हो जाते हैं, सैंकड़ों हाथ एक साथ झुक जाते हैं, सैंकड़ों सिर एक साथ उस मां की छत्र छाया मे विश्राम लेने के लिये झुक जाते हैं। यही तो कारण है कि वैदिक काल में नारियों का इतना आदर था।

वात्सल्य की मूर्ति मां में यदि अब भी सन्देह हो, भ्रम हो, आंखों के आगे परदा पड़ा हो, तो वेद के इन शब्दों से दूर कीजिये—जरा विवाह संस्कार की ओर तो दृष्टि दौड़ाइये, वर कन्या का हाथ पकड़कर क्या कह रहा है—

गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः। भगो अर्यमा सविता पुरंधिर्मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः ॥

ऋ० १० मं० १० अ० ६ सू० ८५ मं० ३६

मे तुम्हारा हाथ सुख और सौभाग्य के लिये पकड़ता हूँ। बुढ़ापे तक मेरी पत्नी बनकर रहो। कृपालु सविता ने तुम्हें हमे सौंपा है कि हमारी गृहिणी बनो और घर के कार्य के लिये सदा तैयार रहो। जरा और आगे चलिये—

ऋ० मं० सू० ८५ मे इसका पूरा ? स्पष्टीकरण कर दिया गया है। सातवीं भांवर फिरने के समय पति पत्नी को सम्बोधन करके क्या कहता है। "सखे सप्तपदी भव सखायौ सप्तपदा बभूव सख्यन्ते गमेयं सख्यात्तेमायोषं, सख्यान्मे मा योष्ठास्समयाव संकल्पावहै संप्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ।

हम दोनों ने सात भांवर फिर लिया है। अब हम एक दूसरे के परम सखा हो गये हैं। तू मेरे से कभी न बिछुड़ना। मै तेरे से कभी न बिछुड़ूं, हम दोनों प्रसन्न चित्त होकर परस्पर प्रेम से एक दूसरे से सलाह लें—

संवां मनांसि संव्रता। समुचित्तान्याकरम्। द्यौरहं पृथ्वी त्वं रेतोऽहं रेतोभृत् त्वं मनोऽहमस्मि वाक् त्वं, सामाहस्म्यृक्त्वं सा मामनुव्रता भव पुंसे पुत्राय वेत्तवै श्रियै पुत्राय वेत्तवा एहि सूनृते।

वेद के इन मन्त्रों में पति और पत्नी का स्वरूप वर्णित है अब हम दोनों का मन, कर्त्तव्य और इच्छा एक है। तुम ऋक् हो, हम साम हैं। हम द्यौ हैं, तुम पृथ्वी हो। हम रेत हैं, तुम रेतः की धारण करने वाली हो। हम मन हैं, तुम वाणी हो।

हमारी अनुगामिनी होओ, जिसमें पुत्र और धनकी प्राप्ति हो। मिष्ट भाषिणी आओ।

पाठक गण! जरा वेद के इन शब्दों को ध्यान से देखिये, वेद नारी को क्या स्थान देता है-

तू ऋक् है, तो मै साम हूं।

जिस प्रकार ऋक् और साम का सम्बन्ध है उसी प्रकार हमारा सम्बन्ध है। यदि तुझे ऋग्वेद मे प्रीति है तो मुझे साम मे प्रीति है। तू ज्ञान के स्तोत्र गाती है तो मैं भक्ति के स्तोत्र गाता हूं। अर्थात् हम दोनों का जोड़ा एक है, हम अलग २ नहीं। मै द्यु लोक हूं तो तू पृथ्वीलोक है। यदि मै प्रकाश व चमक करता हूं, तो तू प्रकाश व चमक को धारण करती है। यदि मै ऊपर विराजमान हूं तो तू नीचे विराजमान है। जिस प्रकार पृथ्वीलोक का द्यु लोक साया है छत्र है उसी प्रकार म तेरा साया हूं, छत्र हूं। जैसे द्यो और पृथ्वी का जोड़ा इकट्ठा है, वैसे हम भी एक साथ रहने वाले हैं, अलग २ नही।

मै रेतः हूं तो तू रेतः की धात्री है। तेरे से ही सन्तान की उत्पत्ति होती है और वंशपरम्परा चलती है। तेरे संयोग के विना मैं कुछ नहीं कर सकता।

यह है वैदिक नारी का स्वरूप, पति पत्नी का विशद वर्णन। और देखिये वेद इस पत्नी-रूपा जीवन-संगिनी का कितना सम्मान करता है।

वर का पिता वधू को संबोधन करके कहता है-

इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतं
क्रीडंतौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृहे।

हे वधू! तुम अपने पति के साथ सदैव रहो, कभी बिछुड़ो नहीं, आनन्द के साथ अपने पुत्र पौत्रों से खेलो और आजन्म के लिये पति से मिलकर रहो।

वर विवाह-संस्कार में निमन्त्रित अतिथियों को संबोधन करके कहता है—

"सुमंगलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत।
सौभाग्यमस्यै दत्वायाथास्तं वि परेतन।

यह वधू सौभाग्यवती है, कृपया इसे आकर देखिये इसे आशीष दीजिये कि इसका सुख और सौभाग्य बढ़े और इसे आशीष देकर ही आप सब घर लौटिये।

वेद के इन शब्दों में कितना सौजन्य वा सरलता है। पति पत्नी को किस भाव से देखता है। वह पश्चिम की तरह स्त्री को तलाक़ नहीं देता। वेद मे तलाक का विधान नहीं। पश्चिम विवाह को एक सौदा समझता है, समझौता समझता है, पर आर्यावर्त्त के ऋषि इसे महान् उत्तरदायित्व का रूप देते हैं। वे इसे एक उच्च वा पवित्र संगतिकरण का रूप देते हैं। इसलिये वेद कहता है 'सुमंगलीरियं वधू' यह वधू सौभाग्यवती है, मंगल सरसाने वाली। स्वच्छन्दता की इस दूषित मनोवृत्ति को जिसे पश्चिम ने स्वीकार किया है, वेद स्थान नहीं देता।

इसके साथ ही वेद एक समय दो पत्नी करने का भी प्रबल विरोधी है। बहु विवाह की प्रथा से कितनी हानि और उपादेय-स्वच्छन्दता का विनाश होता है, इसका बहुत अच्छी उपमा द्वारा प्रतिपादन किया गया है। ऋग० १०।१०१।११

उभे धुरौ वन्हिरापिब्दमानोऽन्तर्योनेव चरति
द्विजानिः
वनस्पति वन आस्थापयध्वं नि षू दधिध्वमखनन्त
उत्सम्॥

अर्थात् (अपिव्द मानः) हिनहिनाने वाला (वन्हिः) रथ का घोड़ा (उभे धुरौ) दोनों धुराओं के (योनौ अन्तः चरति) मध्य में दबा हुआ चलता है वैसा (द्विजानिः इव) एक समय दो स्त्रियां करने वाला पति दबा हुआ होता है। (वने) वन में (वनस्पतिं) घास आदि वनस्पतियों को (आस्थापयध्वं) ठीक प्रकार रखिये (उत्सं) तालाब (अखनन्त) खोदिये और (निषुदधिध्वं) जल का संग्रह कीजिये।

अर्थात् दो पत्नी करने से मनुष्य की उसी प्रकार दुर्दशा वा खींचातानी होती है जिस प्रकार टमटम में जुते हुए घोड़े की। दो पत्नियों का पति पूर्ण परतन्त्र होजाता है अतः एकपत्नीव्रत ही सर्वोत्कृष्ट है। (शेष पुनः)

[श्री सीता देवी के परित्याग की बात को हम अमान्य समझते हैं।—सम्पादक

एक आर्य दैनिक पत्र की आवश्यकता

(लेखक—श्री पं० गङ्गाप्रसादजी उपाध्याय एम. ए. मंत्री सार्वदेशिक सभा देहली)

आर्य समाज की मन्द गति को तीव्र करने के लिये आर्य मित्र तथा आर्य समाज के अन्य पत्रों में जो अनेक योजनायें प्रस्तावित हो रही हैं उनको मैं ध्यान पूर्वक पढ़ता रहा हूँ। इस से एक बात तो स्पष्ट ही है कि आर्य समाज के भिन्न भिन्न मस्तिष्क अपनी योग्यतानुसार इस बात की धुन में लगे हुये हैं कि आर्य समाज की उन्नति हो। यह बात अत्यन्त सन्तोषप्रद है। क्योंकि जिस सभा के सभ्य गण अपनी त्रुटियों को अनुभव करके उसकी उन्नति के चिन्तन मे लगे रहते हैं उसका ह्रास सम्भव नहीं है। परन्तु एक बात सोच रखनी चाहिये। यदि किसी सभा के सौ सदस्य सौ भिन्न भिन्न योजनायें प्रस्तावित करें तो उनमें से एक के भी व्यवहार में आने की संभावना नहीं है। कुछ योजनाओं को पढ़कर तो मैं यह समझने लगता हूँ कि यह आकाश गंगा मे स्नान करना चाहते हैं। यदि वह सफल हो जाये तो अत्यन्त हर्ष की बात होगी। लोग रोकिट तैयार कर रहे हैं कि चन्द्र लोक तक पहुंच सकें। फिर तो आकाश गंगा का अवगाहन भी कुमार–संभव में दिये हुये गौरी गिरीश की गगन यात्रा के वर्णन के समान हो जायेगा। मै तो प्रयाग की गंगा में डुबकी लगाकर ही संतुष्ट हो जाता हूँ। उन बड़ी बड़ी स्कीमों के विषय में कुछ नहीं कहता। जो हो सके वह अच्छा ही है। परन्तु एक योजना की उपयोगिता को मैं प्रतिक्षण अनुभव कर रहा हूँ। वह है आर्य मित्र के सम्पादक जी की प्रस्तावित दैनिक पत्र की योजना। आज मैं सार्वदेशिक सभा का मन्त्री हूँ। सभा की फायलें मेरे समक्ष हैं। सभा का विस्तृत कार्य भी मेरे सामने है। सभा ने श्री राजगुरु जी, श्री स्वामी अभेदानन्द जी, श्री कुंवर चांदकरण जी शारदा को नवाखोली भेजा। इस समय हमारे कई रिलीफ सेन्टर बंगाल और बिहार में काम कर करे हैं। हम हजारों रुपया सभा की ओर से भेज चुके हैं। और हजारों की मांग आ रही है समाजें अपनी शक्ति भर धन भेजने का यत्न कर रही हैं। परन्तु जनता को इसकी खबर नहीं। किसी पत्र ने भी राजगुरु जी या श्री अभेदानन्द जी का चित्र नहीं छापा न हमारे आर्य समाजी भाइयों को पता है कि क्या हो रहा है। हम विज्ञप्तियां भेजते रहते हैं परन्तु प्रेस हमारा तो है नहीं। हम को दूसरों की दया के पात्र हैं। जिसने जितना स्थान हमारी विज्ञप्तियों को दे दिया उसके इतने ही में हम कृतज्ञ हैं। उन्होंने पत्र अपने मिशन के लिये खोले हैं। हमारे मिशन के लिये नहीं। हमारे अच्छे से अच्छे पत्र साप्ताहिक हैं और श्री सम्पादक जी आर्य मित्र के कथनानुसार उनकी खबरें कम से कम १५ दिन की बासी होजाती है। यह अवस्था १९वीं शताब्दी में संतोषजनक हो सकती थी परन्तु १९४७ई० में तो कल रात की लन्दन की खबरें लोग आज सवेरे पढ़ना चाहते हैं। एक ही खबर की दो भिन्न २ प्रकार की टिप्पणियां आप पढ़ेंगे। कांग्रेस का पत्र 'हिन्दुस्तान टाइम्स' या 'लीडर' और प्रकारकी

टिप्पणी देगा और मुस्लिम लीग का 'डान' अन्य प्रकार की। वह भिन्न भिन्न लीडरों की अपने दृष्टि कोण से तसवीरें देंगे उनके कार्टून भी अलग अलग होंगे। रहा आर्य समाज इसको कौन पूछता है। कारण यह है कि आर्य समाज ने प्रेस की शक्ति को अभी समझा ही नहीं है। पिछले दिनों मुझे सिंगापुर का एक अंग्रेजी अखबार देखने को मिला। वह कादियानी मुसलमानों का था। कितना सुन्दर, मैं देखता ही रह गया। कादियानियों की आयु आर्य समाज की आयु से अधिक नहीं है। उनकी संख्या भी अधिक न होगी। परन्तु उनका प्रचार कितना जबरदस्त है वे इस पर रुपया खर्च करते हैं। उनके स्कूल और कालेज भी इतने नहीं जितने आर्य समाज के, परन्तु प्रेस की शक्ति का मूल्य वह समझते हैं और हम नहीं समझते। हमारा कोई दैनिक पत्र नहीं। हमारी जिव्हा अपनी नहीं दूसरों से उधार लेनी पड़ती है। इसलिये मेरे मन में यह तीव्र इच्छा हो रही है कि येनकेन प्रकारेण सार्वदेशिक सभा की ओर से एक अच्छा अंग्रेजी दैनिक होना चाहिये। मुस्लिम लीग का दैनिक 'डान' दिल्ली से निकलता है। आर्य समाज का दैनिक भी दिल्ली से निकले और शान से निकले। देखिये। हमने नोआखाली के लिये अपील निकाली। अपने साप्ताहिक पत्रों में हमारी ओर से काम तो फौरन शुरू हो गया। परन्तु संसार के समक्ष आया बहुत देर से। अतः हम चन्दे में भी पिछड़ गये। आज तो वह युग है कि सोओ और खोओ। हमारे आर्य भाई भी कहते हैं कि हम तो अब अमुक संस्था को दे चुके दुबारा कैसे दें। यह है फल दैनिक न होने का। आज कल संसार भर में एक स्वतन्त्र पत्र कोई भी नहीं है जो किसी पार्टी से सम्बन्ध नहीं रखते हों अपनी अपनी पार्टी के अपने २ पत्र हैं। आजकल तो गवर्नमेंट भी पत्रों के आधार पर चल रही है। अतः आर्य समाज का अच्छा उच्चकोटि का दैनिक हुये बिना काम चलेगा नहीं। मैं तो कहता हूं कि आप जो लाखों रुपये का काम कर रहे हैं उसका श्रेय पत्र न होने के कारण अपने को नहीं मिल रहा, अच्छा तो काम कैसे चले। मैंने सभा के कार्यालय में पूछताछ की। लोग कानों पर हाथ रखते हैं। दसलाख रुपये चाहिये कहां से आयेंगे। है तो बड़ी टेढ़ी खीर। लोग मुझसे कहते हैं दस लाख रुपया दो और कल हम काम शुरू करदें। बात है भी ठीक। रुपये का काम बातों से तो नहीं चलता। हवाई घोड़े दौड़ाये नहीं जा सकते, परन्तु मैं एक बात पूछता हूं। क्या समाज इस समय लाखों रुपया खर्च नहीं कर रहा? कर तो रहा है परन्तु संगठित रूप में नहीं, अलग अलग ढपली, अलग अलग राग।

मेरे मस्तिष्क में एक बात सूझी है वह यह कि यदि दस दस रुपये के एक लाख शेयर (हिस्से) इकट्ठे किये जायें तो एक सार्वदेशिकसभा की ओर से लिमिटिड कम्पनी बन सकती है। श्री स्वामी अभेदानन्द जी मेरे पास बैठे हुये हैं। उनका विचार है यदि आन्दोलन किया जाये तो काम शीघ्र ही पूरा हो सकता है। क्या दो हजार समाज और पचास लाख समाज के प्रेमी दस २ रुपये के एक लाख हिस्से नहीं खरीद सकते। कार्य मुश्किल तो है। आकाश गंगा का स्नान नहीं है। थोड़ा सा चलना पड़ेगा। मैं अभी निजी

तौर से पर सभा के कार्यकर्ताओं से कह रहा हूँ। अभी सभा में प्रस्ताव नहीं रखा है। रखूं भी किस मुंह से। खूंटी के बल रस्सी तनती है। यदि रुपये के जुड़ने की सभावना है तो सभा एक मिनट में मुझे स्वीकार पत्र दे देगी। यदि नहीं तो मेरे या किसी के हजार व्याख्यान भी काम नहीं करेंगे। मेरी इच्छा है कि लोग मेरे प्रस्ताव के व्यावहारिक पहलू पर अपनी सम्मति देवें। मैं छोटे मोटे पत्र के निकालने के पक्ष में नहीं हूँ क्योंकि उससे हंसी और हानि दोनों ही होंगी। जो हो वह भूमण्डल पर की सस्था के शान की चीज हो

(२)

मुझे यह जानकर हर्ष हुआ कि दैनिक पत्र के लिये मैंने जो प्रस्ताव आर्य जनता के समक्ष रक्खा उसका भली प्रकार स्वागत किया गया। सभी सम्पादकों ने मेरी अपील को समुचित स्थान दिया। आर्य मित्र के सम्पादक जी ने एक उत्साह जनक टिप्पणी लिखी और मुझे मौलिक वचन दिया कि वे मित्र द्वारा आन्दोलन करेंगे। कई मित्रों के बड़े उत्साह वर्धक पत्र आये हैं। एक मित्र लिखते हैं कि तुम दान तो मागते नहीं तुम तो कम्पनी के लिये शेयर मागते हो फिर क्या कारण है कि दस लाख जमा करने में देर लगे। बात तो ठीक है। कठिनाई कुछ नहीं केवल ध्यान देने की देर है। सार्वदेशिक सभा में रुपया सुरक्षित रहेगा। सार्वदेशिक सभा का कोष सदैव बड़े विश्वास पात्र लोगों के हाथ मे रहा है। मेरी धारणा है कि यदि पहले तीन वर्ष ब्याज की आशा छोड़ दी जाय तो चौथे वर्ष से कम मे कम सरकारी सेविंग बैंक का ब्याज तो मिलने ही लगेगा और कालान्तर मे ब्याज की मात्रा आशातीत हो सकेगी। पाच लाख जमा होने पर काम आरम्भ कर दिया जा सकता है। जब तक सभा पास न करे मैं रुपया नहीं माग सकता। परन्तु मैं चाहता हूँ कि अभी से सब समाज अपनी अन्तरंगों द्वारा पास करा रखें कि कितने शेयर वे खरीद सकेंगे। और अन्य भाई बहन भी यह सोच रक्खें कि वे कितने शेयर खरीद सकेंगे। यदि अपने विचारों को मुझे लिख भेजें तो मुझे सभा के समक्ष प्रस्ताव रखने में सुगमता होगी। यह काम एक साथ धावा बोलने से हो सकेगा। यदि शनैः शनै सोचने का यत्न किया जायेगा तो नहीं हो सकेगा। बात यह है कि लोग केवल जोश में काम करते हैं और जोश ठंडा होते ही बड़े से बड़े गम्भीर कामों को भूल जाते हैं। नतु नच की लड़ाई में मुख्य से मुख्य कार्य रह जाते हैं। आर्य भाई बहनों को चाहिये कि अपना काम समझ करें। मेरा नहीं। यदि एक बार जोश से काम आरम्भ कर दिया गया तो अवश्य ही सफलता प्राप्त हो जायेगी।

गगाप्रसाद उपाध्याय

सत्यार्थ प्रकाश का इस्लाम पर प्रभाव

(ले०—पं० धर्मदेवजी विद्यावाचस्पति देहली)

सिन्ध सरकार ने महर्षि दयानन्द की अमर कृति "सत्यार्थ प्रकाश" के चतुर्दश समुल्लास पर क्रिमिनल प्रोसीजर कोड की धारा ६६ ए के अधीन प्रतिबन्ध लगाते हुए जो कारण दिये थे उनमें यह लिखा था कि :—

(क) इस अध्याय में लेखक ने मुसलमानों के कई धार्मिक विश्वासों की मखौल उड़ाई है।

(ख) कुरान की शिक्षाओं को अशुद्ध रूप में रख कर उनका उपहास किया है।

(ग) मुहम्मद पैग़म्बर की सत्ता पर आक्रमण किया है और उसे तुच्छ करने का यत्न किया है।

(घ) आम तौर पर उक्त अध्याय में ऐसी बातें पाई जाती हैं जो मुसलमानों की धार्मिक भावनाओं को चोट पहुंचाने के लिये लिखी गईं और चोट पहुंचाती हैं।

इन कारणों की अयथार्थता के विषय में 'सार्वदेशिक' में पर्याप्त लिखा जा चुका है किन्तु इस लेख में जिस विशेष बात का मैं निर्देश करना चाहता हूँ वह यह है कि महर्षि दयानन्द जी ने अत्यन्त शुद्ध भाव से इस्लाम तथा अन्य मतों की बुद्धि-विरुद्ध और हानि कारक बातों की आलोचना की थी जिसका उद्देश्य किसी के दिल को दुखाना नहीं बल्कि उन्हें सत्य की ओर लाना था। यह कहना सर्वथा असत्य है कि उन्होंने कुरान की शिक्षाओं को अशुद्ध रूप में रखकर उनका उपहास किया है। सचाई यह है कि महर्षि दयानन्द के समय में तथा उससे पूर्व भी साधारणतया कुरान की आयतों का जो अर्थ बड़े २ मौलवी लोग लेते थे और जिस प्रकार के सिद्धान्तों का प्रचार करते थे उसे अधिकतर शाह रफीउद्दीन और कहीं २ शाह अबुल कादिर के कुरान के उर्दू अनुवादों से देवनागरी लिपि में करवा कर उनके आधार पर महर्षि ने युक्ति युक्त आलोचना की। उसका विचारशील मुसलमानों पर क्या प्रभाव हुआ और किस प्रकार उन्होंने अपने मन्तव्यों तथा उनकी व्याख्या मे परिवर्तन किया यह मैं इस लेख माला में दिखाना चाहता हूँ।

अपनी अमर कृति सत्यार्थ प्रकाश के चतुर्दश समुल्लास की अनुभूमिका में महर्षि ने लिखा:—

'यह लेख केवल मनुष्यों की उन्नति और सत्यासत्य के निर्णय के लिये, सब मतों के विषयों का थोड़ा २ ज्ञान होवे इससे मनुष्यों को परस्पर विचार करने का समय मिले और एक दूसरे के दोषों का खण्डन कर गुणों का ग्रहण करें। न किसी अन्य मत पर न इस मत (इस्लाम) पर झूठ मूठ बुराई व भलाई लगाने का प्रयोजन है किन्तु जो भलाई है वही भलाई और जो बुराई है वही बुराई सब को विदित होवे न कोई किसी पर झूठ चला सके और न सत्य को रोक सके और सत्यासत्य विषय प्रकाशित किये पर भी जिसकी इच्छा हो वह न माने वा माने किसी पर बलात्कार नहीं किया जाता। यह लेख हठ, दुराग्रह, ईर्ष्या, द्वेष, वाद विवाद और विरोध घटाने के लिये किया गया है न कि इनको बढ़ाने के अर्थ।'

महर्षि दयानन्द की इस पवित्र भाव से की गई आलोचना का विचारशील मुसलमानों पर विशेष प्रभाव पड़ा और उन्होंने अपने सिद्धान्तों और कुरान शरीफ की युक्ति युक्त, तर्क संगत व्याख्या का प्रयत्न किया जिसके कुछ उदाहरण यहां दिये जाते हैं।

महर्षि दयानन्द जी ने कुरान में वर्णित स्वर्ग (जन्नत) की व्याख्या करते हुए लिखा थाः—

'भला यह स्वर्ग है किंवा वेश्यावन ! इसको ईश्वर कहना वा स्त्रैण ! कोई भी बुद्धिमान ऐसी बातें जिसमें हों उसको परमेश्वर का किया पुस्तक मान सकता है ? यह पक्षपात क्यों करता है ? इत्यादि

सर सय्यद अहमद खां के स्वर्ग विषयक विचारः—

सर सय्यद अहमद खां जो महर्षि दयानन्द जी के सम कालीन और उनके प्रति बड़े आदर का भाव रखने वाले उनके मित्र थे (जैसे कि उनके देहावसान के पश्चात् अपने ६ नवम्बर १८८३ के अलीगढ़ ईन्स्टीच्यूट के लेख में महर्षि के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उन्होंने उन्हें अनुपम विद्वान् और श्रेष्ठ पुरुष बतया था जिनका प्रत्येक मत के पुरुषों का आदर करना चाहिये।) महर्षि के विचारों से अत्यधिक प्रभावित हुए थे। उन्होंने तफसीसुल कुरान भाग १ पृ० ४७ में स्वर्ग की मुस्लिम कल्पना के विषय में यों लिखाः—

"यह समझना कि जन्नत (स्वर्ग) मिस्ल एक बाग के पैदा हुई है, उस में संगमर्मर के और मोती के जड़ाऊ महल हैं, बाग में शराब व सर सब्ज दरख्त हैं, दूध व शराब व शहद की नदियां बह रही हैं, हर किस्म का मेवा खाने को मौजूद है, साकीव साकिनें निहायत खूब सूरत चांदी के कंगन पहने हुए जो हमारे यहां की घोसिनें पहनती हैं, शराब पिला रही हैं। एक जन्नती के गले में हार डाले पड़ा है, एक ने रान पर सर धरा है, एक छाती से लिपटा रहा है, एक ने जानबख्श का बोसा लिया है, कोई किसी कोने में कुछ कर रहा है, कोई किसी कोने में कुछ— ऐसा बेहूदापन है जिस पर ताज्जुब होता है। अगर बहिश्त यही है तो बेमुबालगा हमारे खराबात (वेश्यालय) इससे हज़ार गुना बेहतर हैं।" (तफसीरुल कुरान भाग १ पृ० ४४)

सर सय्यद अहमद खां ने इस्लाम के सिद्धान्तों की युक्तियुक्त और विज्ञान सम्मत व्याख्या का प्रयत्न किया और अहमदिया सम्प्रदाय के मौलाना मुहम्मदअली एम. ए. (प्रधान अहमदिया अंजुमने इशायते इस्लाम लाहौर) आदि ने उनके मार्ग का अनुसरण करते हुए कुरान की सर्वथा नवीन व्याख्या अपने अंग्रेजी और उर्दू भाष्य में की। जिन २ विषयों पर सत्यार्थप्रकाशादि में आक्षेप किये गये थे उनके अर्थों को तोड़ मरोड़कर बुद्धिसंगत बनाने का यत्न किया गया। स्वर्ग और नरक के विषय में मौलाना मुहम्मदअली ने अपने कुरान की अंग्रेजी भाष्य भूमिका में लिखा है कि—

"This shows clearly that paradise and hell are more like two conditions than two places." (Introduction to the Translation of the Holy Quran- by Maulana Muhammad Ali P.XIII)

अर्थात् इससे स्पष्टतया सिद्ध होता है कि जन्नत और दोजख दो अलग २ स्थान नहीं बल्कि अवस्थाएं हैं।

दूसरे स्थान पर मौलाना साहेब लिखते हैं:—

"The description of paradise as a garden with rivers flowing in it is only a parable........Nor are the fruits of paradise like the fruits of this life, because these are the fruits of the deeds done........Evidently the fruits of the deeds are meant here, and not the fruits that the earth grows.

Similar is the case with the water, the milk, the honey, the cushions, the thrones, the clothes, and the adornment of the next life; these descriptions are of the nature of parables."

Introduction (XII)

अर्थात् जन्नत का बाग के रूप में वर्णन जिसमें नदियां बह रही हैं केवल एक आलङ्कारिक है।................जन्नत के फल भी इस दुनिया के फलों के समान नहीं वे कर्मों के फल हैं।.......पानी, दूध, शहद, गद्दे, सिंहासन, कपड़े आदि इस जीवन की चीजें नहीं हैं। ये वर्णन आलङ्कारिक हैं। पृ० ५५ में मौलाना साहेब ने लिखा है कि "Heaven and hell are not places of enjoyment and torture to be met with only after death; they are realities even here." अर्थात् स्वर्ग और नरक मृत्यु के पश्चात् आनन्द और दुःख स्थान नहीं, वे यहीं विद्यमान हैं।

मौलाना साहब ने इस बात से भी इन्कार किया है कि दोजख में हमेशा के लिये रहते हैं। कुरान की एक दो आयतें उद्धृत करके मौलाना साहेब ने लिखा है:—"These verses clearly show the punishment in hell is not ever-lasting." अर्थात् दोजख की सजा हमेशा रहने वाली नहीं।

इस प्रकार के विचार स्पष्टतया सत्यार्थ-प्रकाशादि में की गई समालोचना से बचने के लिये किये गये हैं। महर्षि दयानन्द ने कुरान में पाई जाने वाली असहिष्णुता की सत्यार्थ प्रकाश के १४ वें समुल्लास में विशेष रूप से आलोचना की है। इस विषय में अपने विचार प्रकट करते हुए मौलाना मुहम्मद अली साहेब लिखते हैं कि—

"There is a very general and very deep-rooted miscon ception that the Quaran preaches intoler ance, and that Muhammed preaches his faith with the sword in one hand and the Quran in the other. Mis-conception could go no further. The basic principle of Islam, a faith in all the prophets of the world is enough to give the lie to this allegation.

Islam preaches equal love for all, and equal faith in all.

(Introduction to the Holy Quran)

अर्थात् एक अत्यन्त प्रचलित और बड़ा गहरा भ्रम यह है कि कुरान असहिष्णुता का प्रचार करता है और मुहम्मद साहेब ने एक हाथ में तलवार और दूसरे में कुरान लेकर प्रचार किया। पर यह अत्यन्त अधिक अशुद्ध भ्रम है। इस्लाम सबके लिये समान प्रेम, समान आदर, और सब में समान विश्वास सिखाता है। यह निश्चित बात है कि कुरान के पुराने भाष्यकारों और प्रचारकों ने इस प्रकार की सहिष्णुता का

क़ुरान की शिक्षा के आधार पर प्रचार न किया बल्कि ठीक इसके विरुद्ध रूप में उन्होंने क़ुरान की शिक्षा मानी थी जो इस्लाम के अतिरिक्त मत के अनुयायियों को काफ़िर मानकर उनके प्रति किसी भी प्रकार के व्यवहार को बुरा नहीं समझता।

क़ुरान में ख़ुदा के सिंहासन पर बैठने, बोलने, सुनने, प्रेम करने, नाराज़ होने आदि का अनेक स्थानों पर ज़िकर आया है और प्रायः सब भाष्यकार उसे शाब्दिक अर्थों में ही लेते रहे हैं पर मौलाना मुहम्मद अली इस अर्थ को स्वीकार नहीं करते वे लिखते हैं कि:—

"It is necessary to warn the reader against a misconception about the nature of the Divine Being. God is spoken of in the holy Quran as seeing, hearing, speaking. making, showing mercy, being displeased, loving etc, but the use of these words is by no means an indication of an anthromorphic conception of God, for, He is plainly stated to be above all material conception."

(Introduction to the Holy Quran by Maulana Mohammed-Ali M.A. P. 48)

अर्थात् ईश्वर के स्वरूप के सम्बन्ध में एक भ्रांति से पाठकों को सचेत करना आवश्यक है। क़ुरान में ईश्वर (अल्लाह) के देखने, सुनने, बोलने, बनाने, दया दिखाने का ज़िकर आता है पर इन शब्दों का प्रयोग ईश्वर की मनुष्यवत कल्पना का सूचक नहीं क्योंकि उसके विषय में स्पष्ट कहा गया है कि वह प्राकृतिक कल्पना से परे है।

क़ुरान २।२५५ में एक बड़ी प्रसिद्ध आयत है जिसका अर्थ शाह रफ़ीउद्दीन आदि सभी अनुवादकों ने यह किया था कि "समालिया है कुर्सी उस की ने आस्मानों को और ज़मीन को।" (देखो ताज कम्पनी का छपवाया क़ुरान शरीफ़ उर्दू १९४४ पृ० ६७) पर मौलाना मुहम्मद अली साहेब ने अपने अंग्रेज़ी अनुवाद में उसका अर्थ दिया है—

"His knowledge extends over the heavens and the earth and the preservation of them both ties him not, and He is the most High, the Great" (P. 46)

इसकी पाद टिप्पणी में मौलाना साहेब ने लिखा है "Kursi means knowledge" अर्थात् कुर्सी का अर्थ ज्ञान है। महर्षि दयानन्द ने इस आयत की समीक्षा करते हुए जो यह आक्षेप किया था कि जो वह कुर्सी है तो वह एक देशी है जो एक देशी होता है वह ईश्वर नहीं कहाता क्योंकि ईश्वर तो व्यापक है।" (समीक्षा स० ४१) उससे बचाव के लिए मौलाना साहेब ने कुर्सी का अर्थ ज्ञान कर दिया है। यहां महर्षि की आलोचना का प्रभाव स्पष्ट है। क़ुरान ६९।१७ में एक आयत आई है जिसका अर्थ शाह रफ़ीउद्दीन इत्यादि अनुवादकों ने यह किया था कि "फट जावेगा आस्मान बस वह उस दिन सुस्त होगा और फ़रिश्ते होंगे ऊपर किनारों उसके के और उठावेंगे अर्श रब तेरे ऊपर अपने उस दिन आठ शख्स।" (देखो ताज कम्पनी लाहौर का उर्दू क़ुरान पृ० ५४६)

इस पर महर्षि दयानन्द जी ने यह आलोचना की थी कि "जब क़ुरान का ख़ुदा शरीर-

धारी होने में कुछ सन्दिग्ध न रहा क्योंकि तख्त पर बैठना, आठ कहारों से उठवाना बिना मूर्तिमान् के कुछ भी नहीं हो सकता । और सामने वा पीछे भी आना जाना मूर्तिमान् का ही हो सकता है, जब वह मूर्तिमान् है तो एक देशी होने सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् नहीं हो सकता और सब जीवों के सब कर्मों को कभी नहीं जान सकता इत्यादि" (समीक्षा स० १४५)

अब देखिये इस समीक्षा से प्रभावित होकर मौलाना मुहम्मद अली साहेब इस आयत की क्या व्याख्या करते हैं, वे लिखते हैं:—"And the angles shall be on the sides there of, and above them eight shall bear on that day thy Lord's throne."

[Foot note]

The reference in eight bearers of the throne seems to be to the four chief attributes of the Divine Being mentioned in the opening Chapter by which the world subsists, the number being doubled on account of a new manifestation of these attributes on the day of resurrection Page 571

अर्थात् ८ उठाने वालों से तात्पर्य प्रारम्भिक अध्याय में वर्णित ईश्वर के ४ गुणों (सब व्यक्तियों को वृत्ति देना प्रेम. दया और दण्ड) से है जिनके नूतन आविर्भाव के कारण पुनरुत्थान के दिन संख्या दुगुनी हो जाती है।

यह व्याख्या यद्यपि सर्वथा कल्पित असन्तोष जनक तथा खेंचातानी की है तथापि जिस किसी तरह महर्षि की आलोचना से बचने के लिये की गई प्रतीत होती है। मौलवी साहेब को स्वयं भी इस की यथार्थता में काफी सन्देह होगा तभी Seems शब्द का उन्होंने प्रयोग कर दिया है।

(क्रमशः)

साहित्य-समीक्षा

(समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की २ प्रतियां भेजनी चाहियें)

The Light of Truth or the Sotyarth Prakash—Translated by Pt. Ganga Prasad ji Upadhyaya M. A.
Kala Press, Allahabad. Price Rs. 5

महर्षि दयानन्द की अमर कृति सत्यार्थ प्रकाश के अंग्रेजी अनुवाद की शिक्षित जनतामें बड़ी भारी मांग थी। उस मांग की पूर्ति सुयोग्य सुप्रसिद्ध आर्य विद्वान् श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम.ए. ने जो सौभाग्यवश अब सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री हैं इस नवीन अंग्रेजी अनुवाद के द्वारा कर के आर्य समाज की बड़ी भारी सेवा की है। इसकी बड़ी भारी विशेषता यह है कि आवश्यक स्थानों पर बहुत उत्तम टिप्पणियां विषयों के स्पष्टी करणार्थ दे दी गई हैं जिससे इस संस्करण की उपयोगिता बहुत अधिक बढ़ गई है। दार्शनिक कठिन स्थलों को भी विशेष रूप से इन टिप्पणियों द्वारा स्पष्ट कर दिया गया है। कागज की कठिनाइयों के कारण इस अत्यन्त उपयोगी संस्करण की अधिक प्रतियां नहीं छप सकीं यह खेद की बात है। इसके मंगवाने में आर्यसमाजों तथा सज्जनों को शीघ्रता करनी चाहिये ताकि शिक्षित जनता में प्रचार का इसे उपयोगी साधन बनाया जा सके। मान्य लेखक महोदय ने जो परिश्रम इस अनुवाद और विशेषतः अत्यन्त उपयुक्त टिप्पणियों के लिखने में किया है हम तदर्थ उनका हार्दिक अभिनन्दन करते हैं। यह पुस्तक सार्वदेशिक सभा पुस्तक भंडार देहली से भी मिल सकती है।

हम क्या खाएं घास या मांस

लेखक श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए०
मुद्रक तथा प्रकाशक कला प्रेस प्रयाग मूल्य १।)

इस लगभग १६० पृष्ठ की पुस्तक में सुयोग्य लेखक महोदय ने संवाद के रूप में मांसाहार के प्रश्न पर बड़ा उत्तम विवेचन करते हुए उसे सर्वथा अनुचित बताया है। जीव के लक्षण, अहिंसा का प्रश्न, वृक्षों में जीव, मांस और सायंस डाक्टरों की रायें, मांस और क्षत्रिय जाति, आर्य समाज की मांस पार्टी, स्वामी दयानन्द के विचार मांस और बल इत्यादि विषयक अध्याय विशेष रूप से पढ़ने योग्य हैं।

दुर्भाग्यवश मांसाहार का शिक्षित जनता में प्रचार बढ़ता जा रहा है। उसके विरुद्ध युक्तियुक्त प्रचार की आवश्यकता है। इस पुस्तक के द्वारा यह कार्य भली भांति हो सकता है अतः इसका खूब प्रचार किया जाना चाहिए। आर्य प्रादेशिक सभा लाहौर के प्रधान श्री० ला० खुशहालचन्द्र जी का १६-१-४५ का अपने नाम लिखा पत्र सुयोग्य लेखक ने पृ० १०८ पर उद्धृत किया है कि इस सभा (प्रादेशिक सभा) की मांस के सम्बन्ध में वही पोजीशन है जो महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज की थी अर्थात् मांस भक्षण वेद अनुकूल नहीं है। आशा है इस (आर्य प्रादेशिक सभा की १५-१-४५ की अन्तरङ्ग के) प्रस्ताव से सारी निराधार शंकाएं दूर हो जाएंगी। मै आपकी सेवा में निवेदन करना चाहता हूँ कि इस सभा ने अपने जन्मकाल से ले कर आज

तक कभी भी मांस का पक्ष नहीं लिया अपितु सदा खण्डन किया है।"

मांसाहार के प्रश्न पर इतना उत्तम युक्तियुक्त और मनोरंजक रूप में किया विवेचन अन्य किसी पुस्तक में मैंने नहीं देखा अतः यह पुस्तक विशेष उपयोगी, संग्रहणीय और प्रचार करने योग्य है।

Dayananda's Verdict on Meat-diet— Pt. Satyananda Shastri M.A.M-O L. Publishad by Swami Vedanand ji Tirth Director Virajananda Vaidik Sansthan Lahore Price As. 6

इस ३६ पृष्ठ की पुस्तक में श्री प० सत्यानन्द जी शास्त्री एम० ए० ने ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य, सत्यार्थप्रकाश, गोकरुणानिधि तथा पत्रों से उद्धरण देकर सिद्ध किया है कि वे मांस भक्षण के कट्टर विरोधी थे। संग्रह बड़े परिश्रम से किया गया है तथा प्रशंसनीय हैं। ऋषि दयानन्द का अनुयायी अपने को कहते हुए फिर मांसादि का सेवन करना अत्यन्त निन्दनीय है।

हमारा नाम आर्य है हिन्दू नहीं

लेखक श्री स्वामी वेदानन्द जी तीर्थ अध्यक्ष विरजानन्द वैदिक संस्था लाहौर मूल्य ।–)॥

इस पुस्तिका में 'हिन्दू संगठनी और आर्य' के संवाद के रूप में आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री स्वामी वेदानन्द जी ने शास्त्रीय तथा ऐतिहासिक दृष्टि से आर्य शब्द की अत्यधिक प्राचीनता और 'हिन्दू' शब्द की अत्यन्त अर्वाचीनता तथा निन्दासूचकता को सप्रमाण सिद्ध किया है। 'सिन्धु' से हिन्दू शब्द बना है इस को भी सिन्ध नदी और सिन्ध प्रान्त का उदाहरण देकर उत्तम सिद्ध किया गया है। हम लेखक महोदय के विचारों से सर्वथा सहमत हैं कि हमारा प्राचीन नाम आर्य है जो श्रेष्ठ, धर्मात्मा, सदाचारी का वाचक है हमें उसी को अपनाना चाहिए और ऐसा कर के हम बौद्ध, जैन, पारसी सब को आर्यजाति के संगठन में ला सकते हैं। पुस्तक अत्यन्त परिश्रम तथा विद्वत्ता से लिखी गई है और प्रचार योग्य है। विरजानन्द वैदिक संस्थान ऐसे उपयोगी प्रकाशनों द्वारा बड़ा प्रशंसनीय कार्य कर रहा है।

दयानन्द—मूल लेखक सुप्रसिद्ध योगी श्री अरविन्द जी।

अनुवादक—आचार्य अभयदेव जी विद्यालङ्कार
प्रकाशक—श्री अरविन्द निकेतन कनाट सर्कस नई देहली मूल्य ॥)

इस पुस्तिका में जगद्विख्यात योगी श्री अरविन्द के ऋषि दयानन्द विषयक दो अंग्रेजी लेखों 'Dayananda The man and his work' तथा 'Dayananda and Veda' का आर्य भाषानुवाद गुरुकुल कांगड़ी के भू० पू० आचार्य स्वामी अभयदेव जी ने प्रकाशित किया है। ये दोनों लेख अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं जिनमें श्री अरविन्द ने ऋषि दयानन्द के प्रति श्रद्धाञ्जलि निम्न भावनाओं के शब्दों में समर्पित की है—

जब मैं परमेश्वर के कारखाने के इस दुर्दम्य कारीगर की मूर्ति का ध्यान करता हूँ तो मेरे सामने झुण्ड के झुण्ड चित्र आने लगते हैं जो चित्र सब के सब लड़ाई के, कार्य के, विजय के, विजयी परिश्रम के चित्र हैं। तब मैं अपने आप को कहता हूँ यह है दिव्य प्रकाश का सैनिक, परमेश्वर के जगत् का योद्धा, मनुष्यों और संस्थाओं को बनाने वाला शिल्पकार और

आत्मा के सन्मुख प्रकृति जो कठिनाइयां उपस्थित करती है उनका निर्भीक और अदम्य विजेता। इस सबकी, यदि सारांश में कह दूं तो जो जबर्दस्त छाप मुझ पर पड़ती है वह है आध्यात्मिक व्यवहार्यता की। आध्यात्मिक और व्यवहार्यता—जो कि आम तौर पर हमारी विचार कल्पना में एक दूसरे से इतने विपरीत समझे जाते हैं—इन दो शब्दों को जोड़ कर बोल देना मेरी समझ में दयानन्द की परिभाषा ही कर देना है (दयानन्द पृ० १२) 'वह (दयानन्द) एक मनुष्य था जिसकी आत्मा में परमेश्वर था, जिसकी आंखों में दिव्य दृष्टि थी और जिसके हाथों में उस दिव्य दृष्टि के अनुसार जीवन में से आकृतियों को घड़ देने की शक्ति थी।' इत्यादि

दयानन्द और वेद विषयक अपने अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण लेख में सायणाचार्यादि मध्यकालीन भाष्यकारों और अनेक पाश्चात्य विद्वानों के वेद विषयक विचारों की आलोचना कर ऋषि दयानन्द के ईश्वरीय ज्ञान, वैदिक एकेश्वरवाद, वेद में विज्ञानादि मन्तव्यों का प्रबल समर्थन करते हुए उपसंहार में लिखा है कि 'वेद की व्याख्या के विषय में, मेरा पूरा विश्वास है कि (चाहे वेद की अन्तिम पूर्ण व्याख्या कोई भी हो) दयानन्द उसके सत्यसूत्रों के प्रथम आविष्कर्ता के तौर पर सदा आदृत किये जायेंगे। यह दयानन्द की प्रत्यक्षदर्शी चक्षु थी जिसने पुराने अज्ञान और लम्बे युग से चली आती नासमझी को गोलमाल और अन्धकार के बीच में से चीर कर सत्य को सीधे देखा और अपनी दृष्टि को वहां आबद्ध किया जो कि अत्यन्त महत्वपूर्ण वस्तु थी। उसने उन द्वारों की कुंजी प्राप्त कर ली जिन्हें कि काल ने बन्द कर रक्खा था और इन पड़े निर्झरों के मुख पर से उन्हें बन्द करने वाली सील (मोहर) तोड़ फैंकी।"

इन महत्वपूर्ण लेखों का आर्यभाषानुवाद भी अत्युत्तम हुआ है। हम इस अत्यन्त उपयोगी लघु पुस्तक का शिक्षित जनता में विशेष प्रचार चाहते हैं। धर्मदेव विद्यावाचस्पति

स्वामी श्रद्धानन्द की जायदाद

(लेखक—श्री पं० मदनमोहनजी वेदालंकार विद्यासागर तनाली-मद्रास)

इस जगत् मे लाखों महान् पुरुष हुए हैं। सब की अपनी २ विशेषतायें हैं। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज मे मुझे दो विशेषतायें बहुत स्पष्ट दृष्टिगोचर होती हैं। पहली तो उनके जीवन सम्बन्धी हैं अर्थात् उन्होंने यत्नपूर्वक अपने जीवन का निर्माण किया। वे औरों द्वारा बनाये गये बड़े नहीं थे। स्वयं बने हुए बड़े थे। उन्होंने सदाचार पूर्वक जीवन व्यतीत कर उसे शुद्ध निर्मल किया था।

दूसरी विशेषता उनका निर्माणशील होना है। अपने जीवन मे बहुत कम व्यक्ति ऐसे होते हैं जो कुछ निर्माण कर जाते हैं। कुछ न कुछ करने वाले तो सैकड़ों क्या, लगभग सभी होते हैं। पर 'करना ही करना नहीं। किसी विशेष उद्देश्य को सामने रख कर किसी विशेष चीज का निर्माण करने वाले बहुत कम होते हैं। इनमें से विरले ही ऐसे होते है, जिनकी कृति मे अद्भुतता अनोखापन हो।

निस्सन्देह महामना मालवीय जी का 'हिन्दू विश्वविद्यालय उनकी महान् निर्माणशक्ति का उज्ज्वल दृष्टान्त है। तथापि उसमे नवीनता या अनोखापन कुछ भी ढूंढने को नहीं मिलेगा। भारतदेश मे बने इस विश्वविद्यालय मे भारतीयत्व के रंग की एक छींट भी तो नहीं।

दूसरी तरफ श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने जो गुरुकुल की स्थापना की, उसमे सर्वथा नवीनता थी, अनोखापन था। उसके द्वारा कुछ नवीन ऋषि मुनियों के निर्माण की बात थी। पर हिन्दू विश्वविद्यालय मे यह कुछ भी नहीं।

* * *

उन्होंने गुरुकुल खोला और उसे २५ वर्ष का तरुण बना कर छोड़ गये। यही उनकी सब से बड़ी जायदाद है, इसकी रक्षा करने का भार किस पर है?

साधारण जन कहेंगे कि जिसके लिये खोला गया। यही हमारी सब से भारी भूल है।

निस्सन्देह दुकान प्रजा के लिए खुलती है, पर उसके सचालन व्यवस्था का भार उस पर नहीं। जब उससे जनता को अच्छा माल मिलेगा स्वय उस पर जमा होगी और इससे दुकान फलेगी फूलेगी। पर सचालन करने वाले तो दुकानदार के निकटवर्ती ही होंगे।

वे कौन हैं?

गुरुकुल के प्रथम स्नातक से लेकर सन् २५ तक के स्नातक। क्योंकि इनका उनके साथ साक्षात् सम्बन्ध रहा है। यह वग स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की भावनाओं चेष्टाओं को सबसे अधिक अच्छी प्रकार से समझने वाला है। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज के मन मे गुरुकुल-स्थापना के समय कोन से पवित्र भाव थे, यद्यपि उस समय तो यह वर्ग भी पूर्ण तौर पर हृदयंगम नहीं कर सका होगा तथापि थोरे २ उस आभा से आलोकित अवश्य हुआ होगा।

इसलिये मै इस जायदाद को सम्भालने के लिये इस वर्ग की जिम्मेवारी बता रहा हूँ।

पर दुःख तो इस बात का है कि इस वर्ग

का कोई भी सदस्य आगे नहीं बढ़ता। इस वर्ग वाले दूसरे आर्य भाइयों पर गुरुकुल की उपेक्षा करने का दोष तो लगाते हैं, पर स्वयं कुछ नहीं करते। यह चीज उनकी है। अवांछनीय हाथों में से इसे छीन लेने का अधिकार भी इनको है। अपनी जायदाद जाने पर हम उसको लेने का प्रयत्न करते हैं या नहीं? केवल गालीमात्र देकर रह नहीं जाते। तो फिर इस मामले में इस स्नातकवर्ग की इतनी उपेक्षा क्यों?

कई कहेंगे कि हम तो सम्भालने को तय्यार हैं, हमें सम्भालने देते नहीं। क्या नपुंसकों की वाहियात बातें? आप चाहें सम्भालना और कोई ताकत रोके? असम्भव। सच्चे दिल से पक्की लगन से आप आगे तो आते नहीं आप चाहें तो गुरुकुल से दूर रह कर अपने २ व्यापार चलाना, तो फिर यह जायदाद कैसे न दूसरों के हाथ में जावे?

इसलिये बलिदान दिवस के समय उनके उत्तराधिकारियों के सामने नम्र निवेदन करना है। अब भी समय है। त्यागभाव से आगे बढ़ कर इस अंगूर की बेल को अपने खून से सींचो ताकि यह अधिक मीठा फल दे, हरी-भरी हो जावे।

[यह लेख 'सार्वदेशिक' के श्री श्रद्धानन्दाङ्क के लिये लिखा गया था किन्तु खेद है कि विलम्ब से प्राप्त होने और स्थानाभाव से उसे प्रकाशित न किया जा सका। सुयोग्य लेखक महोदय ने जो विचार प्रकट किये हैं वे स्नातकों के लिये विशेष मननीय हैं। —सम्पादक सा० दे०]

आर्य कुमार जगत्

आ० कु० परिषद् के कुछ महत्वपूर्ण निश्चय—

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषत् की अन्तरङ्ग सभा का अधिवेशन १ जनवरी को मध्यान्होत्तर आर्य समाज गंज मुरादाबाद में श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति का० प्रधान आर्य कुमार परिषत् के सभापतित्व में हुआ जिसमें अनेक महत्व पूर्ण प्रस्ताव स्वीकृत किये गये। निम्न लिखित विशेष उल्लेखनीय हैं।

१ आर्य व्याख्यान सङ्घ की योजना प्रस्तुत हुई तथा यह निश्चय किया गया कि इस समय मुरादाबाद, देहली व कानपुर में निश्चित रूप से आर्य व्याख्यान संघ की स्थापना की जाए।

२ प्रान्तीय संगठनों के विषय में निश्चय हुआ कि निम्न लिखित प्रान्तीय परिषदों को स्वीकृत किया जाए।

१ पंजाब प्रान्तीय आर्य युवक परिषत् लाहौर
२ संयुक्त प्रान्तीय आर्य कुमार परिषत् गाजियाबाद
३ बिहार प्रान्तीय आर्य कुमार परिषत्

३ आर्य कुमार सभाओं एवम् भ० भा० आर्य कुमार परिषत् के विधान में परिवर्तन करने के विषय में निश्चय हुआ कि निम्न उप समिति का संगठन किया जाए जो आर्य नेताओं एवम् आर्य कुमार सभाओं से परामर्श करके आवश्यक विधान तय्यार करें और उसे आगामी अन्तरङ्ग के सम्मुख स्वीकृतार्थ रक्खें।

१ श्री राममोहन मन्त्री
२ „ उमेशचन्द्र जी
३ „ हरिश्चन्द्र जी आर्य

यह भी निश्चय हुआ कि इन संशोधनों को स्वीकृत करने के लिये २४, २५ मई सन् १९५७ शनिवार एवं रविवार को परिषत् का नैमित्तिक अधिवेशन मुरादाबाद में किया जाए।

४ सर्व सम्मति से निम्न लिखित अन्तरङ्ग सभासद् निर्वाचित हुए—

१ श्री सत्य प्रकाश जी गोयल, प्रयाग
२ श्री भगवान् दास जी एम० ए० प्रधान पंजाब आर्य युवक परिषत, लाहौर
३ श्री देवराज जी एम० ए० उप प्रधान आर्य युवक परिषत लाहौर

राम मोहन सिद्धान्त शास्त्री
मन्त्री भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषत्

आर्य कुमार और जाति भेद निवारक आन्दोलनः—

यह सर्व सम्मत सिद्धान्त है कि किसी भी समाज और राष्ट्र का भविष्य अधिकतर कुमार कुमारियों तथा युवक युवतियों पर निर्भर होता है। जन्मसिद्ध वर्ण व्यवस्था या जाति भेद ने किस प्रकार समाज की शक्ति को छिन्न भिन्न करके उसे असंगठित तथा शिथिल कर रक्खा है, किस प्रकार यह संकुचित भावना को बढ़ाने वाला तथा अस्पृश्यता के अभिशाप का मूल कारण है यह बताने की आवश्यकता नहीं। मेरा यह निश्चित विश्वास है कि आर्य कुमार यदि इस जातिभेद और अस्पृश्यता की समाज हित घातक कुप्रथा के विरुद्ध प्रबल क्रियात्मक आन्दोलन करें तो आर्य समाज तथा उस द्वारा प्रवर्तित संगठन, शुद्धि और दलितोद्धार के

आन्दोलनों का भविष्य अत्यन्त उज्ज्वल हो सकता है। मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई है कि आर्य कुमार तथा युवक अपने इस विषयक कर्तव्य को अनुभव करने लगे हैं। 'सार्वदेशिक' के गत नवम्बर सन् १९४६ के अङ्क तथा अन्य पत्रों द्वारा जब मैंने उन अविवाहित आर्य युवकों की सूची मांगी जो आवश्यकतानुसार पूर्वी बंगाल की पीड़ित, अपहृत अथवा जबर्दस्ती मुसलमान बनाई हुई कन्याओं से विवाहार्थ उद्यत हों तो मेरे पास चारों ओर से पर्याप्त संख्या में ऐसे युवकों के नाम आए तथा अब भी आ रहे हैं जो ऐसा करने को उद्यत हैं। आर्य समाज रिलीफ सोसाइटी कलकत्ता के मन्त्री जी तथा श्री ओं प्रकाश जी स० प्रधान सेनापति आर्य वीरदल को ऐसी सूची शीघ्र भेजने को लिख रखा है। मैं चाहता हूँ कि समस्त उत्साही अविवाहित आर्य युवक जातिभेद की वर्तमान कुप्रथा की हानियों को अनुभव करते हुए निम्न लिखित व्रत पत्र को भरकर मेरे पास अपने विवरण सहित भेज दें। जिससे जातिभेद निवारक आन्दोलन को प्रबल बनाने में विशेष सहायता मिले। यह फार्म जातिभेद निवारक आर्य परिवार संघ द्वारा स्वीकृत होकर छपाया गया है पर इसे स्वयं लिखकर विवरण सहित भेजना और भी उत्तम होगा।

मेरी प्रबल इच्छा है कि अधिक से अधिक अविवाहित कुमार कुमारियां (जो विवाह योग्य आयु के हैं) इस व्रत पत्र को भरकर मेरे पास भेज दें।

व्रत पत्र

अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्। इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि ॥

मैं ईश्वर को साक्षी करके प्रतिज्ञा करता/करती हूँ कि मैं अपना विवाह जन्मगत जात पात तोड़ कर करूंगा/करूंगी। ईश्वर मुझ को इस व्रत के पालन करने की शक्ति प्रदान करें।

हस्ताक्षर..

पूरा पता..

वृत्ति..

तारीख..

साक्षी..

धर्म देव विद्यावाचस्पति

का० प्रधान अ० भा० आर्य कुमार परिषत्,

उपाध्यक्ष जातिभेद निवारक आर्य परिवार संघ

बलिदान भवन, देहली।

आर्य-जगत् से अपील

माननीय महोदय!

आर्यकुमारों में सच्चरित्रता, सद्भावनाएं, कर्मनिष्ठता एवं वैदिक विचारों का प्रचार करने के लिये भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् का यह सङ्गठन लगभग ३५ वर्षों से सतत प्रयत्नशील है। आर्य समाज में नवस्फूर्ति एवं नवजीवन प्रदान करने के लिये नए खून की आवश्यकता दिन पर दिन दिखाई पड़ती है। ऐसी परिस्थिति में कुमारों में उत्साह की भावनाओं को भरना आपका कर्तव्य है। कुमार कार्यकर्ता हैं, आप हैं उनके संरक्षक। इसलिये अपने संरक्षण के भार को पूरा करने के लिए, उनकी सहायता के लिये कटिबद्ध होना आपका परम कर्तव्य है। इस वर्ष कुमारों की एकमात्र प्रतिनिधि संस्था भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषत् ने अपने सामने निम्न योजनाएं रक्खी हैं।

१–परिषद् की धार्मिक परीक्षाओं का प्रचार।

२–आर्यकुमार छात्रावासों की स्थापना।

३–आहार विज्ञान एवं शिष्टाचार के प्रचार के लिये पैम्फलेट, पुस्तक एवं कलेण्डर तैयार कराना।

४–स्वाध्याय, सत्सङ्ग, सदाचार, सेवा भाव और सङ्गठन की प्रवृत्ति को जागृत करने के लिये शिक्षा शिविरों (Training Camps) का आयोजन।

५–आर्यकुमार व्याख्यान केन्द्रों की स्थापना और लेखमालाओं का प्रकाशन।

६–दहेज, तम्बाकू, गन्दे सिनेमाओं का बहिष्कार एवं समाजोपयोगी नियमों का प्रचार।

७–आर्यकुमार पत्र एवं आर्यकुमार डायरी का पुनः प्रकाशन।

८–अखिल भारतीय वाद-विवाद प्रतियोगिता का आयोजन।

९–कुमार सभाओं का संरक्षण निरीक्षण एवं संगठन।

१०–राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार।

उपर्युक्त योजनाओं मे से कतिपय योजनायें कार्य रूप में परिणत भी की जा चुकी हैं। हर्ष का विषय है कि उनमें हमें सफलता भी मिली है परन्तु इन सब कार्यों के लिए धन की आवश्यकता है। आर्यकुमार कार्य करें और उनके सामने धनकी अड़चन पैदा हो यह आर्यसामाजिक जगत्के लिए अत्यन्त लज्जास्पद है। इसलिये परिषद् ने निश्चय किया है कि समस्त भारतवर्ष में १००० प्रतिष्ठित सभासद् बनाए जायँ। प्रत्येक प्रतिष्ठित सभासद् से कमसे कम ५) लिया जाय, धनी व्यक्तियों से अधिक भी संग्रह किया जाय किन्तु इससे छोटी रकम को स्वीकार न किया जाय। आपके सामने है उपर्युक्त कार्यक्रम एवं परिषद् का अब तब का कार्य विवरण। हमारा समस्त आर्य पुरुषों से निवेदन है कि जहां वे बच्चोंके लिये खेल खिलौने एवं मिठाई के लिये व्यय करेंगे वहां अपने बच्चों और कुमारों को धार्मिक शिक्षा तथा सदाचार निर्माण के लिये भी कम से कम पांच रुपये दें। यदि आपने इस विषय में पूर्ण सहायता की तो हम इस विषय से निश्चिन्त होकर अपनी शक्ति को अन्य कार्यक्रमों को पूर्ण करने में लगा सकेंगे। आपका इतना सा ही सहयोग हमें शक्ति प्रदान करने में समर्थ होगा। हम आशा करते हैं कि आप इस विषय में पूर्ण सहायता कर आर्यकुमारों को कार्य करने के लिये प्रोत्साहन देंगे।

घनश्यामसिंह गुप्ता
प्रधान आर्य कुमार परिषद्

[माननीय प्रधान जी की इस अपील के समर्थन में कुछ भी लिखने की आवश्यकता नहीं। आर्य कुमारों और कुमारियों के अन्दर धार्मिक जागृति उत्पन्न करने तथा उनमें समाज सेवा की भावना भरने का आर्य कुमार परिषद विशेष रूप से प्रयत्न कर रही है और इस प्रयत्न की सफलता पर ही आर्य समाज का भविष्य बहुत कुछ निर्भर है इसमें सन्देह नहीं किन्तु अभी तक आर्थिक अवस्था के अत्यन्त दुर्बल होने के कारण परिषत् अपनी कई योजनाओं को कार्य रूप में परिणत करने में समर्थ नहीं हो सकी। मेरा समस्त आर्य धर्म प्रेमियों से निवेदन है कि माननीय प्रधान जी की अपील का उदारता पूर्वक क्रियात्मक उत्तर अति शीघ्र देने की कृपा करें। समस्त धन श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक कोषाध्यक्ष, आर्य कुमार परिषत्, बलिदान भवन

देहली के पते पर भेजा जाए जिसकी नियमित रसीद धन्यवाद पूर्वक भेजी जाएगी।

धर्म देव विद्यावाचस्पति

का० प्रधान आर्य कुमार परिषत् देहली]

आर्य कुमार सभाओं के मन्त्रियों से

श्रीमान् जी नमस्ते।

आप को यह सूचित किया जाता है कि संयुक्त प्रान्तीय आर्य कुमार सम्मेलन जो ३-४-५ दिसम्बर को फैजाबाद में होने जा रहा था, वह किन्हीं आवश्यक कारणो से न हो सका उसकी तिथियां २-२७-२८ जनवरी १९४७ रविवार, सोमवार मंगलवार निश्चित हुई है।

आपको एक प्रतिनिधि पत्र भेजा गया है। जिसे कि आपको २० जनवरी १९४७ से पूर्व तक कार्यालय में भरकर वापिस कर देना है। १० सदस्यों पर केवल एक प्रतिनिधि भेजा जा सकता है। एक प्रतिनिधि का शुल्क १) है। जिन कुमार सभाओं का वार्षिक शुल्क अभी तक प्रान्तीय कार्यालय अथवा भारत वर्षीय आर्यकुमार परिषद् मुरादाबाद के कार्यालय में नहीं पहुंचा है उनको सम्मेलन के अवसर पर होने वाले वार्षिक अधिवेशन में भाग लेने का अधिकार न होगा। अतः प्रत्येक कुमार सभाको शीघ्रातिशीघ्र अपना वार्षिक शुल्क १० सदस्यों पर १) के हिसाब से प्रान्तीय कार्यालय में भेज देना चाहिये। जिन कुमार-सभाओं ने वार्षिक शुल्क भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् मुरादाबाद के कार्यालय में भेज दिया है उनको यह राशि भेजना आवश्यक नहीं है।

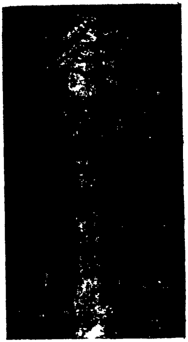
सम्मेलन श्रीयुत महेन्द्र प्रतापजी शास्त्री प्रिंसिपल डी० ए० वी० कालेज लखनऊ के सभापतित्व में हो रहा है।

जिन कुमार सभाओं को पत्र न मिल सके वे इस ही निमन्त्रण समझें।

विनीतः—ब्रज मोहन

मन्त्री, संयुक्त प्रान्तीय आर्य कुमार परिषत, गाजियाबाद

एक दान वीर आर्य



(श्री० मोतीलाल जी आर्य)

लाडनूं (मारवाड़) में आर्य समाज की स्थापना तथा समाज मन्दिर के निर्माण के समय श्री० मोतीलाल जी आर्य ने अपनी दान राशि का निम्न रूप से वितरण किया—वि० सं० १९८७ में आर्य समाज मन्दिर की भूमि खरीद कर उस पर इमारत बनवाई, जिसमें ४२५१) रु० व्यय हुए। उसका व्यौरा इस प्रकार है कि १६००) तो इमारत बनवाने में व २००) फुटकर पर्व एवं उत्सवादि में, ४५१) समाज मन्दिर के मुकदमे में और २०००) के करीब इन रुपयों पर ब्याज।

अब श्री० मोतीलाल जी आर्य ने श्रीमती आर्य-प्रतिनिधि सभा राजस्थान व मालवा तथा आर्य समाज लाडनूं को एक दान पत्र लिखकर अनुकरणीय आदर्श उपस्थित किया है। इनमें मोतीलाल जी आर्य का आग्रह है कि इमारत बनवाने की जो १६००) की राशि हैं, उसे मेरे बड़े भ्राता स्वर्गीय श्रीयुत नरसिंह लाल जी के नाम से एक स्मारक पत्थर पर खुदवाकर लाडनूं समाज मन्दिर में लगवा दिया जावे, जो श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान व मालवा के हुक्म से मोतीलाल जी आर्य अपने खर्च से लगवा सकते है।

पूर्वी बंगाल और आर्यसमाज

(ले०—श्री पं० विद्यानन्द जी वेदालंकार स० मन्त्री आर्यसमाज रिलीफ सोसाइटी कलकत्ता)

आर्य समाज ने पीड़ित भाइयों की सेवा के लिये पूर्व बंगाल में काम आरम्भ कर दिया है। इसके लिये उसने आर्य समाज रिलीफ सोसायटी, कलकत्ता (१६ कार्नवालिस स्ट्रीट) की स्थापना की है।

पारस्परिक सम्बन्ध अनुभव करके अधिक से अधिक क्रियाशील जाति अपनी विपत्ति में रक्षा कर सकती है। विपत्ति में पड़कर जाति के लोग उपेक्षित और निराश्रित न रह जांय, किन्तु सभी के प्रेम और सहानुभूति को पाकर महान् शक्तिशाली हाथों में अपने को सुरक्षित समझें। इस प्रकार सुदूर बसे भी भाइयों से अपना सम्बन्ध समझकर निर्भय बन सकें। यह विश्वास देकर ४० करोड़ बसे भाइयों में भ्रातृ भाव पैदा करना आर्य समाज का काम है। केवल शरीर से रहने वाले ४० करोड़ की संख्या जड़वत् है। वे अपना सम्बन्ध पहचाने बिना एक दूसरे के प्रति निश्चेष्ट रहते हैं। जब प्रत्येक व्यक्ति यथाशक्ति भाई को सहायता देने की वृत्ति सीखेगा तभी हम ४० करोड़ बन्धु बन सकेंगे।

४० करोड़ को एक भ्रातृभाव में गूंथने का प्रयत्न आर्य समाज का काम है। ये दुःख हमें प्रभु द्वारा जाति की सोई शक्ति को जगाकर कार्य शील बनाने के लिये प्राप्त होते हैं। हमारा यही प्रधान लक्ष्य है, जिसमें हम पीड़ित पूर्व बंगाल के भाइयों की सहायतार्थ कार्य कर रहे हैं।

हमारे भाई अपनी चिन्ता में ही रहते हैं। वे दूसरों की चिन्ता करना बेवकूफी समझते हैं। इस प्रकार अकेला रहने की स्वार्थपूर्ण मनोवृत्ति ने हमें जुदा २ कर रक्खा था। पारस्परिक सम्बन्ध की अनुभूति सिखाकर उनको मन से और शरीर से एक और संगठित करना आज हम सिखा सकते हैं। अकेला मानकर रहने की वृत्ति से उत्पन्न होने वाले भय को हरेक समझ सकता है। १० डाकुओं से लुटने वाले ग्राम की दशा भी समझ सकता है। इस समय हम हरेक को अपनी दशा को जो भयप्रद हो गई है, समझा सकते हैं। इस प्रकार अशान्त और बेचैन करके उनको जाति रक्षा की महान् शक्ति के रूप में प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार की भावना की वृद्धि के साथ प्रतिदिन बढ़ती शक्ति पाकर विपत्तियों में निर्भय बनने की शक्ति प्राप्त कर सकते हैं। यही हमारा काम है, इसी भावना से प्रत्येक आर्य भाई को स्वार्थपूर्ण जीवन से लोगों को छुड़ाने का काम आरम्भ कर देना चाहिये। इस प्रकार सतर्क, क्रियाशील प्रत्येक को बनाकर लाखों का धन और आवश्यक वस्तुएं पीड़ित बंगालियों तक पहुंचानी है।

सत्यार्थ प्रकाश और सिंध सरकार

यह सब आर्यों को विदित ही है, कि सिन्ध की मुस्लिम लीगी सरकार ने सत्यार्थ प्रकाश पर प्रतिबन्ध लगा रखा है। उसे दूर करने का अब तक जो यत्न किया गया है, उससे वह प्रतिबन्ध नहीं हटा। इसलिये सार्वदेशिक सभा देहली की सत्यार्थ प्रकाश रक्षा समिति ने इस प्रतिबन्ध को हटाने के लिए सत्याग्रह का निश्चय किया और

महात्मा नारायण स्वामी जी उसके सर्वाधिकारी बने। अब उन्होंने आर्य जनता से अपील की है, कि प्रत्येक सत्याग्रही अपना नाम मुकम्मिल पता लिखकर भेजें।

इसी अपील के आधार पर मैं पंजाब की आर्य समाजों, आर्य वीर दलों, आर्यों और धर्म-प्रेमियों से अपील करता हूं कि सत्यार्थ प्रकाश पर से प्रतिबन्ध हटाने के लिये जो धर्म युद्ध में शामिल होना चाहते हैं वे अपना नाम व पूरा पता दफ्तर आर्य समाज प्रतिनिधि सभा पंजाब या दफ्तर आर्य वीर दल दीना नगर में भेज देवें ताकि नारायण स्वामी जी जितने वीरों को बुलायें उतने उसी समय भेजे जा सकें।

आर्य वीर दलों को इस काम की ओर खास ध्यान देकर इसे जल्दी पूरा करना चाहिये। जहां आर्य वीर नहीं वहां आर्य समाजें ही यह काम करें।

स्वतन्त्रानन्द
नेता, आर्य वीर दल, पंजाब

—●—

सार्वदेशिक सभा की विज्ञप्तियां तथा सूचनाएं

बंगाल में आर्य समाज का रक्षा और सहायता कार्य

नोआखाली व तिपरा जिले की वर्तमान स्थिति को देखते हुये कहा नहीं जा सकता कि वहां आर्य समाज को अब तक रक्षा और सहायता कार्य के अतिरिक्त प्रचार का कार्य करना पड़े। हिन्दू जनता को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि बलात् विधर्मी बनाये गये लगभग समस्त हिन्दू नरनारी हिन्दू धर्म मे वापस आगये हैं। परन्तु अनेको बहिनों का अभी पता नहीं लग रहा है। इसके लिये यत्न जारी है। नौआखाली के हिन्दुओं की सहायता व रक्षा के लिये आर्य समाज रिलीफ सोसाइटी ने एक विशेष योजना स्वीकार की है जिस पर अमल भी प्रारम्भ हो गया है। वहां के हिन्दुओं मे अभी तक आतङ्क व्याप्त है।

आय समाज का पांचवा जत्था नोआखाली पहुंच चुका है। चौमुहानी रायपुर और गाइचर तीन केन्द्रों से आर्य समाज का सहायता व रक्षा कार्य हो रहा है। न मालूम हमे अभी कितने केन्द्र खोलने होंगे। लगभग तीस हजार पीड़ितों को अन्न, वस्त्र, इत्यादि प्रतिदिन बांटा जाता है। आर्य समाज के ठोस सहायता कार्य से बंगाल की सर्व साधारण हिन्दू जनता बड़ी प्रभावित है।

हमें यह लिखते हुये प्रसन्नता है कि न केवल इस देश के सर्व साधारण आर्य हिन्दू भाई ही बंगाल के पीड़ितों की सहायता कार्य में धनादि से उत्साह पूर्वक अपना योगदान कर रहे हैं। सुदूर विदेश ईस्ट अफ्रीका आदि के भाइयों ने भी अपना भाग भेजना आरम्भ कर दिया है। उन्होंने अधिक से अधिक धन राशि भिजवाने के लिये हमें लिखा है। २३।१२।४६ तक सभा के कोष में सहायता कार्य के लिये ६५८५६।।)।। प्राप्त हुआ है। और आवश्यकतानुसार कलकत्ता भेजा जा रहा है।

मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि, सभा देहली

आवश्यक सूचना

अब सिन्ध प्रान्त के समस्त निर्वाचन समाप्त हो गये। वहा के निवासियो को अब उचित रीति से, सत्याग्रह के प्रारम्भ को आगे बढ़ाने की इच्छा करने का कोई अवसर बाकी नहीं रहा इसीलिये अब में श्री राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री और मं० खुशहाल चन्द्र जी आनन्द के साथ यहां से चलकर तीन जनवरी ४७ को कराची पहुंच जाऊंगा और सिन्ध सभा के कार्य कर्ताओ के साथ सलाह करके सत्याग्रह का आरम्भ कर दिया जावेगा। अब आर्य समाजों और आर्य जनता तथा प्रान्तिक सभाओ का कर्तव्य है कि सत्याग्रह का काम चलाने के लिये अच्छे व्यक्तियो के नाम मेरे पास कराची के पते पर यथा सम्भव शीघ्र भेजे जिससे एक सप्ताह के अन्दर वे बुलाने पर कराची पहुंच जावे। आर्य समाजो तथा सम्पन्न पुरुषो को उनके मार्ग व्यय का प्रबन्ध कर देना चाहिये।

(२) इस सत्याग्रह के काम को चलाने के लिये अधिक से अधिक धन सार्वदेशिक सभा के कोष में भेजें।

(३) मेरा कराची का पता आर्य प्रतिनिधि सभा सिन्ध कराची १ होगा।

(४) मेरे पास केवल सत्याग्रह सम्बन्धी पत्रादि भेजने चाहियें। सार्वदेशिक सभा के अन्य समस्त कार्यों के लिये सभा के कार्यालय देहली में मन्त्री के नाम पत्र भेजने चाहिये।

(५) अन्त में ईश्वर से प्रार्थना है कि वह सिन्ध की मुसलिम लीगी सरकार के सदस्यों को सुमति देवे कि जिससे वे शीघ्र से शीघ्र सत्यार्थ-प्रकाश सम्बन्धी प्रतिबन्ध को हटा लेवें और सत्याग्रहियों को शक्ति प्रदान करे जिससे वे इस पवित्र कार्य को करते हुये सत्य और अहिंसा के उच्चतम नियमों का प्रत्येक प्रकार से पालन करें।

नारायण स्वामी प्रधान

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

साधुओं का प्रशंसनीय उत्साह

श्री स्वामी ब्रह्मनाथ जी ने कराची से एक वक्तव्य देते हुए कहा है कि "१ लाख साधु सत्यार्थ-प्रकाश पर लगे प्रतिबन्ध के विरुद्ध सत्याग्रह करने को तैयार हैं पर सार्वदेशिक सभा के प्रधान महात्मा नारायण स्वामी जी ने अभी उन्हें प्रतीक्षा करने के लिये कहा है। हम आर्यों के मान्य नेता के आदेश का मान करते हैं किन्तु यदि कभी साधुओं ने यह अनुभव किया कि आर्य समाज कुछ निर्बलता दिखा रहा है तो वे अपनी ओर से सत्याग्रह शुरू कर देंगे। साधुओं को ऐसा करने के लिये अनेक कारण हैं। सत्यार्थ प्रकाश एक महान् साधु की अत्यन्त महत्वपूर्ण कृति है और इसलिये साधुओं को उसे अखण्ड और सुरक्षित रखने में विशेष अभिरुचि है। हम उदार होते हुए ने की मुस्लिम सरकार की ओर से आर्य भाइयों पर जो अत्याचार हो रहा है उसकी ओर से आंखें नहीं मूंद सकते। जैसे सतनामियों के रूप में हमने औरंगजेब के अत्याचार का विरोध किया था वैसे ही शान्तिमय अहिंसात्मक रूप से हम इस वर्तमान अत्याचार का भी घोर विरोध करेंगे।"

स्वामी ब्रह्मनाथ जी ने साधुओं की ओर से जो यह घोषणा की है वह नितान्त अभिनन्दनीय और सच्चे साधुओं की प्रतिष्ठा को बढ़ाने वाली है। जिसके अन्दर ऐसी बलिदान की भावना नहीं वह साधु कहलाने योग्य ही नहीं। हम आशा करते हैं कि समस्त सनातन धर्माभिमानी साधु आर्यों के इस पवित्र सत्याग्रह यज्ञ में पूर्ण सहयोग देकर अपने आश्रम को गौरवान्वित करेंगे।

ध० दे०

सत्यार्थ प्रकाश रक्षा समिति बुलेटिन नं० १

१. संग्राम समिति (सत्यार्थ, प्रकाश रक्षा समिति) के निश्चयानुसार ३ जनवरी १६४७ को श्री राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री और श्री खुशहाल चन्द्र जी के साथ मैं कराची पहुंच गया था।

२. कराची पहुंचने के बाद सिन्ध के प्रतिष्ठित व्यक्तियों से बातचीत की गई और सत्यार्थ प्रकाश पर पाबन्दी हटाने के सम्बन्ध में सलाह की गई, कराची के समस्त आर्य समाजों के अन्तरंग सदस्यों को एकत्रित करके उनसे भी सलाह की गई। इस सारी बात चीत के बाद यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि एक बार फिर सिन्ध सरकार के उत्तरदायी सज्जनों का ध्यान इस पाबन्दी को हटाने की ओर दिलाया जावे।

३. इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये देहली से माननीय घनश्याम सिंह जी गुप्त स्पीकर सी० पी० ऐसेम्बली और लाहौर से श्री ला० ब्रजलाल जी बी० ए० १० जनवरी को कराची पहुंच गये।

४. इससे पहले एक खुली चिट्ठी मि० जिन्ना और प्रीमियर सिन्ध को लिखी गई कि वे इस अन्याय को दूर करें जिससे सिन्ध के आर्य समाजी अपनी मातृ भाषा में सत्यार्थ प्रकाश के पढ़ने से वंचित कर दिये गये हैं। परन्तु इन चिट्ठियों का कुछ जवाब नहीं मिला।

५. श्री० बा० घनश्याम सिंह जी गुप्त ने देहली ओनरेबल पहले गवर्नर और वजीरे आजम सिन्ध को मुलाकात के लिये पत्र भज दिये थे। ११ जनवरी को उत्तर मिला कि गवर्नर तो बाहर दौरे पर गये हुये हैं और प्राइम मिनिस्टर १२ जनवरी को मिलेंगे। चुनांचे बा० घनश्याम सिंह जी ने १० जनवरी को उनसे मुलाकात की। उनसे मुलाकात के बीच मे प्रीमियर ने अपनी बेबसी जाहिर की और कहा कि अभी इस प्रतिबन्ध पर अमल नहीं किया गया।

६. सिन्ध के समस्त आर्य समाजो के प्रतिनिधियों की एक जरूरी मीटिंग १२ जनवरी को बुलाई गई थी। उसमे इन सब बातो पर विचार किया गया।

७. अब जब कि जिम्मेवार सरकारी महानुभावों से मुलाकात हो चुकी और निश्चित रीति से यह मालूम हो गया कि प्रतिबन्ध नहीं हट सकता तो अब अन्तिम शस्त्र सत्याग्रह से काम लेने का निश्चय किया गया है।

८. तमाम आर्य समाजों को चाहिये कि वे अपने साप्ताहिक अधिवेशनों मे परमात्मा से प्रार्थना करें कि यह सत्याग्रह कामयाब हो।

९. व्यक्तिगत सत्याग्रह के जो नियम बनाये गये है वे एसे है कि जिनसे किसी प्रकार की अशान्ति उत्पन्न होने की सम्भावना नहीं है।

१०. बाहर से सत्याग्रह मे नाम लिखवाने वालों की चिट्ठिया बराबर आ रही है। उन पत्र भेजने वालो मे अनेक सनातन धर्मी विद्वान भी शामिल है।

११. नागरिक स्वतन्त्रता और धार्मिक स्वतन्त्रता के इच्छुको का—चाहे वे सनातन धर्मी हो वा मुसलमान—कर्तव्य है कि वे इस सत्याग्रह मे आर्य समाज का हाथ बटाये और तन, मन, धन, से सार्वदेशिक सभा (देहली) की सहायता करे।

१२. श्री स्वामी अभयानन्द जी बिहार तथा प० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित दिल्ली से कराची के लिये चल दिये है। १२-१-४७

विज्ञप्ति नं. २

१४ जनवरी ४७ मकर की संक्रान्ति के पवित्र दिन स कराची मे सत्याग्रह प्रारम्भ किया गया। सात व्यक्तियो ने जिन मे श्री राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री, श्री खुशहालचन्द्र 'आनन्द' और श्री कुंवर चादकरण शारदा शामिल थे सिन्ध के प्रधान मन्त्री महोदय को निम्न नोटिस दिया।

"यह बात सर्व विदित है कि सत्यार्थ प्रकाश आर्य समाज का धर्म ग्रन्थ है। यह हमारे लिये इतना ही पवित्र है जैसे कि ईसाइयो के लिये बाइबिल और मुसलमानों के लिये कुरान। सिन्ध सरकार की सिन्धी सत्यार्थ प्रकाश के विरुद्ध जब्ती की आज्ञा हमारे धार्मिक अधिकारो पर जानबूझ कर किया हुआ आक्रमण है। यह हमारा गौरव

पूर्ण तथा अवश्य अधिकार है कि हम इस पवित्र धर्मग्रन्थ को अपने पास रक्खें और उसके द्वारा अपने लिये धार्मिक तथा आध्यात्मिक लाभ प्राप्त करें। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि हमारे पास सत्यार्थ प्रकाश का सिन्धी संस्करण विद्यमान है और हम किसी के भी इससे हमें वंचित करने के अधिकार से इन्कार करते हैं।"

नोटिस पर सिन्ध की सरकार क्या कार्यवाही करती है इसकी प्रतीक्षा की जा रही है। हमारा इरादा है कि इसी प्रकार बीच में एक एक दिन छोड़ कर सात सात व्यक्तियों के सत्याग्रह करने का प्रोग्राम उचित समय तक जारी रक्खा जाय।

हमारे पास देहली, लाहौर और मुलतान के कालिज और गुरुकुल विभागों के दोनों समाजों की ओर से तार द्वारा सूचना आई है कि उनके यहां सत्याग्रह करने के लिये जत्थे तैयार हैं। खबर आते ही कराची भेज दिये जायेंगे। परन्तु ऐसे सभी जत्थों को कराची आने से रोक दिया गया है और इन समाजों को धन्यवाद पूर्वक सूचना देदी गई है। जरूरत पड़ने पर उनको लिखा जायेगा तब वे उन जत्थों को यहां भेजें।

इस बीच में सिन्ध की सरकार को धोखा देने वाली एक सूचना कराची के सिन्धी पत्रों में छपी कि एक शंकराचार्य अपने एक लाख साधुओं के साथ कराची इस सत्याग्रह में भाग लेने आ रहे थे परन्तु उन्हें इस समय आर्य समाज ने रोक दिया और इसलिये वे यहां आने से रुक गये।

नारायण स्वामी प्रधान
स० प्र० संग्राम समिति

Ban on Satyarth Prakash

(By Pt. Ganga Prasad Upadhaya M. A. Secretary Sarvdeshik Sabha, Delhi)

Prof. Inayatullah, the dictator of **the anti-Satyarth Prakash** movement in the Dawn of January 14, 19 7 commenting on the Arya Samajic agitation on the ban of their Holy Book calls "this move of the Arya-Samajists" mischievous at this juncture as they intend only to. create ill-feeling in the Muslim Majority Province when the peace of the other province is at stake". It is adding insult to injury. The Professor forgets that it is the Muslim League, rather he himself as mover of the notorious resolution that began the quarrel. It (The Muslim League) being a political body, had no business to ban Holy Book of a prominent minority. The Arya Samaj being a purely religious organisation had never saida nything against the League, much less against the League Ministry of Sind. If Prof. Inayatullah is a true Muslim and has a faith in the Qoran, he ought to know what it means to have one's holy book or any part of it banned. The Arya Samaj should have defied such objectionable and impious bans even if they had come from Congress or any other ministry. A Government which pounces upon the civil or religious liberties of any section of the people, deserves no support from any reasonable person whatever his faith. The Professor misleads the pubic when he says, "The fourteenth Chapter does not contain any religious material for the Arya Samajists. It is abusive and against the Holy Prophet of Islam and the Holy Qoran". It is wrong, cent percent wrong. The fourteenth chapter is not a book by itself meant to criticise Islam. It is only a part of the whole book in which both the positive and negative sides of the religion have been inter-woven. Such intermixture is found in all religious scriptures whether the Qoran of Islam or the Bible of Christians. All religious books contain carping criticism of contemporaneous religions and this criticism has to be read as a part of the whole book and not separately. Even the most beautiful noseof a beautiful face would look ugly if cut off and put apart. Ugliest nose will add to the beauty of the face when it is intact there. The professor forgets or feigns to forget that the Qoran has many Sura's which "do not contain any religious material" for the Muslims. They are abusive and against the persons and religions existing at the time of the Prophet of Islam. We give

here the literal translation of chapter CXI of the Qoran in full.

(Sura Abu Lahab.)

1. Damned be the hands of Abu Lahab and demned be he;
2. His wealth shall not avail him, nor what he earns;
3. He shall broil at the flaming fire (of hell)
4. And his wife also laden with wood;
5. On her neck a rope of palm fibre.

(The Qoran translated by Mirza Abul Fadl Surat, Edition page 614)

The fourteenth chapter of the Satyarth Prakash criticises only religious principles and fortifies its assertions with strong and convincing arguments, while in the Sura quoted by us, there is nothing but unqualified abuse; no principle, no argument. The professor's hint that a case is being tried in the civil court against the fourteenth chapter of the book", only weakens his argument. When the case is sub-judice what right had the League to pass judgement on the book and what justification had the Sind Government to precipitate the action in the manner it has done? Is it not like pontious Pilate calling upon Jesus to explain what truth is and condemning Jesus outright before he could open his lips to explain. The Arya Samaj has given all chances to the Muslim Leaders of Sind to rectify their mistake and no body can accuse the Arya Samaj of doing anything in haste except those who are bent upon tarnishing the name of Islam for their baser ends. Will a Government be justified to ban any part of the Qoran simply because A or. y has filed a suit against it in any court? Are religions and religious books to be chosen by the courts of the realm? Does Prof. Inayattullah uphold this principle? Or does Mr. Jinnah who is an eminent lawyer, approve of it?

प्रचारक की आवश्यकता

आर्य समाज वरंगल (हैदराबाद राज्य) को एक तेलुगु भाषा जानने वाले उपदेशक की आवश्यकता है। वेतन ५०) मासिक होगा गुरुकुल के स्नातक को १००) मासिक दिया जायेगा। पत्र व्यवहार का पताः-

मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

सत्यार्थ प्रकाश मार्तण्ड परीक्षा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने सत्यार्थ-प्रकाश के प्रचार के विचार से "सत्यार्थ प्रकाश मार्तण्ड" नामक परीक्षा प्रचृत कर रखी है, किसी भी आयु का मनुष्य किसी भी भाषा में इस परीक्षा को दे सकता है। यह परीक्षा २३ फरवरी रविवार दिन के १० बजे आरम्भ होगी। परीक्षा देने के अभिलाषी स्त्री पुरुष आचार्य्य दयानन्द उपदेशक विद्यालय गुरुदत्त भवन, लाहौर से छपे आवेदन पत्र मंगाकर भरकर १ फरवरी तक भेज दें। स्वामी वेदानन्द तीर्थ आचार्य

सम्पादकीय

प्रो० इनायतुल्लाह का असङ्गत वक्तव्यः—

देहली के मुस्लिमलीगी अंग्रेजी दैनिक 'Dawn' के १४ जनवरी के अङ्क में प्रो० इनायतुल्लाह का जो अपने को सत्यार्थ प्रकाश विरोधी आन्दोलन का सर्वाधिकारी बताते हैं एक वक्तव्य डेरागाजीखान से प्रकाशित हुआ है। इसमे उन्होंने कहा है 'आर्य समाज के नेता सत्यार्थ प्रकाश के चौदहवें समुल्लास पर लगाये प्रतिबन्ध को तोड़ने के उद्देश्य से कराची पहुच गये हैं ऐसा हिन्दू अखबारों मे छपा है। आर्य समाजियों की यह हरकत इस मौके पर शरारत से भरी हुई है। वे मुस्लिम बहुल प्रान्त में घृणा पैदा करना चाहते हैं जब कि दूसरे प्रान्तों की शान्ति भी खतरे में है। १४ वें समुल्लास में आर्य समाजियों के लिये कोई धार्मिक सामग्री नहीं है। यह इस्लाम के पाक पैगम्बर और क़ुरान शरीफ के बर्खिलाफ़ गालियों से भरा हुआ है। सत्यार्थ प्रकाश विरोधी आन्दोलन के सर्वाधिकारी के रूप में मै इस बात की घोषणा करता हूँ कि हिन्दुस्तान के मुसलमान तब तक चैन न लेंगे जब तक कि सत्यार्थ प्रकाश के इस आक्षेप योग्य भाग को जब्त न कर लिया जाए।'

हमें प्रो० इनायतुल्लाह के इस वक्तव्य को पढ़ते हुए 'उलटा चोर कोतवाल को दण्डे' वाली कहावत सहसा याद आ गई। जिस मुस्लिमलीग के तानाशाह मि० जिन्ना इस बात की घोषणा करते फिरते हैं कि पाकिस्तान में अल्पसंख्यक जातियों के धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक तथा राजनैतिक अधिकार सर्वथा सुरक्षित रहेंगे उसके मन्त्रिमण्डल ने समस्त आर्यों के [जो सिन्ध में अल्पसंख्या में हैं] पवित्र धर्मग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के न केवल छपवाने बल्कि प्रति रखने पर भी प्रतिबन्ध लगा रखा है इससे बढ़ कर अन्धेर और क्या हो सकता है? उस अपने धार्मिक अधिकार की रक्षा के लिये सब वैधानिक उपाय गत २। वर्षों तक कर लेने पर भी जब सफलता न मिली तब आर्यनेताओं ने सत्याग्रह के अस्त्र को ग्रहण करने का निश्चय किया है इसमे शरारत की बात ही क्या है? शरारत तो स्वयं प्रो० इनायतुल्लाह की है (जिन्होंने अखिल भारतीय मुस्लिम लीग के कराची अधिवेशन मे सत्यार्थ प्रकाश के १४ वें समुल्लास की जब्ती विषयक प्रस्ताव प्रस्तुत किया था) और उसे पास करने वाली मुस्लिम लीग तथा सिन्ध के मुस्लिमलीगी मन्त्रिमण्डल की है। आर्यों ने इस सर्वथा अनुचित धार्मिक प्रतिबन्ध को हटवाने के लिये जिस धैर्य और शान्ति का परिचय दिया उसकी प्रशंसा करने के स्थान में उन्हें शरारती बताना कितनी असंगत बात है। सत्यार्थ प्रकाश के चतुर्दश समुल्लास में गालियां भरी हुई हैं यह

कहना सर्वथा अशुद्ध है। उसमे तो पवित्र भाव से इस्लाम की बुद्धि विरुद्ध तथा अशान्तिवर्धक बातों की युक्तियुक्त आलोचना की गई है किन्तु क़ुरान ऐसी गालियों से भरपूर अवश्य है जैसे कि अहमदिया सम्प्रदाय के प्रवर्तक तथा अन्तिम पैगम्बर होने के दावेदार मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'अज़ाला अवहाम' के पृष्ठ ६०० मे साफ़ लिखा कि 'तो फिर इक़रार करना पड़ेगा कि क़ुरान शरीफ़ गालियों से पुर है क्योंकि जो अलफ़ाज़ बुतों की जिल्लत और बुतपरस्तों की हकारत और उनके बारे मे इस्तेमाल किये गये हैं वे हरगिज़ ऐसे नहीं हैं जिनके सुनने से बुत परस्तों के दिल खुश हुए हैं। बिना शुबह इन अलफ़ाज़ ने उनके गुस्से की बहुत तारीफ की होगी। क्या क़ुरान शरीफ़ मे 'शर अलबरीफ़' करार देना और तमाम रज़ील और पलीत मख़लूक़ात से उन्हें बदतर ज़ाहिर करना मोहतरीज़ के ख़याल के रुह से दुश्मनदेही मे दाख़िल न होगा ? इत्यादि। इसी पुस्तक के पृष्ठ ६०४ से ६०७ तक के हाशिया में वे लिखते हैं:—'क़ुरान शरीफ़ जिस आवाज़ बुलन्द से सख्त ज़बानी के तरीके को इस्तेमाल कर रहा है एक गायत दर्जा का गबी और सख्त दर्जे का नादान भी इससे बेख़बर नहीं रह सकता। मस्लन ज़माना हाल के मुहज्ज़बीन के नज़दीक किसी पर लानत भेजना एक सख्त गाली है लेकिन क़ुरान शरीफ़ कुफ्फार को सुना सुना कर उनको लानत भेजता है (देखो सूरत बकर)। सार्व देशिक सभा के सुयोग्य मन्त्री और आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध यशस्वी विद्वान् श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० ने अपने वक्तव्य में सूरा १११ को जो सूरत लहब के नाम से प्रसिद्ध है उद्धृत किया है जो अबूलहब के लिये गालियों और शाप से भरा हुआ है। ख़्वाजा हसन निज़ामी ने अपने हिन्दी अनुवाद में इस सूरे का अर्थ यों दिया है—"अबू लहब के दोनों हाथ टूट गये और वह नष्ट हो गया। शीघ्र वह भड़कती हुई अग्नि में डाला जाएगा और उसके साथ उसकी काटे लाद कर लाने वाली पत्नी भी उसकी गर्दन में खजूर की छाल की बटी हुई रस्सी होगी।" अन्य सब टीकाकारों ने भी यही अर्थ दिया है। क्या यह मुसलमानों के लिये धार्मिक सामग्री है ? क्या मुसलमान इस बात को सहन कर लेंगे कि ऐसे सब भागों को (जिनकी क़ुरान में बहुत बड़ी सख्या है) क़ुरान में से निकालने की सरकारी आज्ञा निकाली जाए ? फिर आर्यों को ही वे क्यों ऐसे धार्मिक स्वतन्त्रता घातक आदेश को चुपचाप सहने की बात कहते और उसे न मानने पर खून खराबी की धमकियां देते हैं ? आर्य अब गीदड़भभकियों से डरने वाले नहीं हैं और वे तबतकचैन न लेंगे जबतक कि सत्यार्थ प्रकाश पर से प्रतिबन्ध नहीं हट जाता यह मुसलमान भाइयों को भी भली भाँति समझ लेना चाहिए। आख़िर धैर्य और शान्ति की भी कोई सीमा होती है। वह सीमा अब समाप्त हो चुकी है।

सिन्ध में सत्याग्रह का बिगुल बज गया

जैसे कि 'सार्व देशिक' के इसी अङ्क में अन्यत्र प्रकाशित विज्ञप्तियों से पाठकों को ज्ञात होगा कि सिन्ध में सत्याग्रह का बिगुल बजा दिया गया है और मकर सक्रान्ति के शुभ दिन

१४ जनवरी को राजगुरु पं० धुरेन्द्र जी शास्त्री प्रधान संयुक्त प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधिसभा, कुंवर चांदकिरण जी शारदा उपप्रधान सार्वदेशिक सभा तथा ला० खुशहालचन्द्र जी आनन्द प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा लाहौर इत्यादि ७ सुप्रसिद्ध आर्य महानुभावों ने सिन्ध के प्रधान मन्त्री को नोटिस भेज दिया है कि वे अपने पवित्र धर्म ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश (सिन्धी संस्करण) को लौटाने को तय्यार नहीं हैं चाहे सरकार उनके विरुद्ध कुछ भी कार्यवाही करे। इस टिप्पणी को लिखते समय तक (१६ जनवरी तक) ज्ञात नहीं हुआ कि सिन्ध सरकार इन सत्याग्रहियों के विरुद्ध क्या करना चाहती है पर कुछ भी हो आर्य सत्याग्रह के सर्वाधिकारी आर्य समाज के भीष्म पितामह श्री महात्मा नारायण स्वामी जी ने आन्दोलन को जारी रखने का दृढ़ निश्चय प्रकट किया है जब तक सिन्ध सरकार इस अत्यन्त अनुचित प्रतिबन्ध को वापिस न ले ले। हमें निश्चय है कि समस्त उत्साही आर्य इस आन्दोलन को सफल बनाने के लिये कोई क़सर न उठा रक्खेंगे। उत्साह और त्याग की भावना के साथ २ अनुशासन का भी सत्याग्रही पूर्णतया पालन करके सफलता प्राप्त करेंगे यह हमारा विश्वास है।

आर्य समाज और आर्य भाषा

आर्य समाज के अमर कीर्ति प्रवर्तक महर्षि दयानन्द जी इस युग के प्रथम जगद्विख्यात आचार्य थे जिन्होंने समस्त आर्यावर्त के लिये एक राष्ट्र भाषा की आवश्यकता को अनुभव करते हुए आर्य भाषा को (जिसे सामान्यतया हिन्दी भाषा के नाम से पुकारा जाता है) समस्त व्यवहारों में अपनाने का आर्यों को आदेश दिया था और अपनी मातृभाषा गुजराती होते हुए भी इस आर्यभाषा मे ही सत्यार्थ प्रकाशादि अपने अमर ग्रन्थ लिखे थे। आर्य समाज तथा उसके द्वारा प्रवर्तित गुरुकुल आदि संस्थाओं और समाचार पत्रों ने आर्यभाषा को लोकप्रिय बनाने के लिये जो प्रयत्न किया वह अत्यन्त प्रशंसनीय है किन्तु हमे यह देख कर अत्यन्त दुःख होता है कि अब भी बहुत से आर्य अपने इस विषयक कर्तव्य और महर्षि के आदेश का पालन नहीं करते तथा उर्दू अंग्रेजी में ही पत्र व्यवहारादि करते हैं। सार्व देशिक सभा के कार्यालय में कई आर्य समाजों के अधिकारियों तथा कार्यकर्ताओं से उर्दू अंग्रेजी मे आने वाले पत्रों वा मनी आर्डर आदि की संख्या बहुत पर्याप्त है। यह अवस्था अत्यन्त शोचनीय है। हम रेलवे विभाग डाक विभाग, रेडियो विभाग आदि सरकारी विभागों मे आर्य भाषा (हिन्दी) की उपेक्षा की प्रायः शिकायत करते हैं जिसके निवारणार्थ सार्वदेशिक सभा के सहयोग से केन्द्रीय हिन्दी रक्षा समिति विशेष रूप से निरन्तर प्रयत्न करके पर्याप्त सफलता प्राप्त कर रही है। डाक विभाग, राशन विभाग आदि से इस प्रकार के लिखित आश्वासन प्राप्त हुए हैं कि हिन्दी में लिखे पत्रों के साथ वैसा ही बर्ताव किया जाएगा जैसा कि अंग्रेजी आदि भाषाओं के साथ होता है तथापि यदि स्वयम् आर्य इस विषय में उपेक्षा दिखाएं और अपने कर्तव्य का पालन न करें तो किसको दोष दिया जा सकता है? क्या डाक विभाग, रेलवे, रेडियो, राशन और अन्य विभागों को हमारी प्रिय आर्य भाषा और देवनागरी लिपि

की उपेक्षा का साहस इसीलिये नहीं होता कि हम में से बहुत से ऐसे हैं जो उर्दू अंग्रेजी में पत्र व्यवहार करने में ही अपना गौरव समझते हैं अथवा आर्यसमाज के कई वर्षों से सदस्य बनते हुए भी जिन्होंने आलस्यवश आर्य भाषा को सीखने का कष्ट नहीं किया। ऐसी शोचनीय अवस्था का तुरन्त अन्त होना चाहिए अन्यथा उर्दू अंग्रेजी में लिखे आर्यों के पत्रों को रद्दी की टोकरी में फैंकने का परामर्श देने को हमें बाधित होना पड़े तो इसके लिए किसी को बुरा न मनाना चाहिए। हम आशा करते हैं कि इस विषय में आर्यों का ध्यान पुनः आकर्षित करने की हमें आवश्यकता न पड़ेगी।

हरिजन सेवक, नया हिन्द और भारतीय समाचार

इस शीर्षक को देख कर कुछ पाठकों को आश्चर्य होगा किन्तु इसके द्वारा हम उनका ध्यान एक आवश्यक विषय की ओर आकर्षित करना अपना कर्तव्य समझते हैं। हिन्दुस्तानी के नाम पर हमारी संस्कृतनिष्ठ विशुद्ध राष्ट्रभाषा के रूप को बिगाड़ने का जो प्रयत्न कई कांग्रेसभक्त क्षेत्रों में किया जा रहा है उसका प्रतिवाद हम इन स्तम्भों में कई बार कर चुके हैं और स्वयं पूज्य महात्मा गांधी जी का ध्यान भी इस ओर आकर्षित कर चुके हैं किन्तु खेद है कि अभी तक इस दिशा में उचित सुधार नहीं हुआ। महात्मा गांधी जी के अत्यन्त भक्त श्री वियोगी हरि जी ने हिन्दी साहित्य सम्मेलन कराची के अपने अध्यक्षभाषण में 'हरिजन सेवक' आदि में प्रयुक्त 'हिन्दुस्तानी' की तीव्र आलोचना की थी परन्तु उसका भी कुछ प्रभाव पड़ा दिखाई नहीं देता। 'नया हिन्द' नामक एक मासिक हिन्दी और उर्दू में श्री सुन्दरलाल जी के नेतृत्व में प्रयाग से निकल रहा है वह भी 'हिन्दुस्तानी' के नाम पर संस्कृत को गालियां तक देने और उर्दू फ़ारसी के शब्दों की भरमार करने में संकोच नहीं करता। उदाहरणार्थ 'हरिजन सेवक' का १२ जनवरी का अङ्क हमारे सामने है जिसमें काका कालेलकर जी का एक लेख 'हिन्दुस्तानी की तालीम' इस शीर्षक से छपा है। उसमे उनका महात्मा गांधी जी के नाम पर लिखा पत्र इन शब्दों में दिया है 'इस बारे में सूबों की सरकार के लिये आप अपनी सिफ़ारिश साफ़ लफ्ज़ों में ज़ाहिर कर देंगे तो यह काम तेज़ी से आगे बढ़ सकेगा। मैं आपकी राय जानता हूँ लेकिन वह 'हरिजन' की मार्फ़त ज़ाहिर होनी चाहिये।"

ऐसे ही अनावश्यक उर्दू शब्दों की भरमार प्रायः 'हरिजन सेवक' के सब लेखों में होती है। 'साप्ताहिक पत्र' के स्थान में हफ्तेवार खत लिखा आता है। 'नया हिन्द' के दिसम्बर सन् ४६ के अङ्क में डा० ताराचन्द्र जी का "अंगले ज़माने की हिन्दुस्तानी तालीम और उसके बुनियादी असूल, मज़हब की तालीम आदि लेख हैं। प्रायः सब में उर्दू हिन्दी का भद्दा मिश्रण है जिससे हमें कोई लाभ नहीं प्रतीत होता। जब उर्दू का भाग 'नया हिन्द' में एक तरफ़ रखा ही जाता है तो विशुद्ध हिन्दी को कठिन उर्दू, फ़ारसी के शब्दों से लाद कर बिगाड़ने की क्या आवश्यकता है? इनके साथ अब भारत सरकार के प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित 'भारतीय समाचार' नामक पाक्षिक पत्र की हिन्दी की

तुलना करते हैं तो आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता। उदाहरणार्थ ५ जनवरी के अङ्क में प्रकाशित लेखों के शीर्षकों को देखिये 'भारतीय विधान परिषत् की बैठक, अध्यक्ष के नाम विदेशों से शुभ कामनाओं के सन्देश, युद्ध के दिनों में अल्प-कालीन प्रतिबन्ध, भारत सरकार के दौत्य सम्बन्ध, सहकारिता आन्दोलन की उन्नति एवं विस्तार, स्थापत्य शिल्पियों का सम्मेलनादि।'

प्रायः सभी लेखों मे परिमार्जित संस्कृत निष्ठ भाषा है। हमारा "हरिजन सेवक" "नया हिन्द" आदि पत्रों के संचालकों से निवेदन है कि यदि उन्हें उर्दू से विशेष प्रेम है तो वे अपने पत्रों का उर्दू संस्करण चाहे पृथक् मुसलमानों के लाभार्थ भले ही निकाल लें पर "हिन्दुस्तानी" के प्रचार के नाम पर हमारी संस्कृत निष्ठ राष्ट्र भाषा हिन्दी को बिगाड़ने का दुस्साहस न करें। हम जिस भारत सरकार की हिन्दी विषयक उपेक्षा की इतनी शिकायत करते हैं उसके पत्र मे तो इतनी उत्तम और परिष्कृत संस्कृत निष्ठ हिन्दी का प्रयोग हो और भारतीय राष्ट्रीयता के अभिमानियों के पत्रों मे उसके स्वरूप को अनावश्यक विदेशी शब्दों द्वारा विकृत कर दिया जाए यह बात हमें सर्वथा अनुचित प्रतीत होती है।

सीमा प्रान्त में भयंकर स्थिति:—

पिछले दिनों सीमा प्रान्त के कुछ भागों से मुसलमानों द्वारा हिन्दू और सिक्ख नागरिकों के घर जलाने, दूकानें लूटने, अनेकों की हत्या करने और उन्हें जबर्दस्ती मुसलमान बनाने के जो समाचार पत्रों मे प्रकाशित हुए हैं उन्हें पाठकों ने अवश्य पढ़ा होगा। सीमा प्रान्तीय हिन्दू सिक्ख अल्पसंख्यक रक्षा बोर्ड के अध्यक्ष रा० ब० दीना नाथ जी ने हजारा जिले की स्थिति के विषय में १४ जनवरी के एक वक्तव्य मे कहा है कि "मैंने बोर्ड के ५ और प्रमुख सदस्यों के साथ ऐबटाबाद का दौरा किया। हजारा जिले की, मुख्यतः ऐबटाबाद तहसील की जहां गांवों में बड़ी मात्रा मे हिन्दुओं और सिक्खों के घर जलाये गये हैं, उनकी हत्याएं की गई हैं और उनको जबर्दस्ती मुसलमान बनाया गया है स्थिति इस समय अत्यन्त चिन्ता जनक है। काकुल का शरणार्थी शिविर अच्छा काम कर रहा है। किन्तु जितने हिन्दू और सिक्ख गृहहीन हुए हैं उनमे से बहुत कम को वह सहायता दे सकता है। यहा काफी प्रबन्ध न होने के कारण वे प्रान्त के बाहर गये हैं इत्यादि। सीमा प्रान्त के कांग्रेसी प्रधान मन्त्री डा० खान साहेब ने अपने एक वक्तव्य मे इन उपद्रवों को साम्प्रदायिक न मानते हुए आर्थिक बताया था जिसका प्रबल खण्डन मास्टर तारासिंह ने करते हुए उस वक्तव्य को असम्बद्धताओं का समूह और वास्तविक घटना विरुद्ध कहा है।

उन्होंने यहां तक कहा है कि सीमा प्रान्त की सरकार अत्यन्त दुर्बल नीति का आश्रय लेकर निर्दोष व्यक्तियों की रक्षा करने मे सर्वथा असमर्थ रही है और वह अपराधियों और आक्रमण कारियों का बचाव कर रही है। यदि यह बात सत्य है तो अत्यन्त निन्दनीय है। आश्चर्य है कि डा० खान साहेब जैसे राष्ट्रीय कहलाने वाले प्रधान मन्त्री इतने भयंकर मामले की गम्भीरता को पूर्णतया अनुभव न करें और सीमा प्रान्त के गान्धी कहे जाने वाले खान अब्दुल गफ्फार खान अपने प्रान्त की ऐसी विषम परिस्थिति के समक्ष

में दूरस्थ विहार प्रान्त मे शान्ति का सन्देश देते फिर रहे हो। ऐसी स्थिति सर्वथा अवाञ्छनीय है। अधिकारियों और कांग्रेस के नेताओं का कर्तव्य है कि सारी स्थिति की निष्पक्षपात जांच करा कर अपराधियों को घोर दण्ड दिलाए तथा पीड़ितो की रक्षा और सहायता की पूर्ण व्यवस्था करें। दुर्बल नीति से स्थिति और भी बिगड़ जाएगी आर्य हिन्दुओं और सिक्खों को भी संगठित होकर आत्मरक्षा का पूर्ण प्रबन्ध करना चाहिये।

भारतीय विधान परिषत् में पं० जवाहरलाल जी का स्वतन्त्र उद्देश्य विषयक प्रस्ताव:—

विधान परिषत् मे भारत सरकार के उपाध्यक्ष श्री पं जवाहर लाल जी ने उद्देश्य विषयक जो प्रस्ताव गतमास रक्खा और जिस पर विचार २० जनवरी से पुन. चलेगा उस मे भारत की एक स्वतन्त्र सार्वभौम अधिकार सम्पन्न प्रजातन्त्र सत्तात्मक राष्ट्र के रूप मे स्थापना को उद्देश्य बताया है जिस से हम सर्वथा सहमत हैं।

यह उद्देश्य वैदिक-आदर्श के भी अनुकूल है। जहा बताया गया है कि 'विशि राजा प्रतिष्ठितः' (यजु २०।८) अर्थात् राजा का आधार प्रजा पर है। वही राजा को चुननी है। "त्वा विशो वृणता राज्याय" (अथर्व ३।४।२) इत्यादि मे यही बात कही गई है कि प्रजाए सुयोग्य व्यक्ति को राज कार्य चलाने के लिये चुनें। ऋग्वेद १०।१७३ तथा अथर्व ४।८।४ मे पुरोहित प्रजाजनों के प्रतिनिधि के रूप मे राजा का अभिषेक कराते हुए कहता है कि "प्रजास्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु मात्वद्राष्ट्रमधिभ्रशत् ॥" अर्थात् तुम ऐसे कार्य करते रहना जिससे सब प्रजाए तुम्हें चाहें। कहीं ऐसा न हो कि तुम्हें राज्य से च्युत करना पड़े। यजु० २०।८ के अनुसार राजा इस बात की घोषणा करता है कि "विशो मेऽङ्गानि सर्वतः" अर्थात् सारी प्रजा मेरे शरीर के अङ्ग के समान हैं इसी आदर्श की उत्तम व्याख्या महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश के षष्ठ समुल्लास में करते हुए राजा को सभापति के रूप में माना है। हम चाहते है कि हमारे सब राष्ट्रीय नेता कम से कम विशुद्ध राजनीति के प्रतिपादक उस ग्रन्थ रत्न को अवश्य पढ़े जिससे उन्हें भारतीय आदर्शों और संस्कृति के अनुसार सच्चे स्वराज्य की स्थापना में अमूल्य सहायता मिलेगी। "इस संघ राज्य में सभी नागरिकों को सब सामाजिक, आर्थिक, राजकीय व्यवहारों मे समान न्याय प्राप्त होगा। जीवन मे सबको समान उन्नति करने का अवसर प्राप्त होगा और विधान सबके लिये समान होगा संभाषण, विचार, धर्माचार, पूजा प्रार्थना और कर्म के विषय मे सबको समान स्वतन्त्रता रहेगी" प्रस्ताव का यह अ श भी "समानो मन्त्रः समितिः समानी, समान मनः सह चित्तमेषाम् । समान मन्त्रमभिमन्त्रये व. समानेन वो हविषा जुहोमि। (ऋ० १०।१९०।४) 'अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते संभ्रातरो वावृधुः सौभगाय (ऋ० ५।६३।५) इत्यादि वैदिक आदेशों के अनुकूल होने के कारण जो समान न्याय सङ्गत व्यवहार और जन्मगत उच्चता नीचता रहित भ्रातृभाव का प्रतिपादन करने वाले हैं अभिनन्दनीय है किन्तु प्रान्तीय पूर्ण स्वतन्त्रता का सिद्धान्त वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए माननीय नहीं प्रतीत होता। बंगाल के भयङ्कर काण्ड ने इस बात को सर्वथा स्पष्ट कर दिया है कि प्रान्तीय पूर्ण स्वतन्त्रता का सिद्धान्त कई बार कितना घातक सिद्ध होता है।

और केन्द्रीय शक्ति दृढ़ न होने के कारण कैसे उच्च से उच्च अधिकारियों को अपनी विवशता माननी पड़ती है जैसे सरदार पटेल और पं० जवाहर लाल जी ने की। अतः भारतीय विधान बनाते हुए इस विषयक कटु अनुभव से अवश्य लाभ उठाना चाहिये और केन्द्रीय सत्ता को दृढ़ तथा अधिक अधिकार सम्पन्न बनाना चाहिये। प्रान्तीय स्वाधीनता को सीमित करना चाहिये अन्यथा शासन का कार्य सुचारु रूप से चल न सकेगा। सिन्ध मे मुस्लिम लीगी सरकार ने एक अल्पसंख्या के धार्मिक अधिकारों को सत्यार्थ-प्रकाश जैसे पवित्र धर्म ग्रन्थ पर प्रतिबन्ध लगा कर कुचलने की जो निन्दनीय चेष्टा की है। जिस धार्मिक स्वतन्त्रता का पं जवाहर लाल जी के प्रस्ताव मे भी निर्देश है। उसका प्रतिकार केन्द्रीय सरकार जिसमे सरदार पटेल, पं० नेहरू जी जैसे मान्य राष्ट्रीय नेता हैं सुगमता से कर सकती थी किन्तु प्रान्तीय स्वाधीनता के अनुसार वे अपनी विवशता को अनुभव करते हैं। ऐसी भयङ्कर त्रुटियों का सुधार भारतीय विधान मे अत्यावश्यक है।

दो नवीन सहयोगीः—

हमें यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि हैदराबाद की सरकार ने "आर्य भानु" नामक आर्य भाषा के साप्ताहिक पत्र को प्रकाशित करनेकी हैदराबाद आर्य प्रतिनिधि सभा को अनुमति देदी है और वह बहुत शीघ्र दक्षिण केसरी यशस्वी आर्य नेता श्री पं० विनायकराव जी विद्यालङ्कार के सम्पादकत्व मे प्रकाशित होगा। हम इस अपने सहयोगी का आर्य जगत् की ओर से हार्दिक स्वागत करते हैं। इसी प्रकार प्रवासी भारतीयों के मान्य नेता श्री स्वामी भवानी दयाल जी संन्यासी के सम्पादकत्व में 'प्रवासी' नामक मासिक पत्र हिन्दी और अंग्रेजी मे प्रकाशित होगा। यह भारत मे प्रवासी भारतीयो का सन्देश वाहक होगा। इसका वार्षिक शुल्क भारत मे दस रु० और विदेशों के लिये १ पौण्ड होगा। श्री मान्य स्वामी जी ने रुग्ण होते हुए भी प्रवासी भारतीयों की वर्तमान सकटापन्न अवस्था को अनुभव करते हुए इस पत्र के सम्पादन को अपना कर्तव्य समझा है। हम उनके इस उच्च भाव की प्रशंसा करते हुए पत्र का हार्दिक स्वागत आर्य जगत् की ओर से करते है। इस विषयक समस्त पत्र व्यवहार श्री स्वामी भवानी दयाल जी से प्रवासी भवन, आदर्श नगर, अजमेर के पते पर करना चाहिये। इन दोनो पत्रों द्वारा आर्य धर्म और संस्कृति का उद्धार हो यही हमारी हार्दिक कामना तथा उनकी पूर्ण सफलता के लिये भगवान से प्रार्थना है।

क्या यही सभ्यता और सनातन धर्म है?

सार्वदेशिक के गत वर्ष के अनेक अङ्को मे हमने स्त्रियों के वैदिक कर्म काण्ड म अधिकार विषयक लेख प्रकाशित किये थे और मुलतान सनातन-धर्म संस्कृत कालेज के श्री पं दीनानाथ जी शास्त्री की शङ्काओं का समाधान किया था। 'सिद्धान्त, बनारस के १६ और २६ नवम्बर सन १९४६ के अङ्को मे मेरे इस विषयक २ लेख प्रकाशित हुए थे जिन का प्रत्युत्तर देने का उपहास जनक प्रयत्न करते हुए पं दीनानाथ जी ने ७ लेख निकाले हैं और अभी यह लेखमाला जारी है। इन लेखों के विषय में एक स्वाध्यायशील सज्जन ने बंगाल से लिखा है कि 'मैंने ध्यान पूर्वक आपके तथा पं

दीनानाथ जी शास्त्री के लेखों को पढ़ा है। दीनानाथ जी ने अण्डबण्ड के सिवाय वास्तविक उत्तर कुछ भी नहीं लिखा है कहीं २ सभ्यता की मर्यादा के बाहर जाकर लेखनी चलाई है। उपालम्भ देने का भी तरीका हुआ करता है। पण्डित दीनानाथ जी को ऐसा लिखना शोभा नहीं देता कि "दो चार अक्षर पढ़ कर इतना अभिमान" इत्यादि बहुत सी बातें लेख में फ़ालतू बढ़ाकर कलेवर पूरा किया गया है। 'अथर्व वेद से कई मन्त्र उद्धृत करके पं० दीनानाथ जी ने अपनी मांस विधान वाली बात की पुष्टि की है। ''ऐसे लेख लिख कर दीनानाथजी ने पंडिताई का दिवाला निकाल दिया है क्या इसी तर्क के आधार पर विधि निषेध निर्वाह करता है? "इत्यादि मेरा विश्वास है ऐसी ही सम्मति प० दीनानाथ जी के लेखों के विषय में अन्य विचार शील विद्वानों की होगी। मैंने पं० दीनानाथ जी द्वारा उद्धृत प्रमाणों की आलोचना करते हुए प्रायः सर्वत्र "मान्य शास्त्री जी!"जैसे आदर सूचक शब्दों का प्रयोग किया था। किन्तु शास्त्री जी की सभ्यता का नमूना इन लेखों में देखिये "आप का दो चार अक्षर पढ़कर इतना अभिमान कि अपने उपजीव्य विद्वानों पर कीचड़ उछालते हैं। आप वेद वेद तो बहुत कहते हैं, अपने दो चार अक्षरों के ज्ञान के अभिमान में मनु आदि किसी को भी कुछ नहीं समझते "श्री धर्म देव जी ने अपना विवाह कर डाला है सम्भोग में भी रत हैं।" इत्यादि हम पूछते हैं कि क्या विद्वानों के विचार करनेकी यही सभ्यता पूर्ण शैली है? आपके लेख चूँ चूँ के मुरब्बे हैं। पहले लेख में मेरे लिये असभ्यता पूर्ण शब्द हैं। दूसरे में यह सिद्ध करने का यत्न किया है कि वेद ४ नहीं ११३१ हैं। ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद् भी सब वेद हैं। तीसरे और चौथे लेख मे यज्ञों में पशुहिंसा मांस भक्षण और गोवध तक को वेदादि शास्त्र सम्मत सिद्ध करने का निन्दनीय प्रयत्न किया गया है। पाचवें लेख में आपने यह दिखाने का यत्न किया है कि वेद शब्दप्रधान हैं अतः उनका प्रभाव सांप बिच्छू मेघ आदि पर भी पड़ जाता है अतः श्री के अर्थ समझने आदि की कोई आवश्यकता नहीं। मैंने जिन सूक्तों के विषय में लिखा था कि इनमें स्त्रियों के कर्तव्यों का वर्णन है। अतः उन्हें वेद अवश्य पढ़ने चाहियें उनका अर्थ पक्षपात वश जान बूझकर अशुद्ध ,करके शास्त्री जी ने लिखा है कि इनमें स्त्रियों के मन्त्र बोलने का विधान नहीं। ऐसी ही परस्पर विरुद्ध, असम्बद्ध तथा वेदादि सत्य शास्त्र विरुद्ध पक्षपात पूर्ण बातें उनके अन्य लेखों मे हैं। तथापि कुछ स्वाध्याय शील धर्म प्रेमी सज्जनों का अनुरोध है कि इनमें से कई बातें सर्व साधारण को भ्रम मे डाल सकती हैं। अतः उनका प्रत्युत्तर देना ठीक होगा। हम ऐसी कुछ आवश्यक बातों का उत्तर यथा समय सिद्धान्त और "सार्वदेशिक" में देते रहेंगे ताकि जनता को भ्रम न हो।

हमारे इस खुले आव्हान को कि मूल वेदों में से एक भी मन्त्र आप उद्धृत करें जिनमे स्त्रियों के वेदाध्यापन का विरोध हो चोटी से एड़ी तक जोर लगाने पर भी पं० दीनानाथ जी कोई उत्तर नहीं दे सके यह सूर्य समान स्पष्ट है।

ध० दे०

सिन्ध आर्य सत्याग्रह की समाप्ति

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी का वक्तव्य

(सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली द्वारा प्रसारित)

दिल्ली २९-१-४७

आर्य प्रादेशिक सभा, लाहौर के प्रधान श्री खुशहालचन्द जी 'आनन्द', आर्य प्रतिनिधिसभा संयुक्त प्रांत के प्रधान श्री राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री जी और आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान मालवा के प्रधान श्री कुंवर चान्दकरण जी शारदा के साथ सत्यार्थप्रकाश पर लगे प्रतिबन्ध की प्रक्रियाओं का स्वयं निरीक्षण करने के उद्देश्य से ३ जनवरी १९४७ को मैं कराची पहुंचा था।

कराची में अपने निवास काल के समय में मैंने देखा कि बहुत से आर्य भाइयों तथा अन्य व्यक्तियों के पास खुले रूप में सत्यार्थप्रकाश की प्रतियां थीं। कुछ भाई इस पुस्तक को थैलों में लिये घूमते थे। इस प्रतिबन्ध के लगने से पूर्व जिस प्रकार आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संगों में सत्यार्थप्रकाश की कथाएं हुआ करती थीं इसी प्रकार अब भी कथाएं हुईं।

मकर संक्रान्ति के पवित्र दिन १४-१-४७ को सात सत्याग्रहियों ने सिन्ध के प्रधान मन्त्री को निम्न पत्र भेजकर प्रतिबन्ध को तोड़ाः—

"संसार जानता है सत्यार्थप्रकाश आर्य समाज का धर्म ग्रन्थ है। यह हमारे लिये उतना ही पवित्र है जितना ईसाइयों के लिये बाइबिल और मुसलमानों के लिए कुरआन। सिन्धी सत्यार्थप्रकाश की जब्ती के लिये प्रचारित सिन्ध सरकार की आज्ञा हमारे धार्मिक अधिकारों और स्वतन्त्रता पर आक्रमण कर किया हुआ आक्रमण है। इस पवित्र ग्रन्थ को अपने पास रखने और उससे धार्मिक तथा आध्यात्मिक लाभ उठाने का हमारा अपरिहार्य अधिकार है जिस पर हम गर्व करते हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि हमारे पास सिन्धी भाषा में पवित्र ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश विद्यमान है और इस ग्रन्थ से वंचित करने के हम किसी के भी अधिकार से इन्कार करते हैं। हम कराची में एक सप्ताह ठहरेंगे।"

इस पत्र के जाने के पश्चात् सहस्रों व्यक्तियों ने प्रधान मन्त्री को इस प्रकार का पत्र भेजने की अनुमति मुझ से मांगी। कराची के लिए रवाना होने के लिये प्रतिदिन बहुत से तार भी मुझे मिलते रहे। परन्तु इस आन्दोलन को यथा सम्भव अधिक से अधिक शान्ति से चलाने की मेरी नीति रही है। इसी कारण मैं आने वाले सत्याग्रहियों को प्रेरणा करता रहा हूँ कि मेरी स्पष्ट आज्ञा के बिना कोई भी अपने स्थान से न चले। इसी कारण मैंने प्रत्येक प्रकार से प्रदर्शन को रोका। न कोई जुलूस निकाले गये और न कोई विशेष सभाएं की गईं।

आज सात दिन समाप्त हो गये हैं। सरकार ने सत्याग्रहियों के पत्र का नियमित उत्तर नहीं दिया है। २२ जनवरी ४७ के "सिन्ध ओब्जर्वर" और "हिन्दुस्तान" में प्रकाशित होम मिनिस्टर श्री गुलामअली खां तालपुर के साथ प्रेस प्रतिनिधियों की भेंट की रिपोर्ट से इस विषय में सरकारी निर्देशों की सूचना मिल जाती है। रिपोर्ट से

स्पष्ट है कि सरकार का इरादा उन व्यक्तियों के विरुद्ध कोई कार्यवाही करने का नहीं है जिन्होंने खुले तौर पर घोषणा करदी थी कि उनके पास जब्त पुस्तक की प्रतियाँ विद्यमान हैं।

इसका अर्थ यह है कि सत्यार्थ प्रकाश पर क्रियात्मक रूप से प्रतिबन्ध नहीं है। और आर्य समाजी अपने धर्म ग्रन्थ का बिना किसी बाधा के प्रयोग तथा अपने धार्मिक स्वतन्त्रता का उपयोग कर सकते हैं। अतः मैं सत्याग्रह को बन्द करता हूँ। मुझे विश्वास है कि सरकार की वर्तमान नीति जारी रहेगी और मेरे धर्म भाइयों को शिकायत का मौका न दिया जायगा। यदि सरकार हस्तक्षेप न करने की वर्तमान नीति से हटेगी तो आर्य समाज पुनः सत्याग्रह को जारी करने के लिये विवश होगा॥

बंगाल सहायता निधि

दान सूची

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

(गताङ्क से आगे)

४५७७३॥≡)॥ गत योग

१०) सेठ प्रताप नारायण मौजा सेमर इमा डा० बहियाव (फतहपुर)

१०) श्री सेठ रामधनी जी नम्बरदार मौजा सेमरइमा डा० बहियाव (फतहपुर)

६) आर्य समाज प्रताप तोड जि० मुजफ्फरपुर

५०) आर्यसमाज जगन्नाथ भवन बादली (रोहतक)

५०) आर्य समाज मानीवाल (होशियारपुर)

२१) श्री शिव स्वामी आर्य सन्यासी, द्वारा आर्य समाज कानपुर

१०) श्री शिव भजन लाल सरपंच मौजा मोहम्मिदाबाद डा० पट्टी (फतहपुर)

२६॥) श्री काली चरण सहायक अध्यापक मिडिल स्कूल बकेवर (इटावा)

छात्रों व अध्यापकों का दान

२) श्री कुन्दन लाल जी आर्य मिठाटिवाना, सरगोधा।

१०) ऐस शंकर नारायण जी कार स्ट्रीट, बरेली।

१०) सत्य देव विशारद सहायक अध्यापक परतापुर (अलवर)

५०) आर्य समाज धनबाद

५०) श्री चौ० मनराज सिंह ग्राम बन्धावन पो० केराकत (जौनपुर)

२५) शिवनन्दन प्रसाद सिंह जी, मन्त्री नोआखाली रिलीफ समिति, रजौली (गया)

३१) आर्य समाज दीपलपुर होल्कर स्टेट इन्दौर।

१५०) प० दौलत राम जी कालिया गंगा नगर (बीकानेर)

१०००) आर्य समाज रिवाड़ी (गुड़गावा)

१५१) आर्य समाज नगरा, झांसी

३५) स्त्री आर्य समाज अलीगढ़

५०) आर्य समाज बाड़ी (धौलपुर)

४१) आर्य समाज केराकत (जौनपुर)

१५) श्री ज्ञान चन्द्र सेठी श्रद्धानन्द स्क्वायर, कृष्ण नगर, लाहौर।

८००) आर्य समाज जौनपुर

२५) जानकी प्रसाद जी गुप्त नया बाजार, लखीकैंट।

२२४) आर्य समाज मोरवी (काठियावाड़) निम्न प्रकार:—

३१) शिवराज मेघजी परमार

३०) मिस्त्री दोसा भाई कल्याण जी

२५) पानाचन्द देवचन्द्र मणियार

२५) मोखनसिंह जी भवण सिंह जी

१६) अमृतलाल अचराज

१५) मगन लाल रामजी चौराण

११) वासुदेव भूपतराय

११) भगवान दास गंगा राम

११) लक्ष्मण नारायण चौराण

११) हरिश्चन्द्र लाल शकर
५) गोपेन्द्र सिंह दौलत सिंह
५) जीवराम नाथ जी त्रिवेदी
५ पटेल गोकुल माला
५) गोवरधन मघन
३) उजमरी मोती कसारा
३) दोसा भाई भगवान जी
२) छोराकाल भाई
२ माधा हरिभाई
२) प्रेम जी भाई
२) दरियाभाई
१) मणिराम सुन्दर जी
१) छगन भाई
१) परशोतम भाई
१) फूल शकर जानी
२२४)
५००) आर्य समाज गुरुकुल सेक्शन मिंटगुमरी
८६) आर्य समाज सराय सिद्ध (मुलतान)
६२।। पचायत जैसी कनवन सिंह (मुलतान)
७) कोट दुनीचन्द्र की महिलाओं द्वारा
२१३) मन्त्री आर्यसमाज राहों (जालन्धर)
३१) श्री पन्नालाल जी नेत्र वैद्य हिंगोली (निजामराज्य)
७०) आर्य समाज रामगढ पो० सीरवड
१००) श्री युवान सिंह चक्रवर्ती सूरत
१०००) अध्यक्ष वीर अर्जुन देहली।
२५०) आर्य समाज कोटा जक्शन
३६।।) सराय सिद्ध मुलतान
६५।।) तुलम्बू की जनता द्वारा आर्य समाज सराय सिद्ध (मुलतान)
१६०।।।) मखयदुम पुर की जनता द्वारा आर्य-समाज सिद्ध (मुलतान)
१२५) मोहता ग्राम तहसील बल्लभगढ़ (गुड़गावा) की जनता द्वारा श्री लक्ष्मणदास जी।
१००) आर्य समाज कैराना (मुजफरनगर)
२३०) आर्य समाज विशनगर (काठियावाड़)
२००) आर्य समाज किशनगढ स्टेट
१५०) आर्य समाज नायेलवी (लेवा) बम्बई

१५०) स्त्री आर्य समाज बरेली
१००) आर्य समाज लालवाड़ा पो० सरधना (मेरठ)
५०) आर्य समाज झीली (गुड़गावा)
५) श्री राम जियावनसिंहजी बहारामपुर (फतहपुर)
३२) श्री चौधरी जवाहरसिंह जाट ग्राम किवेड़ा अगवानपुर (मुरादाबाद)
६) मैघोमल म्हाडोंमल मदेजी सक्खर (सिन्ध)
७) श्री मनीलाल जी पोस्टमैन डा० बहरामपुर (फतहपुर)
२००) आर्य समाज मऊ छावनी (राजस्थान)
११५१) आर्य समाज सिरसा (हिसार)
१००) आर्य समाज जलालाबाद (मुजफ्फरनगर)
४००) आर्य समाज कोट अद्दू (मुजफ्फरगढ़)
२००) आर्य समाज बीकानेर
३५१) आर्य समाज खुर्जा
१६४=) आर्य कुमार सभा आवला कटरा पुख्ता (बरेली)
७४) श्री डा० ज्योति स्वरूप जी इटावा
५) श्री डा० आनन्द स्वरूप जी इटावा
१००) श्री अर्जुन दास जी डंग पक्का डंगा जम्मू स्टेट
१५) आर्य समाज महिम (रोहतक)
१०) आर्य समाज हैदराबाद डा० गोलाकरननाथ (खीरी)
५) हैड मास्टर प्राइमरी स्कूल चौबारी डा० सदर (बरेली)
१०) पं० शिवानन्द जी विषहर डा० पट्टी (फतहपुर)
५) बदलराम महाजन ग्राम नौबस्ता डा० बकियाव (फतहपुर)
५) श्री रामप्रसाद हलवाई द्वारा आर्य समाज विषहर
१००) आर्य समाज अमरावती (सी० पी०)
१०) आर्य समाज रामगढ़ (अलवर)
१७) आर्य समाज छीपा
५) श्री डा० शीतला बख्श सिंह ग्राम केनवार (इलाहाबाद)

१२) ऐल० आर० तिवारी नरसिंह मन्दिर महीदपुर (होल्कर स्टेट)
६०) मन्त्री आर्य समाज गरौठ (इन्दौर राज्य)
१०) श्री गणेश प्रसाद तिवारी कारिन्दा बरिआव (फतहपुर)
२५) आर्य समाज असोथर (फतहपुर)
५) श्री० बलिराम जी गौवारे परतवा डा. ऐलिचपुर (अमरावती)
३) गुप्तदान
५००) आर्य समाज गुना (ग्वालियर राज्य)
५००) मन्त्री पूर्वी बंगाल आर्य सहायता समिति रावलपिन्डी
१०००) आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार
१५१) आर्य समाज मवाना कलां (मेरठ)
१६२) जनता ग्राम कौल द्वारा मन्त्री आर्य समाज मवाना कलां (मेरठ)
१५००) सम्पादक दैनिक सन्देश अहमदाबाद (दूसरी किस्त)
५०४) मन्त्री आर्य समाज गिदड़बाह (फीरोजपुर)
३६।।) मन्त्री आर्य समाज रेलवे क्वार्टर्स मोर सराय दिल्ली
५००) हिन्दू रक्षा समिति देहली शाहदरा
१३७।।) हैड मास्टर ऐस० ए० बी० हाईस्कूल, भर्थना (इटावा)
१६३।-) हिन्दू जनता ग्राम अब्दुलहकीम (मुलतान) द्वारा आर्य समाज सराय सिद्ध
२००) श्री विश्वम्भर नाथ कपूर मन्त्री, आर्य-समाज किला शेखूपुरा
२२।।) आर्य कन्या इंग्लिश मिडिल स्कूल अलमोड़ा
२०) आर्य समाज पुरवा (उन्नाव)
९८।-) आर्य समाज रवावड़ाव सक्खर सिन्ध
६८) ग्राम दीक्षितपुर पो० चुनार (मिर्जापुर) के निवासियों से श्री काशीनाथ जी द्वारा
२०) ठाकुरद्वारा (मुरादाबाद)

६०४२८।।≤)।। योग

(शेष अगले अंक में)

श्री पं० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार देहली में मुद्रित

Regd. NO L. 2121

सार्वदेशिकसभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

नाम पुस्तक	लेखक व प्रकाशक	मूल्य
(१) वैदिक सिद्धान्त स०	(सार्व० सभा)	१)
(२) विदेशोंमेंआर्यसमाज	,,	॥)
(३) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर	,,	१।)
(४) आर्य सिद्धान्त विमर्श	,,	१॥)
(५) समस्त समाजों की सूची	,,	॥)
(६) सार्वदेशिक सभा का इतिहास	,, अ०	२)
(७) आर्य डायरेक्टरी	,, अ०	१।)
(८) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या	,,	।)
(९) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण) प०इन्द्रजी)		।=)
(१०) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	,,	२)
(११) वैदिक सूय विज्ञान	,,	-
(१२) वेद में असित शब्द	,,	-।
(१३) ऋगवेद में देवृकामा	,,	-)
(१४) वेद म दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तिया	,,	१)
(१५) विमान शास्त्र	,,	।=)॥
(१६) नया समार श्री प० रघुनाथ प्रसाद पाठक		≥)
(१७) मातत्व की ओर	,, ,, अ०	१।)
(१८) कथा माला	,,	॥)
(१९) आर्य जवन गृहस्थ धर्म	,,	॥=)
(२०) आत्म कथा श्र नारायण स्वामी जी		२।)
(२१) श्री नारायण स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ		५)
(२२) योग रहस्य श्र महात्मा नारायण स्वामी जी		१)
(२३) विद्यार्थी जीवन रहस्य		॥)
(२४) उपनिषद् ईश ।≥) केन ॥) कठ ॥) प्रश्न ।=) मुण्डक ।≥) माण्डूक्य ≥), ऐतरेय ।) तैत्तिरीय ॥)		
(२५) श्री नारायण स्वामी जी की संक्षिप्त जीवनी		-)
(२६) नारायण-सुधा सजिल्द		१॥)
(२७) शहीदी पट्टिका		।=)
(२८) आर्यसमाज मन्दिर चित्र		।)
(२९) इजहारे हकीकत श्री ला० ज्ञानचन्द्रजी आर्य		॥=)
(३०) बहिनों की बातें (प० सिद्धगोपाल जी काव्यरत्न)		१)
(३१) दयानन्द जन्म स्थान निर्णय (प० विजयशङ्कर मूलशङ्कर जी)		॥)
(३२) भूमिका प्रकाश (श्री द्विजेन्द्रनाथ जी)		१॥)
(३३) वेद और गोमेध श्री ला० श्यामसुन्दरलाल जी		≥)
(३४) सत्यार्थ प्रकाश आन्दोलन का इतिहास		।= नेट
(३५) सत्यार्थ प्रकाश गान(प० सत्यभूषणजी या)		-)
(३६) हमारे घर (श्री निरंजनलाल जी गौतम)		॥-)
(३७) भारतवर्ष में जाति भेद	,,	।)
(३८) हमारी राष्ट्र भाषा (प० धर्मदेव जी)		≥)
(३९) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता		-)
(४०) सत्यार्थप्रकाश और उसकी रक्षा		-)
(४१) आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग का कार्य क्रम		-)
(४२) आर्य शब्द का महत्व (श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक)		-)
(४३) सरल सन्ध्योपासना		।)
(४४) भारतीय वाङ्मय के अमररत्न		।-)
(४५) वैदिक ज्योतिष शास्त्र)		१॥)
(४६) एशिया का वेनिस (स्व० स्वामी सदानन्द जी)		॥)
(४७) काया कल्प (प० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार)		१।)
(४८) आर्यसमाज के नियमोपनियम		-)॥
(४९) वैदिक वीर गर्जना (श्री रामनाथ वेदालङ्कार)		॥=)
(५०) धर्मार्य सभा की व्यवस्थानुसार दैनिक सन्ध्या हवन की विधि		-)



१९४७ ई०	सम्पादक—	वार्षिक मूल्य
२००३ सं०		विदेश १० शि०

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष २३ | फरवरी १९४७ ई० माघ २००३ दयानन्दाब्द १२२ | अङ्क १२

* वैदिक प्रार्थना *

ओ३म् अग्ने त्वं नो अन्तम उत त्राता शिवो भुवा वरूथ्यः ॥

सामवेद मं० ४४८

अर्थ—हे (अग्ने) ज्ञान स्वरूप परमेश्वर! (त्वम्) तू (नः अन्तमः) हमारा निकटतम (उत) और (त्राता) रक्षक (वरूथ्यः) वरण करने योग्य है (शिवः भुवः) तू हमारे लिये सदा शान्ति दायक हो।

विनय—हे ज्ञान के भण्डार परमात्मन्! तुम हमारे अन्दर बाहर सर्वत्र व्यापक होने के कारण हमारे सबसे निकटतम मित्र हो। सारी सब प्रकार से रक्षा करने वाले और इसलिए हमारे लिए वस्तुतः सदा वरण स्वीकार करने योग्य तुम ही हो। तुम्हारी शरण में आने से ही हमें सच्चे कल्याण तथा आनन्द की प्राप्ति हो सकती है क्योंकि तुम ही शान्ति के मूल हो अतः तुम से ही शान्ति की प्रार्थना करते हैं। हे भगवन्! तुम्हारी दया से सबको सच्ची शान्ति प्राप्त हो यही हमारी हार्दिक प्रार्थना है।

वेदोपदेश

एकेश्वर पूजा

(१) ओ३म् तमु अभिप्रगायत पुरुहूतं पुरुष्टुतम्। इन्द्रं गीर्भिस्तविषमाविवासत॥

सामवेद म० ३८७

(२) ओ३म् एतो न्विन्द्रं स्तवाम सखायः स्तोम्यं नरम्। कृष्टीर्यो विश्वा अभ्यस्त्येक इत्॥

सामवेद म० ८७

(३) ओ३म् इन्द्राय साम गायत विप्राय बृहते बृहत्। ब्रह्मकृते विपश्चिते पनस्यवे॥

सामवेद म० ३८८

(४) ओ३म् य एक इद् विदयते वसु मर्ताय दाशुषे। ईशानो अप्रतिष्कुत इन्द्रो अङ्ग॥

सामवेद म० ३८९

अर्थ—(१) (तम्) उस (पुरुहूतम्) बहुतभक्तो द्वारा मानसिक रूप से बुलाये गये (पुरुष्टुतम्) बहुत साधु सन्तो और महात्माओ द्वारा स्तुति किये गये (तविषम्) अत्यन्त महान (इन्द्रम्) परमेश्वर का (उ) ही (अभिप्रगायत) चारो ओर से अच्छी प्रकार से गुणगान करो (गीर्भिः) अपने प्रेममय वचनो से (आविवासत) पूजा करो।

अर्थ—(२) हे (सखायः) मित्रो (एत उ नु) आवो हम सब (स्तोम्यम्) स्तुति करने योग्य (नरम्) सबके नेता (इन्द्रम्) परमेश्वर की (स्तवाम) स्तुति करे (यः) जो (एक इत्) अकेला ही (विश्वाः कृष्टीः अभि अस्ति) सब मनुष्यो का शासक है।

अर्थ—(३) (ब्रह्मकृते) वेद ज्ञान देने वाले (पनस्यवे) स्तुति करने योग्य (विपश्चिते बृहते विप्राय) महान् सर्वज्ञ (इन्द्राय) परमेश्वर के लिये (बृहत् साम गायत) बड़े शान्तिदायक साम का गान करो।

अर्थ—(४) (अङ्ग) हे प्रिय (यः) जो प्रभु (एकः इत्) अकेला ही (दाशुषे मर्ताय) अपने को समर्पित करने वाले भक्त के लिये (वसु) ज्ञानादि ऐश्वर्य को (वि दयते) विविध प्रकार और विशेष रूप से देता है वह (ईशान) सबका स्वामी है तथा (अप्रतिष्कुतः इन्द्रः) अपराजित सर्व शक्तिमान् परमेश्वर है। उसी की तू उपासना कर।

वेद के इन मन्त्रो मे सर्व व्यापक, सर्वज्ञ, सर्व शक्तिमान् एक परमेश्वर की उपासना का स्पष्ट उपदेश है। उस एक परमेश्वर को छोड़कर तथा उसके स्थान मे जो अन्य कल्पित देवी देवताओ अथवा मूर्ति, वृक्ष, वनस्पति, नदी, पर्वत आदि की उपासना करते रहते है वे वस्तुतः अज्ञानी है और इसलिए उन्हे सच्चे सुख, शान्ति और आनन्द की प्राप्ति नही हो सकती। ज्ञानादि समस्त उत्तम ऐश्वर्य का प्रदाता वह एक परमात्मा है इसलिये सब ज्ञानी भक्ति भाव से उस एक परमेश्वर का ही ध्यान तथा भजन करते है। उसे सब प्राणियो का पिता जानकर वे सबके प्रति मित्र भाव को धारण करते है। सारे ज्ञान का भण्डार वही एक प्रभु है इसलिये उसके साथ अपने पवित्र आत्मा का योग करने से सच्चे ज्ञान की प्राप्ति होती है जिसके बिना मनुष्य अशान्त होकर इधर उधर भटकता फिरता है।

वेद भगवान् स्पष्ट शब्दों में उपदेश करते हैं कि इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि, मातरिश्वा आदि नाम उपासना प्रकरण में उसी परमेश्वर के हैं "एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः" (ऋ० १।१६४।४६) वे सब नाम उस भगवान् के विविध गुणों को सूचित करते हैं पर वह उपासनीय परमेश्वर एक ही है। इसी प्रकार ब्रह्मा, विष्णु, शिव, शङ्कर आदि भी उसी एक परमात्मा के नाम हैं जिनसे उसकी महत्ता, सर्व व्यापकता, शान्तिदायिता आदि गुणों का ज्ञान होता है। वह एक परमेश्वर ही (एकः इत्) उपासना करने योग्य है। वही एक पूजनीय है (एक एव नमस्यः) अपने हृदय को पवित्र बनाकर शुद्ध बुद्धि, वाणी और कर्मों द्वारा हमें उस एक परमात्मा का ही आराधन करना चाहिये। वह परमात्मा सर्व व्यापक, निराकार, निर्विकार है अतः उसकी पूजा के लिए बाह्य वस्तुओं की कोई आवश्यकता नहीं। उसकी पूजा तो शुद्ध बुद्धि, शुद्ध वाणी और परोपकार सेवामय शुभ कर्मों से ही हो सकती है। अतः मूर्ति पूजा, बहुदेव पूजादि अवैदिक, हानिकारक तथा परस्पर विरोध भाव को बढ़ाने वाली प्रथायें हैं यह बोध अङ्कुर रूप से विशुद्ध हृदय बालक मूल जी (मूल शङ्कर) को आज से लगभग ११० वर्ष पूर्व टङ्कारा के मन्दिर में हुआ था। अतः सचमुच वह रात्रि कल्याणमयी शिव रात्रि बन गई। इस एकेश्वर पूजा के पवित्र वैदिक उपदेश को पूर्ण क्रियात्मक रूप देते हुए हमें अपने जीवनों को शान्ति, आनन्द और शाश्वत सुख से परिपूर्ण कर देना चाहिये। यही शिवरात्रि का 'ध्रुव' सन्देश है।

—●—

अध्यात्म सुधा
महर्षि दयानन्द वचनामृत

१. उपासना का फल—

जैसे शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास जाने से शीत निवृत्त हो जाता है वैसे परमेश्वर के समीप प्राप्त होने से सब दोष दुःख छूटकर परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण कर्म स्वभाव पवित्र हो जाते है इसलिए परमेश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना अवश्य करनी चाहिए। इससे इसका फल पृथक् होगा परन्तु आत्मा का बल इतना बढेगा वह पर्वत के समान दुःख होने पर भी न घबराएगा और सबको सहन करलेगा। क्या यह छोटी बात है? और जो परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना नही करता वह कृतघ्न और महामूर्ख भी होता है, क्योंकि जिस परमात्मा ने इस जगत् के सब पदार्थ जीवो को सुख के लिए दे रक्खे है उसका गुण भूल जाना, ईश्वर ही को न मानना कृतघ्नता और मूर्खता है।

(सत्यार्थ प्रकाश सप्तम समुल्लास पृ० ११५ वैदिक यन्त्रालय अजमेर २८ वी आवृत्ति)

२. उपासना के साधन

उपासना शब्द का अर्थ समीपस्थ होना है। अष्टाङ्ग योग से परमात्मा के समीपस्थ होने और उसको सर्व व्यापक, सर्वान्तर्यामी रूप से प्रत्यक्ष करने के लिये जो २ काम करना होता है वह २ सब करना चाहिये जो उपासना का आरम्भ करना चाहे उसके लिये यही आरम्भ है कि वह किसी से वैर न रक्खे, सर्वदा सबसे प्रीति करे, सत्य बोले, मिथ्या कभी न बोले, चोरी न करे। जितेन्द्रिय हो, लम्पट न हो और निरभिमानी हो, अभिमान कभी न करे। ये पाच प्रकार के यम मिलके उपासना योग का प्रथम अङ्ग है।

राग द्वेष छोड भीतर और जलादि से बाहर पवित्र रहे, धर्म से पुरुषार्थ करने से लाभ मे न प्रसन्नता और हानि मे न अप्रसन्नता करे, प्रसन्न होकर आलस्य छोड सदा पुरुषार्थ किया करे, सदा दुःख सुखों का सहन और धर्म ही का अनुष्ठान करे, अधर्म का नहीं। सर्वदा सत्य शास्त्रों को पढ़े पढावे, सत पुरुषो का सङ्ग करे और 'ओ३म्' इस एक परमात्मा के नाम का अर्थ विचार कर नित्य प्रति जप किया करे। अपने आत्मा को परमेश्वर की आज्ञानुकूल समर्पित कर देवे। इन पॉच प्रकार के नियमों को मिला के उपासना योग का दूसरा अङ्ग कहलाता है।

(सत्यार्थ प्रकाश ७ म समुल्लास पृ० ११४)

[हमारा सब आर्यों से अनुरोध है कि केवल मूर्ति पूजादि के खण्डन से सन्तुष्ट न होकर वे परमेश्वर की सच्ची उपासना करने के लिये यम नियमादि का विशेष रूप से अभ्यास करें जिससे उनके जीवन सरस और शान्तिमय बने। लोगो को यह कहने का अवसर न मिले कि आर्यों ने स्वामी दयानन्द जी के खण्डनात्मक उपदेशों को तो कुछ अश तक ग्रहण कर लिया है पर विधानात्मक बातो की ओर उन्होंने कम ध्यान दिया है। इस प्रकार अभ्यास करने से न केवल हमे आध्यात्मिक आनन्द और शान्ति की प्राप्ति होगी अपितु सामाजिक सुधार की शक्ति का भी अधिक विकास होगा—सम्पादक सा० दे०]

श्री स्वामी दयानन्द जी और शिक्षा कार्य

(लेखक—प्रो० महेशप्रसादजी हिन्दू यूनिवर्सिटी बनारस)

आज सन् १६४७ ई० में कई वर्षों से शिक्षा-शिक्षा का शोर सुनाई पड़ रहा है, दिन प्रतिदिन स्कूल बढ़ते जा रहे हैं फिर भी देश की आवश्यकता दस पन्द्रह वर्षों में पूरी हो—ऐसी आशा दिखाई नहीं पड़ती क्योंकि देश की जो दशा है और शिक्षा की जितनी कमी है वह बहुत शोचनीय है, वह बहुत ही कम है।

श्री स्वामी दयानन्द जी ने आज से बहुत ही पहले शिक्षा के लिये बहुत कुछ कहा था। इस कारण इनके अनुयायियों ने इसकी ओर विशेष ध्यान दिया। इनके नाम अनेक कालिज व स्कूल खुले। इनके विचारों की पूर्ति हो—इस उद्देश से अनेक आर्य कन्या पाठशालायें खुलीं किन्तु श्री स्वामी जी शिक्षा को जिस ढंग से चाहते थे उस ढंग की आर्य समाजियों के उद्योग से होती हुई दिखाई नहीं पड़ रही है।

शिक्षा की परिभाषा श्री स्वामी जी ने अपने स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश (सत्यार्थ प्रकाश के अन्त) में यह लिखी है:—

"जिससे विद्या, सभ्यता, धर्मात्मता, जितेन्द्रितादि की बढ़ती होवे और अविद्यादि दोष छूटें, उसको शिक्षा कहते हैं।"

श्री स्वामी जी ने इसी आशय की परिभाषा "व्यवहार भानु" में भी लिखी है और साथ ही साथ यह भी बतलाया है कि शिक्षा कैसी होनी चाहिये किन्तु इस सम्बन्ध में कुछ और लिखने के पूर्व यह भी बतला देना जरूरी समझता हूँ कि कुछ लोग विद्या व शिक्षा में भेद नहीं समझते। ऐसी दशा में विद्या की परिभाषा जान लें कि श्री स्वामी जी के विचार के अनुसार यह है:—

"जिससे ईश्वर से लेके पृथ्वीपर्यन्त पदार्थों का सत्य विज्ञान होकर धन से यथायोग्य उपकार लेना होता है।"

"ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन" के नाम से जो ग्रन्थ श्री पं० भगवद्दत्त जी के द्वारा सम्पादित होकर सन २००२ वि० में प्रकाशित हुआ है उससे विदित होता है कि श्री स्वामी जी महाराज के विचार शिक्षा के सम्बन्ध में क्या थे? अतः उसी में से कुछ बातें उद्धृत की जा रही हैं:—

(१) "आर्यावर्त देश की स्वाभाविक सनातन विद्या संस्कृत ही है·········उसी से इस देश का कल्याण होगा। अन्य देश भाषा से नहीं। अन्य देश भाषा तो जितना प्रयोजन हो उतनी ही पढ़नी चाहिये और विद्या स्थान में संस्कृत ही रखना चाहिये।"

(पृ० २५)

श्री स्वामी जी के उक्त शब्द एक ऐसे विज्ञापन में हैं जिसके लिखे जाने का समय सितम्बर सन् १८७४ ई० है।

(२) "मुझे यह सुनकर बहुत प्रसन्नता हुई है कि आप आर्य संस्कृत पाठशाला का यत्न कर रहे हैं और भी अधिक प्रसन्नता इस बात की है कि एक सौ दो रुपया पांच आना इसकी सहायता में एकत्र हो गये हैं। मैं

आगे आपकी उन्नति सुनकर प्रसन्न हूँगा।"
(पृ० १४७)

ये शब्द दीनापुर (दानापुर) के मन्त्री आर्य-समाज को १६ मार्च सन् १८७६ ई० को हरिद्वार से लिखे गये हैं।

(३) "मुंशी कालीचरण रामचरण जी के पत्र से विदित हुआ है कि आप लोगों की पाठशाला मे आर्य भाषा संस्कृत का प्रचार बहुत कम और अन्य भाषा अर्थात् अंग्रेजी व उर्दू फारसी अधिक पढ़ाई जाती है। इससे वह अभीष्ट जिसके लिये यह पाठशाला खोली गई है सिद्ध होता नहीं दीखता। वरन आपका यह हजारहा मुद्रा का व्यय संस्कृत की ओर से निष्फल होता भासता है। हमने कभी परीक्षा के कागजात व आज तक की पढ़ाई का फल कुछ भी नहीं देखा। आप लोग देखते हैं कि बहुत काल से आर्यावर्त में संस्कृत विद्या का अभाव हो रहा है। वरन् संस्कृत रूपी मातृ-भाषा की जगह अंग्रेजी लोगों की मातृभाषा हो चली है। अंग्रेजी का प्रचार तो जगह २ सम्राट् की ओर से जिनकी यह मातृ भाषा है भले प्रकार से हो रहा है। अब इसकी वृद्धि में हम-तुमको इतनी आवश्यकता नहीं दीखती और न सम्राट् के समान कुछ कर सकते हैं। हां, हमारी अति प्राचीन मातृ-भाषा संस्कृत जिसका सहायक वर्तमान में कोई नहीं है और यही व्यवस्था देखकर संस्कृत के प्रचारार्थ आप लोगों ने यह पाठशाला स्थापित की है तो यह भी उचित कर्त्तव्य अवश्य है कि सदैव इष्ट के सिद्ध होने पर दृष्टि रक्खी जावे। अब इसके साधनार्थ यह होना चाहिये कि कुल पठन पाठन समय के छः घण्टों में तीन घण्टे संस्कृत दो घण्टे अंग्रेजी और एक घण्टा उर्दू और फारसी पढ़ाई जाया करे।" (पृ० २६५)

उक्त शब्द उस पत्र के हैं जो सेठ निर्भय-राम जी के नाम फर्रुखाबाद भेजा गया था। इसमे वहां की पाठशाला के विषय की बातें हैं। पत्र के लिखे जाने की तारीख २३ मई सन् १८८१ ई० है। यह अजमेर से भेजा गया था।

(४) "अब कई बार हमने लिखा कि पण्डित लक्ष्मीदत्त जी के आने के पश्चात वा पहले संस्कृत में कौन-कौन को किस-किसने व कितनों ने पढ़ा व पढ़ते हैं। उसका समाचार कुछ भी नहीं लिखा। इससे विदित होता है कि तुम्हारी पाठशाला में अलिफ, बे और कैट बैट का भर्मार है जो कि आर्य समाजों को विशेष कर्तव्य नहीं है।" (पृ० ४१६)

फर्रुखाबाद में जो पत्र लिखित २५ अप्रैल सन् १८८३ ई० का ला० कालीचरण रामचरणजी के नाम शाहपुरा स्टेट से भेजा गया है उसी के उक्त शब्द हैं। वास्तव मे जिन बातों का पता उक्त उद्धरणों से लगता है उन्हीं बातों की सूचना कुछ अन्य पत्रों से भी लगती है। लेख बहुत लम्बा हो जायगा इस कारण उद्धरण नहीं दिये जा रहे हैं।

कहने की आवश्यकता नहीं कि उक्त उद्धृत शब्दों से स्पष्ट है कि श्री स्वामी जी चाहते थेः—

१. संस्कृत की उन्नति पर जोर दिया जाय।
२. अंग्रेजी पर बहुत जोर न दिया जाय।
३. उर्दू फारसी पर भी अधिक जोर न दिया जाय।

शिवरात्रि या शिवप्रभात ?

(लेखक—श्रीमती सुशीलादेवी चन्द्रकान्तजी त्रिवेदी गु० कु० सूपा)

शिवरात्रि की रात भारतवर्ष के कल्याण की वह प्रभात थी, जिसमें भारतीय आत्मा दयानन्द के रूप में सजग हो उठी । टंकारा के छोटे से मंदिर की शिवप्रतिमा पर चढ़े हुए मूषक ने मूल शंकर को जगाकर 'असतो मा सद् गमय' की ध्वनि की। जब बड़े बूढ़े झोंके खा रहे थे तब एक दिव्य बालक जाग रहा था । 'या निशा सर्व भूतानां तस्यां जागर्ति संयमी'। बालक ने विचार किया कि सच्चा शिव, मूर्ति में कैसे रह सकता है ? वह तो अणु अणु, रोम रोम मे रमा हुवा है ! वृक्ष से सदा फल गिरते रहते है, परन्तु न्यूटन ने इस पर विचार करके गुरुत्वाकर्षण (Law of gravitation) का नियम प्रकट किया था। इसी तरह शिव पर मूषक को कूदते देख विश्वव्यापी, सर्वशक्तिमान् शिव की प्राप्ति के लिए मूलशङ्कर के हृदय मे जिज्ञासा हुई । सम्बन्धियों की मृत्यु ने इस जिज्ञासा को अधिक बढ़ाया । शाक्य मुनि सिद्धार्थ ने ३० वर्ष के भरयौवन में जरा, रोग और मृत्यु को देखकर महाभिनिष्क्रमण किया था, तो मूल शङ्कर ने कोमल बाल्यावस्था में ही घर को लात मारकर महा प्रयाण किया। अनेक साधु महात्माओं के द्वार खटखटाए, परन्तु मथुरा मे स्वामी विरजानन्द की कुटीर मे ही मन को शांति मिली। यमुना नदी ने दयानन्द को साम्राज्यों के उत्थान पतन का इतिहास सुनाया, और ऋषि ने 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का जय घोष किया। वेद टंकार सुनकर विलासी राजाओं के सिंहासन डोल उठे, मन्दिरों के महन्तों की गद्दियाँ हिलने लगी, अबलायें वेद मंत्र गाने लगीं, दलित एवं शूद्र सिर ऊंचा कर चलने लगे, विधवाएं देश एवं धर्म की सेवा करने लगी। नैष्ठिक ब्रह्मचारी ने भारतवर्ष के कोने २ मे घूमकर धूम मचा दी। शङ्कर स्वामी ने उपनिषद् का सहारा लिया, तो दयानन्द सरस्वती ने वेदों का आश्रय लिया।

शंकर स्वामी की निष्ठा तथा बुद्धदेव की मानवदया ये दोनों नैष्ठिक ब्रह्मचारी की बहिनें हैं। शंकराचार्य की ब्रह्म दृष्टि शूद्र एवं स्त्री को पवित्र नहीं कर सकी। ऋषि की आंखों के आँसू ने असंख्य विधवाओं को पवित्र कर दिया। बुद्धदेव की करुणा ने पशुओं की आह को अवश्य शांति दी परन्तु स्त्री जाति के आँसू तो स्वामी दयानन्द ने धोये। महर्षि के हृदय में स्त्री, शूद्र, गाय, ब्राह्मण, हाथी, कुत्ता, कीट-पतंग सब बस

(१८६ पृष्ठ का शेष)

स्पष्ट है कि आजकल श्री स्वामी जी के नाम के साथ जो कालिज व स्कूल बन रहे हैं और वैदिक धर्म की उन्नति के निमित्त जो आर्य-कन्या पाठशालायें बढ़ रही हैं उनमें सारा जोर अंग्रेजी के लिये लगाया जा रहा है। संस्कृत या धार्मिक शिक्षा की ओर विशेष ध्यान नहीं। ऐसी अवस्था में प्रत्येक आदमी समझता है कि श्री स्वामी जी महाराज शिक्षा के निमित्त क्या चाहते थे और हम क्या कर रहे हैं ? हमारा करना इसी कारण हमको अवनति की ओर ले जा रहा है।

सकते थे। मुहम्मद ने मूर्ति पूजा का खण्डन किया, परन्तु कुरान की (मूर्ति) पूजा अवश्य सिखाई। ऋषि ने अपने को कभी निर्भ्रान्त न कह कर अपूर्व निरभिमानिता दिखाई। कविराज शामलदास को अपनी हड्डियों की राख को खेत में डलवाने की प्रेरणा करके मूर्तिपूजा का क्रियात्मक विरोध किया। ईसा मसीह ने ससार मे प्रेम-राज्य स्थापित करने के निमित्त सूली पर चढ़ते हुए आँसू गिराए—विरोधियों को क्षमा की। ऋषि ने 'आर्यों का चक्रवर्ती साम्राज्य' बनाने के लिए अपने देह को हँसते हँसते छलनी कर दिया और 'प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो' का जाप किया। स्वामी दयानन्द मे मुहम्मद का सा जोश, ईसा का प्रेम, बुद्ध का चरित्र, शकर की प्रतिभा और बन्दा वैरागी का सा बलिदान कूट कूट कर भरे हुए थे। महर्षि का सत्यार्थ प्रका । ईसा, मूसा, मुहम्मद, महावीर, नानक, शकर और कबीर—सब विचारों की कसौटी पर कसा जाकर कुन्दन बन चुका है। स्वतन्त्रता की ओर कदम बढ़ाता हुआ भारतवर्ष अनुभव कर रहा है कि नैष्ठिक ब्रह्मचारी के विचारों का विजय हो रहा है। यदि हिन्दू जाति ने हरिजनों और स्त्रियों के साथ अत्याचार न किया होता तो आज नोआखली और बिहार के दृश्य हमारे सामने खड़े न होते। यदि हिन्दू जाति ने 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' तथा 'स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्या सर्वमानवाः' के आर्य चक्रवर्ती साम्राज्य के स्वप्न लिए होते बृहत्तर भारत की उड़ान ली होती तो आज पाकिस्तान के नारे बुलन्द न होते। आज की अंधियारी रात मे महर्षि के विचारों की किरणों से ही शिवप्रभात का दर्शन हो सकेगा। आओ हम सब शिवरात्रि मे सच्चा शिव प्रभात देखें।

—●—

भारत के भविष्य-निर्माण में आर्यसमाज का स्थान

(लेखक—श्री प्रो० इन्द्रजी विद्यावाचस्पति, देहली)

(१)

मनुष्य समाज में परिवर्तन उत्पन्न करने वाली हलचलों के दो रूप होते हैं, एक परिमित तथा अस्थिर और दूसरा विशाल तथा स्थिर। उनमें जो भेद है उसे मैं एक प्राकृतिक दृष्टान्त की सहायता से स्पष्ट करता हूँ। परिमित तथा अस्थिर आन्दोलन आँधी के एक जबर्दस्त झोंके की तरह मनुष्य समाज को प्रकम्पित कर देता है, उसमें उथल-पुथल मचा देता है और कुछ समय के लिये अपने क्षेत्र मे पूरी तरह छा जाता है, परन्तु उसका असर परिमित स्थान पर होता है और थोड़ी ही देर में नष्ट हो जाता है। यह सम्भव है कि वह झोंका ऊँची इमारतों को हिला दे, पेड़ों को गिरा दे और झोपड़ी को तोड़-फोड़ डाले, पर ये सब परिणाम क्षणिक होंगे—झोंके के गुजर जाने पर थोड़े से प्रयत्न से लुप्त होजायेंगे।

इसके विपरीत, स्थिर तथा व्यापी आन्दोलन मानसून की हवा की तरह आते हैं, वे आंधी की तरह नहीं आते। कभी धीमी गति से और कभी तेजी से चलते हैं, परन्तु रहते हैं, सदा सीमा में। सीमा में रहते हुए भी वह सीमारहित प्रभाव उत्पन्न करते हैं। मानसून की लहरें समुद्र से उठ कर अपने निश्चित मार्गों से पर्वतों की ओर बढ़ती हैं। वह ज्यों ज्यों आगे बढ़ती हैं, त्यों त्यों उनका फैलाव बढ़ता जाता है। धीरे धीरे वायुमण्डल पर उनका प्रभाव भी गहरा होता जाता है। पानी की भाप हल्की बदली के रूप में, हल्की बदली आषाढ़ के बादलों के रूप में और आषाढ़ के बादल सावन की घनघोर घटाओं के रूप में परिणत होकर बरसने लगते हैं, जिससे सूखी भूमि हरी भरी होकर जीवमात्र को जीवन देने के योग्य बन जाती है। मानसून का प्रभाव समय लेकर प्रबल होता है। जब वह पृथ्वी पर पूरी तरह छा जाता है, तो पृथ्वी का चेहरा खिल उठता है। इस संसार में कल्याणकारी परिवर्तन का प्रारम्भ अन्धड़ जैसा तूफानी नहीं है, परन्तु उसका विकार कहीं अधिक है और उसका परिणाम सापेक्षक दृष्टि स हजारों गुना स्थायी है।

आर्य समाज की उपमा आँधी से नहीं, मानसून से दी जा सकती है। वह उन संस्थाओं में से नहीं है, जो बिजली की तरह कड़क और चमक कर विलीन हो जाती हैं, उसकी गिन्ती उन संस्थाओं में होनी चाहिए जो बरसाती हवा की तरह वायुमण्डल में फैल कर अनगिनत बादलों को पैदा करके एक एक बादल में अनगिनत बिजलियों को उत्पन्न कर सकती है।

(२)

ऊपर बतलाई गई दोनों प्रकार की संस्थाओं के भिन्न भिन्न उपयोग हैं। वह अपने अपने ढङ्ग पर मनुष्य जाति को प्रभावित करती हैं। आंधी-समान संस्थायें उग्र आन्दोलन के रूप में आकर मनुष्य समाज के दोषों को नष्ट करने का कार्य करती हैं। मनुष्यों की निर्बलता या समय के प्रभाव से समाज के क्षेत्र में जो कंटीले पेड़ या झाड़ झंकार उत्पन्न हो जाते हैं, आंधी-आन्दो-

लम उन्हें दूर करके क्षेत्र को इस योग्य बना देते हैं कि उनमे हरी भरी खेती लहरा सके।

मानसून सदृश आन्दोलन उस तैयार क्षेत्र को पानी से सींच कर खेती के योग्य बनाने और फलत. मनुष्य समाज के स्थायी कल्याण का कारण बनते हैं।

आर्य समाज प्रारम्भिक युग मे एक उग्र आधी आन्दोलन के रूप मे प्रकट हुआ था। भारतवष के क्षेत्र मे हरी भरी खेती नहीं थी और न लहलहाता उद्यान था। वहा था कटीला जगल और विषैले पेड। यदि पवन उस समय मानसून बन कर आता तो व्यर्थ ही जाता। नये वनस्पति जन्म भी लेते तो कटीली उपज से दब कर मर जाते। उस समय एक विनाशक झोंके की आवश्यकता थी। ऋषि दयानन्द का क्रान्तिकारी प्रचार भारत की भूमि पर आधी की तरह अवतीर्ण हुआ, उसने समाज की विघ्न बाधाओं को उखाड पछाडकर क्षेत्र को साफ कर दिया, और अपने जीवनकाल मे ही आय समाज की स्थापना द्वारा अपने प्रचार कार्य को बरसाती हवा का रूप देकर देश मे स्थायी कल्याण का युग प्रारम्भ कर दिया।

आर्य समाज के गत ७१ वर्षों के इतिहास पर दृष्टि डालने से आपको यह बात स्पष्टरूप मे दिखाई देगी कि समय के साथ साथ उसका प्रारम्भिक निषेधात्मक रूप हल्का होता गया और विधानात्मक रूप प्रबल होता गया। जब हम इस प्रश्न का उत्तर देने लगें कि आर्यसमाज का भारत के भविष्य निमाण मे कौनसा स्थान है तो हमे इस सचाइ को सामने रखना होगा कि आर्यसमाज का निषेधात्मक रूप केवल प्रस्तावना थी, वास्तविक पुस्तक तो उसके विधानात्मक रूप के साथ ही प्रारम्भ होती है। भारत के भविष्य को बनाने वाली शक्तियों मे आर्यसमाज की पदवी का निर्णय उसके विधानात्मक प्रचार और निर्माण-कार्य के आधार पर ही किया जायगा।

(२)

आर्य समाज के विरोधी और आलोचक भी इस सचाई से इन्कार नहीं कर सकते कि भारत की वर्तमान जागृति के उत्पन्न करने मे आर्य समाज के विधानात्मक कार्य का बहुत बड़ा— कई प्रदेशो मे सब से बड़ा हाथ है। सदियो की मानसिक क्षीणता और सामाजिक कमजोरी के कारण जाति मे जो दोष आ गये थे, उनको दूर करने मे आर्यसमाज को बहुत सा सघर्ष करना पडा। उस समय ससार की दृष्टि मे उसे अप्रिय भी बनना पडा। रास्ता बन जाने पर आर्य समाज ने विधानात्मक कार्य म हाथ डाला। यह कार्य आर्यसमाज के सस्थापक ऋषि दयानन्द के समय मे ही प्रारम्भ हो गया था। उस समय जो बीज बोये गये, वे ऋषि की मृत्यु के पश्चात शीघ्र ही अकुरित और पल्लवित होने लगे, यहा तक कि आज हम उन्हें पुष्पित और सफल रूप मे देख रहे है।

देश का भविष्य उसके निवासियों की शारीरिक, सामाजिक और मानसिक दशा पर अवलम्बित रहता है। सामाजक आन्दोलन आते है, और चल जाते है। वे उस तूफान की तरह होते है, जो कुछ समय क लिए ससार पर हावी हो जाता है, परन्तु शीघ्र ही विदा हो जाता है

और संसार फिर अपनी स्थिर गति से चलने लगता है। इस संसार में प्रत्येक जाति अपनी अपनी शक्ति के अनुसार आगे बढ़ती, या पीछे हटती है। जीवन के संघर्ष में आदर के साथ जीवित रहने के लिए जिस बल की आवश्यकता है, जिस जाति में उसकी पर्याप्त मात्रा विद्यमान हो, वह संघर्ष में जीवित रहती है, अन्यथा मर जाती है। जीवित रहने योग्य बल की प्राप्ति केवल तूफ़ानी आन्दोलनों से नहीं होती, वह ठीक शिक्षा, ठीक आचार व्यवहार और ठीक सामाजिक संगठन से ही हो सकती है। आर्य समाज ने लगभग ७० वर्षों से यही कार्य अपने हाथ में लिया हुआ है। भारत के भविष्यनिर्माण में उसकी सबसे बड़ी सेवा यही है।

सार्वजनिक जीवन की किसी दिशा में देखिये, आर्यसमाज का हाथ स्पष्ट रूप से दिखाई देगा। पहले आप विचार स्वातन्त्र्य को ही लीजिये, जो सब प्रकार की स्वतन्त्रताओं का जन्म-स्थान है। "बाबा वाक्यं प्रमाणं" के अभेद्य दुर्ग मे घुस कर उस पर विजय प्राप्त करने का मार्ग बनाने का सब से प्रथम और बड़ा श्रेय ऋषि दयानन्द और उनके आर्य समाज को है। धर्माचार्यों के क्रोध और रूढ़िवादी जन समाज की गालियों और पलचरों को सह कर जिस महापुरुष ने भारतीय हृदय के ऊँचे आसन पर "तर्क ऋषि" की स्थापना की वह ऋषि दयानन्द ही थे। उनके पश्चात् आर्यसमाज ने उस कार्य को जारी रक्खा।

दिमाग़ पर से रूढ़िवाद का पर्दा उठ जाने का स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि जाति मे सच्चे और स्वतन्त्र ज्ञान की अभिलाषा पैदा हुई। उसे पूर्ण करने के लिए आर्यसमाज ने शिक्षा के कार्य को अपने हाथ में लिया। इस क्षेत्र की प्रत्येक दिशा में आर्यसमाज बहुत आगे बढ़ा हुआ है, यह एक असन्दिग्ध सचाई है। सरकार के बन्धनों से सर्वथा मुक्त, राष्ट्रीय भावों मे ओत-प्रोत सर्वाङ्गीण शिक्षण में गुरुकुल का स्थान देश की सब संस्थाओं में ऊँचा है। सरकारी विश्व विद्यालयो से सम्बद्ध परन्तु भारतीय देख-रेख में चलने वाले महाविद्यालयों और विद्यालयों में डी० ए० वी० कालिज का देशव्यापी जाल केवल समय की दृष्टि से ही नहीं, विशालता की दृष्टि से भी प्रथम स्थान रखता है। कन्याओं की शिक्षा में आयसमाज उत्तरीय भारत का प्रारम्भिक पथ प्रदर्शक तो था ही, नेता भी रहा है। इस कार्य मे उसने शुरू से ही अपने हाथ मे नेतृत्व की जो बागडोर संभाली थी, वह आज भी वहीं है।

सामाजिक सुधार का कार्य इस समय अनेक सोसायटियो द्वारा हो रहा है। महात्मा गांधी की प्रेरणा ने समाज सुधार के कई कार्यों को राजनीतिक आन्दोलन का भाग बना दिया है। सुधार के विधवा विवाह, अछूतोद्धार आदि अंशों की पूर्ति के लिए बहुत सी स्वाधीन संस्थाय भी बनी हुई हैं, परन्तु यदि पीछे की ओर दृष्टि उठा कर देखें तो निर्विवादरूप से मानना पड़ेगा कि भारत के बहुत बड़े भाग को और उस द्वारा सारे देश को ही सुधार की प्रेरणा देने का मुख्य श्रेय आर्यसमाज और उसके संस्थापक ऋषि दयानन्द को ही है। हम यह कहने का भी साहस करते हैं कि जब राजनीतिक आवश्यकता के कम हो जाने के कारण राजनैतिकों का ध्यान

समाज सुधार की ओर से हट जायगा, तब भी आर्यसमाज का प्रारम्भिक कार्यक्रम जारी रहेगा।

(४)

वतमान युग राजनैतिक जागृति का युग है, इसमे हरेक वस्तु का मूल्य राजनैतिक कसौटी पर कस कर निश्चित किया जाता है। राजनीति सब कुछ नहीं है, यह मनुष्य की प्रारम्भिक भावना नहीं है, परन्तु इसमे सन्देह नहीं कि प्रारम्भ से ही मनुष्य समाज की भावनाओं और शक्तियो का स्थूल प्रादुर्भाव राजनीति म ही होता रहा है। किसी जाति की तत्कालीन राजनैतिक अवस्था, उस जाति की समीप म गुजरी हुई और और वतमान आन्तरिक अवस्था की प्रतीक और दृश्यमान निशानी अवश्य होती है। राजनीति को जाति की सामाजिक प्रवृत्तियों का कारण तो नही, हा उनका फल अवश्य समझना चाहिए। यही कारण है कि किसी जाति क भविष्य के सम्बन्ध मे विचार करते हुए हमे उसकी प्रत्येक सामाजिक प्रवृत्ति को राजनैतिक कसौटी पर कसना पडता है। हमे देखना पडता है कि उस विशेष सामाजिक प्रवृत्ति का जाति के राजनैतिक भविष्य पर क्या असर पडेगा।

आर्य समाज को इस कसौटी पर कसकर देखे तो सौ फी सदी अक देने पड़े गे। जब अभी भारत की राजनीति सरकारी नौकरियों और प्रार्थना पत्रों क अन्धकार मे भटक रही थी, तब आर्य समाज के सस्थापक ने पूर्ण स्वराज्य की भावना की ज्योति भारतवासियों के हृदयों मे जगादी थी। जिस सत्यार्थ प्रकाश के विषय मे दो चार खरी खोटी बातें कहना आजकल की उन्नत राजनीति का एक फेशन समझा जाता था, उसी सत्यार्थ प्रकाश में, आज से ७० वर्ष पूर्व ऋषि दयानन्द ने यह सिद्धान्त देशवासियों के सामने रखा था कि बुरे से बुरा स्वदेशी राज्य अच्छे से अच्छे विदेशी राज्य की अपेक्षा अच्छा होता है, ऋषि दयानन्द ने भारतवासियों को घुट्टी मे स्वराज्य पिलाने का सत्कार्य किया था, उनके वेद भाष्य, सत्यार्थ प्रकाश और आर्याभिविनय में स्वराज्य और स्वतन्त्रता की भावना ओतप्रोत है। आर्य समाज का सगठन स्वय स्वाधीन प्रजातन्त्र का एक सुन्दर और सर्वाङ्ग पूर्ण पाठ है। आज भी देश की बडी से बडी राजनैतिक सस्था को आर्य समाज प्रजातन्त्री सगठन मे व्यावहारिक पाठ पढा सकता है। स्वाधीनता और स्वराज्य की भावना के सम्बन्ध मे इस लोकोक्ति का समथन करता हूँ कि किसी आर्य समाजी को खुर्च कर देखो तो अन्दर से राष्ट्रवादी निकल आयगा। मुझे आशा है कि आर्य समाज के कडे आलोचक भी इस लोकोक्ति का विरोध नहीं करेगे। जो आर्य समाजी ऊपर से साम्प्रदायिक प्रतीत होते है, उनका आवरण पृष्ठ पलटकर पढो तो अन्दर से स्वराज्यवादी पुस्तक मिलेगी। यह निर्विवाद बात है कि ऋषि दयानन्द और उन द्वारा सस्थापित आर्य समाज का भारतवर्ष की राजनैतिक जागृति मे बहुत प्रमुख भाग रहा है, और आगे भी रहेगा।

(५)

इस प्रकार हम देखते हैं कि देश का भविष्य निर्माण करने वाली सस्थाओं मे आर्य समाज का बहुत ऊचा स्थान है। जिन प्रान्तों मे आर्य-समाज का प्रभाव है, उनमे आप प्रत्येक सार्वजनिक कार्य मे आर्य समाजियों को आगे

पावेंगे। शिक्षा प्रचार, समाज सुधार, सेवा, राजनीतिक आदि सभी जाति-जागरण के कार्यों में आर्य समाज के सदस्यों और आर्य-समाज द्वारा प्रभावित व्यक्तियों की प्रमुखता मिलेगी। जिन संस्थाओं का आर्य समाज से मौलिक विरोध समझा जाता था, उन पर भी आर्य समाज के प्रभाव को देखकर कुछ लोग आश्चर्यान्वित होते हैं। सनातन धर्म सभाओं का संगठन वस्तुतः आर्य समाज के प्रचार कार्य का विरोध और प्रतिरोध करने के लिये हुआ था, परन्तु कौन नहीं जानता कि आज पंजाब, तथा संयुक्तप्रान्त में सनातन धर्म सभाओं का जो रचनात्मक कार्य है, उस पर आर्य समाज की गहरी छाप है! उनमे जो महानुभाव अगुआ बनकर कार्य कर रहे हैं, पोंगापन्थी लोग उन्हें प्रच्छन्न आर्य समाजी कहने में नहीं हिचकिचाते। हम जानते हैं कि पोंगा पन्थियों का लगाया हुआ आरोप मिथ्या है, क्योंकि सनातन धर्म सभा के कार्यकर्ताओं की भावनाओं में कोई प्रच्छन्नता नहीं है। बात बिल्कुल स्पष्ट—सूर्य के प्रकाश की तरह स्पष्ट है, ऋषि दयानन्द और आर्य समाज मनुष्यों के दिल और दिमाग पर जो प्रभाव डालना चाहते थे, वह पड़ रहा है। जो उसे इच्छापूर्वक ले रहे हैं, उन पर भी पड़ रहा है, और जो इच्छापूर्वक नहीं ले रहे, उन पर भी पड़ रहा है।

मै इस लेख के आरम्भ में दी हुई उपमा को फिर से दुहराकर यह निवेदन करना चाहता हूँ कि आर्य समाज के प्रभाव का हिसाब ऊंचे कोलाहल, प्रत्यक्ष टूट फूट और अखबारी आन्दोलन से न लगाना चाहिये—वैसा हिसाब तो आंधी आन्दोलनों से लगाया जाता है, आर्य-समाज के प्रभाव का हिसाब तो मानसून हवा के पैमाने से लगाना चाहिये। हमें देखना चाहिये कि वह हवा कहां तक फैली? भूमि का बड़ा विस्तार उसे थका तो नहीं सका? पर्वतों की ऊंची चोटियां उसके मार्ग को रोक तो नहीं सकीं? समुद्र की विस्तृत छाती पर वह मन्द तो नहीं पड़ गई? इन प्रश्नों के उत्तर के साथ साथ हमें यह उत्तर भी देना होगा कि उस हवा ने सूखे खेतों को सींचा या नहीं? उसके प्रभाव से अन्न और फल उत्पन्न हुए या नहीं? इन प्रश्नों के उत्तरो से आर्य समाज की सफलता या असफलता का अनुमान लगाना चाहिये।

गम्भीर और पक्षपात हीन विचार से प्रतीत होता है कि आर्य समाज का भारत के वर्तमान को बनाने में बहुत प्रमुख हाथ रहा है, और लक्षणों से प्रतीत होता है कि देश के भविष्य निर्माण में उससे भी अधिक हाथ रहेगा। कुछ आलोचक कहते हैं कि आर्य समाज अब अनावश्यक हो गया है। उनकी सम्मति में उसका स्थान अब पुराने सामान के गोदाम या ऐतिहासिक वस्तुओं के अद्भुतालय में होना चाहिये। ऐसी सम्मति वही लोग दे सकते हैं, जो या तो स्वभाव से निराशावादी हों अथवा तात्विक दृष्टि से वस्तुओं को देखने में असमर्थ हों।

आर्य समाज का अबतक का कार्यक्रम शान्दार है, और भविष्य का कार्यवृत्त और भी अधिक शान्दार हो सकता है, यदि आर्य समाज के कार्यकर्ता अपने कार्य की वास्तविक महिमा को समझें। आर्य समाज का भावी कार्यक्रम निषेधात्मक और अतएव कोलाहल पूर्ण नहीं होगा, वह विधानात्मक और सेवामय होगा। शीघ्र ही बनने वाले राष्ट्रीय भवन की नींव में जो मजबूत ईंटें लगाई जांयगी वे आर्यसमाज के कारखाने में ही बनी होंगी।

हिन्दू जाति का पाप और उसका प्रायश्चित्त

(ले०—श्री ज्योतिस्वरूप जी आचार्य गुरुकुल अमृतसर)

लगभग ३०० वर्ष की बात है कि बंगाल मे कालयवन नाम का एक व्यक्ति पैदा हुआ, उसको लोग कालाचन्द के नाम से भी पुकारते थे। वह बहुत ही सुन्दर और हृष्ट पुष्ट नवयुवक था। उसकी सुन्दरता को देखकर लोग मुग्ध हो जाया करते थे। एक दिन वह अपनी मस्ती मे झूमता हुआ बादशाह के महल के पास से होकर निकल रहा था कि अचानक बादशाह की लड़की की दृष्टि उस पर जा पड़ी। वह उस नवयुवक को देखकर सोचने लगी कि क्यों न मेरा विवाह इस युवक के साथ हो जाये। इसी विचार मे वह बहुत दुःखित रहने लगी। जब इस बात का पता बादशाह को लगा तो उसने अपनी लड़की को बुलाकर कहा कि तुम्हें क्या दुःख है? लड़की ने अपने हृदयकी बात पिता के सामने स्पष्ट खोल कर रख दी। बादशाह ने पुत्री को बहुत समझाया बुझाया कि तुम्हारा विवाह किसी अच्छे नवाब के लड़के से कर दिया जायेगा, तुम काफिर को क्यों इतना पसन्द करती हो। किन्तु लड़की ने न माना और अपनी बात पर डटी रही। निदान बादशाह ने और कोई उपाय न देख कालयवन को बुलाकर कहा कि तू मुसलमान बन जा और मेरी लड़की के साथ विवाह करले। तुझे बहुत सी जागीर दी जायेगी। लेकिन कालयवन अपनी धार्मिकता और बिरादरी को देखते हुए मुसलमान होने पर तैयार न हुआ, इस पर नवाब को बहुत क्रोध आया और उसने कालयवन को फासी की धमकी दी, किन्तु वीर अपने निश्चय से न हटा। अन्ततः बादशाह ने उसको कैद कर लिया और फासी का दिन नियत कर दिया। जिस दिन फासी लगने वाली थी उस दिन बहुत से हिन्दू मुसलमान फासी स्थल पर एकत्रित हुए। एक ओर बादशाह की कुर्सी लगी हुई थी और बादशाह की लड़की भी आसू बहाती हुई इस दृश्य को देखने के लिये उपस्थित थी, दूसरी ओर बैठा हुआ कालयवन फाँसी की रस्सी की ओर टकटकी लगाये हुए अपनी मृत्यु की बाट जोह रहा था। इतने मे एक जल्लाद आया और उसने कालयवन को हुक्म दिया कि अब तुम मृत्यु की सुखमयी गोद मे सोने के लिये तैयार हो जाओ। वीर युवक प्रभु का स्मरण करता हुआ उठा और फासी के तख्ते की ओर बढ़ने लगा, अपने प्रियतम को इस प्रकार लपकते देख बादशाह की लड़की से न रहा गया और वह दौड़कर कालयवन से लिपट गई और सिर पीट पीट कर रोती हुई कहने लगी कि प्राणनाथ! तुम्हारे बदले मै फासी पर चढ़ जाऊगी किन्तु तुम्हें इस प्रकार बिना अपराध न मरने दूंगी। बादशाह यह दृश्य देखकर घबराया और उसने आज्ञा दी कि अच्छा इस युवक को फासी न दी जाये। लड़की के अनुराग का युवक पर इतना प्रभाव पड़ा कि उसने उस लड़की से विवाह करने के लिए मुसलमान होना स्वीकार करलिया। अब फासी की सजा विवाह के पुरस्कार मे बदल गई और नियततिथि पर निकाह पढ़ा गया। बादशाह ने कालयवन के नाम बहुत सी जागीर कर दी। अब कालयवन निर्धन ब्राह्मण का पुत्र न रह गया था बल्कि बादशाह का जमाई बनकर एक नवाब के समकक्ष बैठने वाला व्यक्ति बन

गया था। सारी प्रजा उसका आदर करने लगी थी किन्तु इतना सब कुछ होने पर भी उसके मन में रह २ कर यह बात आती थी कि हाय मैं विधर्मी बन गया, पतित होगया। क्या मैं ऐसा ही बना रहूंगा, मेरे उद्धार का कोई उपाय नहीं है ? उसने सोचा कि क्या मैं शुद्ध नहीं हो सकता। मेरा बिगड़ा ही क्या है मैं अब भी गोरक्षक, पतित पावनी गायत्री का जाप करने वाला हिन्दू संस्कृति का पुजारी हूँ मेरा अपने देश व जाति से प्रेम है मै कुकर्मी मांसभक्षक और व्यभिचारी नहीं। जिस प्रकार दूसरे लोग विवाह करते हैं, मैंने भी एक स्त्री से विवाह ही तो किया है। ऐसे विचारों के बारम्बार मन में आते रहने से कालयवन से न रहा गया और उसने आस पास के विद्वानों से पूछा, प्रार्थना की कि मुझे शुद्ध कर लेना चाहिये। किन्तु उन्होंने कहा कि नहीं तुम शुद्ध नहीं हो सकते। कालाचांद ने विचारा कि ये पंडित इतने विद्वान् नहीं हैं जो कि निश्चित व्यवस्था दे सकें, काशी के पण्डितों से भी अवश्य पूछना चाहिये। यह सोचकर पति पत्नी काशी पहुंचे। उच्चकोटि के विद्वानों से प्रार्थना की, हाथ जोड़े, चरणों में सिर रक्खा, हजारों रुपयों की भेंट चढ़ाई किन्तु सब व्यर्थ हुआ। उन धर्म के ठेकेदारों, पाखण्डियों, तिलकधारियों ने अपनी धोती संभालते हुए, पुराणों के पोथे पलटते हुए धिक्कारा कि चले जाओ यहां से। तुम म्लेच्छ हो गये हो। तुम जैसे पतित और पापी को हम किस प्रकार अपने धर्म में मिला सकते हैं। भला कहीं गधे से गाय बनाई जा सकती है, काग का हंस बन सकता है। मूर्ख कहीं का, चला है हिन्दू बनने। मुसलमानी से विवाह ही क्यों किया था, अब अपनी करनी का फल भुगत। कालयवन ने यह सब कुछ सुना और कान खोल कर सुना। जाति अभिमानियों के शब्द क्या थे तीर थे। कालयवन के हृदय में गहरे घाव कर गये और ऐसे घाव, कि जिनकी पीड़ा से लाखों व्यक्ति मर गये और लाखों अभी मरेंगे। कालयवन इन घावों से पूर्ण हृदय को लेकर काशी से अपने प्रदेश की ओर लौटा। बहुत विचार करने के पश्चात् उसने निश्चय किया कि ऐसी जाति जो अपनों को पराया बनाने में, अपनों के साथ अत्याचार करने में कुछ भी सङ्कोच न करे और जो अपने भाइयों को धिक्कारने मे, नीच सिद्ध करने में अपने धर्म की महत्ता समझे उसका जितना भी जल्दी से जल्दी विनाश किया जाय सो थोड़ा है। अपने हृदय के घावों को भरने के लिये उसने एक योजना बनाई और हजारों मुस्लिम युवकों की एक सशस्त्र फौज लेकर हिन्दू बहुल प्रान्तों पर हमला कर दिया। जिन्होंने मुसलमान बनना स्वीकार किया उनको क़लमा पढ़ाकर मुसलमान बनाया गया और बाकी को मौत के घाट उतारते हुए अपनी क्रोधाग्नि को शान्त किया। जितना उससे हो सका उसने हिन्दू जाति का विनाश करने में अपना पूरा बल लगाया और अपने पाप का प्रायश्चित्त किया। नोआखाली और चांदपुर आदि इलाके वेही हैं जहां कालाचांद ने अपना पराक्रम दिखलाया था, आज की नोआखाली की घटना हमें कालाचांद की याद दिला रही है कि मानो मि० सुहरावर्दी की अध्यक्षता में वहां की मुस्लिम जनता ने हिन्दुओं पर आक्रमण करके कालाचांद के बचे खुचे काम को पूरा कर दिखाया। ऐ हिन्दू जाति,

कालाचांद ने अपने पाप का प्रायश्चित्त करने में कोई कसर बाकी न रखी लेकिन तूने भी अपनी मूर्खता में कमी न की और दुःख तो इस बात का है कि अभी तक तू अपने पाप को समझ भी नहीं सकी। समझे भी कैसे, तूने तो अपने हित चिन्तकों पर, जाति के लिये सर मिटने वालों पर ईंट पत्थरों की वर्षा की और उनको जहर देदे कर मार डाला। आज से ८० वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द ने तुझे बचाने के लिये, तेरी रक्षा करने के लिए तुझे ब्रह्मास्त्र, वारुणास्त्र व आग्नेयास्त्रों का प्रयोग करना सिखाना चाहा लेकिन तेरा दुर्भाग्य, तेरी दुर्बुद्धि, तूने उन अस्त्रों को अपना रक्षक न समझ अपना घातक समझा और महर्षि का इतना घोर विरोध किया कि तूने उसको ईसाइयों का नौकर व नास्तिक कहने में अपनी आन व शान समझी और ऋषि को विष देकर मार डालने में अपना कल्याण समझा। अब जब कि नोआखाली (बंगाल) में २०, ३०, हजार हिन्दू मारे गये और ४० हजार मुसलमान बनालिये गये तब तुझे ऋषि के संदेश की याद कैसे आई। क्या इनको शुद्ध करने की व्यवस्था देने के लिए काशी के पोंगापन्थी पंडितों की धोतियों व पोथियों की ओर देखना तूने अपना कर्त्तव्य न समझा? इस समय कौन ऐसा नीच हृदय होगा जो कि महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज के द्वारा किये गये शुद्धि आन्दोलन को बुरा कहे। यदि इतना ८० वर्ष पहिले ही सोचा होता, ऋषि के वचनों पर ध्यान दिया होता, तो यह दयनीय अवस्था क्यों देखनी पड़ती। अब शुद्धि को शास्त्रानुकूल बतलाने वाले प्रमाण तुझे कहां से मिल गये, शुद्धि की व्यवस्था कहां से निकल आई खेद है कि अब भी कई पंडित यह कहते हुए सुने जाते हैं कि शुद्धि के लिए अमुक स्मृति में यह लिखा है "गंगा स्नान आवश्यक है" अमुक स्मृति में लिखा है "पञ्चगव्य से स्नान होना चाहिये" या "इस प्रकार का यज्ञ होना चाहिये" तब शुद्धि होगी। अरे क्या यह समय इन कामों को सोचने का है अब तो जाति के सपूतों को आर्य बनाने के लिये केवल गायत्री मन्त्र का उच्चारण ही पर्याप्त है। ऐसे वि[illegible] समय में जब कि दूसरी जातियां तेरा मूलोच्छेदन करने के लिये अनेक प्रकार की चालें चल रही हैं, बड़े २ गुप्त हथियार काम में ला रही हैं तब भी तू पूजा पथरी को धर्म माने बैठी है तेरे शत्रु तुझे नष्ट करने के लिये अपने को कृष्ण का अवतार सिद्ध कर तेरे पूजा पाठ से भी अनुचित लाभ उठा रहे हैं। क्या सिन्ध में तेरे हजारों लालों को आगा खां ने अपने को कृष्ण का अवतार बता कर अर्द्ध मुस्लिम नहीं बना डाला? रोना पड़ता है तेरी दुर्दशा पर। तू कब संभलेगी, तुझे कब बुद्धि आयेगी। परमेश्वर ने तुझे योग्य से योग्य सुधारक, हितचिन्तक महापुरुष प्रदान किये लेकिन तूने उनकी बात को न माना। उनका अपमान किया, हत्या की। अब अपने पाप का फल भुगत रही है और अभी भुगतेगी जब तक कि उसका प्रायश्चित्त न करेगी। कालाचांद जैसे कितने ही वीर तेरे अत्याचार से, तेरे पाप से तंग आकर दूसरों की गोद में चले गये और तेरे घातक बन गये और बन रहे हैं। क्या भारत के १० करोड़ मुसलमान और लाखों ईसाई पहिले तेरे सपूत, गोरक्षक, शिखासूत्र धारी नहीं थे? बाहिर से आये हुए मुसलमानों और ईसाइयों की यहां

संख्या ही कितनी है । अपना हृदय फाड़ कर देख, इतिहास के पन्ने पलट कर ढूंढ कि यदि किसी हिन्दू ने भूल से मुसलमान के घर का पानी पी लिया तो क्या तूने उसको घर से बाहर निकाल कर मुसलमान बनने के लिये लाचार नहीं किया ? यदि किसी हिन्दू ललना को मुसलमान ने छू भी दिया तो तूने उसको अपवित्र हुई बताकर म्लेच्छ को समर्पित करके अपनी धर्म परायणता की डींग हांकने में क्या कमी की ? थोड़े ही वर्ष हुए मोपला विद्रोह की घटना का उल्लेख तेरे चरित्र चित्रण के लिये पर्याप्त है। उस विद्रोह में जब एक वीर बाला ने शत्रु की ही तलवार छीनकर १५, १६ यवनों को समाप्त कर दिया तब यह कहकर कि चूंकि यवनों को मारते समय इसके शरीर का स्पर्श मुसलमानों से हुआ है इसलिए यह पतित हो गई है, हम इसे ग्रहण नहीं कर सकते। तूने उन वीराङ्गना को अपने हाथों से यवनों के सुपुर्द कर दिया । धन्य हो दयानन्द, धन्य हो आर्य समाज, उस समय तूने उस बहिन की रक्षा करके हिन्दू जाति का एक कलङ्क मिटाया। ऐ बेहोश जाति ! लाखों ईसाई तेरे पाप के ही तो फल हैं। तूने इन जाति के लालों को कुएं पर पानी भरने का भी अधिकार न देकर प्यासे मार डाला। पचासों ऐसी घटनाएं हुईं कि घर में स्त्री बीमार पड़ी प्यास से मर रही है और पति जब पानी लेने के लिये कुए पर जाता है तो उसको डंडों से पीट कर खून के घूंट पिलाये जाते हैं। फिर भला ऐसे व्यक्तियों का क्या दोष जो वे ईसाई मुसलमान बन गये। वे भी तो मनुष्य हैं। उनको भी परमेश्वर ने हाथ पैर दिये हैं बुद्धि दी है और आत्म सम्मान भी दिया है। अब वे गोभक्षक बनकर तेरे कुओं पर ही नहीं तेरे सिर पर चढ़े हुए हैं, जिनको तूने नीच समझा था वे तुझे नीचा दिखा रहे हैं और तू उनकी दया पर जी रही है। तेरे पाप के कारण ही आज भारत माता परतन्त्रता की बेड़ियों से छुटकारा नहीं पा रही, पाकिस्तान की रट लगाते लगाते मुस्लिम लीग अपने मित्र अंग्रेजों को छोड़ना नहीं चाहती। आज तेरी माता के टुकड़े टुकड़े होने जा रहे है। जो लोग भारतवर्ष को अपना देश ही नहीं समझते वे इसके मालिक बनने की चिन्ता में हैं और दायभाग की तरह से इसके हिस्से बाँटने को तैयार हैं जिसके कारण तुझे अपना घर जमीन व जायदाद छोड़कर रोते पीटते छोटे २ बच्चों को घसीटते हुए सिर पर खाट-पीढ़ा-चक्की लादे हुए हजारों मील की यात्रा करनी पड़ेगी। क्या तू इस बात के लिये तैयार है ? क्या तू इतनी कायर हो गई है कि बराबर पिटती रहे और थोड़े से गुण्डे तुझे चाहे जिधर भटकाते फिरें, वे घर बार करदें। अरे तेरे अन्दर महाराणा प्रताप, शिवाजी और गुरु गोविन्दसिंह का खून है। तेरे एक २ वीर के सामने संसार की किसी भी जाति के पचास २ योद्धा नहीं ठहर सकते। तूने प्रत्येक युद्ध में विजय प्राप्त की है। १६१४ के महायुद्ध और विगत विश्वव्यापी युद्ध में तेरे बराबर किसने विक्टोरिया क्रास (वीरता के सर्वोत्तम प्रशस्ति पत्र) प्राप्त किये हैं। कुल ३६ में से २८ क्रास तो तेरे ही वीरों को प्राप्त हुए हैं। फिर भी तू अपना स्वत्व खोकर अपने को निर्बल समझे बैठी है। यह बात तेरी सबसे अधिक आत्मिक और सामाजिक निर्बलता की परिचायक है। इसीलिए तू शक्ति के होते

हुए भी दिन रात लुट रही है और आखें बन्द किये हाथ पर हाथ रखे बैठी सहायता की याचना कर रही है। किन्तु याद रख—

वनानि दहतो वन्हे सखा भवति मारुत ।
स एव दीपनाशाय कृशे कस्यास्ति सौहृदम्॥

ससार मे शक्ति शाली पुरुष की ही सब सहायता करते है शक्ति हीन की नहीं, निर्बल की सहायता करना तो अलग रहा प्रत्युत लोग उसका विनाश कर दिया करते हैं। जैसे अग्नि जगलो को जलाते हुए यदि प्रज्वलित हो रही हो तो वायु उसकी सहायता करके उसको और भी प्रचण्ड कर देती है किन्तु वही वायु दीपक की अग्नि को शमन करने स नही चूकती। इसलिए यदि तू सहायता की ही अभिलाषिणी है तो भी सगठन शक्ति के द्वारा अपने अन्दर शक्ति उत्पन्न कर। फिर तू देखेगी कि तेरे कितने मित्र बनते है। तब तो तेरे घर मे सेंध लगाने वाले मुस्लिम लीगी भी तेरे सामने हाथ जोड़ते दृष्टि गोचर होंगे और जिन्होने जहाद और तबलीग क द्वारा तेरा नाश करने के लिये जोर शोर स बीड़ा उठाया है वे भी दुम दबाकर भागते दीखेगे। उस समय तू अपने शत्रुओ को हराये ी ही नही बल्कि उन्होने जो तेरा माल लूटा है तेरे लाखो अनमोल लालों को हड़प कर लिया है उनको भी तू वापिस ले लेगी और अपनी गलती से जिनको तूने ईसाई मुसलमान बनने दिया था उनको वापिस लेकर शुद्ध करके अपने पाप का प्रायश्चित्त करती हुई स्वय शुद्ध तथा जीवित कहलाने की अधिकारी बन जायेगी। स्मरण रख! यदि तूने सगठित होकर शुद्धि का शङ्ख बजाते हुए शत्रु का सामना पूरी शक्ति से नहीं किया तो वे दिन दूर नहीं हैं जब कि सारे ससार मे प्रेम और सभ्यता फैलाने वाली जाति सर्वथा नाश को प्राप्त हो जायेगी और तेरी याद करने वाला कोई भी प्राणी शेष न रहेगा।

यह तो महर्षि दयानन्द का एक छोटा सा सदेश और आदेश है जिसके द्वारा हिन्दू जाति के जीवन मरण की समस्या का हल होता दीख रहा है। महर्षि ने तो आर्य जाति के लिये ऐसे ऐसे उत्तम प्रयोग बताये हैं जिनसे स्वय ही जीवन नही अखिल विश्व की जातियो को जीवन प्राप्त करा सकती है और भारत को स्वतन्त्र और पूर्ण स्वतन्त्र करके ससार को विषयो की दासता से निकाल कर सच्ची स्वतन्त्रता का आनन्द दे सकती है।

ऐ मार खा कर जागने वाली जाति। जिस प्रकार तूने इस समय आर्यसमाज के शुद्धि सिद्धान्त को सत्य माना है और उसको कार्यान्वित करके निज पापो का प्रायश्चित्त करना अपना कर्तव्य समझ रही है इसी प्रकार आने वाली आपत्तियो से बचने के लिये महर्षि दयानन्द और आर्य समाज के पदचिन्हो पर चलते हुए तू अपने कल्याण का मार्ग पकड़। अभी समय है जबकि तू दूरदर्शिता से काम लेकर अपनी रक्षा स्वय कर सकती है। अन्यथा तुझे मरी हुई समझ कर चील कौए तेरे ऊपर मडरा रहे है और तुझे खाने के लिए झपटने को तैयार है। इसलिये सावधान हो आ निज तेज स अपने समाप्त करने वालों को समाप्त करदे और अपने लिये मर मिटने वालों की विजयदुन्दुभि जग म मचाकर स्वय जीवन पथ पर आरूढ हुई ? ससार को अपने आलोक से प्रकाशित करदे॥ इत्योम् शम्॥

———

अगर आज स्वामी दयानन्द होते

(ले०—श्री डा० सूर्यदेव शर्मा, साहित्यालंकार, सिद्धान्त-शास्त्री, एम. ए. एल. टी., डी-लिट्, अजमेर)

अगर आज स्वामी दयानन्द होते।
नये सूत्र में राष्ट्र माला पिरोते ॥ ध्रुव ॥

जगत् में सभी वेद का गान करते।
सुखी वेदवाणी सुधापान करते ॥
हमारी मही का महा मान करते।
हमीं धर्म से विश्व कल्यान करते ॥
हमीं विश्व मे शान्ति के बीज बोते।
अगर आज स्वामी दयानन्द होते ॥ १ ॥

वही विश्व मे वेद वीणा बजाते।
वही विश्व में शान्ति सज्जा सजाते ॥
वही विश्व मे ज्ञान-गंगा बहाते।
वही विश्व को प्रेम जल से नहाते ॥
उसी वारि से विश्व के पाप धोते।
अगर आज स्वामी दयानन्द होते ॥ २ ॥

न भारत किसी का कभी दास रहता।
विभव देश का देश के पास रहता ॥
विदेशी जनों का न संत्रास रहता।
न धन शोषकों का यहाँ वास रहता ॥
पराधीनता में पड़े हम न रोते।
अगर आज स्वामी दयानन्द होते ॥ ३ ॥

न यों हिन्दुओं का भला भाग्य फिरता।
न बंगालियों पर विपति वज्र गिरता ॥
कलेजा न मां का किसी भांति चिरता।
विपति बादलों से न सुख 'सूर्य' घिरता ॥
लगाते न हम रक्त में हाय! गोते।
अगर आज स्वामी दयानन्द होते ॥ ४ ॥

हमारा सभी से सुसम्बन्ध होता।
न 'सत्यार्थ' पर अन्ध प्रतिबन्ध होता ॥
प्रकाशन प्रतीकार निर्द्वन्द्व होता।
नहीं "सूर्य" का तेज यों मन्द होता ॥
नहीं सिन्ध मे सत्य नौका डुबोते।
अगर आज स्वामी दयानन्द होते ॥ ५ ॥

न झुकते कभी लीग के आप आगे।
बली वीर हुंकार से भीरु भागे ॥
सुनें संगठन का बिगुल वीर जागे।
सुदृढ़ शत्रुगढ़ में अजस्र-आग लागे ॥
कभी स्वत्व अपना न हम आज खोते।
अगर आज स्वामी दयानन्द होते ॥ ६ ॥

वही आज बनते सजग राष्ट्र-नेता।
वही भारती नाव के नव्य खेता ॥
वही स्वत्व स्वाधीनता के विजेता।
वही देश के पथ प्रदर्शक सुचेता ॥
जगाते सभी राष्ट्र के भाव सोते।
अगर आज स्वामी दयानन्द होते ॥ ७ ॥

अहो ऋषि दयानन्द! फिर आप आओ।
अभी सो रहे जो उन्हें तो जगाओ ॥
दुखी मानवों को सुपथ फिर दिखाओ।
पुनः विश्व में वेद वीणा बजाओ ॥
न प्राणी रहें पाप का भार ढोते।
अगर आज स्वामी दयानन्द होते ॥ ८ ॥

"सूर्य"

***

नई समाज-व्यवस्था

(६, ७)

(लेखकः—श्री रघुनाथप्रसाद जी पाठक देहली)

(गताङ्क से आगे)

बाधक तत्व

दूसरों के साथ व्यवहार में सबसे प्रबल बाधक तत्त्व (Obstacles) काम, क्रोध, लोभ मोह, और अहंकार होते हैं।

व्यक्तिगत जीवन में अहंकार उत्पन्न हो जाने से स्वाध्याय निष्फल हो जाता है। सामाजिक जीवन में उसके कारण सत्य की कोई कीमत नहीं रहती।

काम अर्थात् अनुचित इच्छा से व्यक्तिगत जीवन की पवित्रता (शौच) और सामाजिक जीवन की व्यावहारिक शुद्धि (ब्रह्मचर्य्य) नष्ट हो जाती है। क्रोध से व्यक्तिगत जीवन में परिश्रम और कष्ट सहिष्णुता के जीवन में बाधा पहुँचती है और सामाजिक जीवन में अहिंसा (निर्वैरिता) की भावना जाती रहती है। व्यक्तिगत जीवन में सुख और दुःख को साम्य अवस्था में रखने वाली सन्तोष की धारा लोभ से मलिन हो जाती है और सामाजिक जीवन में दूसरों की वस्तुओं को बिना पूछे या बिना अधिकार के बलात अपनाने की भावना उत्पन्न हो जाती है।

व्यक्तिगत जीवन में अपनी वस्तुओं से हमें अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति का अधिकार है। अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के बाद यदि हम उन वस्तुओं को अनावश्यक रीति से अपने पास रखते और उन्हें दूसरों की आवश्यकताओं की पूर्ति में नहीं लगाते हैं तो हम सामाजिक चोरी करते हैं। ऐसी अवस्था मोह से उत्पन्न होती है। अतः व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में हमें काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार से बचना चाहिए।

यदि हम इन रुकावटों पर विजयी नहीं होते और स्वार्थ एवं लोभ के मार्ग का अनुसरण करते हैं तो निश्चय ही मानवता से नीचे गिर जायंगे। यदि हम दूसरे मार्ग अर्थात् सहिष्णुता, निष्काम सेवा और त्याग के मार्ग का अवलम्बन करेंगे तो हम शरीर, मन और आत्मा के उस सौन्दय को प्राप्त करेंगे जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

व्यक्ति के कर्त्तव्य और धिकार

प्रजातन्त्र का वास्तविक अभिप्राय यह है कि हम सब परमात्मा की दृष्टि में समान हैं। हम सब का समान रूप से अपने लिए महत्त्व है। अपना लौकिक और पारलौकिक विकास करने का हमारा अधिकार है, यदि ऐसा करते हुए दूसरों का विकास कुण्ठित न हो। गड़बड़ तब उत्पन्न होती है जब हमारा विकास दूसरों के विकास में बाधक बनता है।

प्रत्येक व्यक्ति में धर्म्म, अर्थ, काम और मोक्ष की स्वाभाविक इच्छाएँ होती हैं। जो समाज-व्यवस्थाएँ इन इच्छाओं की अवहेलना पूर्वक बनाई जाती हैं वे स्थिर नहीं रहतीं। जो व्यवस्थाएँ इन इच्छाओं की पूर्ति के लिए मनुष्य को खुली छुट्टी दे देती हैं वे मनुष्य को समाज के

लिए अभिशाप (Curse) बना देती हैं।

हमारे सामने पूँजीवाद (Capitalism) और साम्यवाद (Socialism) की दो व्यवस्थाएँ हैं। पूँजीवाद ने व्यक्ति को ऐसी खुली छुट्टी दी कि मनुष्य का व्यक्तित्व स्वार्थमय बन कर अराजकता (Anarchism) में परिणत हो गया।

दूसरी व्यवस्था अर्थात् साम्यवाद ने व्यक्ति के कर्त्तव्य और अधिकारों पर इतना कड़ा प्रतिबन्ध लगाया कि व्यक्ति का अस्तित्व ही लगभग समाप्त हो गया। ये दोनों व्यवस्थाएँ अस्वाभाविक और पतनकारी हैं।

बहुत दिन हुए रूस के उपन्यासकार डोस्येवस्की (Dostoevsky) ने व्यक्तिवाद के थोथेपन को औपन्यासिक रूप में प्रस्तुत किया था। उनकी एक पुस्तक The Possesed में किरलोफ नामक एक व्यक्ति का वर्णन आता है। उसकी धारणा है कि मै एक स्वतन्त्र व्यक्ति हूँ जिसको पूर्ण सत्ता प्राप्त है। यदि मुझे पूर्ण सत्ता प्राप्त है तो परमात्मा का अस्तित्व नहीं हो सकता। क्योंकि परमात्मा की सत्ता स्वीकार करने से मेरी सत्ता अक्षुण्ण नहीं रह सकती। किरलोफ विवेचना करता है कि मैं अवश्य ही परमात्मा हूँ, वह कहता है कि मै ही वह सत्ता हूँ जो शुद्ध, अशुद्ध, ऊँच-नीच और कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य का निरूपण कर सकती है। इस सत्ता को किसी बाहरी शक्ति का हस्ताक्षेप सह्य और वांछनीय नहीं है। यदि मैं परमात्मा हूँ तो मैं सर्वशक्तिमान भी हूँ। मैं मृत्यु को जीत सकता हूँ। अन्त में किरलोफ निर्णय करता है कि मैं देखूं कि मैं मृत्यु को जीत सकता हूँ या नहीं। इसके परीक्षण का केवल मात्र एक उपाय है और वह है, 'आत्महत्या' अतः वह आत्महत्या कर लेता है।

निस्सन्देह इस प्रकार के व्यक्तिवाद का तर्क संगत यही परिणाम हो सकता है।

आर्य संस्कृति का आदर्श

आर्य संस्कृति के समर्थकों ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से इस खतरे को भली भाँति अनुभव किया था। मनुष्य को अपनी स्वाभाविक इच्छाओं की पूर्ति के लिए तथा उसे समाज का योग्य सदस्य बनाने के लिए प्राचीन ऋषियों ने जीवन के ४ आश्रम (Stages) निर्धारित किए थे जो ब्रह्मचर्य गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास के नाम से प्रख्यात हैं। समाज व्यवस्था को ठीक रखने और उसकी बाहरी और भीतरी शत्रुओं से रक्षा के लिए मनुष्यों की स्वाभाविक रुचि और योग्यता को दृष्टि में रखते हुए ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये ४ वर्ण नियत किए गए थे।

हमारे प्राचीन ऋषियों और समाज शास्त्रियों ने 'वर्णाश्रम' की सुदृढ़ नीव पर ही समाज का भवन खड़ा किया था, जो लाखों करोड़ों वर्षों से भयंकर तूफानों और बवंडरों के थपेड़े खाकर भी आज तक जीवित है। इसके लम्बे जीवन का रहस्य यह है कि इसमें व्यक्ति को न तो समाज के सर्वथा अर्पण किया गया है और न समाज को व्यक्ति के। वरन् दोनों के सर्वाङ्गीण (All round) सम विकास (Harmonious Development) पर दृष्टि रखी गई है।

इन व्यवस्थाओं में मनुष्य के गुणों एवं शुद्ध आचरण की पूजा होती थी, धन और शारीरिक बल की नहीं जैसा कि आज कल हो रहा है।

धन और शारीरिक बल का अपना २ विशिष्ट स्थान था। धन और बल के द्वारा प्रजा की सेवा हो सकती थी उनका पीड़न करने की न किसी को आज्ञा थी और न अधिकार था। ये सब वर्ण मिल कर और बाट कर समाज सेवा करते थे।

इस भावना का समुज्ज्वल स्वरूप महात्मा बुद्ध के उपदेशों मे भी यत्र तत्र मिलता है। महात्मा बुद्ध ने कहा लिच्छवियों का प्रजातन्त्र उस समय तक फलेगा जब तक उनकी सभा के सभासद मंत्रणा के लिए शीघ्र २ आपस में मिलते रहेंगे, आयु अनुभव और योग्यता का आदर करते रहेंगे। पारस्परिक सहयोग और सहायता से कार्यों का सम्पादन करते रहेंगे और जब तक उनमें स्वार्थपूर्ण दल बन्दियाँ न बनेंगी जो सदैव अपने संकुचित स्वार्थों के लिए आपस में लड़ती झगड़ती रहती हैं।

आर्य संस्कृति की कार्य्य-प्रणाली आन्तरिक संघर्ष को कम करके उन गुणों की रक्षा पर बल देती है जिनसे संस्कृति, मानवता, विवेक और न्याय भावना का विकास होता है और जो 'स्वयं जिओ और दूसरों को जीने दो' (Live and let live) की भावना तथा 'सादा जीवन और उच्च विचार' (Plain Living and High Thin king) के आदर्श पर अवलम्बित है।

आजकल राष्ट्रों की महत्ता (Greatness) का माप दण्ड (Standard) मनुष्य की योग्यता और शुद्धाचरण के स्थान पर उसका धन-वैभव और शारीरिक बल बन रहे हैं इसीलिए समाज के भवन की नीव खोखली हो गई है और वह गिरा चाहता है।

अतः यह आवश्यक है कि उत्तम समाज व्यवस्था के निर्माणार्थ हमें अपनी अर्थ प्रणाली की नीव धार्मिकता पर रखनी होगी जिसमे मनुष्य अपना हर प्रकार का विकास कर सकेगा परन्तु उसका विकास दूसरों के विकास में बाधक न बनने दिया जायगा। जिसमें अर्थ अर्थ रहेगा अनर्थ न बनने पाएगा। जिसमें आर्थिक और राजनैतिक सत्ता प्रजा के मनोनीत योग्यतम व्यक्तियों के हाथ में होगी जो प्रजा के विश्वस्त सेवकों के रूप मे प्रजा के सम्मिलित हित और कल्याण के लिए काम करेंगे।

अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण से

(७)

मनुष्य जाति के कल्पित विभाग

हमारी वर्तमान समाज-व्यवस्था में एक मौलिक त्रुटि है और वह यह है कि मनुष्य-जाति अनेक वर्गों, समुदायों, सम्प्रदायों, श्रेणियों, पार्टियों, जातियों और उपजातियों में बँट गई है। देशाभिमान, जात्यभिमान, रंग और नस्ल आदि के मिथ्याभिमान और अहम्भाव ने इस पार्थक्य को भयंकर रूप दे दिया है। इस पार्थक्य के परिणाम स्वरूप मानव-जाति की मूलभूत एकता छिन्न भिन्न होकर परमात्मा के पुत्रों के बीच में घृणा, उपेक्षा, द्वेष और अहंकार की गहरी खाई बन गई है। कई अवस्थाओं में परमात्मा के पुत्र अपने भाइयों को भाई मानना तो दूर उनको मनुष्य भी नहीं मानते।

परमात्मा के ये पुत्र अपने को विशाल मानव परिवार का सदस्य मानने के स्थान में समाज से पृथक् अपनी सत्ता मानते हैं। संकुचित दृष्टिकोण के कारण उनकी दृष्टि अपने से ऊपर नहीं उठती। यदि उठती है तो वह उनके परिवार, वर्ग, समुदाय और राष्ट्र के बाहर नहीं जाती

भारतवर्ष की जात-पात की प्रणाली और साम्प्रदायिक विद्वेष ने भारतीयों को एक दूसरे से पृथक् और उनमें कटुता का संचार करने में बहुत योग दिया है। अंग्रेजों की कुलीन वर्गीयता की 'थ्यूरी' (Theory=सिद्धान्त) ने भी मनुष्य के मध्य खाई को गहरा और चौड़ा किया है। इसी के कारण ये लोग अपने को विशेष गुणों से सम्पन्न और विशेषाधिकारों के अधिकारी मानते और दावा करते हैं कि पिछड़ी हुई जातियों को सभ्य बनाने का कार्य्य परमात्मा ने उन्हें सौंपा है। अंग्रेज जाति की यह थ्यूरी नाजियों की इस थ्यूरी से बिलकुल मिलती है कि वे आर्यों के वंशज हैं और जर्मन जाति को संसार पर शासन करने का जन्म-सिद्ध अधिकार है। ये सब वाद अस्वाभाविक और असंगत हैं। देहली यूनिवर्सिटी में इंडियन साइंस कांग्रेस द्वारा आयोजित व्याख्यान माला के एक भाषण में डाक्टर Riddle ने नाजी थ्यूरी की निस्सारता पर निम्न शब्दों में प्रकाश डाला थाः-

"While biological inequalities, do exist between human individuals there is no such thing as a superior or inferior race."

(Hindustan Times dated January 9, 1947)

अर्थात् मानव प्राणियों में शरीर शास्त्र विषयक असमानताएँ तो पाई जाती हैं परन्तु उच्च वा नीच जाति जैसी कोई चीज नहीं पाई जाती।

—(हिन्दुस्तान टाइम्ज देहली ६-१-४७)

निस्सन्देह मनुष्यों में विभिन्नता होती है। कुछ मूर्ख होते हैं और कुछ विद्वान, कुछ धनी होते हैं और कुछ निर्धन, कुछ सुखी होते हैं और कुछ दुःखी। ये विभिन्नताएँ प्रायः प्रत्येक वर्ण वा जाति के स्त्री पुरुषों में पाई जाती हैं। असमानता व्यक्तियों में होती है वर्ण से इसका कोई सम्बन्ध नहीं होता।

मनुष्य परमात्मा की श्रेष्ठतम कृति

मनुष्य परमात्मा की श्रेष्ठतम कृति है। मानव-परिवार का एक सदस्य होने के नाते उस के विशेष अधिकार हैं और उसका विशेष महत्त्व है, चाहे वह अन्त्यज हो, यहूदी हो, नीग्रो हो वा और कुछ हो। उस पर अत्याचार करने, उसका वध करने और उसको दास बनाने का किसी को अधिकार नहीं है। किसी राजा, डिक्टेटर वा पुलिस के मुख्य अधिकारी के समान वह भी मानव-प्राणी है और उसका जीवन भी पवित्र है। यदि वह समाज के विरुद्ध काम करता है तो उसकी स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध लग जाता है। यदि कोई आदमी पागल होकर दूसरों को सताना वा मारना शुरू कर देता है तो उसे बन्दीगृह में बन्द करना अनुचित नहीं समझा जाता परन्तु उस अवस्था में भी उसके साथ सहृदयता का व्यवहार होना चाहिए।

यदि मनुष्यों में ये सच्चाइयां घर कर जायँ और उनका पालन-पोषण तथा शिक्षण संसार के मनुष्यों को मनुष्य मानना सिखाने वाली संस्कृतियों की गोद में हो तो हो नहीं सकता कि वे एक परिवार के सदस्यों की नाई एक दूसरे से प्यार न करें। इस दशा में उन पर यह अङ्कित करने की आवश्यकता न होगी कि अपने परिवार से, प्रेम करने का अभिप्राय पड़ोस के लोगों से शत्रुता करना नहीं है। पड़ोस के लोगों से प्रेम करने का

अर्थ अपने ग्रामवासियों से घृणा करना नहीं है। अपने ग्राम से प्रेम करने का अपने प्रान्त से अपने प्रान्त से प्रेम करने का, अपने देश से और अपने देश से प्रेम करने का अभिप्राय अन्य देशों से वैर-विरोध और घृणा करना भी नहीं है।

देश-प्रेम

मनुष्य को अपने देश से स्वभावत. प्रेम होता है और होना भी चाहिए। अत देश प्रेम का नम्बर पहले आता है। अपने ग्राम वा प्रान्त के प्रेम का नम्बर देश-प्रेम से भी पहले रहता है। व्यावहारिक दृष्टि से देखा जाय तो हम जहाँ भी हों वहीं से प्रगाढ मानव प्रेम का परिचय दे सकते हैं।

इस प्रकार देश-प्रेम अन्तर्राष्ट्रीयता के अन्त र्गत आ जाता है। यहा भी व्यक्ति का स्थान सर्वोपरि होता है क्योंकि वही समाज को वास्तविक रूप देने वाली इकाई है। समाज स्वत कोई पृथक् चेतन सत्ता नहीं होता। सस्कृति व्यक्ति और देश की कृति होती है। समाज और देश की अदृष्ट सत्ता से उसे प्रेरणा मिलती है।

देश-प्रेम का अभिप्राय यह है कि प्रत्येक देश वासी अपना लौकिक और सास्कृतिक विकाश करता हुआ अपने देशवासियों के विकाश के लिए प्रयत्न करे और अपने देश को औद्योगिक और सांस्कृतिक सम्पदा से भरपूर करे जिससे आने वाली सन्तान उससे लाभ उठाएँ।

राष्ट्रीयता

देश-प्रेम की इस उदात्त भावना से कहीं दूर वर्तमान राष्ट्रीयता देशवासियों को युद्ध के लिए तय्यार होने, अन्य देशों को गुलाम बनाने, उनका दोहन-शोषण करने और उन्हें हेय दृष्टि से देखने का पाठ पढ़ाती है।

राष्ट्रीयता के सम्बन्ध मे विविध विचारधाराएँ काम करती देख पड़ती हैं। एक विचारधारा के अनुसार एक राष्ट्र को अन्य राष्ट्रों की तुलना मे हर दृष्टि से ऊँचा होना चाहिए। उस राष्ट्र के पुरुष और स्त्रिया अधिक बलवान् अधिक सुन्दर, अधिक चतुर, अधिक गुणवान्, अधिक उद्यमी और प्रत्येक प्रकार से श्रेष्ठ होने चाहिए। एक दूसरी विचारधारा के अनुसार राष्ट्र को आर्थिक दृष्टि से सर्वथा स्वावलम्बी होना चाहिए। इस विचारधारा के परिणाम स्वरूप राष्ट्रों मे युद्ध होते हैं। इसी के फलस्वरूप विशाल मानव-प्रेम को भौगोलिक सीमाओं के भीतर बन्द करके उसका मार्ग कुण्ठित किया जाता है। पहली विचारधारा के अनुसार यदि कोई राष्ट्र वस्तुत अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा उन्नत और विक सित है तो उसको अपने कृत्यों और अपनी कार्यप्रणाली से अपने उन्नत और विकसित होने का परिचय देना चाहिए।

एक तीसरी विचारधारा के अनुसार विश्व-बन्धुत्व की भावना का यह कह कर खण्डन किया जाता है कि यह अक्रियात्मक आदर्श है।

देश-प्रेम और अन्तर्राष्ट्रीयता

देश-प्रेम और अन्तर्राष्ट्रीयता ये दोनो एक सिक्के के दो पहलू हैं। इस तथ्य को बहुत कम व्यक्ति अनुभव करते हैं। जनता का राजनैतिक मार्ग-प्रदर्शन करने वाले, हमारे राजनीतिज्ञ तो इस तथ्य के मर्म को बहुत कम जानते अथवा उसका आदर करते प्रतीत होते हैं।

आज कल देश-प्रेम पार्टियों का देश-प्रेम बन

गया है और एक ही देश में इसके कई रूप होते हैं। पिछले दिनों स्पेन में दो राष्ट्रीय दल आपस में लड़ते देख पड़ते थे। वस्तुतः सच्ची राष्ट्रीयता सांस्कृतिक होती है जिसका दल बन्दी से कोई सम्बन्ध नहीं होता।

अन्तर्राष्ट्रीयता हृदय की भाषा होती है जो विभिन्न देशों के भाई बहिनों को प्रेम की डोरी में बांधती है। इसके द्वारा सांस्कृतिक विशेषताओं और विविध देशों के पदार्थों का आदान-प्रदान होता है। परन्तु आजकल विविध राष्ट्रों के बिगड़े हुए आर्थिक सम्बन्धों के कारण जबतब युद्ध होते रहते हैं। जबतक अन्तर्राष्ट्रीय भावना के द्वारा उन सम्बन्धों में समता न लाई जायगी तब तक शान्ति स्थापित न होगी।

व्यापारिक प्रतियोगिता और युद्ध

आजकल व्यापारिक प्रतियोगिता और युद्ध के भय के कारण उन्नत कहा जाने वाला प्रत्येक राष्ट्र आर्थिक दृष्टि से अपने को अधिकाधिक आत्म निर्भर बनाने के लिए विवश अनुभव करता है क्योंकि युद्ध छिड़ जाने पर दूसरे देशों का माल न मिलने से उन राष्ट्रों को विविध प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

इसी आत्म-निर्भरता और भय के कारण राष्ट्रों की सीमाएं बढ़ी चढ़ी चुंगी के चमकते हुए तारों से घिर गई हैं। इन घेरों से व्यापारिक सम्बन्धों पर बुरा प्रभाव पड़ता है और वस्तुओं के आयात-निर्यात में बाधा उपस्थित होती है। तभी तो कहा जाता है कि हमारा संसार इस समय एक नहीं वरन् कृत्रिम रूप से कटे फटे संसारों का एक समूह है जो एक दूसरे से संघर्ष करते और त्रस्त रहते हैं।

व्यापारिक प्रतिज्ञा-पत्र

इसमें सन्देह नहीं विविध राष्ट्रों में आपस में प्रतिज्ञा-पत्र भरे जाते हैं परन्तु ऐसा मनुष्य जाति के सम्मिलित हित के लिए स्वेच्छा-पूर्वक पारस्परिक सहयोग से काम करने वाली इकाईयों के मध्य नहीं प्रत्युत प्रतिद्वन्द्वियों के मध्य होता है। प्रतिज्ञा-पत्र भरते समय एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से कहता है "देखो, यदि तुम क ख ग के माल की अपेक्षा मेरे माल पर छूट न दोगे तो मैं तुम्हारा माल न खरीदूंगा।" इस दबाव के अतिरिक्त एक्सचेंज की दरें गड़बड़ उत्पन्न करती हैं। आए दिन इन दरों में न्यूनाधिक्य होता रहता है। कल्पना करो 'क' राष्ट्र ने १००० पौंड कर्ज लिए। उसकी मुद्रा का मूल्य गिर जाने पर उसको १००० के बदले ऋणदाता को १५०० पौंड देने होंगे।

१६१४ के महासमर के तत्काल पश्चात् जर्मन मुद्रा का मूल्य असाधारण रीति से गिर रहा था। एक ब्रिटिश अफसर जर्मनी से अपने देश इंग्लैण्ड को लौट रहे थे। उन्होंने रेलगाड़ी के उपहारगृह मे दोपहर के खाने के ३ शिलिंग अदा किये परन्तु उन्हे सांयकाल को उसी खाने के ६ शिलिंग देने पड़े क्योंकि वह गाड़ी उस समय हालैण्ड मे से गुजर रही थी और वहां एक्सचेंज की दर ऊंची थी।

उपनिवेशों की स्थापना

सांस्कृतिक भावना से उपनिवेशों की स्थापना और उनमे संस्कृति का प्रसार करना श्रेष्ठ होता है। महाराज अशोक के पुत्र और पुत्री ने स्वेच्छा-पूर्वक त्याग और संयम का जीवन साम्राज्य

विस्तार और आर्थिक शोषण के लिए धारण नहीं किया था। परन्तु आज अवस्था क्या है? पूंजीपतियों को व्यापारिक लाभ की दृष्टि से सदैव विदेशों में धन लगाना पड़ता है। धनवान् देश उन्हीं स्थानों में धन को लगाने की चिन्ता में रहते हैं जहां उन्हें अधिक सूद की आशा होती है और वे समझते हैं उनका धन सुगमता से वापस हो जायगा। इसका अर्थ यह होता है कि वे ऋणी देश को उपनिवेशों में परिणत करके उस पर राजनैतिक प्रभुत्व कायम कर लेते हैं अथवा उसकी वैदेशिक नीति के नियन्त्रण का अधिकार प्राप्त कर लेते हैं। वर्तमान साम्राज्य-वाद का यही वास्तविक रहस्य और युद्धों का यही मूल कारण है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की व्यवस्था

केवल मात्र व्यक्तिगत लाभ की दृष्टि से माल का उत्पादन कदापि न होना चाहिये, और न विदेश में लगाए जाने के लिए पूंजी का संग्रह होना चाहिए। एक्सचैंज की प्रणाली अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर केन्द्रित होनी चाहिए। भारत के माल को टर्की में भेजने का उद्देश्य भारत के मालिकों को धन से माला माल करना न होकर टर्की की जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति होना चाहिए।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की व्यवस्था का कार्य्य देखने में तो कठिन जान पड़ता है परन्तु वास्तव मे वह कठिन नहीं है। विविध राष्ट्रों के प्रति-निधि एक स्थान पर बैठकर निश्चय कर सकते हैं कि एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को किस प्रकार का और कितना माल दे सकता है। प्रत्येक देश की अपनी आवश्यकताएं क्या हैं और किस प्रकार नियत अवधि के भीतर सम्बद्ध देशों को वस्तुओं के आदान प्रदान से लाभ हो सकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की इस गड़बड़ के कारण कुछ राष्ट्र संसार रूपी शरीर में भयंकर फोड़े बने हुए हैं और उनके कारण अर्थ-प्रणाली अस्वाभाविक बन गई है। संसार के कुछ भागों में कुछ खाद्य पदार्थों की आवश्यकता से अधिक उत्पत्ति होती है और फालतू पदार्थ नष्ट कर दिये जाते हैं। विपरीत इसके उन पदार्थों की कमी के कारण संसार के अन्य भागों में प्रजा भूखों मरती है। अतएव व्यापार के अन्तर्राष्ट्रीय संतुलन की नितान्त आवश्यकता है।

सार्वभौम राष्ट्र संघ और शान्ति की सुरक्षा

इन दिनों विश्व की शान्ति के लिए सार्व-भौम राज्य की आवश्यकता पर विशेष बल दिया जाता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के एक उपाय के रूप मे एक भाषा, एक संस्कृति का प्रचार और एक राज्य की स्थापना बतलाया जाता है ऋषि दयानन्द सरस्वती ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में अनेक वर्ष पूर्व इस आवश्यकता की निम्न प्रकार पुष्टि की थी:—

"एक २ ग्रामों का पति ग्रामों में नित्य प्रति जो दोष उत्पन्न हों उन २ को गुप्तता से दश ग्राम के पति को विदित कर दे और वह दश ग्रामा-धिपति उसी प्रकार बीस ग्राम के स्वामी को दश ग्रामों का वर्तमान नित्य प्रति जना देवे।

और बीस ग्रामों का अधिपति बीस ग्रामों के वर्तमान को शत ग्रामाधिपति को नित्य प्रति निवेदन करे वैसे सौ २ ग्रामों के पति आप सहस्राधिपति अर्थात् हजार ग्रामों के स्वामी

को सौ २ ग्रामों के वर्तमान को प्रतिदिन जनाया करें और बीस २ ग्रामों को पाँच अधिपति सौ २ ग्राम के अध्यक्ष को और वे सहस्र २ के दश अधिपति दस सहस्र के अधिपति को और लक्ष ग्रामों की राजसभा को प्रतिदिन का वर्तमान जनाया करें और वे सब राजसभा को प्रतिदिन का वर्तमान जनाया करें और वे सब राजसभा महाराज सभा अर्थात् सार्वभौम चक्रवर्ति महाराज सभा में सब भूगोल का वर्तमान जनाया करें।" (सत्यार्थ प्रकाश षष्ठ समुल्लास)

"A guide to the new age" पुस्तक के पृष्ठ १५४ पर भी इस सम्बन्ध मे निम्न प्रकार उत्तम प्रकाश डाला गया है:—

"A common culture, a common language would make an international outlook and that is the only ultimate guarantee of peace."

अर्थात् एक संस्कृति और एक भाषा से अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण बनेगा और यही शान्ति की अन्तिम गारन्टी है।

इन दिनों इस आदर्श की पूर्ति में सब से बड़ी बाधक वस्तु राष्ट्रों की पारस्परिक आर्थिक प्रतियोगिता है जिसके निराकरण के लिए विविध राष्ट्रों मे पारस्परिक सहयोग होना आवश्यक है।

देश प्रेम की भावना में उचित परिवर्तन होने पर ही यह सहयोग सम्भव होगा, और इस परिवर्तन को लाने के लिए व्यापारिक प्रक्रियाओं का लक्ष्य मानव जाति का विशाल हित बनाना होगा।

—●—

आर्यसमाज में वैधानिक क्रान्ति

(लेखक—श्री पं० जयदेवजी वेदालङ्कार आचार्य तथा मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल मुलतान)

आर्य समाज वर्तमान युग में संसार का सर्वोत्तम और सबसे बड़ा सांस्कृतिक आन्दोलन है। इस आन्दोलन को संसार का सर्वोत्तम और सब से बड़ा सांस्कृतिक आन्दोलन इसलिये कहा है कि आर्य समाज ने इस आन्दोलन को संसार मात्र के कल्याण के लिये प्रारम्भ किया है। इस का उद्देश्य किसी जाति विशेष तथा देश विशेष की सेवा करना नहीं है। इस आन्दोलन के महान् प्रवर्तक ऋषि दयानन्द तथा दूसरे संचालकों का यह विश्वास रहा है कि जबतक मनुष्य जाति संस्कृत नहीं हो जाती और उसका वर्तमान दृष्टिकोण नहीं बदल जाता तब तक विश्व के भिन्न भिन्न भागों में प्रचलित राजनैतिक, आर्थिक व सामाजिक सुधार आन्दोलन सफल नहीं हो सकते।

ऋषि दयानन्द ने इस महान् आन्दोलन का आधार ईश्वर विश्वास की दृढ़ और अभेद्य शिला पर रखा था। यह बात उनके बनाए आर्य समाज के प्रसिद्ध दस नियमों तथा उनके वैयक्तिक जीवन व व्यवहार से सूर्यवत् स्पष्ट है। श्रीस्वामी जी महाराज ईश्वर की महती शक्ति के सिवाय किसी सांसारिक शक्ति पर भरोसा नहीं करते थे, दुनियावी ताकतों पर भरोसा करना व्यावहारिकता नहीं, नास्तिकता है। जब हमारा व्यवहार आदर्श का परित्याग कर देता है तब वह व्यवहार मूर्ति पूजा का रूप धारण कर लेता है। सभी साधन साध्य की—आदर्श की—सिद्धि के लिये ही उपयोग में लाये जाते हैं। आदर्श की सिद्धि का विचार किये बिना साधन जुटाना मूर्खता है व्यर्थ प्रयास है।

मैं यह अनुभव करता हूं आर्यसमाज के अनेक सदस्यों में ईश्वर विश्वास की न्यूनता है। जब से आर्य समाज ने ईश्वर की शक्ति में विश्वास करना छोड़ दिया है और सांसारिक शक्तियों पर भरोसा करना प्रारम्भ किया है, तभी से परमात्मा की छत्र छाया व उसके वरद हाथ हमारे सिर पर से उठ गए हैं। अब हमारे आन्दोलन का संचालन परमात्मा नहीं कर रहा, अपितु दुनिया की ताकतें कर रही हैं। यही कारण है कि अब आर्यसमाज की समस्त प्रवृत्तियां अपने निश्चित आदर्श के लिये नहीं की जातीं बल्कि आर्य समाज का नाम कायम रखने के लिये की जाती हैं। इस नाम को स्थिर करने के लिये हम उल्टे सीधे सब प्रकार के कार्य करने लगे हैं। परिणाम-स्वरूप हम जितना नाम और यश के पीछे दौड़ते हैं, आर्यसमाज का नाम और यश उतना दूर भागता जाता है।

आर्य समाज में संस्था पूजा।

स्वामी दयानन्द स्वभावतः इस प्रवृत्ति के घोर विरोधी थे। वे मूर्ति पूजा की जड़ों को उखाड़ फेंकने के लिये पैदा हुए। मूर्ति पूजा मनुष्य की एक बहुत बड़ी कमजोरी है जिसे दूर कर सकना किसी वीर पुरुष का काम होता है। स्वामी दयानन्द ने अपने हाथों संस्थापित की गई संस्थाओं को फौरन तोड़ दिया जब उन्हें यह विश्वास हुआ कि ये संस्थाएं उनके आदर्शों पर

काम नहीं कर रहीं। उन्हें ऐसा करने से जरा भी हिचकिचाहट या संकोच नहीं हुआ। आदर्श पर न चलनेवाली संस्थाओं को तोड़ देना ही श्रेयस्कर है। संस्थाएं आदर्श प्राप्ति के लिये ही स्थापित की जाती हैं, संस्था बनाना अपने आप में कोई आदर्श नहीं है। स्वामी दयानन्द सच्चे अर्थों में महान् वीर थे। उनके लिये संस्था बनाना व आदर्श हीन संस्थाओं को तोड़ देना मामूली कार्य था, परन्तु आर्य समाज के लिये यह कार्य शक्ति से बाहर असम्भव प्रतीत होता है। समस्त संसार में, विशेषतः अपने देश में आर्य समाज की संस्थाओं का जाल बिछा हुआ है। यह जाल व संगठन संसार की आदर्श विरोधी, अनीश्वर वादी, स्वार्थमयी, आसुरी प्रवृत्तियों व आन्दोलनों का समूल नाश करने के लिये तैयार किया गया था, परन्तु आर्य समाज स्वयं अपने तैयार किये हुए जाल में फंस गया है। अब इसका इस जाल में से निकलना असम्भव हो गया है।

संस्था-पूजा, मूर्ति पूजा का ही एक सूक्ष्म रूप है। जो आर्य समाज मूर्ति पूजा का घोर शत्रु था वही आर्य समाज आज आदर्श विरोधी संस्थाओं की स्थापना व पोषण करके मूर्ति पूजा के पाप का भागी बन रहा है। अधिक से अधिक संस्थाओं का खोलना तथा उनके संचालन का ही एक मात्र लक्ष्य आर्य समाज के सामने रह गया है। आर्य-समाज को अपना आदर्श भूल सा गया है।

आर्य समाज पथ भ्रष्ट हो गया है।

आर्य समाज अपना रास्ता भूल गया है। आज आर्य समाज भटक रहा है। आर्य सामाजिक जगत् में घोर निराशा है। हम लोग किंकर्तव्य विमूढ़ हो रहे हैं। यह तो हम अनुभव करने लगे हैं कि हम अपना रास्ता खो बैठे हैं आदर्श से विचलित हो गये हैं, परन्तु हम में वापिस लौटने का-आदर्श मार्ग पर चलने का-साहस नष्ट हो गया है। अपने हाथ से खोली हुई आदर्श हीन संस्थाओं को तोड़ने की कल्पनामात्र से हम कांप उठते हैं। "विष वृक्षोऽपि संवर्द्ध्य, स्वयं छेत्तुमसाम्प्रतम्" अपने हाथ से लगाए हुए विष वृक्ष को उखाड़ कर फेंक देना भी एक बहुत कठिन काम है। हम स्पष्ट देख रहे हैं कि इनमें से अनेक संस्थाओं ने आर्य समाज का भयंकर नुकसान किया है, आर्य समाज के आदर्शों को कुचला है।

ऋषि दयानन्द से विश्वास घात

क्या अब भी आर्य सामाजिक जगत् यह अनुभव नहीं करता कि संसार भर में फैली हुई कई आर्यसमाजों तथा उनकी हजारों संस्थाओं ने ऋषि दयानन्द के साथ विश्वास घात किया है। इन संस्थाओं पर दयानन्द के नाम और आर्य समाज के पवित्र आदर्शों के नाम पर करोड़ों रुपया खर्च हुआ है लाखों व्यक्तियों की शक्ति लगी है, परन्तु यह सब किस लिये? ईश्वर भक्त आदर्श के पुजारी ब्रह्मचारी दयानन्द के सब स्वप्नों को हम ने धूल में मिलाने का प्रयत्न किया, जिस पश्चिमी आसुरी सभ्यता का अन्त करने के लिये ऋषि दयानन्द ने भयङ्कर व्रत लिया था। उसी पश्चिमी सभ्यता का आर्य समाज के हजारों मञ्चों से जयघोष हो रहा है। दयानन्द की सेनाएं दयानन्द के विरुद्ध कमर कस कर लड़ने के लिये उठ खड़ी हुई है। दयानन्द के आर्य समाज रूपी हजारों वैदिक संस्कृति के रक्षक किले दुश्मन के कब्जे में आ गये हैं। कितना दयनीय दृश्य है।

आर्य समाज में अविश्वासियों का प्रवेश

अब अनेक आर्यसमाज में उन लोगों का बोल बाला है, जो पश्चिमी सभ्यता के पुजारी हैं, जिन्हें ऋषि दयानन्द के मिशन में विश्वास नहीं, जो वेदों को एक मामूली लौकिक काव्य ग्रन्थ से अधिक महत्व नहीं देते, जो अपने समस्त व्यवहारों मे पश्चिम से प्रेरणा प्राप्त करने के आदी हो गये हैं, जिनकी जीवन यात्रा के लिये त्याग तपस्या, सादगी, सरलता, ब्रह्मचर्य, ईश्वर विश्वास आदि साधनों की कोई कीमत नहीं है। हमें ऐसे विचार रखने के कारण से किसी व्यक्ति से कोई शिकायत नहीं। शिकायत इस बात की है कि जिन लोगों के विचार आर्य समाज के सिद्धान्तों व आदर्शों के प्रतिकूल हैं वे आर्य समाज को क्यों नहीं छोड़ देते।

आर्य समाज को छोड़ देना चाहिये।

ऐसे व्यक्तियों को आर्य समाज को छोड़कर बाहर चले जाना चाहिये। ऐसा करके वे आर्य-समाज की सच्ची सेवा करेंगे। इस से आर्य-समाज का कुछ भी नुकसान न होगा, अपितु आर्य समाज शुद्ध हो जायगा और परिणाम-स्वरूप शक्ति शाली बनेगा।

आर्य समाज का उद्देश्य

क्या यह कहने की जरूरत है कि आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य वेद तथा वैदिक संस्कृति की रक्षा करना तथा उसका संसार भर में प्रचार करना है। यह बात आर्य समाज के तीसरे नियम से पूर्ण रूप से स्पष्ट है। जिन्हें वेद तथा वैदिक संस्कृति मे विश्वास नहीं उन्हें आर्यसमाज में सीधा सामने आकर लड़ना चाहिये, ऐसे व्यक्तियों की हर एक इज्जत करेगा। वे वीर पुरुष हैं जो अपने विश्वासों के लिये लड़ते हैं। परन्तु आर्य समाज के आदर्शों या सिद्धान्तों को न मानते हुए चोर दरवाजे से आर्य समाज में अपने २ स्वार्थों व अपने विचारों के प्रचार के लिये प्रवेश करना निश्चय ही एक निन्दित कर्म है। यह चोरी है। आर्य समाज के आदर्श रूपी धन को केवल चुराया ही नहीं जा रहा अपितु अब खुले आम लूटा जारहा है। यह एक अवाञ्छनीय परिस्थिति है। यदि आर्य समाज को जीवित रहना है तो इस परिस्थिति को बदलना होगा।

आर्य समाज में वैधानिक क्रान्ति

परन्तु इस स्थिति को कैसे बदलें? जो विचार मैंने ऊपर प्रकट किये हैं, वैसा सोचने वाले आज लाखों व्यक्ति आर्य समाज में पैदा हो गए हैं। सभी चाहते हैं कि कोई न कोई ऐसा उपाय अवश्य करना चाहिये जिससे आर्य समाज के आदर्शों की रक्षा हो परन्तु यह कैसे हो?

यह काम हुल्लड़बाजी से नहीं होगा। आर्य-समाज के वर्तमान नेताओं को बुरा भला कहना भी इसका समाधान नहीं है। समानान्तर संस्थाओं के बनाने से भी इस समस्या का हल नहीं होगा। आर्य समाजों तथा आर्य सामाजिक संस्थाओं में अधिकारियों के बदल जाने मात्र से भी यह कार्य सिद्ध नहीं हो सकता।

मेरे विचार में आर्य समाज में वैधानिक क्रान्ति ही इस समस्या का एक मात्र समाधान है। आर्य समाज एक वैधानिक संस्था है, इसलिये वैधानिक परिवर्तन से ही आर्य समाज में क्रान्ति पैदा हो सकती है। मौजूदा आर्य समाज के विधान के अनुसार हम आर्य समाज के आदर्शों

की रक्षा करने में असफल हुए हैं। आर्य समाज के मौजूदा विधान रूपी बाड़ की दीवार इतनी छोटी और कमजोर है कि जो चाहे इस में प्रवेश करके आर्य समाज के आदर्श रूपी हरी भरी खेती को उजाड़ सकता है। वर्तमान आर्यसमाज आर्य प्रतिनिधि सभा, सार्वदेशिक सभा के विधान में वह शक्ति नहीं है कि जिससे अवाञ्छनीय, अनिष्टकारी व्यक्तियों को आर्य समाज में प्रवेश करने से रोका जा सके। किसी संस्था के विधान की यह खूबी होनी चाहिये कि वह उस संस्था के आदर्श की रक्षा ही नहीं अपितु उसे समृद्ध व व्यापक बना सके। नुकसान पहुंचाने वाले तत्त्वों पर काबू पा सके और सहायक तत्त्वों का पोषण कर सके। इसलिये स्थानीय आर्य समाज, प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाएं तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के विधान में जितनी जल्दी परिवर्तन किया जाय उतना ही आर्य समाज के लिये श्रेयस्कर है। इस कार्य में विलम्ब आर्य-समाज के लिये बहुत हानिका है।

आर्य सामाजिक नेताओं से अपील

यह कार्य आर्य सामाजिक नेताओं का है। वर्तमान विधान में आमूल परिवर्तन की आवश्यकता है। मैंने बहुत से आर्य नेताओं से विचार विनिमय किया है, प्रसन्नता की बात है कि वे भी ऐसा अनुभव करते हैं। इन बातों के सोचने और कहने मात्र से लाभ न होगा। हमें अब गम्भीरता से इस कार्य में जुट जाना चाहिये।

मुझे पूर्ण आशा है कि हमारे आर्य नेता समय और परिस्थिति को पहिचानते हुए शीघ्र ही इस महत्त्व पूर्ण कार्य को अपने हाथ में लेंगे। यही एक मात्र उपाय है। "नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।"

[इस लेख में योग्य लेखक महोदय ने जो विचार प्रकट किये हैं उन पर गम्भीरता से विचार करके आवश्यक सुधार की ओर शीघ्र ध्यान देना आवश्यक है। बहुत सम्भव है कि प्रबल अनुभव तथा सुधार भावना के कारण कुछ स्थानों पर वस्तुस्थिति से कुछ अधिक अन्धकारमय चित्र वर्तमान अवस्था का खैंचा गया है तथापि निराशावाद को अपने अन्दर एक क्षण के लिये भी स्थान न देते हुए इस शोचनीय अवस्था को दूर करने का प्रयत्न करना सब उत्साही आर्यों का कर्तव्य है। सम्पादक सा० दे०]

जाति भेद निवारक आन्दोलन का महत्त्व

(ले०—श्री पं० गङ्गाप्रसादजी एम. ए. रिटायर्ड चीफ जज अध्यक्ष जातिभेद निवारक आ० प्र० संघ)

मैं दीवान हाल आर्य समाज को बधाई देता हूँ कि उसने अपने वार्षिकोत्सव के अवसर पर जाति भेद निवारक सम्मेलन को भी स्थान दिया क्योंकि यह विषय बड़े महत्त्व का है, और हिन्दू (आर्य) जाति में इस समय संगठन की विशेष आवश्यकता है। जो विना जाति भेद निवारण के नहीं हो सकता। समय बड़ा विकट है, विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद, जिसमें करोड़ों मनुष्यों की हत्या हुई, सारे संसार में उथल पुथल मची हुई है, और अभीतक पूरी शान्ति स्थापित नहीं हुई। संयुक्तराष्ट्र संघ योरप में शान्ति स्थापित करने का यत्न कर रहा है। परन्तु संघ में जो बड़े २ राष्ट्र शामिल हैं उनमें भी परस्पर मतभेद और मनोमालिन्य पाया जाता है।

भारतवर्ष पूर्ण स्वतन्त्रता के द्वार पर पहुंच चुका है और कांग्रेस के ६० वर्ष के घोर संघर्ष के बाद ब्रिटेन ने भारतवर्ष को पूर्ण रीति से शासन सत्ता सौंपना स्वीकार कर लिया है। इसके लिये एक Constituent Assembly भी नया शासन विधान बनाने के लिये ९-१२-४६ से देहली में काम कर रही है, और जबतक वह नया विधान न बन जावे तबतक के लिए एक अस्थायी सरकार Interim Govt. भी बन चुकी है जिसके मन्त्रि मण्डल में केवल भारतवासी सदस्य रक्खे गए हैं।

पर भारत के दुर्भाग्य से मुसलिम लीग इस योजना में पूर्ण सहयोग देने को अभी तक तय्यार नहीं। उसके प्रधान मि० कायदे आजम जिन्हा को इस बात पर आग्रह है कि भारत के दो भाग होने चाहियें, एक पाकिस्तान जिसमें वे प्रान्त शामिल हों जिनमें मुसलमानों की बहु संख्या है दूसरा हिन्दुस्तान जिसमें हिन्दुओं की बहु संख्या वाले प्रान्त रहें। हिन्दू, सिक्ख, ईसाई, पारसी आदि भारत की सब जातियों को इससे विरोध है। ब्रिटिश सरकार ने इसको पसन्द नहीं किया। मुसलिम लीग के समर्थकों के सिवाय अन्य मुसलमान भी इसकी पुष्टि नहीं करते, परन्तु जिन्हा साहब इसी पर अड़े हुए हैं।

९-४-४६ को देहली में Muslim League Legislators' Association की जो मीटिंग हुई उसमें भारत की राजनैतिक समस्या पर एक रेज़ोल्यूशन में पाकिस्तान की मांग के लिये जो कारण दिये गये थे वे इस प्रकार हैं:—

"The Hindu Dharma has fostered and maintained for thousands of years a rigid caste system resulting in the degradation of 60 millions of human beings to the position of untouchables, creation of un-natural barrier between man and man, and the super-imposition of social & economical inequalities on a large body of people of this country and which threatens to reduce Muslims, Christians and other minorities to the status of irredeemable helots socially and economically."

अर्थात् "हिन्दू धर्म ने हजारों बरस से एक ऐसी कट्टर जाति भेद प्रथा को पालपोस कर रक्खा है जिसके परिणाम रूप ६ करोड़ मनुष्य पतित होकर अछूत के दर्जे पर पहुंच गए, देश के बहुत बड़ी संख्या के लोगों पर आर्थिक और सामाजिक असमानता लादी गई, मनुष्य और मनुष्य के बीच अस्वाभाविक दीवार खड़ी कर दी गई, जिससे मुसलमान, ईसाई और अन्य जातियों को भय है कि वे सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से ऐसी दास दशा में गिर जायंगे जिससे उनका उद्धार होना असम्भव होगा।"

हिन्दू धर्म पर जो आक्रमण ऊपर लिखे रेजो० में किया गया उसकी कुछ विचारशील मुसलमानों ने भी निन्दा की है। इसके उत्तर में यह कहा जा सकता है कि कांग्रेस के नेताओं में जिनको नई सरकार बनाने का काम सौंपा गया—कोई भी वर्तमान जन्मगत जाति भेद का समर्थन नहीं करते। कांग्रेस गवर्नमेंट ने अपने मन्त्री मण्डल में श्री जगजीवनराम को हरिजनों के प्रतिनिधि रूप से स्थान देकर इस बात का प्रमाण दिया है कि उनका बर्ताव शूद्र और दलित-जातियों के प्रति सब प्रकार उचित ही होगा। प्रान्तीय मन्त्री मण्डलों में भी इसी प्रकार हरिजनों के प्रतिनिधि मन्त्री नियत किये गये हैं, शूद्र और दलित जातियों पर समाज की ओर से जो अत्याचार और अनुचित व्यवहार होता आया है उसको दूर करने के लिये कानून बनाये जा रहे हैं।

तो भी जन्मगत जाति भेद दूर हो गया यह कहना किसी प्रकार सत्य नहीं। अभी तक भी केवल नगरवासियों के और उन लोगों के विचार जिन पर आर्य समाज और महात्मा गांधी का प्रभाव पड़ा है शुद्ध हुए हैं। ग्रामों में अबतक भी समाज की ओर से शूद्रों के साथ न्याययुक्त व्यवहार नहीं होता। बहुत से स्थानों में शूद्रों की स्त्रियां चांदी के जेवर भी नहीं पहन सकतीं। वे लोग भोजन में घी का प्रयोग नहीं कर सकते। डोला पालकी का प्रश्न जो गढ़वाल जिले (यू. पी.) में कई वर्ष से उलझन में पड़ा था अभी हाल में हल हो पाया है। हरिजन लोगों के विवाहों में वर व कन्या डोला या पालकी में बैठ कर नहीं जा सकते थे, यदि ऐसा करते तो सर्व जातियों की ओर से उनपर हमला होता था।

मुसलिम लीग के धारा सभाओं के सदस्यों ने जो ऊपर लिखा रेजोल्यूशन पास किया उससे हिन्दुओं को आंखें खोलनी चाहियें और जन्मगत जातिभेद की कुप्रथा को नष्ट करने में पूर्ण उद्योग करना चाहिये। यह कुप्रथा हमारे धर्म और संस्कृति पर कलंक है, और इससे हमारे विरोधियों को हमारे धर्म पर आक्रमण करने और देश की राजनैतिक उन्नति में बाधा डालने का अवसर मिलता है जैसाकि ऊपर लिखे रेजोल्यूशन से सिद्ध है। कायदे आजम जिन्हा हमेशा यह कहते रहते हैं कि कांग्रेस केवल सवर्ण हिन्दुओं की संस्था है। ११ दिसम्बर १९४६ को उन्होंने लन्दन से रेडियो द्वारा पाकिस्तान के समर्थन में अपना जो वक्तव्य अमेरिका में प्रकाशित किया उसमें यह शब्द हैं:—

"One India means slavery for the Muslims under the caste Hindu permanent majority domination, Muslim India will never submit to that."

अर्थात् "एक (अर्थात्) अविभक्त भारत का अभिप्राय मुसलमानों के लिए सवर्ण हिन्दुओं की स्थायी बहु संख्या की प्रभुता में दास या गुलाम होकर रहना होगा। मुसलिम भारत इसको कभी स्वीकार नहीं करेगा।"

लन्दन से लौटते हुए उन्होंने मिश्र की राजधानी काहिरा (Cairo) में भी कांग्रेस का वर्णन इसी प्रकार किया और वहां के निवासियों को यह भय दिखाया कि यदि भारतवर्ष में पाकिस्तान की योजना सफल न हुई तो भारत का हिन्दू साम्राज्य मध्यपूर्व middle east में अर्थात् मिश्र, ईराक, अरब आदि देशों में भी अपना जाल फैलावेगा।

हाल में ब्रिटेन के भूतपूर्व प्रधान मन्त्री मि० चर्चिल और लार्ड साइमन ने भी कांग्रेस और वर्तमान शासन विधान सभा (Constituent-Assembly) को केवल सवर्ण हिन्दुओं की प्रतिनिधि होना कहा। २०-१-४७ की उक्त शासन सभा के अधिवेशन में उसके सभापति श्री डा० राजेन्द्रप्रसाद ने लार्ड साइमन के नीचे लिखे हुए शब्दों का उचित रीति से खण्डन किया। "Whether this meeting of caste Hindus at Delhi can be regarded by Government as the Constituent-Assembly they meant at all." अर्थात् "क्या इस सवर्ण हिन्दुओं की सभा को जो देहली में हो रही है गवर्नमेंट किसी प्रकार ऐसी शासन सभा समझ सकती है—जिससे अभिप्राय था।" इसकी आलोचना करते हुए डा० राजेन्द्रप्रसाद जी ने यह बतलाया कि उक्त सभा के २९६ सदस्यों में से २१० सदस्य उपस्थित हुए और उनमें हिन्दुओं के, दलित जातियों के, सिक्खों के, ईसाइयों के, पारसियों के, आदिवासियों के अर्थात् सभी जातियों के प्रतिनिधि उचित संख्या में थे केवल मुसलमानों के प्रतिनिधि ८० में से केवल ४ आये और बाकी लीग के प्रतिनिधि थे जो जानबूझ कर अनुपस्थित रहे। क्या लार्ड साइमन जैसे उत्तरदायी नेता को ऐसी सभा को केवल सवर्ण हिन्दुओं की सभा बतलाना महाअनुचित नहीं?

ऊपर जो कुछ लिखा गया उससे स्पष्ट है कि भारत की राजनैतिक प्रगति में जो बाधा मुसलिम लीग की ओर से हो रही है उसका मुख्य कारण जन्मगत जाति भेद ही है। उसके कारण जो सामाजिक और आर्थिक हानियां हुई हैं वे किसी से छिपी हुई नहीं। इसने हिन्दू (आर्य) जाति के अनगिनत टुकड़े करके राष्ट्रीय एकता को बिलकुल नष्ट कर दिया। इसके कारण शूद्रों पर जो सामाजिक अत्याचार सैंकड़ों वर्ष तक हुआ उसके परिणाम स्वरूप करोड़ों हिन्दुओं ने अपना धर्म छोड़कर इसलाम मत अंगीकार कर लिया और लाखों शूद्र ईसाई हो गए और होते जाते हैं। कुछ लोग समझते हैं कि आर्य समाज के धार्मिक प्रचार से यह सिलसिला बन्द हो गया। यह भारी भूल है, पिछले ४० वर्षों में (अर्थात् सन् १९०१ से १९४१ तक) जब कि आर्य समाज का प्रचार बराबर जारी रहा ईसाइयों की संख्या दूनी हो गई और हर १० वर्ष में बढ़ती रही जैसा कि पिछली पांच मनुष्य संख्या के अंकों से जो नीचे दिये जाते हैं स्पष्ट हो जायगा:—

	ब्रिटिश भारत में	रियासतों वा एजेंसी में	सारे भारतवर्ष में
सन् १९०१	९९ हजार	१६२ हजार	२६१०००
„ १९११	१२४ „	२०० „	३२४०००
„ १९२१	१५० „	२५० „	४०००००
„ १९३१	१७९ „	३०७ „	४८६०००
„ १९४१	१६३ „	३१२ „	४८५०००

यह कुछ कम आश्चर्य की बात नहीं कि जब पिछले ४० वर्षों में ईसाइयों की संख्या लगभग दूनी और मुसलमानों की संख्या ड्योढ़ी हो गई हिन्दुओं की संख्या लगातार घटती रही है— नीचे लिखे अंकों से यह स्पष्ट हो जायगा जो सन् १९४१ की मनुष्य संख्या में दिये गये हैं:—

	ब्रिटिश भारत में	रियासतों व एजेंसियों में
सन् १९०१	७०३४००००	७७७९००००
„ १९११	६९३१००००	७७७८००००
„ १९२१	६८४१००००	७७४२००००
„ १९३१	६८२४००००	७७७१००००
„ १९४१	६५९३००००	७०५७००००

असली बात यह है कि धार्मिक विचारों के कारण जो लोग हिन्दू धर्म को छोड़कर मुसलमान या इसाई मतो मे जाते थे, उनकी संख्या निःसन्देह आर्य समाज के प्रचार से कम हो गई है, परन्तु मत परिवर्तन का मुख्य कारण धार्मिक विचारों का परिवर्तन नहीं किन्तु वह सामाजिक अन्याय और दुर्व्यवहार है जो हिन्दू रहते हुए शूद्रों को सहना पड़ता है और जो अभी तक दूर नहीं हुआ ; इसलिये शूद्र और दलित जातियों तथा आदि वासियों Aboriginal Tribe में से मुसलमान या इसाई मतों में जाने का सिलसिला अबतक भी जारी है।

इसमें सन्देह नहीं कि जबतक यह जातिभेद दूर नहीं होगा तबतक हिन्दू जाति का उद्धार नहीं हो सकता। आर्यसमाज देश के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक सब प्रकार के सुधार में अग्रसर रहा है। उसका यह सिद्धान्त है कि जन्मगत जाति भेद को दूर करे। तभी सच्ची वैदिक वर्ण व्यवस्था स्थापित हो सकती है। परन्तु यह दुःख के साथ कहना पड़ता है कि आर्य समाज को इस महत्वपूर्ण कार्य में अभीतक अच्छी सफलता नहीं हुई। जाति भेद को दूर करने के लिए अन्तर्जातीय विवाहों का होना बहुत आवश्यक है क्योंकि आजकल की जाति बिरादरियों का कार्य क्षेत्र मुख्यतया विवाह ही रह गया है और वे एक प्रकार marriage guilds बन गये हैं। अन्तर्जातीय विवाहों में एक बड़ी कानूनी अड़चन यह थी कि हिन्दू शास्त्र के अनुसार (जो आर्य समाजियों पर भी लागू है) ऐसे विवाह नाजायज समझे जाते हैं, और ऐसे विवाहों की सन्तान भी illegitimate जारज मानी जाती है। इस कठिनाई को दूर करने के लिये सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने भारतीय धारा सभा से आर्य विवाह विधान (Arya Marriage Act) सन १९३६ में पास करा लिया। उसके अनुसार कोई पुरुष व स्त्री अपने को आर्य समाजी कहे, चाहे उसकी जन्मगत जाति या बिरादरी कुछ भी हो, बिना रोक-टोक विवाह कर सकते हैं। परन्तु खेद की बात

है कि इस कानूनी सुविधा के होते हुए भी आर्य-समाजियों में बहुत कम अन्तर्जातीय विवाह होते हैं और अधिकतर विवाह आर्यसमाजी भी अपनी जाति बिरादरी में ही करते हैं जिससे इस निन्दनीय कुप्रथा को पुष्टि मिलती है।

(९) इस परिस्थिति को देख कर सार्वदेशिक आर्य प्र० सभा ने सन १९४४ की आर्य कांग्रेस द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव के आधार पर जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ की स्थापना इसी उद्देश्य से की कि वह इस अन्याय पूर्ण घृणित प्रथा को मिटाने के लिये सुसंगठित रूपसे उद्योग करे, इस सभा का कार्यालय अजमेर में है, उसमें ऐसे लड़के व लड़कियों के रजिस्टर रक्खे जाते हैं जिनके सरक्षक उनका अन्तर्जातीय विवाह करना चाहते हैं, यदि किसी मनुष्य को अपनी कन्या के लिए वर चाहिये तो कार्यालय से उसके पास ५ योग्य वरों के नाम पता आदि सहित भेजे जाते हैं जिससे वह उनके साथ पत्र-व्यवहार करके योग्य वर तलाश कर सके, इसी प्रकार जिसको अपने लड़के के लिये कन्या चाहिये उसके पास ५ कन्याओं के नाम पता आदि सहित भेज दिये जाते हैं और प्रकार भी ऐसे विवाहों के लिये सुविधा दी जाती है।

इस संघ का यह भी उद्देश्य है कि गुरुकुलों, तथा डी० ए० वी० कालिजों के विद्यार्थियों को ऐसे व्रत धारण कराने का यत्न करे कि वे अपने विवाह जात पांत का विचार छोड़ कर करेंगे। तथा आर्यकुमार परिषद् और आर्य वीर दल के सहयोग से आर्य कुमारों से इसी प्रकार के व्रत लिये जाने का यत्न करें।

यह कार्य बड़े महत्व का है, और आर्य-समाज की उन्नति तथा देश का सुधार बहुत कुछ इस पर निर्भर है। हमको आशा करनी चाहिये कि आर्य समाजी तथा अन्य विचारशील और सुधार प्रेमी सज्जन तन मन धन से इस संघ की सहायता करेंगे। संघ को स्थापित हुए लग-भग एक वर्ष हुआ। अभी तक यदि अधिक कार्य नहीं हो सका तो उसका कारण यही है कि आर्य समाजों से उसको पूरा सहयोग नहीं प्राप्त हुआ। आपके सामने इस सम्मेलन में कुछ प्रस्ताव रखे जावेंगे। आशा है कि आप उन पर विचार करके ऐसे निश्चय पर पहुंचेंगे कि जिससे यह महत्वपूर्ण कार्य सफल हो सके। और इसके सदस्यों की संख्या बढ़े। संघ के सदस्य को यह प्रतिज्ञा करनी पड़ती है कि वह अपनी सन्तान का विवाह जन्मगत जाति पाति का विचार छोड़कर करेगा और उसको ३) वार्षिक चन्दा देना होगा। जो लोग ऊपर लिखी प्रतिज्ञा न कर सकें परन्तु संघ के उद्देश्यों से सहानुभूति रखें वे सहायक बन सकते हैं जिनको १) वार्षिक देना होता है।

अन्त मे ईश्वर से प्रार्थना है कि वह हमको ऐसी सुबुद्धि देवे कि हम इस झूंठे भेद भाव को छोड़कर सबके साथ न्याय और प्रेमपूर्वक वर्ताव करें। ओं शम्। —गंगाप्रसाद

[यह लेख श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी ने दीवान हाल आर्य समाज देहली के वार्षिकोत्सव के अवसर पर १-२-४७ को आयोजित जाति भेद निवारक आर्य परिवार सम्मेलन के लिये लिखा था जिसमें उनसे अध्यक्ष पद के लिये प्रार्थना की गई थी। अस्वस्थता के कारण वे स्वयं तो न आ सके पर उनका भाषण सम्मेलन में पढ़कर सुना दिया गया था। सम्मेलन बड़े समारोह से मेरे प्रधानत्व में हुआ। यह भाषण महत्वपूर्ण होने के कारण प्रकाशित किया जा रहा है]

—धर्मदेव वि० वा०

जाति भेद निवारक आर्य परिवार सम्मेलन देहली।

दीवानहाल आर्य समाज देहली के वार्षिकोत्सव के अवसर पर १ फरवरी १६४७ को गान्धी-ग्राउण्ड में जाति भेद निवारक आर्य परिवार सम्मेलन श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी एम० ए० अध्यक्ष जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ की अस्वस्थता वश अनुपस्थिति में संघ के उपाध्यक्ष पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति की अध्यक्षता में बड़े उत्साह पूर्वक हुआ। पं० धर्मदेव जी ने अपने भाषण में जाति भेद की हानियों का निर्देश करते हुए समस्त आर्यों से उसके क्रियात्मक रूप से प्रबल विरोध का अनुरोध किया। श्री आचार्य भद्रसेन जी संचालक जाति भेद निवारक आ० प० संघ अजमेर, पं० मदनमोहन जी वेदालङ्कार विद्यासागर (आन्ध्र), श्री कर्मचन्द्र जी मन्त्री दलितोद्धार सभा, श्रीदेवव्रत जी धर्मेन्दु, श्री गुलाबराय जी एम० ए०, पं० रामचन्द्र जी जिज्ञासु, श्री गोविन्दराम हासानन्द जी आदि महानुभावों ने प्रभावजनक भाषण देते हुए निम्न प्रस्ताव रक्खे जो सर्व सम्मति से स्वीकृत हुए। देहली प्रान्त में कार्य संचालनार्थ जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ की शाखा देहली में स्थापित होने की घोषणा की गई जिसके अध्यक्ष पं० धर्मदेव जी वि० वा० और मन्त्री श्री गोविन्दराम जी हासानन्द अस्थायी रूप से (नियमित निर्वाचन तक) नियत किये गये।

१-२-४७ को होने वाले जाति भेद निवारक आर्य परिवार सम्मेलन देहली में स्वीकृत प्रस्ताव निम्न प्रकार हैं:—

प्रस्ताव सं० १

यह सम्मेलन अखिल भारतीय आर्य कुमार परिषद्, आर्य वीर दल और भारतवर्ष के समस्त गुरुकुलों से व दयानन्द एंग्लोवैदिक कालिजों तथा कन्या महाविद्यालयों से अनुरोध करता है कि वे वैदिक धर्म और संस्कृति की उन्नति को दृष्टि में रखकर आर्य कुमारों को यह व्रत धारण करावें कि वे अपने विवाह जन्मगत जाति पांति का विचार छोड़कर आर्य विवाह विधान के अनुसार करें और उनसे लिखित व्रत पत्र लेकर जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ के कार्यालय में भेज दिया करें।

प्रस्ताव सं० २

यह सम्मेलन श्रीमती सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा और समस्त आर्य प्रतिनिधि सभाओं तथा प्रादेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, बिलोचिस्तान, सिन्ध का ध्यान इस ओर आकर्षित करता है कि वैदिक धर्म की उन्नति और सच्ची वर्ण व्यवस्था स्थापित करने के लिये तथा समाज के संगठन की दृष्टि से वर्तमान अन्याय पूर्ण और शुद्धि दलितोद्धार आदि के बाधक महा हानिकारक जन्मगत जाति भेद को दूर करने की महती आवश्यकता है जिसके लिये आर्य जनता की मांग और सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा की अनुमति से और उसकी अध्यक्षता में जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ की स्थापना की गई। यह सम्मेलन समस्त सभाओं से जिनका ऊपर वर्णन है प्रार्थना करता है कि वे अपने उपदेशकों और प्रचारकों को आदेश करें कि वे पूर्वोक्त संघ के सदस्य और सहायक बढ़ाने के लिये पूरा उद्योग करें। आर्य

नर नारियों से भी यह सम्मेलन निवेदन करता है कि वे जाति भेद की भयंकर हानियों को दृष्टि में रखते हुए इस संघ के सदस्य बनकर इसकी प्रत्येक प्रकार से सहायता करें।

प्रस्ताव सं० ३

यह सम्मेलन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, समस्त आर्य प्रतिनिधि सभाओं तथा अन्य प्रसिद्ध आर्य संस्थाओं के अधिकारियों तथा अन्तरंग सदस्यों से सानुरोध प्रार्थना करता है कि वह अवश्य जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ के सदस्य बनें जिससे सर्व साधारण आर्य जनता उनका अनुकरण कर संघ के सदस्य बनने में पूर्ण उत्साह से भाग ले सके।

प्रस्ताव सं० ४

यह सम्मेलन कांग्रेस और आर्य समाज के सुप्रसिद्ध नेता और दयानन्द एंग्लो वैदिक कालिज ट्रस्ट और मैनेजमेंट सोसायटी के मन्त्री श्री जवाहरलाल जी रोहतगी को बधाई देता है कि उन्होंने अपने सुपुत्र श्री डा० महेन्द्र रोहतगी का विवाह स्व० पं० कपिलदेव मालवीय की सुपुत्री सौभाग्यवती सुशीला के साथ करके जनता के सामने जाति बन्धन तोड़ने का एक आदर्श दृष्टान्त रखा है। यह सम्मेलन वर और वधू को भी आशीर्वाद देता हुआ उनके गृहस्थ जीवन के लिये मंगल कामना करता है। इसी प्रकार अन्य जिन महानुभावों ने भी संघ के द्वारा या स्वतन्त्र रूप से जन्मगत जाति पांत को तोड़कर विवाह किये हैं सभा उन्हें भी धन्यवाद देती है और उनके पारिवारिक जीवन की भी मंगल कामना करती है।

आर्य कुमार जगत्

हमारी धार्मिक परीक्षायें

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् द्वारा संचालित सिद्धान्त सरोज, रत्न, भास्कर, शास्त्री आदि की परीक्षायें इस वर्ष भारत के विभिन्न केन्द्रों में ता० २ और ९ फरवरी को सकुशल सम्पन्न हो गई हैं। इस वर्ष डाकखानों की हड़ताल तथा अन्य कई कारणों से परीक्षाओं का चार्ज देहली से मेरे पास कई महीने बाद आ सका तथा उसके बाद भी भारत के अनेक भागों में साम्प्रदायिक वातावरण विक्षुब्ध रहने के कारण अनेक स्थानों से आवेदन पत्रादि समय पर नहीं आ सके, फिर भी बड़े हर्ष की बात है कि हमारे कार्यालय के सतत प्रयत्न और आन्दोलन से इस वर्ष इतने अधिक छात्र इन परीक्षाओं में सम्मिलित हुए जितने इससे पूर्व आज तक सम्मिलित नहीं हुए थे। गत वर्ष भारत भर में परीक्षा केन्द्रों की संख्या १०६ थी। इस वर्ष केन्द्रों की संख्या १४४ तक पहुंच गई। इसी प्रकार गत वर्ष लगभग २५०० छात्र इन सब परीक्षाओं में बैठे थे। इस वर्ष आवेदन पत्रों की संख्या लगभग ३१०० से अधिक हो गई है। प्रत्येक परीक्षा में जितने छात्रों ने आवेदन पत्र भरे हैं उनकी संख्या निम्न प्रकार है:-

सिद्धान्त सरोज में—१९०७
सिद्धान्त रत्न में—८५९
सिद्धान्त भास्कर में—१७१
सिद्धान्त शास्त्री में—११४

आशा है यदि अधिक प्रयत्न किया जाय और देश भर की आर्य समाजें, आर्य संस्थायें और आर्य कुमार इस धर्म प्रचार के कार्य में सहयोग दें तो इन परीक्षाओं का प्रचार बहुत अधिक हो सकता है तथा परीक्षार्थियों की संख्या कई सहस्रों पर पहुँच सकती है, क्योंकि भारत भर के लिये वैदिक धर्म की और कोई परीक्षायें इतनी सरल और इतनी व्यापक नहीं हैं। आशा है कि सब भाई बहिनें इन परीक्षाओं के प्रचार में सब प्रकार से सहयोग देकर हमारा हाथ बटायेंगी।

निवेदक:—डा० सूर्यदेव शर्मा,
साहित्यालंकार, सि० शास्त्री,
एम.ए., डी. लिट् अजमेर।

आर्यकुमार-परिषद् की परीक्षाएँ

(ले०—श्री प० हरिशङ्करजी शर्मा, सं० 'आर्यमित्र')

अखिल भारतवर्षीय आर्य्यकुमार-परिषद् की परीक्षाएँ बहुत लोकप्रिय हो गई हैं। इन परीक्षाओं से सब से बड़ा लाभ यह होता है कि परीक्षार्थियों को अपने धार्मिक ग्रन्थों के अध्ययन का अवसर मिल जाता है। आर्य्यकुमार और आर्य्यकुमारियाँ सब ही इन परीक्षाओं में बैठते और सफल होते हैं। कुमार और कुमारियां ही क्यों, प्रौढ़ और वृद्ध भी इन परीक्षाओं में बैठें, तब भी उन्हें लाभ ही होगा। यों लोगों को स्वाध्याय के लिए समय नहीं मिलता। परीक्षाओं के बहाने उनके लिए अध्ययन करना आवश्यक और अनिवार्य हो जायगा। हम चाहते हैं कि इन परीक्षाओं में अधिकाधिक आर्य पुरुष और देवियां भाग लें और अपने स्वाध्याय की प्रवृत्ति

को बढ़ावें। स्वाध्याय की कमी से आर्य्यसमाज का बड़ा अहित हो रहा है। यह कमी इन परीक्षाओं द्वारा पूरी की जा सकती है। आज कल परीक्षाओं के संयोजक सुप्रसिद्ध विद्वान्, कवि, व्याख्याता और शिक्षा-शास्त्री श्री पं० सूर्यदेव शर्म्मा एम. ए., डी. लिट., वाइस प्रिंसिपल, डी. ए. वी. कालिज, अजमेर हैं। उनके तत्वावधान में यह संस्था अच्छा कार्य कर रही है। नियम परीक्षा-कोर्स आदि सब चीजें शर्म्मा जी को अजमेर के पते पर लिखने से मिल सकती हैं।

[श्री पं० हरिशङ्कर जी शर्मा ने आर्यकुमार परिषद् की परीक्षाओं के विषय में जो विचार उपर्युक्त लघु लेख में प्रकाशित किये हैं हम उनका हार्दिक समर्थन करते हुए समस्त आर्य कुमार कुमारियों, युवक युवतियों और वृद्धावस्था के उत्साही नर नारियों से भी अनुरोध करते हैं कि वे इन परीक्षाओं में सम्मिलित हो कर लाभ उठावें और अपनी स्वाध्यायशीलता की प्रवृत्ति को बढ़ाएँ। आर्यकुमार परिषद् का सौभाग्य है कि श्री डा० सूर्यदेव जी शर्मा जैसे सुयोग्य महानुभाव इसके परीक्षा मन्त्री हैं जो बड़े उत्साह से अपने कर्तव्य का पालन कर रहे हैं।

सम्पादक 'सार्वदेशिक' तथा का० प्रधान अ० भा० आर्यकुमार परिषद्]

धार्मिक परीक्षाओं में परिवर्तन

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् की ओर से प्रति वर्ष भारत में सि० सरोज, रत्न, भास्कर, शास्त्री की जो परीक्षायें हुआ करती हैं उनको अधिक उपयोगी बनाने के लिये परीक्षा समिति का विचार है कि उनके नाम तथा पाठ्यक्रम आदि में कुछ विशेष परिवर्तन किये जायें, इस लिये जो सज्जन इस विषय में कुछ सुझाव उपस्थित करना चाहें तो वे निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर रूप में शीघ्र ही मेरे पास भेज दें ताकि परीक्षा समिति उन पर विचार कर सके:—

(१) परीक्षायें ४ ही रखी जायें (जैसी आज कल हैं) या तीन या केवल दो ?

(२) उनके नाम यही रहें या क्या हों ?

(३) परीक्षायें वर्ष में दो बार हुआ करें या एक ही बार ?

(४) उनके पाठ्यक्रम में धार्मिक ग्रन्थों के अतिरिक्त, इतिहास, भूगोल आदि कुछ उपयोगी विषय और रखे जायें अथवा नहीं।

(५) इनका माप दण्ड (Standard) कुछ और ऊँचा किया जाये अथवा बालक परीक्षार्थियों को दृष्टि में रखते हुए ऐसा ही रखा जाये।

अन्य कोई उपयोगी सुझाव।

निवेदकः—सूर्यदेव शर्मा, परीक्षा मंत्री।
आ० कु० परिषत् अजमेर

आर्य जगत

आर्य समाज दीवानहाल का वार्षिकोत्सव

आर्य समाज दीवान हाल देहली का ६२वां वार्षिकोत्सव ३१ जनवरी व १, २ फरवरी १९४७ ई० को बड़े समारोह से मनाया गया। ३१ जनवरी को सायंकाल ४ बजे से नगर कीर्तन आर्यसमाज दीवान हाल से आरम्भ हुआ। १, २ फरवरी १९४७ ई० को गांधी मण्डप में उत्सव मनाया गया। इस अवसर पर श्री पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज, श्री० स्वा० स्वतंत्रानन्द जी, श्री० स्वा० ब्रह्मानन्द जी सरस्वती, श्री०

आचार्य प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति, श्री० पं० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार आदि महानुभावों के भाषण व उपदेश हुए।

शनिवार ता० १ फरवरी की दोपहर २ बजे से जाति-भेद निवारक आर्य परिवार सम्मेलन श्री० प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति के सभापतित्व मे हुआ। कई महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास किये गये।

रविवार ता० २ फरवरी १९४७ ई० को देहली की समस्त आर्य समाजों तथा अन्य संस्थाओं की ओर से सिन्ध के विजयी सत्याग्रही नेताओं की सेवा मे अभिनन्दन पत्र भेंट किया गया। अभिनन्दन पत्र श्री० डा० देशबन्धु जी गुप्त मेम्बर केन्द्रीय धारासभा ने पढ़ा तथा श्री० महात्मा नारायण स्वामी जी व श्री० पं० लक्ष्मीदत्त जी की सेवा में समर्पित किया। इसके पश्चात् सत्यार्थ प्रकाश रक्षा सम्मेलन श्री० पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी के सभापतित्व में हुआ, इसके अतिरिक्त भारतीय रक्षा सम्मेलन डा० युद्धवीरसिंह जी, सर्व धर्म सम्मेलन, श्री बालकृष्ण जी शर्मा 'नवीन' और दलितोद्धार सम्मेलन तथा शुद्धि सम्मेलन श्री प० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० मन्त्री सार्व देशिक सभा के सभापतित्व में हुए।

नवनीतलाल ऐडवोकेट मन्त्री
आर्यसमाज, दीवानहाल

आवश्यक विज्ञप्ति

सार्व देशिक सभा का आगामी वार्षिक अधिवेशन २०-४-४७ को देहली में होगा। इसके साथ ही १९-४-४७ को देहली में सार्वदेशिक सभा के तत्वावधान में आर्य समाज के भावी कार्यक्रम तथा प्रचार प्रणाली में आवश्यक परिवर्तन पर विचार करने के लिए आर्य नेताओं की एक कान्फ्रेंस होगी।

गङ्गाप्रसाद उपाध्याय एम. ए. मन्त्री,
सार्वदेशिक आ० प्र० सभा, देहली।

गाजियाबाद में वेद कथा

१३ से १९ फर्वरी (ऋषि बोधोत्सव) तक श्री प० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति आर्य समाज मन्दिर गाजियाबाद मे रात्रि ८ से ९ बजे तक वेद कथा करेंगे और कथा के पश्चात् श्री रामचन्द्र जी त्यागी संगीत विशारद के भजन हुआ करेंगे। सब धर्मप्रेमी सप्रेम निमन्त्रित हैं।

जनार्दन आर्य मन्त्री
आर्य समाज गाजियाबाद

गुरुकुल झज्झर (जिला रोहतक) की रजत जयन्ती

इस गुरुकुल का रजत जयन्ती महोत्सव २१ से २३ फर्वरी तक (शुक्र, शनि, रवि) बड़े समारोह से मनाया जाएगा। विविध सम्मेलन होंगे। ८ से २३ फर्वरी तक ब्रह्मपारायण महायज्ञ होगा। बड़े २ साधु संन्यासी विद्वान् निमन्त्रित किये गये हैं। सब गुरुकुल प्रेमी सम्मिलित होकर लाभ उठायें।

प्रियव्रत ठेकेदार ब्र० भगवानदेव छोटूराम राठी
स्वागताध्यक्ष, आचार्य मन्त्री

आर्य समाज दाल बाजार लुधियाना का वार्षिकोत्सव

यह उत्सव १७ से २३ फरवरी तक बड़े समारोह से मनाया जाएगा। १७ से २० फर्वरी तक रात्रि ८॥ से १० तक श्री प० रामचन्द्र जी देहलवी की कथा होगी। प० धर्मदेव जी विद्या-

वाचस्पति, डा० भगतराम जी, प० चन्द्रमणि जी विद्यालङ्कार, प० यशपाल जी सिद्धान्तालङ्कार, पं० सोमदत्त जी विद्यालङ्कार, ला० देवीचन्द्र जी एम० ए०, प० ज्ञानचन्द्र जी बी० ए० आदि महानुभावों के व्याख्यान होंगे। २४ फर्वरी को मध्याह्न आर्य स्त्री समाज का उत्सव होगा।

रामरत्न शर्मा मन्त्री

आर्यसमाज लोहारू का वार्षिकोत्सव

यह उत्सव २३, २४ फर्वरी को समाज मन्दिर में होगा। आर्य समाज मन्दिर का उद्घाटन लोहारू के नवाब साहब करेंगे। बड़े २ साधु संन्यासियों और विद्वानों को व्याख्यान तथा भजनार्थ निमन्त्रित किया गया है।

भगवन्तसिंह आर्य, मन्त्री

ब्रिटिश अफसरों की सभा में 'भारत के प्राचीन ज्ञान' पर भाषण

गत १३ दिस० को प० धर्मदेव जी विद्या-वाचस्पति का एक व्याख्यान ब्रिटिश अफसरों की 'The West meets East' नामक क्लब में (जो आकिनलेक हाल क्वीन्सवे नई देहली में है) 'वैदिक धर्म और आर्य समाज' पर हुआ था। उसी क्लब के अधिकारियों की प्रार्थना पर प० धर्मदेव जी ने गत ७ फर्वरी को सायं ७॥ बजे मि० ऐलन् की अध्यक्षता में 'Ancient Lore of India' (भारत का प्राचीन ज्ञान) इस विषय पर वेद, उपनिषद् और गीतादि के आधार पर १॥ घण्टे तक अंग्रेजी मे भाषण दिया और श्री शङ्कराचार्य के अद्वैतवाद, प्राचीन शिक्षा प्रणाली आदि विषयक उनके प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर दिया। क्लब के सदस्यों ने भाषण को बहुत पसन्द किया और उससे वे बहुत प्रभावित हुए। यह प्रसन्नता की बात है कि पाश्चात्य लोगों में भारतीय ज्ञान को प्राप्त करने की रुचि बढ़ रही है।

आर्यसमाज का अंग्रेजी दैनिक पत्र निकलेगा।

श्रीमती सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा ने अपनी बैठक ६।२।४७ में निम्न प्रस्ताव स्वीकृत किया है:०

विज्ञापन का विषय स० ४ मन्त्री सभा के निम्न प्रस्ताव प्रस्तुत होकर पढे गये।

(१) सार्वदेशिक सभा के तत्वावधान में अंग्रेजी का दैनिक निकाला जाये और उसके लिये लिमिटिड कम्पनी की योजना की जाये।

(२) सभा के प्रकाशन विभाग को व्यापारिक ढंग पर चलाया जाये।

आर्य जगत् में प्रस्ताव स० १ के सम्बन्ध में जो अनुकूल प्रतिक्रिया हुई थी उससे भी सभा को सूचित किया गया।

निश्चय हुआ कि वर्तमान परिस्थिति को देखते हुये यह सभा आवश्यक समझती है कि अंग्रेजी का एक दैनिक पत्र निकाला जाये और उसके प्रबन्ध के लिये १० लाख रुपये की इस सभा के तत्वावधान में एक लिमिटिड कम्पनी बनाई जाये और जब ४ लाख रुपया एकत्र हो जाये तब फिर सभा के सामने रिपोर्ट प्रस्तुत की जाये। यह भी निश्चय हुआ कि इस प्राथमिक आन्दोलन के लिये निम्न सज्जनों की उपसमिति बनाई जाये:०

(१) श्री पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय मन्त्री सभा (संयोजक)
(२) श्री डा० नारायण दत्त जी
(३) श्री चौ० देशराज जी
(४) श्री डा० हरदारायणप्रसाद जी
(५) श्री मिहिरचन्द्र जी धीमान्।

इससे पहले मैंने पत्रों में कुछ लेख दिये थे और मुझे हर्ष है कि सम्पादक महोदयों और आर्य जनता की ओर से पूरा पूरा स्वागत किया गया है। कुछ सज्जनों ने अब तक (१४७५०) के हिस्से लेने का वचन दिया है। मै पहले लिख चुका था कि जब तक सभा की स्वीकृति न हो मै हिस्सों के खरीदने का कार्य आरम्भ नहीं कर सकता था। मुझे मालूम था कि एक अच्छे दैनिक पत्र की आवश्यकता सब आर्य समाजें तथा आर्य सज्जन अनुभवकर रहे हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि दैनिक पत्र के न होने से हमारे आन्दोलन में अत्यन्त बाधा पड़ती है। जिन सभाओं के पत्र हैं उनकी छोटी छोटी बातें जनता तक सुगमता से पहुंच जाती हैं। हमारे बड़े २ आन्दोलनों के लिये भी दूसरे पत्र २।४ लाइनें देने की कृपा नहीं करते।

आज कल आन्दोलन का युग है जिसके पास पत्र नहीं उसके पास सफलता का कोई साधन नहीं। अब चूंकि सार्वदेशिक सभा ने यह प्रस्ताव पास कर लिया है आर्य जनता और आर्य समाजों से प्रार्थना है कि बिना समय को नष्ट किये शीघ्राति शीघ्र इस कार्यालय में लिख भेजें कि वे १०), १०) के कितने कितने हिस्से लेना स्वीकार करते हैं। जब तक यहां से मांग न जाये कोई सज्जन रुपया न भेजें। जो सज्जन निश्चित रूप से हिस्से न खरीदना चाहें वे भी न लिखें जिससे झूठी आशा न बाँधी जा सके। यह भी स्मरण रहे कि यह व्यापार का सौदा नहीं है। परोपकार का काम है और आर्य समाज का काम है। हम यह चाहते है कि ये हिस्से आर्य समाजें अधिक लें या आर्य सज्जन ही जिससे आर्य समाज के उद्देश्यों की अधिक पूर्ति हो सके। हम यह नहीं चाहते कि शेयरों की खरीदारी बाहर के लोगों तक जाये। याद रखना चाहिये कि दस लाख से कम में काम न चलेगा और १० लाख रुपया उसी समय जमा हो सकता है जब प्रत्येक आर्य और प्रत्येक आर्य समाज अपनी अधिक से अधिक शक्ति लगा कर हिस्से खरीदें। यदि समाजों की ओर से उपेक्षा हुई और समय पर उचित राशि पूरी न हुई तो सभा का पास किया हुआ प्रस्ताव निरर्थक सिद्ध होगा।

मैं आशा करता हूँ कि अपील में पूरी सफलता प्राप्त होगी। समस्त समाजों के मन्त्री महोदयों को अपनी अन्तरंगों में इस पर विचार करना चाहिये।

गंगा प्रसाद उपाध्याय, एम० ए०
मन्त्री,
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

साहित्य समीक्षा

(समालोचनार्थ पुस्तक की २ प्रतियां भेजनी आवश्यक हैं)

वैदिक ज्योतिष शास्त्र—लेखक श्री प० प्रिय रत्न जी आर्ष । प्रकाशक—श्री मन्त्री जी सार्व० आ० प्र० सभा, श्रद्धानन्द बाजार, देहली। मू० १॥)

श्री प० प्रियरत्न जी आप जो अब सन्यासाश्रम में प्रवेश करके स्वामी ब्रह्ममुनि जी के नाम से प्रसिद्ध है आर्य जगत् के उच्च कोटि के अनुसन्धानप्रिय विद्वान है । ज्योतिष की गणना वेदाङ्गों मे सभी विद्वान् करते रहे हैं किन्तु उसका मूल, वेदों मे किस प्रकार पाया जाता है, आकाश मण्डल में सूर्य, चन्द्र, नक्षत्रों, ग्रहों, तारों आदि की क्या स्थिति और स्वरूप वेदों मे वर्णित है, ध्रुव, धूमकेतु, पृथ्वी आदि का स्वरूप क्या है ? सूर्य ग्रहण और चन्द्र ग्रहण क्यों होते हैं इत्यादि विषयों का वैदिक मन्त्रों द्वारा जितना उत्तम निरूपण इस पुस्तक मे किया गया है उतना अन्यत्र मैंने नहीं पाया। लोकमान्य तिलक तथा अन्य विद्वानों के वेदोत्पत्तिकाल विषयक विचारों का भी सप्रमाण खण्डन किया गया है । यह पुस्तक प्रत्येक स्वाध्याय प्रेमी के लिए जो वेदाङ्ग ज्योतिष के सच्चे स्वरूप को जानना चाहता है विशेष सग्रहणीय है। इस पुस्तक के निर्माण और अनुसन्धान में श्री आर्ष जी ने जो परिश्रम किया है उसके लिए हम उनका हार्दिक अभिनन्दन करते हैं। प्रत्येक आर्य समाज के पुस्तकालय में इसकी १ प्रति अवश्य होनी चाहिए।

महर्षि दयानन्द और चौदहवां समुल्लास—लेखक पं० नरेन्द्र जी।

मिलने का पता—आर्य समाज सुलतान बाजार, हैदराबाद दक्षिण मूल्य ।॥)

सत्यार्थ प्रकाश रक्षा आन्दोलन के अवसर पर प० नरेन्द्र जी ने इस पुस्तक को लिख कर आर्य समाज की अच्छी सेवा की है । मुस्लिम लीग की आर्य समाज से टक्कर, सत्यार्थ प्रकाश की रचना का प्रयोजन, चौदहवां समुल्लास कब लिखा गया ? क्या कुरान ईश्वरीय है ? जन्नत, इस्लाम मे बहुविवाह और स्त्रियों का स्थान, इत्यादि पर प्रकाश डालते हुए योग्य लेखक ने सत्यार्थ प्रकाश के चतुर्दश समुल्लास में की गई आलोचना की यथार्थता और नवीन विचारशील कुरान के भाष्यकारों पर महर्षि के विचारों की छाप को प्रमाणित किया है। तीसरे परिच्छेद में 'स्वामी दयानन्द दूसरों की दृष्टि में' और चतुर्थ परिच्छेद में 'सत्यार्थ प्रकाश के प्रति' भारत और विदेशों के प्रसिद्ध नेताओं द्वारा समर्पित श्रद्धाञ्जलियों का समह है ।

श्रद्धाञ्जलियों के समर्थक विद्वानों के नाम के साथ २ यह उल्लेख भी होना चाहिए था कि मूल रूप से किस पुस्तक वा पत्र मे वह श्रद्धाञ्जलि अर्पित की गई थी। ऐसा करने से इस संग्रह की उपयोगिता अधिक बढ़ जाती। आशा है दूसरे संस्करण में ऐसा ही कर दिया जाएगा । पुस्तक के पृ० ५ पर स्व० प्रो० मुहम्मदअली एम० ए० के निम्न शब्द Thoughts on Pakistan P, 301 से उद्धृत किए गए हैं जो सुशिक्षित मुसलमानों की भी मतान्धता को प्रकट करते हैं:—'Yes according to my Religion and creed I do hold that adulterous and fallen Musalman be better than Gandhi.'

अर्थात् अपने मत और विश्वास के अनुसार मैं मानता हूँ कि एक गिरे से गिरा दुराचारी मुसलमान भी गाँधी जी से अच्छा है। यह पुस्तक उपयोगी तथा संग्रह करने योग्य है।

युगान्तर का स्वाधीनता अङ्क :—

'युगान्तर' कानपुर से प्रकाशित होने वाला एक राष्ट्र भाषा हिन्दी का साप्ताहिक पत्र है। इस का स्वाधीनता विशेषाङ्क २६ जनवरी सन् १९४७ को श्री रामकुमार जी शुक्ल के सम्पादकत्व में बड़ी सजधज के साथ लगभग ६० पृष्ठों में प्रकाशित हुआ है जिसमें अमेरिका की स्वाधीनता, रूस की स्वाधीनता, भारत का गांधीवादी विधान, भारतीय क्रान्ति का प्रारम्भिक इतिहास, भावनाओं में क्रान्ति की आवश्यकता, १९४२ में बलिया कैसे स्वाधीन हुआ, आजाद हिन्द फौज, भारत में सशस्त्र क्रान्ति की लहर इत्यादि विषयों पर उत्तम ओजस्वी लेख तथा कविताएँ हैं। यह अङ्क विशेष रूप से उपयोगी है इसमें सन्देह नहीं। मूल्य ॥) है। ध० दे०

—●—

सत्यार्थ प्रकाश का इस्लाम पर प्रभाव

(लेखक—पं० धर्मदेवजी विद्यावाचस्पति, अध्यक्ष अनुसन्धान विभाग सा० सभा देहली)

गत अङ्क में मैंने सर सय्यद अहमद खां तथा मौ० मुहम्मदअली एम० ए० के क़ुरान के अनुवादों से कुछ उद्धरण देते हुए बताया था कि महर्षि दयानन्द की आलोचना तथा विचारों से प्रभावित हो कर उन्होंने किस प्रकार क़ुरान की नवीन युक्तियुक्त व्याख्या का प्रयत्न किया। उसी प्रसङ्ग में यह लेख लिखा जा रहा है)

पुनरुत्थान (Resur rection) की भी मौलवी मुहम्मदअली ने सर्वथा नवीन व्याख्या करते हुए भूमिका में लिखा है कि:—

"The different words which stand for the resurrection are in some sense also applicable to this life, the rising of the dead is sometimes their spiritual resurrection which was to be brought about by the preaching of the Prephet; the day of decision also signifies the triumph of truth and the vanquishment of the falsehood." (Introduction to the Holy Quarn P. XVII)

अर्थात् पुनरुत्थान के लिये प्रयुक्त भिन्न २ शब्द एक अर्थ में इस जीवन के साथ भी सम्बद्ध हैं। मृतकों का पुनरुत्थान पैगम्बर साहेब के प्रचार के परिणाम स्वरूप आध्यात्मिक पुनरुत्थान का सूचक है। निर्णय दिवस से तात्पर्य सत्य के विजय और असत्य के पराजय से है।

इसी प्रकार की नवीन व्याख्या को मौ० मुहम्मदअली ने उन सब स्थानों पर करने का यत्न किया है जो तर्क और विज्ञान के विरुद्ध अथवा असङ्गत प्रतीत होते हैं। विस्तार भय से अन्य उद्धरण देना यहां सम्भव नहीं।

मौ० अब्दुल कलाम आज़ाद कृत क़ुरान का अनुवाद:—

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में क़ुरान में प्रतिपादित 'मार डालो तुम उनको जहां पाओ। क़तल से कुफ्र बुरा है। यहां तक उनसे लड़ो कि कुफ्र न रहे और होवे दीन अल्लाह का (क़ुरान २।१७४-१७८) इत्यादि आदेशों की आलोचना करते हुए लिखा था कि:—

"जो क़ुरान में ऐसी बातें न होतीं तो मुसलमान लोग इतना बड़ा अपराध जो कि उन्होंने अन्य मत वालों पर किया है न करते और बिना अपराधियों को मारना उन पर बड़ा पाप है। (समीक्षा स० ३५)

अब देखिये पक्षपात की बातें कि जो मुसलमानों के मजहब में नहीं, उनको काफ़िर ठहराना, उनमें श्रेष्ठों से भी मित्रता न रखने और मुसलमानों में दुष्टों से भी मित्रता रखने के लिए उपदेश करना ईश्वर को ईश्वरता से बहिः कर देता है। इससे यह क़ुरान, क़ुरान का खुदा और मुसलमान लोग केवल पक्षपात अविद्या से भरे हुए हैं।" इत्यादि

(समीक्षा स० ४८)।

वर्तमान काल में मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद न केवल कांग्रेस के भू० पू० अध्यक्ष के रूप में एक राजनैतिक नेता हैं बल्कि मुसलमानों के एक बड़े दल के धार्मिक गुरु भी हैं। उन्होंने

क़ुरान का उर्दू में एक अनुवाद किया है जिसके प्रथम भाग का "सय्यद बहदल हुसेन हाशिमी भागलपुरी" ने हिन्दी में अनुवाद 'क़ुरान और धार्मिक मतभेद' इस नाम से किया है उस में से निम्नलिखित थोड़े से उद्धरण दिये जाते हैं जिन पर मुझे महर्षि दयानन्द के विचारों की छाप स्पष्टतया प्रतीत होती है। मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद लिखते हैं:—

'संसार में ईश्वरोपासना और धर्म का मार्ग सर से पैर तक ईर्षा और द्वेष, घृणा और बर्बरता, हत्या और रक्तपात का मार्ग हो गया है। इस सम्बन्ध में क़ुरान ने जिन महान् बातों पर ज़ोर दिया है उन में तीन सब से स्पष्ट हैं।

(१) मनुष्य का कल्याण और उसकी मुक्ति उसके विश्वास और उसके कर्मों पर निर्भर है न कि सम्प्रदाय विशेष पर।

(२) मनुष्यमात्र के लिये ईश्वरीय धर्म एक ही है और एक समान सब को उसकी शिक्षा दी गई है। इसलिये धर्मों के अनुयायियों ने धर्म की एकता और उसके विश्वव्यापी तत्व को नष्ट कर जो बहुत से विरोधी और परस्पर लड़ने वाले जत्थे बना लिये हैं, यह साफ़ उनकी गुमराही है।

(३) धर्म की जड़ एकेश्वरवाद है, यानी एक विश्वम्भर प्रभु की सीधी उपासना। और सब धर्मप्रवर्तकों ने इसी की शिक्षा दी है। इसके खिलाफ़ जितने विश्वास और कर्म स्वीकार कर लिये गए हैं, वे सब असलीयत से हट जाने के नतीजे हैं।" (क़ुरान व धार्मिक मतभेद पृ० ४७–४८)

अनुवाद के पृ० ७६ पर हम मौलाना साहेब का निम्न लेख पाते हैं:—

'क़ुरान कहता है कि प्रत्येक ऐसे सच्चे व्यक्ति का जो ईश्वरीय-धर्म के मार्ग पर चलना चाहता है यह कर्तव्य है कि वह बग़ैर किसी भेदभाव के सब पैग़म्बरों, सब धर्मग्रन्थों और सब धर्मों के उपदेशों पर एक समान रूप से विश्वास करे और किसी एक से भी इन्कार न करे। उसका तरीक़ा यह होना चाहिए कि वह कहे कि 'सचाई जहां भी प्रकट हुई है और जिस किसी के भी मुख से प्रकट हुई है सचाई है और उस पर मेरा विश्वास है।" (क़ुरान और धार्मिक मतभेद पृ० ७६)

इसी पुस्तक में एक और स्थान पर लिखा है:-

"क़ुरान जब कहता है कि 'अल-इस्लाम' के अतिरिक्त और कोई धर्म परमात्मा के निकट मान्य नहीं हो सकता तो इसका मतलब यही होता है कि उस ईश्वरीय धर्म के सिवा जो एक ही है और जिसकी शिक्षा समस्त पैग़म्बरों ने समान रूप से दी है मनुष्य निर्मित कोई भी गिरोहबन्दी मान्य नहीं हो सकती।" (पृ० ६५)

"क़ुरान कहता था—मुक्ति और कल्याण का दार-मदार कर्मों पर है, वंश, जाति, सम्प्रदाय अथवा बाह्य रीति रिवाजों पर नहीं। यदि वे इस तथ्य को मान लेते, तो मुक्ति का द्वार बिना भेद भाव मनुष्यमात्र के लिए खुल जाता और किसी एक सम्प्रदाय की ठेकेदारी बाकी न रहती। लेकिन इस बात के लिये उनमे से कोई भी तैयार न था। पृ० १०२।

"क़ुरान कहता था, वास्तविक धर्म ईश्वरोपासना है और ईश्वरोपासना यह है कि बिना किसी और को बीच में लाये एक परमात्मा की सीधी उपासना की जाय।" पृ० १०३।

अब हम महर्षि दयानन्द जी के "क्या जैसे तुम (मुसलमान) अन्य मत वालों को काफिर कहते हो वैसे वे तुमको काफिर नहीं कहते हैं ? और उनके मत के ईश्वर की ओर से धिक्कार देते हैं फिर कहो कौन सच्चा और कौन झूठा ? जो विचार कर के देखते हैं तो सब मत वालों में झूठ पाया जाता है और जो सच है सो सब में एक सा, ये सब लड़ाइयां मूर्खता की हैं।"

(सत्यार्थ प्रकाश समु० १४ समीक्षा सं० १०)

'क्या कठोर दुःख देने वाला, दयालु, खुदा पापियों पुण्यात्माओं पर है अथवा मुसलमानों पर दयालु और अन्य पर दयाहीन है ? जो ऐसा है तो वह ईश्वर ही नहीं हो सकता। और पक्षपाती नहीं है तो जो मनुष्य कहीं धर्म करेगा उस पर ईश्वर दयालु और जो अधर्म करेगा उस पर दण्डदाता होगा तो फिर बीच में मुहम्मद साहेब और क़ुरान को मानना आवश्यक न रहा।" (समीक्षा स० ३२) इत्यादि शब्दों को पढ़ते और उनकी मौ० अब्दुल कलाम आज़ाद के ऊपर उद्धृत शब्दों के साथ तुलना करते हैं तो आश्चर्यजनक समानता प्रतीत होती है सिवाय इस बात के कि उन्होंने क़ुरान की आवश्यकता को स्वीकार किया है। पर साथ ही स्पष्ट लिखा है कि 'क़ुरान किसी नई मज़हबी गिरोहबन्दी का सन्देश लेकर संसार में नहीं आया, बल्कि वह विविध धर्मों की असली लड़ाइयों और झगड़ों से ससार को मुक्त कर उन सब को उसी एक मार्ग पर एकत्र कर देना चाहता है जो सब का एक सामान्य और सर्वसम्मत मार्ग है। क़ुरान बार २ कहता है कि जिस मार्ग पर मैं लोगों को बुलाता हूँ वह कोई नया मार्ग नहीं, और न सत्य का कोई नया मार्ग हो ही सकता है। मेरा मार्ग वही मार्ग है जो सनातन से चला आता है और जिसकी ओर सब धर्मों के प्रवर्तकों ने मनुष्य को बुलाया है।" (क़ुरान और धार्मिक मतभेद पृ० ७२)

ऐसी अवस्था में भी क़ुरान की ईश्वरीय ज्ञान के रूप में आवश्यकता नहीं रहती और वह सनातन ईश्वरीय ज्ञान की व्याख्यामात्र रह जाता है।

पाठक मौलाना आज़ाद के ऊपर उद्धृत शब्दों की स्व० मौलाना मुहम्मदअली एम० ए० के उन शब्दों के साथ जो उन्होंने महात्मा गान्धी जी के दाएं हाथ होते हुए भी एक कट्टर मुसलमान के रूप मे कहे थे और जिनमे महात्मा जी को आला अख़लाक़ (सदाचार) का मालिक मानकर भी एक बद अख़लाक़ (दुराचारी) मुसलमान से बदतर बताया गया था क्योंकि वे एक झूठे मज़हब के मानने वाले हैं और इस्लाम ही एक सच्चा मज़हब है तुलना करें तो उन्हें ज्ञात होगा कि उनमें कितना आकाश पाताल का अन्तर है।

सैय्यद अमीर अली:—

The Spirit of Islam नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ के लेखक सैय्यद अमीर अली P. C, LL. D., D. L, C I E. ने भी अपने ग्रन्थ मे यह दिखाने का यत्न किया है कि इस्लाम में अन्य मत वालों के प्रति घृणा वा जबर्दस्ती का उपदेश नहीं बल्कि उन्होंने यहां तक लिखने का साहस किया है—यद्यपि इसकी अयथार्थता को सैंकड़ों प्रबल प्रमाणों से सिद्ध किया जा सकता है कि:—

"Islam seized the sword in self-defence, and held it in self defence, as it will ever do. But Islam never

interfered with the dogmas of any moral faith, never persecuted, never eastablished an Inquisition. It never invented the rack or the stake for stifling difference of opinion, or strangling the human conscience or exterminating heresy." (The Spirit of Islam new edition London P. 218)

अर्थात् इस्लाम ने केवल आत्म रक्षार्थ तलवार का अवलम्बन किया और आगे भी ऐसा ही करेगा। किन्तु इस्लाम ने किसी मत के सिद्धान्तों मे हस्ताक्षेप नही किया, कभी किसी पर अत्याचार नहीं किया और ईसाइयों की तरह इन्क्विज़ीशन आदि की स्थापना नहीं की। मत-भेद आदि दबाने के लिये इसने कभी पत्थर या शूली आदि का आश्रय नहीं लिया न किसी के आत्मा की आवाज़ को कुचलने या विरुद्ध मत नष्ट करने के लिए ऐसा किया।

"The Status of Women in Islam" शीर्षक अध्याय में सैय्यद अमीर अली ने यह सिद्ध करने का यत्न किया है कि इस्लाम साधारणतया एक पत्नी विवाह का ही समर्थक है बहु विवाह का नहीं। वे अपनी सब स्त्रियों के साथ एक जैसा व्यवहार करने विषयक आयत को उद्धृत करके लिखते हैं:—"This furnishes another argument against those Mohammedans who hold that the developed laws of Islam allow plura-lity of wives" (The Spirit of Islam P. 246)

अर्थात् इससे उन मुसलमानों के विचार का खण्डन होता है जो कहते हैं कि इस्लाम के विकसित नियम बहुपत्नीत्व का अनुमोदन करते हैं।

श्री खुदाबख्श एम० ए० बी० सी० एल० के ग्रन्थ:—

मि० खुदाबख्श एम० ए०, बी० सी० एल० नामक सज्जन ने अपने "Essays Indian and Islamic" तथा Studies in Islam में मुसलमानों में प्रचलित मतान्धता (Fanaticism), बहु विवाह, तलाक तथा पर्दा पद्धति का प्रबल खण्डन करते हुए इन विषयों में सुधार की आवश्यकता को स्पष्ट रूप से बताया है।

"To our mind, the social corruption behind the Zenana is to a large extent, due to this system (of polygamy). It is a fruitful source of discard, strife, harassing litigations, the ruin of many wealthy families."

"I am confident that no thought ful man will disagree with me that these are defects most vital defects, which we must seriously attempt to remove and set right." (Essays Indian and Islamic by S. Khuda Buksh M. A. B. C. L. Bar at Law P. 256-258)

इत्यादि उनके शब्द विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं जिनमें उन्होंने बहु विवाहादि की हानियां दिखलाते हुए ऐसी बुरी प्रथाओं को दूर करने की सलाह दी है।

प्रो० मुहम्मद अली शुस्त्री के ग्रन्थ:—

मैसूर यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर शुस्त्री ने Out lines of Islamic Culture नामक पुस्तक दो भागों में लिखी है जिसमें उपसंहार करते हुए उन्होंने बताया है कि "It is difficult to prediot the future of

Islam as world religion, But it is certain that Islam as interpreted, taught and brought into practice by the conservative and orthodox Mullahs or Maulvies, can not endure long. Simlarly, the belief in Pirs and Fakirs (who though they may call themselves Sufis, exploit the masses) may have to end before long."

(Out lines of Islamic culture by Prof. M. A. Shushtery vol II P. 766)

अर्थात् विश्व धर्म के रूप में इस्लाम के भविष्य के विषय में कहना कठिन है किन्तु यह निश्चित है कि कट्टर पन्थी मुल्लाओं या मौलवियों द्वारा प्रतिपादित, प्रचारित अथवा क्रियात्मक रूप में परिणत इस्लाम देर तक नहीं ठहर सकता। इसी तरह पीरों और फकीरों में विश्वास (चाहे वे अपने को सूफी कहकर अशिक्षित जनता को क्यों न बहकाते फिरें) को भी शीघ्र छोड़ना पड़ेगा इत्यादि।

प्रो० शुस्त्री ने मेरे तथा कई आर्य बन्धुओं के सम्पर्क मे आकर ऋषि दयानन्द के ग्रन्थ पढ़े थे और उनका एक बड़े सुधारक के रूप मे उल्लेख भी उन्होंने अपनी पुस्तक मे किया है। निस्सन्देह महर्षि दयानन्द के विचारो से प्रभावित होकर उन्होंने इस्लाम मे सुधार की आवश्यकता का अपने ग्रन्थों मे प्रतिपादन किया है। (शेष फिर)

सम्पादकीय

अलवर में अखिल भारतीय संस्कृत विश्वविद्यालय की योजना

हमें यह जान कर प्रसन्नता हुई है कि भारतीय विद्या प्रचार समिति आगरा के विशेष उद्योग तथा देश के अनेक गण्य मान्य नेताओं और विद्वानों के सहयोग से अलवर में एक अखिल भारतीय संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना की योजना बनाई गई है और इसे निकट भविष्य में क्रियात्मक रूप देने का प्रयत्न हो रहा है। वर्तमान युग के प्रवर्तकों में महर्षि दयानन्द ही थे जिन्होंने आर्य धर्म और संस्कृति की रक्षार्थ संस्कृत भाषा के ज्ञान को अत्यावश्यक समझ कर उसके अध्ययनार्थ सब आर्यों को विशेष रूप से प्रेरित किया था जैसे कि इसी अङ्क में प्रकाशित श्री प्रो० महेशप्रसाद जी के लेख में उद्धृत महर्षि के पत्रों से भी स्पष्ट है। यह महर्षि के ही विचारों से प्राप्त स्फूर्ति थी जिस से श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज (महात्मा मुन्शीराम जी) ने संस्कृत शिक्षा प्रचारार्थ गुरुकुल काङ्गड़ी की गङ्गा नदी के तट पर हरद्वार के निकट स्थापना की थी जो अब विश्वविद्यालय का रूप ग्रहण करके सुप्रसिद्ध हो चुका है। संस्कृत विश्वविद्यालय की वर्तमान योजना में भी हमें स्पष्ट रूप से महर्षि दयानन्द का अदृश्य हस्त दृष्टिगोचर हो रहा है। इस योजना के अनुसार शिक्षा का माध्यम विज्ञानादि विषयों के लिए भी सरल संस्कृत भाषा होगी यद्यपि हिन्दी और अंग्रेजी के लिये उचित स्थान दिया जायगा। वर्तमान शैली से विज्ञानादि विषयक साहित्य के निर्माणार्थ सुयोग्य कार्यकर्ता नियुक्त किये जाएंगे और उन द्वारा निर्मित ग्रन्थों के प्रकाशनार्थ युनिवर्सिटी प्रेस भी स्थापित किया जाएगा। कन्याओं और महिलाओं की शिक्षा के लिए भी विशेष प्रबन्ध उनकी आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुए किया जायगा। संस्कृत भाषी नर नारियों की एक आदर्श बस्ती भी विश्वविद्यालय के साथ साथ स्थापित करने का यत्न किया जाएगा। भारतीय संस्कृति और तत्वज्ञान के प्रचारार्थ विदेशों में प्रचारक भेजना भी इस विश्वविद्यालय के उद्देश्यों में से है। ब्रह्मचर्य के आधार पर शिक्षा देते हुए योग की शिक्षा का भी प्रबन्ध इस विश्वविद्यालय में किया जाएगा।

जिन पवित्र उद्देश्यों और शुभ संकल्पों के साथ इस विश्वविद्यालय की योजना बनाई गई है उनका हम हार्दिक अभिनन्दन करते हैं। अलवर के महाराज ने १ करोड़ के लगभग रुपया विश्वविद्यालयार्थ भवन, उद्यान, पुस्तकालयादि के रूप में दान और ५० हजार की वार्षिक सहायता का वचन देकर संस्कृत भाषा के प्रति जिस अद्भुत प्रेम का परिचय दिया है उसके लिए वे विशेष

धन्यवाद के पात्र हैं। इस विश्वविद्यालय के संचालक गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के अधिकारियों से भी परामर्श करते हुए यदि अपनी योजना को कार्यान्वित करने का प्रयत्न करेंगे तो आशा है उन्हें अधिक सफलता मिल सकेगी क्योंकि गुरुकुल विश्वविद्यालय ने संस्कृत की शिक्षा तथा प्रसार के लिए जो प्रयत्न गत ४५ वर्षों में किया है वह अभिनन्दनीय और अनुकरणीय है। हम संस्कृत विश्वविद्यालय के उद्देश्यों की पूर्ति में पूर्ण सफलता चाहते और इसके लिये जनता के सहयोग तथा भगवान् से शक्ति की प्रार्थना करते हैं।

जाति वैषम्य तथा अस्पृश्यता निवारणार्थ कांग्रेस मन्त्रिमण्डल का अभिनन्दनीय प्रयत्न

यह प्रसन्नता की बात है कि कांग्रेस मन्त्रिमण्डल बम्बई, मद्रास तथा संयुक्त प्रान्त मे जाति वैषम्य और विशेषतः अस्पृश्यता के निवारणार्थ प्रशंसनीय कार्य कर रहा है। बम्बई में इस प्रकार का ऐक्ट बन चुका है जो जाति भेद तथा अस्पृश्यता के कारण उत्पन्न सामाजिक प्रतिबन्धों को बहुत अंश तक दूर करेगा। मद्रास सरकार की ओर से भी ऐसे बिल धारा सभा में प्रस्तुत हैं जो हरिजनों के सार्वजनिक स्थानों, भोजनालयों तथा मन्दिरों मे प्रवेश विषयक वर्तमान प्रतिबन्धों को पर्याप्त मात्रा तक दूर करने मे समर्थ होंगे। संयुक्त प्रांत के प्रधान मन्त्री श्री गोविन्दवल्लभ पन्त ने भी सामाजिक प्रतिबन्ध निवारक (Social Disabilities Removal Bill) बिल धारा सभा में प्रस्तुत किया है जिससे न केवल हरिजनों किन्तु अन्य शिल्पकारों तथा गढ़वाल के आर्यों की अनेक डोला पालकी सम्इत्यादि विषयक कठिनाइयां भी बहुत कुछ दूर हो सकेंगी। श्री सम्पूर्णानन्द जी शिक्षा सचिव संयुक्त प्रान्त ने वोटरों की सूची मे जाति के उल्लेख न करने का आदेश दिया है और विद्यार्थियों के रजिस्टर में भी जन्म जाति के उल्लेख को अनावश्यक समझते हुए उसे हटवाने के प्रश्न पर वे विचार कर रहे हैं ऐसा ज्ञात हुआ है। जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ की ओर से उनके इस विषयक प्रयत्न का जैसे हमने अभिनन्दन किया है तथा इसे सब क्षेत्रों में लागू करने का अनुरोध किया है वैसे ही सम्पूर्ण आर्य जगत् की ओर से करना हम अपना कर्तव्य समझते हैं। ऐसे जाति वैषम्य निवारक प्रयत्नों से ही सच्ची राष्ट्रीयता के भाव का उदय होगा और संगठन शक्ति का विकास होगा। केन्द्रीय धारा सभा के सुयोग्य सदस्य श्रीयुत श्रीप्रकाश जी के हिन्दुओं की भिन्न २ जातियों में किये गये अन्तर्जातीय विवाहों को वैध घोषित करने विषयक प्रस्ताव का भी हम हार्दिक समर्थन करते हैं और आशा है सब विचारशील उदार महानुभावों का समर्थन उन्हें प्राप्त होगा।

मौलाना आज़ाद का धारा सभा में 'हिन्दुस्तानी' में भाषण

वर्तमान भारत सरकार के शिक्षा सचिव मौलाना अबुल कलाम आज़ाद ने केन्द्रीय धारा सभा में 'हिन्दुस्तानी' में पिछले दिनों भाषण दिया। इसको एक नई चीज समझा जा रहा है। ज्ञात हुआ है कि कई मुस्लिम लीगी सदस्यों ने इस पर उनका उपहास किया और कई प्रकार के अप्रसंगत प्रश्न किये। केन्द्रीय धारा सभा के अध्य-

ध्यक्ष ने एक मुस्लिम लीगी सदस्य के उत्तर में बतलाया कि उपनियमों के अनुसार केन्द्रीय धारा सभा में अंग्रेजी में ही भाषण देना आवश्यक है। मौ० आजाद को क्योंकि अंग्रेजी में बोलने का अभ्यास नहीं इसलिये विशेष रूप से उन्हें 'हिन्दुस्तानी' में भाषण करने की अनुमति दी गई है। हम समझते हैं कि भारतीयों में राष्ट्रीयता की भावना की वृद्धि के साथ२ विशेषतः जब कि सरकार की बागडोर श्री पं० जवाहर लाल जी, सरदार वल्लभ भाई पटेल, देशरत्न डा० राजेन्द्रप्रसाद जी जैसे देश के मान्य नेताओं के हाथ में है भाषा विषयक ऐसा प्रतिबन्ध सर्वथा अनुचित है। प्रत्येक सच्चे देश-प्रेमी सदस्य का कर्तव्य है कि धारासभा के उपनियमों में ऐसा परिवर्तन कराने का वह अनुरोध करे ताकि सब सदस्यों को राष्ट्रभाषा में अपने विचार प्रकट करने की स्वतन्त्रता अवश्य प्राप्त हो। सम्पूर्ण स्वतन्त्रता की प्राप्ति को अपना लक्ष्य बताते हुए यदि भारतीय इतनी भी स्वतन्त्रता नहीं प्राप्त कर सकते कि अपनी भाषा में अपने हार्दिक भावों को प्रकट करें तो इससे बढ़ कर दासता क्या हो सकती है?

डा० देशमुख का विवाह रजिस्ट्रेशन विषयक बिल

डा० देशमुख ने केन्द्रीय धारा सभा में हिन्दू-विवाहों की रजिस्ट्री के विषय में जो बिल प्रस्तुत किया था वह ६ के विरुद्ध ७५ सम्मतियों से सेलेक्ट कमेटी में भेज दिया गया है। हम इस विषयक अपने विचार 'सार्वदेशिक' के गत वर्ष के एक अङ्क में प्रकट कर चुके हैं तथापि अब वह बिल जिस रूप में प्रस्तुत किया गया है तथा इस पर जो वाद विवाद हुआ है उसको दृष्टि में रखते हुए हमें यह लिखना अत्यावश्यक प्रतीत होता है कि इस बिल का सबसे अधिक आक्षेप योग्य अंश यह है कि इसमें तलाक़ (Divorce) को असरल मार्ग से प्रविष्ट कराने का प्रयत्न किया गया है (यद्यपि डा० देशमुख ने श्री अनन्तशयनम ऐयंगार के प्रश्न के उत्तर में ६ मार्च १९४६ को धारासभा में यह कहा था कि ऐसा करने का मेरा कोई संकल्प न था) तथा बिल के अन्त में विवाह की रजिस्ट्री होने पर पूर्व विवाह के विच्छिन्न समझे जाने की धारा स० १२ इसमें लगी हुई है जो मूल बिल में इस प्रकार है:–

On the marriage being registered under this Act the previous marriage between the parties shall be deemed to have been dissolved and the parties shall be deemed to be married under this Act as from the date of such registration. etc.

अर्थात् इस ऐक्ट के अधीन विवाह की रजिस्ट्री हो जाने पर यह समझा जायगा कि पति पत्नी का पूर्व विवाह विच्छिन्न हो गया है और रजिस्ट्री होने के दिवस से उनका विवाह हुआ है।

यह न केवल आर्य (हिन्दू) विवाह संस्कार की पवित्रता पर कुठाराघात करने वाली है। बल्कि कानून की दृष्टि से भी अत्यन्त आक्षेप योग्य है। इसमें यह नहीं बताया गया कि इस रजिस्ट्रेशन से पूर्व उत्पन्न सन्तान का क्या बनेगा? बिल के अनुसार विवाह की रजिस्ट्री हो जाने पर वे हिन्दू ला से नहीं बल्कि Indian succession Act (भारतीय उत्तराधिकार नियम)

से शासित होते हैं। उनका संयुक्त परिवार से सम्बन्ध सर्वथा विच्छिन्न हो जाता है और कई प्रकार की पारिवारिक तथा उत्तराधिकार विषयक कठिनाइयां प्रस्तुत होती हैं। अतः हम इस बिल के उपर्युक्त २ अंशों का विशेष रूप से विरोध करना अपना कर्तव्य समझते हैं और अन्य भी आर्य धर्म और संस्कृति के प्रेमियों से अनुरोध करते हैं कि वे इन धाराओं का प्रबल रूप से विरोध करें। यदि कोई दम्पती अपने विवाह की रजिस्ट्री करना ही चाहते हैं तो उनको ऐसा करने की स्वतन्त्रता देने में कोई हानि नहीं किन्तु उपर्युक्त धाराएं तो अत्यधिक आक्षेप योग्य हैं। सेलेक्ट कमेटी के सदस्यों से हमारा अनुरोध है कि वे इन धाराओं को अवश्य हटालें अन्यथा आर्य (हिन्दू) विवाह की पवित्रता पर भयङ्कर आघात पहुंचेगा।

ट्रावन्कोर में शुद्धि आन्दोलनः—

हमें यह जानकर हर्ष हुआ है कि दयानन्द साल्वेशन मिशन के तत्वावधान में सार्वदेशिक सभा के भू० पू० उत्साही प्रचारक श्री विश्वनाथजी त्यागी बी. ए. एल एल बी ने ट्रावन्कोर रियासत में शुद्धि आन्दोलन को उत्साह के साथ प्रारम्भ किया है और गत मास लगभग ५०० ईसाइयों की शुद्धि करने में उन्हें सफलता प्राप्त हुई है। यदि उत्साह पूर्वक संगठित रूप में कार्य किया जाए और सवर्ण हिन्दुओं की मनोवृत्ति में उदारता लाने का विशेष प्रयत्न किया जाए तो इस आन्दोलन में पर्याप्त सफलता मिल सकती है। खेद की बात है कि उच्च आत्माभिमानी हिन्दुओं के दुर्व्यवहार तथा ईसाई व मुस्लिम प्रचारकों के प्रेम और सहानुभूति पूर्ण व्यवहार के कारण भी अनेक दलित वर्ग के लोग विधर्मी बन जाते हैं अतः उनको पुनः आर्य धर्म में दीक्षित करने के लिये सवर्ण हिन्दुओं में विशेष प्रचार भी अत्यावश्यक है। हमें आशा है कि सब आर्य धर्म प्रेमी इस दिशा में प्रयत्न शील होंगे। केन्द्रीय आर्य केरल सभा के सुयोग्य प्रचारक पं० इन्द्र देव जी और श्री कान्त देसाई जी सार्वदेशिक सभा के तत्वावधान में इस विषयक में जो प्रयत्न कर रहे हैं वह भी अत्यन्त प्रशंसनीय है, ट्रावन्कोर राज्य की ओर से उन्हें जो प्रोत्साहन मिला है वह अभिनन्दनीय है किन्तु जनता का पूर्ण सहयोग कार्य की सफलता के लिये आवश्यक है।

आर्य पौरोहित्य परीक्षा—कर्म काण्ड के विशेषज्ञ संस्कार आदि कराने में निपुण, विद्वान् व्याख्याता और सुबुद्ध पुरोहितों को तय्यार करने के उद्देश्य से सार्वदेशिक सभा के तत्वावधान में पौरोहित्य परीक्षा पटल नियत किया गया था जिसके गत ९ फरवरी के अधिवेशन में श्रावणी के दिनों में (३१ अगस्त, १, २ सित०) पौरोहित्यपरीक्षाओं की व्यवस्था का निश्चय किया गया है। परीक्षा की नियमावली तथा पाठक्रमादि को छपवाया जा रहा है। आशा है उत्साही आर्य नर नारियां जो पौरोहित्य के द्वारा आर्य समाज की सेवा करना चाहती हैं नियमावली मंगवाकर अभी से इस विषयक तय्यारी शुरू कर देंगी ताकि सभा की यह यह योजना अधिकतम सफलता प्राप्त कर सके। इस परीक्षा के प्रस्तोता आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध विद्वान् और सार्वदेशिक सभा के सुयोग्य मन्त्री श्री पं० गङ्गा प्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० को और उप

प्रस्तोता व संयोजक मुझे नियत किया गया है। हम चाहते हैं कि इस योजना को सफल बनाने में उत्साही आर्य नर नारियों का पूर्ण सहयोग प्राप्त हो।

मुस्लिम लीग का असहयोग व शरारतः—

मुस्लिम लीग के विधान परिषत् में सहयोग को प्राप्त करने के लिये अ०भा० कांग्रेस कमेटी ने ब्रिटिश मन्त्रि मण्डल के ६ दिसम्बर के वक्तव्य को सम्पूर्ण रूप से स्वीकार करने का बहु सम्मति से निश्चय किया था यद्यपि माननीय श्री पुरुषोत्तम दासजी टण्डन जैसे मान्य नेताओं ने इसका घोर विरोध किया था किन्तु इसका परिणाम भी वही निकला जो ऐसी मुस्लिम लीग की मांगों को पूरा करने की नीति का अब तक निकलता रहा है। मुस्लिम लीग की कार्य कारिणी ने कराची के अधिवेशन में कांग्रेस कमेटी के निश्चय की प्रशंसा करने के स्थान में उसके लिये Dishonest trick of jugglery अर्थात् अविश्वसनीय जादूगरी की चालाकी जैसे निन्दनीय पद का प्रयोग किया और विधान परिषत् से असहयोग का पूर्ववत् निश्चय किया। ऐसी अवस्था में अन्तः कालीन सरकार में भी लीगी सदस्यों के रहने का कोई अधिकार नहीं जैसे कि श्री पं० जवाहिर लाल जी तथा उनके सहयोगी ६ सदस्यों ने वायसराय को पत्र द्वारा सूचित किया है किन्तु लीगी सदस्यों ने त्याग पत्र देने से भी इन्कार कर दिया है। कांग्रेस की इस निर्बलता सूचक नीति की हम पहले भी कई बार आलोचना कर चुके हैं पर आश्चर्य की बात है कि क्यों मुस्लिम लीग के आगे बार २ घुटने टेकने वाली नीति का अवलम्बन किया जाता है जो देश हित में घातक तथा न्याय भावना विरुद्ध है। हमें तो ब्रिटिश शासकों से न्याय की आशा रखना दुस्साहस ही प्रतीत होता है। कांग्रेस के नेताओं को स्वयं दृढ़ता दिखा कर मुस्लिम लीग की न्याय विरुद्ध मांगों को ठुकरा देना चाहिये तभी काम चल सकता है अन्यथा नहीं।

ध० दे०

बंगाल सहायता निधि दान-सूची

(सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली)

गताङ्क से आगे

गत योग

५०) आर्य समाज मैरवी डा० असोथर (फतहपुर)

२५) श्री पूर्ण प्रसाद जी पुरी ठेकेदार प्रधान आर्य समाज मुरार (ग्वालियर)

५०) श्री निहालचन्द्र जी मन्त्री आर्यसमाज करोड़ (मुजफ्फरगढ) द्वारा

२५) आर्य समाज (लुकसर) सहारनपुर

५०) मन्त्री आर्य समाज खानखाना (जलन्धर)

१६॥।) आर्य समाज माजरा (रोहतक)

१०, श्री ठाकुर भानुप्रतापसिंह जी रईस, खीरयाव (फतहपुर)

५००) मन्त्री आर्य समाज नानापेठ (पूना)

४) श्री लाला रामलाल जी कस्वा तुलम्बा द्वारा आर्य समाज सराय सिद्ध

७) प्रधान आर्य समाज सराय सिद्ध

१४४) आर्यसमाज गुरुकुल सेक्शन पेशावर सिटी

१२५) आर्य समाज खण्डवा (सी० पी०)

८५०) आर्य समाज धूम्का काठियावाड़)

१००) आर्य समाज गुरुकुल सेक्शन मीरपुर झेलम

७५) प्रकाशचन्द्र जी महता असिस्टेन्ट सर्जन पालमपुर कांगड़ा द्वारा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब लाहौर

१३५॥।) सनातनधर्म कालेज ब्यावरके छात्रों द्वारा

१०१) एक लिमिटेड कम्पनी के स्टाफ द्वारा श्री पं० कृष्ण जी शर्मा राजकोट काठियावाड़

१०१) दी० राजकोट स्पीनिंग एण्ड वीविंग मिल्स राजकोट

२२१) श्रीमती वेलूबाई दाय श्री ट्रस्ट द्वारा मंगी भाई पी० जंगबर आर्य समाज राजकोट द्वारा।

११) श्री नारायणदास गांधी राष्ट्रीय शाला राजकोट (काठियावाड़)

२५) श्री कर्शनदास पितम्बर कडोवर आर्य समाज राजकोट (काठियावाड़) द्वारा

१०१) लेडी डाक्टर श्रीमती जानकी बाई किथ-वाला। वैस्ट होस्पिटल, राजकोट

१०१) श्री अनुसुयावर गतोन्दे गोंडल स्टेट के युवराज की नर्स द्वारा आर्य समाज राजकोट

१२) मंगीभाई पी० जम्बारी प्रधान आर्य समाज राजकोट

५७) जयपुर स्टेट रेल्वे के कर्मचारियों द्वारा श्री रूप सिंह जी सिद्धान्त शास्त्री

८००) प्रधान पूर्वी बंगाल रिलीफ कमेटी नैनीताल

६६१=) श्री राम लुभायामल धनपत राम रिवर रोड नैरोबी ईस्ट अफ्रीका

१०००) अध्यक्ष वीर अर्जुन देहली प्रत्येक १०००) की छठी किस्त

५) श्री राम प्रसाद हलवाई द्वारा आर्य समाज बिन्दकी (फतहपुर)

७५०) मन्त्री आर्य समाज रिवाड़ी (गुड़गांवा)

६०) आर्य समाज मह छावनी

२५) श्री जगमोहन जी सहायक इंजीनियर हापुड़ (संयुक्त प्रान्त)

२५) प्रयाग नारायण दीक्षित वकील इटावा

१५) श्री राम नारायण जी गुप्त वकील इटावा

५) श्री सूबेदार दीक्षित जी वकील इटावा

५) श्री प्रकाश चन्द्र जी वकील इटावा

२) श्री गिरिवरधारी जी वकील इटावा

२) ब्रज विहारी जी गुप्त, वकील इटावा

(श्री बा० ज्योति स्वरूप जी रईस इटावा द्वारा प्रेषित ७६) का विवरण)

१४३) श्री बा० गौरीशंकर भूदेव प्रसाद जी माधोगंज हरदोई।
५००) श्री मन्त्री आर्य समाज करोलबाग देहली।
३००) आर्य समाज अमरोहा (मुरादाबाद) श्री बाबूराम जी आर्य द्वारा संगृहीत
१६०) श्री रविशंकर जी आर्य आर्य कुमार सभा बीलली (सूरत)
१२५) आर्य वीर दल चान्दपुर पो० मंडावर (अलवर)
११४=) श्री चान्दमल जैन सहायक अध्यापक गवर्नमेंट हाई स्कूल दौसा (जामपुर स्टेट)
५५) आर्य समाज हिरिडका (दक्षिण कनारा)
५४) भरतलाल जी पंसारी सरकड़ा बिश्नोई पो० बिलारी (मुरादाबाद)
५०) आर्य समाज सिहोर (भोपाल स्टेट)
३०) आर्यसमाज मुस्करा जिला हमीरपुर(यू.पी.)
२०) आर्य समाज महीदपुर (इन्दोर स्टेट)
१२) गंगाधर लक्ष्मण जी त्रिवेदी गरोठजिला रामपुरा भानपुरा (इन्दौर)
१०) आर्य समाज अल्वर राज्य
१०) श्री ठाकुर सूर्य दीन सिंह जी ग्राम हर किशनपुर डा० जाफरगंज (फतहपुर)
५) पं० रघुनाथ सहाय जी तिवारी केथपुर डा० हथिगांव (फतहपुर)
४) आर्य समाज धुधली (मुजफ्फर नगर)
१००) श्री धर्मशील आर्य सेवक कमर मसानी (मियांवाली)
२२) आर्य समाज रानीमंडी प्रयाग (संयुक्त प्रान्त)
१६) आर्य समाज पढ़ा डा० पहासू (बुलन्दशहर)
४०) आर्य समाज चौक जौनपुर
३५) दीवान चीतासिंह आर्य कराची
१२०) आर्य समाज हसनपुर (मुरादाबाद)
८) श्री ब्रह्मप्रकाश जी आर्य, आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान अजमेर।
५) श्री मदन गोपाल अबोहर गेट मुल्तान सिटी
३५) आर्य समाज दीपालपुर (मिन्टगुमरी)
३१) आर्य समाज विहारीपुर (बरेली)
१०१) श्री बैजनाथ सिंह वैद्य वंशारी पो० केराकत (जौनपुर)
५) श्री करोडीलाल जी देवी प्रसाद लक्ष्मीचन्द्र आर्य समाज गंगापुर (जयपुर)
१५।) आर्य समाज गन्नौर (रोहतक)
३४) मुंशी मुकन्दराम ग्राम रामपुर डा० असमोली (मुरादाबाद)
१७५) आर्य समाज गोंडपुरा डा० मुबारकपुर (पटना)
१५) श्री काशीराम त्यागी आर्य समाज बसेडा (मुजफ्फरनगर)
१०) आर्यसमाज राजौरी (जम्मू)
१०) गोपालजी वशीलालजी महीदपुर (इन्दौरस्टेट)
१५) श्री अमृतानन्द सन्यासी हल्का शेरपुर डा० असमोली (मुरादाबाद)
८०) आर्य समाज जहाजपुर (मेवाड़)
१८१) आर्य समाज रतलाम
१) अखिलेश शर्मा मछरेहरा (सीतापुर)
५१) आर्य समाज केकड़ी (अजमेर)
१५) आर्य समाज गंगागढ पो० पहासू बुलन्दशहर
१०००) अभ्यस्त वीर अर्जुन देहली (७ वीं किश्त प्रत्येक १०००) की
१५००) आर्य समाज मायकोठा रोड भावनगर (काठियावाड़)
४००) आर्य समाज खुदागंज (शाहजहांपुर)
निम्न प्रकार:—

७५) ला० राम विलास जी
५०) ला० बृजविहारी लाल जी
५०) ला० बट्टू लाल जी
५०) ला० राधेलाल जी
५०) ला० धर्मेन्द्र कुमार जी
२५) श्री राधे श्याम जी
१५) ला० बसन्त लाल जी
१५) ला० लालमन पंसारी
१०) ला० राम चन्द्र पंसारी
१०) ला० मैकलाल पंसारी
५) ला० राजाराम पंसारी
५) ला० श्याम सुन्दर पंसारी
५) ला० रामरत्न हलवाई
५) ला० रोशन लाल पंसारी
५) ला० प्रेमराज हलवाई
५) ला० प्रभू हलवाई
५) ला० छोटे लाल हलवाई
२) ला० बैजनाथ
२) ला० लालमन सुनार
२) ला० गजाधर सुनार
२) ला० राम बकस तेली
५) ला० शंकरलाल हलवाई
२) राम चरन लाल मास्टर

४००) योग

५००) आर्यसमाज दीवानहाल देहली दूसरी किस्त
३२०) आर्य समाज कोटद्वार (गढ़वाल)
५१) श्री. सत्यदेवजी आयुर्वेदालंकार दाहा (मेरठ) द्वारा श्री० बा० मिट्ठनलालजी देहली शाहदरा

७५२९४)॥ योग

क्रमशः

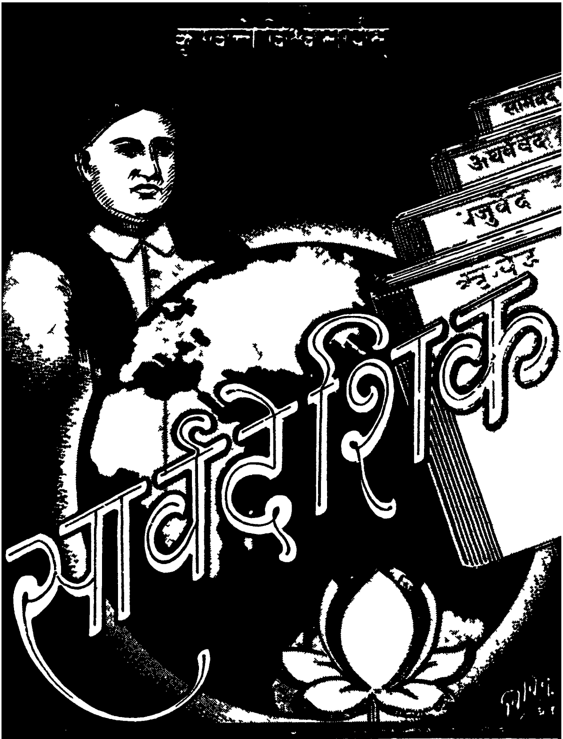
प्रचारक की आवश्यकता

आर्य समाज वरंगल (हैदराबाद राज्य) को एक तेलुगु भाषा जानने वाले उपदेशक की आवश्यकता है। वेतन ५०) मासिक होगा गुरुकुल के स्नातक को १००) मासिक दिया जायेगा। पत्र व्यवहार का पताः-

मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

श्री पं० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा
"चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार देहली में मुद्रित

सार्वदेशिकसभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें



अप्रैल १९४७ ई०	सम्पादक—	वार्षिक मूल्य स्वदेश ५
	श्री प० धर्मदेव जी सिद्धान्तालङ्कार विद्यावाचस्पति	विदेश १० शि०
वैसाख २००४ सं०	साहित्य भूषण	प्रति का ।।।)

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष २२ | अप्रैल १९४७ ई० । वैशाख २००४ दयानन्दाब्द १२२ | अङ्क १४

* वैदिक प्रार्थना *

ओ३म् त्वे इन्द्राप्यभूम विप्रा धियं वनेम ऋतया सपन्तः । अवस्यवो धीमहि प्रशस्तिं सद्यस्ते रायो दावने स्याम ॥ ऋ० २—११—१२ ।

अर्थः—हे (इन्द्र) परमेश्वर हम (ऋतया सपन्त) सत्य विज्ञान युक्त वाणी से युक्त होते हुए (त्वे) तेरे आश्रय में (विप्रा अपि अभूम) ज्ञानी भी बन जावें और (धियं वनेम) उत्तम बुद्धि और कर्म का सेवन करें । हम (अवस्यव) रक्षा और ज्ञान की इच्छा करते हुए तेरी (प्रशस्तिम्) प्रशंसा वा महिमा का (धीमहि) ध्यान करें तथा उसको धारण करें और (सद्य) शीघ्र ही (रायः दावने ते) विद्यादि ऐश्वर्य का दान करने वाले आपके (स्याम) उपासक बनें तथा आपके दान के पात्र बनें ।

विनय —हे परमेश्वर ! आप समस्त ऐश्वर्य के स्वामी हैं । आप ही ज्ञानादि धन के प्रदाता करने वाले हैं । हमें आप ऐसी शुद्ध बुद्धि तथा वाणी दें जिससे हम सर्वदा आपके सच्चे उपासक बन कर उत्तम कार्यों के करने में सदा तत्पर रहें ।

वैज्ञानिक चर्चा

ओ३म् सन्मात

"वैदिक पुरुरवा-उर्वशी उपाख्यान पर दृष्टि"

[लेखक—अनुसन्धान विद्वान् श्री शिवपूजनसिंह जी 'पथिक' साहित्यालङ्कार, सिद्धान्त-भास्कर साहित्य रत्न, सा०शिरोमणि, कानपुर]

वेदों मे इतिहास है या नहीं, यह एक विवाद-ग्रस्त प्रश्न है, परन्तु गम्भीर वैदिक विद्वानों का निश्चित मत है कि वेदों में इतिहास नहीं है + आज हम ऐसे ही वेदमन्त्र का उल्लेख करते हैं जिससे पौराणिक वर्ग इतिहास बतलाता है। वह मन्त्र यह है:—

किमेता वाचा कृणवा तवाहं प्राक्रमिषमुषसामग्रियेव। पुरूरवः पुनरस्तं परेहि दुरापना वात इवाहमस्मि।

—ऋग्वेद १०। ६५। २

सायण भाष्यानुवादः—'हे 'पुरुरवा' तुम्हारी इन सम्भोग रहित सूखी बातों से मुझे अब क्या फल होगा? मैं तो अब तुम्हारा सहवास छोड़ रही हूँ—तुम्हारी पटरानियों से दूर हो रही हूँ—जैसे अन्य उषाओं को पहिली उषा छोड़ देती है। तुम अब मेरे पास से घर लौट जाओ, मेरी अभिलाषा छोड़ दो। मै (उवशी) वायुवेग से चली जाऊंगी'×

अनया उर्वशी तं प्रत्युवाच—(एता) एतया वाचा केवलया पुनःसंभोगरहितया (किम् कृणव) किं करवाव। अहं त्विदानीं तव सकाशात् अतिक्रान्तवत्यस्मि। उषसां बह्वीनां मध्ये अग्रे भवेव। हे पुरुरवः त्वम् अस्मत्सकाशात् गृहं परागच्छ मय्यभिलाषं मा कार्षीः। अहं वायुरिव दुष्प्रापा दुरापा वा अस्मि।

यहाँ पर श्री सायणाचार्य की दृष्टि मे इतिहास ज्ञात होता है।

इसी प्रकार यजुर्वेद अ० ५ मन्त्र २ मे आया है:—

अग्नेर्जनित्रमसि वृषणौ स्थ उर्वश्यस्यायुरसि पुरुरवाऽअसि। गायत्रेण त्वा छन्दसा मन्थामि त्रैष्टुभेन त्वा छन्दसा मन्थामि जागतेन त्वा छन्दसा मन्थामि॥

+ पढ़िए—महर्षि दयानन्द जी महाराज कृत "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" विद्वद्वर्य पं० शिव० शङ्कर शर्मा काव्यतीर्थ कृत "वैदिक इतिहासार्थ निर्णय", आचार्य पं० [illegible] श्री जिज्ञासु कृत "निरुक्तकार और वेद मे इतिहास' प० प्रियरत्न आर्ष कृत "वेद मे इतिहास नहीं", प० चमूपति एम० ए० कृत "यास्क युग"—लेखक।

× मासिक पत्रिका "गङ्गा" का वेदाङ्क" प्रवाह २, फर्वरी सन् १६३२ ई०, तरङ्ग १, पृष्ठ २६५।

* महीधर भाष्य पृष्ठ ७७।

● शतपथ ब्राह्मण काण्ड ११। अ० ५, तथा "श्रीमद्भागवत स्कन्ध ६। अ० १४।

महीधर भाष्यः—"हे अधरारणे त्वमुर्वश्यसि यथोर्वशी पुरूरवो नृपस्य भोगायाधस्ताच्छेते तद्वत् त्वमधोऽवस्थितासीत्यर्थः—हे उत्तरारणे त्वं पुरूरवा असि यथा पुरूरवा नृप उर्वश्या अभिमुख उपरि वर्तते तथा त्वमपीत्यर्थः "*

अर्थात्—हे नीचे की अरणि (यज्ञ की लकड़ी) तुम उर्वशी हो। जैसे उर्वशी (अप्सरा) पुरुरवा राजा के भोग के लिये नीचे सोती है उसी तरह तुम नीचे स्थित हो। हे ऊपर की अरणी (यज्ञ की लकड़ी) तुम पुरुरवा हो जैसे पुरुरवा राजा उर्वशी के सामने ऊपर होते हैं।

श्री महीधराचार्य के इस अश्लील अर्थ से भी इतिहास ज्ञात होता है।

उपर्युक्त उपाख्यान अन्य ग्रन्थों + में भी आया है।

वास्तव में यहाँ 'वाचक लुप्तोपमालङ्कार' को न समझ कर भाष्यकारों ने भूल की है।

यजुर्वेद के इस मन्त्र का सत्यार्थ महर्षि दयानन्द जी महाराज इस प्रकार करते हैं:—

पदार्थः—हे मनुष्य लोगो! जैसे मैं जो (अग्नेः) आग्नेय अस्त्रादि की सिद्धि करने हारे अग्नि के (जनित्रम्) उत्पन्न करने वाला हवि (असि) है। (वृषणौ) जो वर्षा कराने वाले सूर्य और वायु (स्थः) हैं, जो (उर्वशी) बहुत सुखों के प्राप्त कराने वाली यज्ञ क्रिया (असि) है, जो (आयुः) जीवन (असि) है, जो (पुरूरवाः) बहुत शास्त्रों के उपदेश करने का निमित्त (असि) है, (त्वा) उस अग्नि को (गायत्रेण) गायत्री (छन्दसा) आनन्द-कारक स्वच्छ क्रिया से (मन्थामि) विलोडन करता हूँ और (त्वा) उस शत्रु, दुःख समूह को (जागतेन) जगती (छन्दसा) छन्द से (मन्थामि) ताड़न करके निवारण करता हूँ, वैसे ही तुम भी किया करो।

इस मन्त्र की व्याख्या शतपथ ब्रा० ३। ४। १। २०—२३ में है।

यहाँ पर वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द जी महाराज ने उर्वशी का अर्थ—"बहुत सुखों के प्राप्त कराने वाली क्रिया" और पुरूरवा का अर्थ—"बहुत शास्त्रों के उपदेश करने का निमित्त" किया है।

यहाँ महर्षि ने यौगिक प्रक्रिया के आधार पर इस प्रकार अर्थ किया है।

पुरूरवाः—'पुरूरवाः' (उणादि ४। २३२) इत्यसि प्रत्ययः, निपातात् पूर्वपदस्य दीर्घत्वम्। 'गतिकारकोपपद (अ० ६। २। १३९) इत्युत्तरपद प्रकृतिस्वरेणान्तोदात्तत्वे, 'पूर्वपद प्रकृतिःस्वरत्वं च' (उ० ४।२२७)

× निघण्टु ५।४

* निरुक्त अ० १०, खं० ४६ वि० २

+ निरुक्त समुच्चय ४। १४

इत्यनुवृत्तौ पूर्वपदप्रकृतिस्वरे वा प्राप्ते निपातनादेव उत्तरपदाद्युदात्तत्वम् ॥"

अर्थात्;—यह शब्द पुरु उपपद होने से 'रु' धातु को 'असु' प्रत्यय परे होने पर यह पुरूरवाः शब्द निपातन किया है।

"पुरूणि बहूनि शास्त्राण्युपदिशति येनाध्ययनाध्यापनेन यज्ञेन सः । पुरूरवाः इति पदनामसु पठितम्"✻

अर्थात्—जो बहुत से शास्त्रों का उपदेश करता है, जिस यज्ञ से पढ़ना पढ़ाना हो वह पुरूरवाः पद नाम में पढ़ा है।

"पुरूरवा बहुधा रोरूयते"*

अर्थात्—पुरूरवा उसे कहते हैं जो बहुत शब्द करने वाला हो।

एवं"पुरु रौतीमिति पुरूरवाः"✻

अर्थात् जो बहुत रोवे उसे पुरूरवा कहते हैं।

"पुरवोऽहू रवो यस्मिन्" जिसके उदय होने पर पुरु = बहुत, रव = नाद, कोलाहल हो,

"शब्दे निनाद निनद ध्वनि ध्वान रव स्वनाः। स्वान निर्घोष निर्ह्राद नाद निस्वान निस्वनाः" इत्यादि अनेक नाम शब्द के हैं और "प्रभूतं प्रचुरं प्राज्यमदभ्रं बहु बहुलं। पुरुहः पुरु भूयिष्ठं स्फारं भूयश्च भूरि च" इत्यादि बहुवाचक शब्द हैं। "रु," "शब्दे"रुधातुसे रव बनता है अथवा "पुरु बहु रूयते शब्दायते स्तूयते यः, स पुरूरवाः" जो बहुत स्तूयमान हो।

महाभारत वन पर्व अ० ६ में "पर्वतश्चपुरुनर्नाम यत्र जज्ञे पुरूरवाः"श्लोक २२। ऐसा लिखा है, इसके अनुसार'पुरौ पर्वते रौति"ऐसी व्युत्पत्ति होनी चाहिये। परलोकवासी श्रीयुत रमेशचन्द्र-दत्त जी ऋग्वेद के अनुवाद की टिप्पणी में लिखते हैं:—

"उर्वशीर आदि अर्थ उषा एवं पुरूरवार आदि अर्थ सूर्य्य"●

अर्थात्—उर्वशी का आदि अर्थ उषा और पुरूरवा का अर्थ सूर्य्य है।

पुनः आप ऋग्वेद १०।६५ सूक्त की टिप्पणी में इसी विषय को दिखाते हुए कहते हैं:—

"एइ सूक्ते उर्वशी ओ पुरूरवा वैदिक उपाख्यान आख्यात हइयाछे। पुरूरवा अप्सरा उर्वशी सहित किछु काल सहवास करितेछेन, उर्वशी ए क्षणे पुरूरवा के छाड़िया आइतेछेन। आमरा पूर्वेई बलियाछि, उर्वशीरआदि अर्थ उषा, पुरूरवार आदि अर्थ सूर्य्य। सूर्य्य उदय हइले उषा आई थाकेना।"

अर्थात्—इस सूक्त मे उर्वशी और पुरूरवा का वैदिक आख्यान है। पुरूरवा ने अप्सरा उर्वशी सहित कुछ समय सहवास किया, उर्वशी पुरूरवा को छोड़ कर चली गई।

हमने पहिले ही कह दिया कि उर्वशी का आदि अर्थ उषा और पुरूरवा का अर्थ सूर्य होता है। सूर्य के उदय होते ही उषा ठहर नहीं सकती।

पाश्चात्य पण्डितों के सिद्धान्त:—

वैदिक साहित्य के प्रसिद्ध गवेषक प्रो॰ मैक्स-मूलर, गेल्डनर, राथ, गोल्डस्टकर, म्यूर प्रभृति ने

● ऋग्वेद ५। ४१। १६ की टिप्पणी

* "वैदिक सम्पत्ति" द्वितीय संस्करण, पृ० ६० की पाद-टिप्पणी।

इस आख्यायिका के ऊपर बहुवादानुवाद अपने २ ग्रन्थों में किया है। अन्त में सब का यही सिद्धान्त है कि उर्वशी का अर्थ उषा और पुरूरवा का अर्थ सूर्य होता है।

प्रो० ग्रिफिथ साहब ऋ० के १० वें मण्डल के ९५ वें सूक्त की टिप्पणी में कहते हैं:—

"Max Muller considers the story to be one of the myths of the Vedas which expresses the correlation of the dawn and the sun According to Dr. Goldstucker Urvasi is the morning mist which vanishes away as seen as Pururavas the sun displays himself."*

अर्थात्—मैक्समूलर के मतसे यह उषा और सूर्य का वर्णन है और डाक्टर गोल्डस्टकर के मत से प्रातःकाल तथा सूर्य का है। सूर्य के उदय होते ही वह उषा भाग जाती है।

पुनः प्रो० मैक्समूलर अपनेलेख में लिखते हैं-

That Pururavas is an appropriate name of a solar hero requires hardly any proof. Pururavas meant, endued with much light for though 'rav', is generall used of sound, yet the root. 'ru' which means originally to cry is also applied to colour in the sense of a loud or crying colour i.e. red (Sanskrit Ravisun.) Besides Pururavas calls himself Vasistha (19 ऋक्), which, as we know is a name of the sun, and if he is called Aida (ऋक्) the son of Ida, the same name is else where (Rigveda. III,29,3) given to Agni, the fire.")

अर्थात्—पुरूरवा सूर्यवंशी वीर का एक यथार्थ नाम है जिसके लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। पुरूरवा के अर्थ ये हैं कि बहुत सी रोशनी के साथ जुड़ा हुआ, क्योंकि यद्यपि साधारणतः 'रव' शब्द के लिए व्यवहार होता है, तथापि 'रू' धातु जिसके प्रथम अर्थ रोना है। वह व्यवहार होता है उस रंग को एक ऊंचे या रोने वाले रंगके अर्थात् लाल रंग के अर्थों में (संस्कृत रवि सूर्य) इसके अतिरिक्त पुरूरवा अपने आपको वशिष्ठ कहता है जो (१९ ऋक्)जैसा हम जानते हैं, सूर्य का नाम है। और यदि वह इडा का पुत्र, ऐड (११ ऋक्) कहलाताहै,वही नाम ऋग्वेद (३।२९,३) में अग्नि का है।

पुनः महर्षि दयानन्द जी महाराज ने 'उर्वशी' का अर्थ "बहुत सुखों के प्राप्त कराने वाली क्रिया है"[] किया है। यह यौगिक प्रक्रिया के आधार पर अर्थ लिया गया है।

'उर्वशी' शब्द 'पद के नाम आया है। यथा:-

"उर्वशीति पदनामसु पठितम्" (निघण्टु ५।५।)

"उर्विति बहुनामसु पठितम्" निघण्टु ३।१)

तस्मिन्नुपपदे 'अशूङ्' धातोः संपदादिभ्यः क्विप् (अ०३।३।१०८ भा० वा०)

* Max Muller's selected essays (1881), VOL I, PP 407, 408

[] "(उर्वशी) ययोरुणि बहूनि सुखान्यश्नुवते सा चऽ क्रिया" (आचार्य दयानन्दः)

ततः "शार्ङ्गरवाद्यन्तर्गतत्वान्ङीष्।"

अर्थात्—'उरु' अर्थ बहुत के हैं। इसके रूप पद होने पर शार्ङ्गरवादि के अन्तर्गत होने से ङीष् प्रत्यय होता है।

"उरुः पृथुः कामोवशो यस्याः सोर्वशी" (महीधरः)

अर्थात्—जिसको बहुत सा काम पसन्द हो वह उर्वशी।

यास्काचार्य लिखते हैं किः—'उर्वश्यप्स-रा,उर्वभ्यश्नुते। उरुभ्यामश्नुते,उरुर्वा वशो-ऽस्याः, अप्सरा अप्सारिणी, अपिवाऽप्स इति रूप नामाप्सातेर प्सानीयं भवत्यादर्शनीयंवा, व्याप्नोतेर्वा स्पष्टं दर्शनायेति शाकपूणिः"*

अर्थात्—उर्वशी अप्सरावाची है।(उरुभ्य-श्नुते) बहुत व्यापक होती है। (उरुभ्यामश्नुते) विस्तृत दो पदार्थों से व्यापक होती है। उरुः वशः अस्याः)=इसका वश बहुत है।

(अप्सरा=अप्सारिणी)=यह अप्सरा जलों में रहती है या चलती है।(अप्स इति रूपनाम-अर्थ रूप है। (अप्सातेः अप्सानीयं भवति आदर्श-नीयम्)=रूप भक्षणीय नहीं होता किन्तु भली प्रकार दर्शनीय होता है।

(व्यापनीयं वा)=अथवा रूप व्यापनीय होता है (स्पष्टं दर्शनायेति शाकपूणिः)=रूप देखने के लिये स्पष्ट होता है। ऐसा शाकपूणि ऋषि मानते हैं।

श्री दुर्गाचार्य जी ने भी लिखा है "विद्युत् उर्वशी" बहुत ही व्यापनेवाली विद्युत् उर्वशी सरने वाली है।

स्कन्द स्वामी ने भी इसको ऐसाही सिद्ध किया है—"नित्यपक्षे तु उर्वशी विद्युत्......

एक वैदिक मनीषी इसकी व्युत्पत्ति इस प्रकार से करते हैं:—

"उरु=बहु, अश्नुते=व्याप्नोतीति उर्वशी (अशू, व्याप्तौ संघाते च) प्रातःकाल की शोभा बहुत दूर तक फैल जाती है अतः इसको उर्वशी कहते हैं।

उरु बहु अश्नुते=व्याप्नुते पलायते वा सा"= जो बहुत भागे।

"उरुभिर्बहुभिरिष्यते काम्यते वा सा उर्वशी जो बहुतों से अभिलाषिता हो।

"उरुर्वा वशोऽस्याः=जिसको बहुत काम हो।

प्रो० ग्रिफिथ का मत है किः—Urv..si apparently fervour or enthusiasm personified as a divine being.*

यह स्पष्ट है कि उर्वशी अलङ्कार की रीति पर एक उत्साह की प्रतिकृति है।

प्रो० मैक्समूलर का मत है:—The name which approaches nearest to Urvasi in Greek might seem to be Europe. Europe,, carried away by the (white bull Vrishan"manbull"stallion" in the Veda frequent appellation of the sun and" Sweta,,'white applied to the same deity) all this would well agree with the goddess of the dawn.*

* (निरुक्त ५।१३

अर्थात्—इनकी विवेचना है कि योरोपा शब्द उर्वशी का प्रतिरूप है एव मुख द्वारा योरोप का हरण सम्बन्धी ग्रीक गल्प उषा और सूर्य के अध्याय के गल्प का प्रतिरूप मात्र है।

कतिपय महानुभावों का कहना है कि निरुक्त तथा शतपथादि ब्राह्मणों के प्रमाण स 'उर्वशी' अप्सरा † विशेष का नाम है। यह स्वर्गीय इन्द्र की वेश्या है।

प्रकृत 'उर्वशी' के विषय में—

ऋग्वेद ७। ३३। १० मे 'उर्वशी' को "विद्युतो ज्योति," विद्युत् की ज्योति कहा है।

ऋ० १०। ९५। १७ मे 'उर्वशी' को स्पष्ट ही 'प्राणी' कहा गया है।

'निरुक्त समुच्चय ४। १४ मे 'उर्वशी' को 'विद्युत्' बतलाया है।

स्कन्द निरुक्त टी० भा० २ पृष्ठ २४३ - २४५ मे 'उर्वशी' का अर्थ 'विद्युत् दर्शाया गया है।

इन उपर्युक्त प्रमाणों से 'उर्वशी' का अर्थ विद्युत तथा वाक् स्पष्ट है।

अतएव वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द जी महाराज का अर्थ आर्ष है और यहा इतिहास का लेशमात्र भी गन्ध नहीं है।

'पुरूरवा' और 'उर्वशी' के अन्य भी अर्थ होते हैं जो यहा प्रदर्शित किये गये हैं और प्रसगानुसार वैसे ही अर्थ करने चाहियें।

आशा है आप पुरातत्त्वज्ञ इधर ध्यान देने की कृपा करेंगे।

शमित्योम।

---

*Griffith P 505 का नोट

*Seleoted essays 1881 Vol I P 400 Note (Max muller)

† इस विषय मे निरुक्तादि का क्या अभिमत है, सो आचार्य स्कन्द स्वामी कृत निरुक्त की टीका भा० २ पृष्ठ ७८ मे देखें। वहा स्पष्ट लिखा है कि केवल देवापि और शन्तनु वाले मन्त्र में ही नहीं, अपितु जिन मन्त्रों में भी आख्यान (इतिहास) प्रतीत होता है, उन सब के अर्थ की यजमान का (प्रवाह से) नित्यपदार्थों (अग्नि वायु आदि प्राकृतिक तत्त्वों) मे योजना करनी चाहिये इसी के अनुसार 'उर्वशी' का अर्थ स्पष्ट 'विद्युत्' किया गया है। (देखो—निरुक्त टीका भाग २ पृ० २४३-२४५)।

इसी निरुक्त पर श्री सत्यव्रत जी सामाश्रमी लिखते हैं—' तथा चोदक जात विद्युदेवोर्वश्यप्सरा " अर्थात्—तथा जल से उत्पन्न हुई विद्युत को अप्सरा कहते हैं।

यजु० १८। ३८ मे 'अप्सरा' अग्नि गुण प्रधान औषधियों का नाम कहा है। (शतपथ ब्रा० १३।४।३।८)

यजु० १८। ३९ मे सूर्य की किरणों को अप्सरा कहा गया है।

यथा—"तस्य सूर्यस्य मरीचयो नामाप्सरस" (महीधर)

यजु० १५। १६ मे भी किरण कहा है।

यजु० १८। ४० मे नक्षत्रों का नाम अप्सरा कहा गया है। (शतपथ ब्रा० ९। ४। १।९)

यजु० १८। ४३ मे ऋक् और साम को अप्सरा कहा है। (शतपथ ब्रा० ९। ४। १। १२)

शत्रुघ्नाचार्य की 'मन्त्रार्थ दीपिका' पृष्ठ १५१-१५३ मे भी सूर्य की रश्मियों, चन्द्रमा, नक्षत्र पवित्र जलों को तथा ऋक् और साम को 'अप्सरा' कहा है।

इस प्रकार 'उर्वशी' शब्द से विद्युत् अथवा सामान्यतया किसी भी रूपवती स्त्री का ग्रहण है। यह बात सर्वथा स्पष्ट है।—लेखक।

एक विचारणीय विषय

[आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० ने परोपकारिणी सभा के मन्त्री जी के नाम जो पत्र गत ६-८-४६ को भेजा था और उसके विषय में जो उत्तर उन्हें उस सभा से प्राप्त हुआ है उसे "सार्वदेशिक" में प्रकाशनार्थ हमारे पास भेजा है। विषय विचारणीय है अतः हम उसे विद्वानों के विचारार्थ यहाँ प्रकाशित कर रहे हैं। :——सम्पादक सा० दे०]

अजमेर,
पीली कोठी,
६-८-४६

श्री मन्त्री जी, परोपकारिणी सभा, अजमेर,

नमस्ते

मुझे बहुत दिनों से संस्कारविधि के कुछ स्थलों पर आपत्ति है। इसको मैंने लगभग १५ वर्ष पूर्व आर्य्य मित्र में भी दिया था और कुछ विद्वानों ने मेरे लेखों की कुछ कड़ी समालोचना भी की थी। मैं इसको मैं निराधार ही समझता रहा। उस समय मेरे विचारों का आधार १८७७ई० की छपी संस्कार विधि और वर्तमान संस्कार विधि ही थी इनकी हस्त लिखित कापी नहीं देखी थी। ७ अगस्त १९४६ को मैंने श्री दीवान बहादुर हरबिलास शारदा जी की आज्ञा प्राप्त करके वैदिक प्रेस के कर्मचारियों की कृपा से संस्कार विधि की दो हस्त लिखित कापिया देखीं। एक का नाम असली कापी है और दूसरी का प्रेस कापी। असलीकापी कुछ जल्दी में लिखी प्रतीत होती है। उसमें कई स्थानों पर पेन्सिल से काटा गया है। प्रेस कापी को किसी सुलेखक ने असली कापी से नकल किया उसमें कहीं-कहीं श्री स्वामी जी महाराज ने अपने हाथ से सही की है और कहीं-कहीं बीच में हाशिये पर लेखक अथवा किसी अन्य द्वारा भी घटाया बढ़ाया गया है। इन दोनों कापियों को देखने से मुझे विश्वास हो गया कि मेरी शंकाएं निराधार नहीं थीं। समय के अभाव से मैं केवल दो स्थल ही देख सका। उनको आपकी सेवा में भेज कर निवेदन है कि सभा के विद्वद्गण मेरी युक्तियों से सहमत होवें तो अगले संस्करण में सुधार कर दें और कारण को संस्कार विधि की भूमिका में छपवा देवें। ये शंकायें केवल मेरी नहीं हैं। आरम्भ काल से ही अनेक विद्वान् इनको बता ते रहे हैं, परन्तु हस्त लिखित कापियों को देखा नहीं गया।

पहला स्थल

सामान्य प्रकरण—

(बीसवां संस्करण पृष्ठ २४, पं० ८ से पं० २३ तक "तीन लकड़ी आठ २—आहुति देवें")।

मेरी आपत्ति—

'अयंत इध्म...से पहली, और 'समिधाग्निं' और 'सुसमिद्धाय' से दूसरी समिधा नहीं देनी चाहिए अपितु 'समिधा... से पहली और 'सुसमिद्धाय.. ' से दूसरी समिधा देनी चाहिए।

क्यों ?

(१) शतपथ में इन्हीं तीन 'समिद्वती' मंत्रों से समिधाधान का वर्णन है। समिद्वती मंत्र यही हैं। यजुर्वेद में यह लगातार दिये हैं। (यजु अ०३, मंत्र १, २, ३)

(२) अयंत इध्म...वेद मन्त्र नहीं और न इसका ऊपर के तीन मन्त्रों से सम्बन्ध है।

(३) इस मन्त्र से समिदाधान किसी गृह्य सूत्र में नहीं है।

(४) अन्य किसीस्थल पर यज्ञ में दो मन्त्रों से मिलकर एक आहुति का विधान नहीं है।

(५) श्री स्वामी जी महाराज द्वारा प्राचीन प्रथा में परिवर्तन करने का कोई कारण प्रतीत नहीं होता, क्योंकि श्री स्वामी जी उस समय तक कोई परिवर्तन न करते जब तक कोई सैद्धान्तिक कारण न हो या अवैदिक जान पड़े।

(६) मेरी धारणा यह थी कि भूल से किसी लेखक ने अगला मन्त्र पहले लिख दिया है और पीछे से समन्वय करने के लिये किसी ने अगले शब्द बढ़ा दिये हैं। क्योंकि नवीं पंक्ति में स्पष्ट लिखा है "एक मन्त्र से एक-एक समिधा को अग्नि में चढ़ावें। १६ वीं पंक्ति में इससे और १८ वी पंक्ति में "इस मन्त्र से अर्थात दोनो मन्त्रों से दूसरी" पीछे से बढ़ाये गये हैं।

यह थीं मेरी युक्तियां जिनके विरुद्ध बहुत सा समाधान केवल 'हवा' में किया गया।

आज मेरी धारणा ठीक निकली

'असली कापी—'

में 'अयन्त इध्म ' यह मन्त्र नहीं है। (देखो पृ० ४)। जहां पहले लिखा था "नीचे लिखे तीन मन्त्रों से से तीन समिधायें देवें', फिर काट कर ऐसा बनाया गया "एक-एक मन्त्र से एक-एक"। इसके पश्चात् 'समिधा', 'सुसमिद्धाय', 'तन्त्वा यह तीन मन्त्र दिये हैं। बीच में हिन्दी का एक भी शब्द नहीं है।

प्रेस कापीः—

(देखो पृ० १५) में लेखक ने पहले इसी प्रकार असली कापी की ज्यों की त्यों नकल की है। जिस पंक्ति में "वे मन्त्र ये हैं" लिखे हैं। वही पंक्ति आगे छूटी हुई है। फिर 'समिधाग्नि आदि आरम्भ होते हैं। पीछे से उसी पंक्ति की खाली जगह में 'अयन्त इध्म...' यह मन्त्र लिखा है इसका शेष भाग हाशिये पर लिखा है। यह मन्त्र उसी लेखक का प्रतीत होता है, जिसने समस्त पुस्तक लिखी है।

हिन्दी के बीच के शब्द इससे और तथा "इस मंत्र से अर्थात् दोनों मन्त्रों से दूसरी" किसी अन्य पुरुष के हाथ के पीछे से बढ़ाये गये हैं।

लेखक ने 'अयन्त इध्म' क्यों बढ़ाया और हिन्दी के शब्द किसने बढ़ाये यह एक समस्या है। मेरी समझमें असली कापी ठीक है और इसी प्रकार कर देना चाहिए, जिससे विद्वानों को आक्षेप करने का अवसर न मिले। यह लेखक की भूल स्वामी जी महाराज के गले नहीं मढ़नी चाहिये।

दूसरा स्थान

बीसवा प्रकरण पृ० १४४ विवाह प्रकरण पं०४, ५, ६, ओ३म्ः भूर्भुवः स्वः···प्रह-राम शेफं···इत्यादि।

विवाह के समय भरी सभा में इस मंत्र का

पढ़ना अश्लीलता है। मेरी धारणा थी कि स्वामी जी ने ऊपर के 'दो मन्त्रों के' साथ इस मंत्र को भी निकाल दिया होगा क्योंकि फुटनोट में अन्य मंत्रों का अर्थ दिया है। इसका नहीं।

असली कापी को देखने से मेरी यह धारणा भी ठीक निकली असली कापी में इस स्थान पर पारस्कर गृह्य सूत्रके चार मंत्र उद्धृत किये हैं। (पार० १-४-१६)

(१) अघोर चक्षु··· (२) 'सोमः प्रथमो' (३) 'सोमोऽददद्' (४) 'सा नः पूषा शिवतमा' और ऊपर सं० १, २, ३, ४ भी दी गई है। इसके पश्चात् पेन्सिल से दूसरा और तीसरा मन्त्र पूरा काट दिया है और चौथे का कुछ भाग। इससे पता चलता है कि चौथा शेष मंत्र भी काटना अभीष्ट था। पेन्सिल आगे बढ़ने से रह गई। सं० १ और ४ काटना भी छूट गया और इसके आगे का हिन्दी का वाक्य भी। "इन चार मन्त्रों को वर बोल के" काटने से रह गया।

जब दूसरे लेखक ने प्रेस कापी तैयार की तो दूसरा और तीसरा मन्त्र तो छोड़ दिया। चौथा ज्यों का त्यों रहने दिया और 'इन चार मन्त्रो को वर बोल के' यह भी लिख दिया और चौथे मन्त्र के साथ सं० ४ भी डाल दिया।

'प्रेस कापी' के लेखक को शंका तो हुई क्योंकि उसको फुटनोट में इस चौथे मन्त्र का अर्थ नहीं मिला और चार मन्त्र भी नही मिले। यह शंका 'प्रेस कापी' को देखने से स्पष्ट हो जाती है क्योंकि उसने ऊपर, मन्त्रों पर (१) (-) अंक डालकर उसी प्रकार के अंक समन्वयार्थ फुटनोट में भी डाले हैं। परन्तु वह अपनी शंका का समाधान नहीं कर सका और उसने ज्यों का त्यों छोड़ दिया।

वैदिक प्रेस मे छपे दूसरे संस्करण मे 'इन चार मन्त्रों को वर बोल के' ऐसा है। बीसवें संस्करण में "इन मन्त्रों को बोल के' ऐसा कर दिया गया है। 'चार' और 'वर' छोड़ दिये हैं। किसी ने ऐसा सोचा होगा कि 'चार' मन्त्र हैं ही नहीं। यह ठीक ही था क्योंकि पारस्कर मे चार मन्त्र थे। स्वामीजी ने इनको काट दिया। 'सोमः प्रथमो विविदे' और सोमोऽददद्, का काटना उचि- ही था क्योंकि स्वामीजी पौराणिकों के इस अर्थ को नहीं मानते थे कि कन्या को पहले 'सोम' 'गन्धर्व' आदि देव भोगते हैं। यदि 'वर' शब्द को भा निकाला जाय और ऊपर के मन्त्र को कन्या और वर दोनों बोले तो कन्या 'प्रहराम शेफं' आदि कैसे बोले? यह स्पष्ट ही है।

मेरी समझ में स्वामीजी को दूसरे और तीसरे मन्त्र के साथ इस चौथे मन्त्र को भी काटना अभीष्ट था क्योंकि जब उन्होंने पहले मन्त्र का अर्थ दिया तो इस चौथे का क्यो न दिया? और असली कापी मे इसके कुछ भाग पर पैंसिल क्यों है?

'प्रेस कापी' में पृ० ८६ पर यह मन्त्र है। वहाँ स्मामी जी के हाथ का कुछ भो नहीं है ऐसा प्रतीत होता है कि स्वामो जी की दृष्टि इस ओर पड़ी ही नहीं।

मैंने भी पं० भगवान् स्वरूपजी को दोनों कापियों के यह स्थल दिखा दिये हैं।

मैंने सुना है कि अभी दस हज़ार प्रतियां छप रही हैं। ये दोनों स्थल छप चुके है। यदि विद्वान् लोग सहमत हों तो इस संस्करण में मेरा यह लेख भूमिका के तौर पर छाप कर शुद्धि-पत्र लगा दिया जाय और अगले संस्करण में शुद्ध कर दिया जाय।

भवदीय—
गंगाप्रसाद उपाध्याय

श्री स्वामीजी के ईसाई सत्संगी

(महेश प्रसाद, मौलवी आलिम फाजिल हिन्दू यूनिवर्सिटी, बनारस)

श्री स्वामी जी महाराज के साथ अनेक देशी व विदेशी ईसाइयों ने शास्त्रार्थ किया था। अनेक केवल सत्संग के विचार से उन से मिले थे अथवा मिलते थे। अतः किसी न किसी रूप में जिन ईसाइयों के साथ मिलना हुआ था उनमें कुछ साधारण कोटि के व्यक्ति थे किन्तु कुछ उच्च कोटि के थे और उनके द्वारा भारत में ईसाइयत का बहुत काम हुआ है। ऐसे लोगों में से केवल चार के विषय में कुछ लिखा जाता है।

१. पादरी हूपर साहिब पहिले सन् १८७४ ई० में काशी में श्री स्वामी जी से मिले थे। इसके पश्चात् लाहौर में १८७७ ई० में मिले थे। इनका पूरा नाम विलियम हूपर था। सन् १८३७ ई० में २७ सितम्बर को इंगलैण्ड में पैदा हुये थे। सन् १८५६ में एम० ए० की डिगरी प्राप्त की थी।

सन् १८३१ ई० में भारत में पधारे। काशी व लाहोर में विशेषरूप से काम किया। इनकी रचनायें हैं जिनमें दो मेरी दृष्टि मे अवश्य आई हैं:—

(क) हिन्दू धर्म का वर्णनः-इसमें बतलाया है कि हिन्दू धर्म क्या वस्तु है; वेद का वर्णन, जाति का वर्णन, अवतारों आदि का वृत्तान्त है। इसके कई संस्करण हिन्दी में निकले हैं।

(ख) ख्रीष्टीय हिन्दू और मुहम्मदी धर्मों के अनुसार उद्धार का सिद्धान्तः उद्धार किससे होता है? पाप का विषय। पवित्र आत्मा के विषय आदि में बातें हैं। इसका एक हिन्दी संस्करण मेरी दृष्टि में अवश्य आया है।

२. पादरी उलमनः- श्री स्वामी जी से कुछ साथियों सहित कायम गंज (जिला फर्रुखाबाद) में सन् १८६८ ई० में मिले। 'महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र' पृष्ठ १३१ (प्रकाशित सम्वत् १६६० वि० अजमेर) में इनका नाम अनवन दिया हुआ है। यह ठीक नहीं।

पादरी साहिब का पूरा नाम फ्रेडरिक उलमन (Ullmann) था। सन् १८१७ ई० में बर्लिन में पैदा हुये थे। शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् सन् १८३६ ई० में भारत में पधारे। अनेक स्थानों में कार्य किया। इनकी अनेक रचनायें गुरु ज्ञान, लड़कों की गीत माला, धर्म तुला आदि हैं। इनमें से धर्मतुला का प्रचार हिन्दी व उर्दू दोनों में बहुत हुआ है। उर्दू में सन् १६४१ ई० तक १३ बार प्रकाशन हो चुका है। हिन्दी में सन् १६३८ ई० तक ४४ संस्करण निकल चुके हैं। यह संस्करण दस हजार की संख्या में निकला है।

३. पादरी स्काट—इनका मिलना श्री स्वामी जी से सबसे पहिले चांदापूर जिला (शाहजहांपुर) के मेले में सन् १८७७ ई० (मार्च) में हुआ था। इसके पश्चात् बरेली में इन्होंने श्री स्वामी जी के साथ सन् १८७६ ई० में शास्त्रार्थ किया था और श्री स्वामी जी से मिला भी करते थे।

श्री स्वामी जी के अनेक जीवन चरित्रों में इनका नाम टी० जी० स्काट लिखा हुआ मिलता है किन्तु टी० जे० स्काट (Thomas jeffer-son Scott) चाहिये। सन् १८३५ ई० में संयुक्त राज्य अमेरिका में पैदा हुये थे। शिक्षा

प्राप्ति के पश्चात् सन् १८६३ ई० में भारत में पधारे। कई स्थानों में कार्य किया।

ईसाई उपदेशक विद्यालय बरेली में १६ वर्ष तक शिक्षक रहे। इस काल में १२ वर्ष तक प्रिंसिपल का कार्य किया। अनेक पुस्तकें भी लिखी हैं किन्तु इनका महत्वपूर्ण कार्य यह है कि इण्डिया सन डे स्कूल यूनियन को इन्होंने सन १८७६ ई० में स्थापित किया।

४ पादरी क्लर्क—'महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र' पृ० ४७७ से पता चलता है कि अमृतसर में सन् १८७८ ई०मे पादरी क्लर्क साहब से और महाराज से खान-पान के विषय मे बात-चीत हुई थी। ज्ञात रहे कि क्लर्क नाम के कई पादरी हुए हैं किन्तु यहां पर राबर्ट क्लर्क समझना चाहिये क्योंकि इनका सम्बन्ध अमृतसर से विशेष रूप से रहा है और उक्त काल में वह अमृतसर में ही थे।

सन् १८२५ ई० में इन का जन्म इंगलैण्ड में हुआ था। सन् १८५१ ई० में अमृतसर में आये। पंजाब व काश्मीर में विशेष रूप से काम किया। जान की इंजील को परतो में किया; किन्तु इनकी रचना Thirty years of Missionary Work of the C.M.S. in the Panjab and Sinh' बड़े मारके की है।

उक्त ईसाई-पादरियों के सिवा वेरी, लूकस, पारकर, नोबिल, मैथर, बेरिङ्ग, गरे, गिलबर्ट, हसबैण्ड, लालबिहारीदे और नीलकण्ठ शास्त्री (सहीमिया गोरे) आदि अनेक बड़े-बड़े ईसाइयों के साथ सत्संग हुआ था। केवल थोड़े से व्यक्तियों का संक्षिप्त परिचय ऊपर दिया है। अब मै अन्त में ऐसे ग्रन्थों का परिचय देना चाहता हूं जिनके आधार पर मैंने उक्त शब्द लिखे हैं ताकि अधिक जानने के निमित्त लोगों को कुछ सुगमता हो:—

1. The Indian Missionary Directory लेखक Rev. B. H. Badley संशोधित संस्करण सन् १८८२ ई० मेथाडिस्ट पब्लिशिंग हाउस लखनऊ से मुद्रित।

२. History of A. P. Missions, India सन १८८६ ई०में मिशन प्रेस इलाहाबाद से मुद्रित। इसमें सन् १८३४ से १८८४ ई० तक का वृत्तान्त है। लेखक का नाम अंकित नहीं।

३. History of the north India Christian tract Book Society allahabad लेखक रेवेरेण्ड जे० जे० लूकस। उक्त सोसायटी के कार्यालय १८ कलायू रोड इलाहाबाद से प्रकाशित। इस में सोसायटी का वृत्तान्त सन १८४८ से १९२४ ई० तक का है।

नई समाज-व्यवस्था
(८)
राजनैतिक दृष्टिकोण से

(लेखक श्री रघुनाथ प्रसाद जी पाठक देहली)

जिस प्रकार के संसार का हम निर्माण करना चाहते हैं उसकी मोटी रूप-रेखा इस लेख-माला के प्रथम लेख में दी गई थी। उसके अनुसार हमारे संसार में शान्ति और सुरक्षा की सुनिश्चित गारन्टी होनी चाहिए जिससे हम संयम सहित लौकिक सुखों का उपभोग करते हुए अपना और अपने साथ समाज का हर प्रकार का विकास कर सकें।

मनुष्य का जीवनोद्देश्य यह है कि वह नैतिक जीवन व्यतीत करता हुआ, सांसारिक सुखों व भोगों की प्राप्ति करके अपना आत्मिक बल और सौन्दर्य बढ़ाए। जिस प्रकार आधि-व्याधियों से घिर कर मनुष्य शरीर अस्वस्थ हो जाता है ठीक उसी प्रकार सामाजिक, राजनैतिक और औद्योगिक जीवन में कुत्सित तत्वों की वृद्धि हो जाने से मनुष्य समाज के भीतर ऐसी अवस्था आ जाती है कि वह समाज-धर्म से पतित होता हुआ अवनति की ओर बढ़ता चला जाता है। इस कारण जैसा एक व्यक्ति में शरीरादि का स्वास्थ्य चाहिए उसी प्रकार सामाजिक और राजनैतिक जीवन भी मनुष्यों को गिराने वाला न होना चाहिये। जिस भांति नीरोगता से आन्तरिक स्वास्थ्य ठीक रहता है उसी प्रकार राज्यादि की सुव्यवस्था से बाहरी स्वास्थ्य ठीक रहता है। इस विचार से ज्ञात होता है कि राज्य-व्यवस्था मनुष्यों की नैतिक भावना (Moral sense) तथा नैतिक जीवन (Moral life) बनाने का साधन है।

यदि हमारी राज्य-व्यवस्था हमारे हित के लिए स्थापित न हो और केवल मात्र एक व्यक्ति वा कुछ विशिष्ट जनों के लाभ के लिए उसका प्रयोग होता हो और उन्हीं के स्वत्वों और स्वार्थों की रक्षा वा वृद्धि के लिए हम आए दिन युद्धों में कटते, मरते और पिसते रहें तो सचमुच हम अपने अभीष्ट संसार का निर्माण नहीं कर सकते। उस व्यवस्था में न तो सुख और शान्ति की उचित गारन्टी हो सकती है और न हमें सुख और सदाचार का जीवन व्यतीत करने का अवसर मिल सकता है। उसमें हम ऐसे कानून भी नहीं बनवा सकते जिनके द्वारा प्रजा का उचित लौकिक विकास एवं शिक्षण तथा सबको ज्ञान प्राप्ति और उन्नति का समान अवसर प्राप्त होकर सबके लिए स्वास्थ्य वर्द्धक घर, भोजन, गृहस्थी की वस्तुओं तथा चिकित्सा आदि की उचित व्यवस्था हो सके। जिस देश की राज्य शासन पद्धति बिगड़ जाती है उस देश में नैतिक दिवालिया पन (Moral Bankruptcy) व्याप्त हो जाता है।

अतएव हमारे अभीष्ट संसार के निर्माणार्थ सुराज्य शासन पद्धति की आवश्यकता है जिसका अस्तित्व प्रजा के हित के लिए और जिसका संचालन प्रजा के योग्यतम प्रतिनिधियों के

द्वारा हो। इसी तथ्य को अमेरिका के प्रेजीडेन्ट स्वनाम धन्य अब्राहम लिंकन ने इन शब्दों में व्यक्त किया था—

A Government of the people for the people by the people

अर्थात् प्रजा का राज्य, प्रजा के लिये होना चाहिये तथा प्रजा के लोगों द्वारा उसका संचालन होना चाहिये।

दूसरे शब्दों में इस शासन पद्धति को 'स्वराज्य' शब्द के नाम से सम्बोधित कर सकते हैं। जो राज्य प्रजा की अपनी सम्मति से चलाया जाता है वही 'स्वराज्य' कहलाये जाने के योग्य होता है।

स्वराज्य के उपयोग के लिये लोगों में अपेक्षित योग्यता भी होनी चाहिये। इस योग्यता के ३ आवश्यक अंग हैं। (१) दूर दृष्टि (२) मित्र दृष्टि (३) ज्ञान। जब तक प्रजा में (१) संकुचित दृष्टि (२) मानसिक द्वेष (३) और अज्ञान होगा तब तक स्वराज्य की स्थापना तथा उसकी रक्षा संभव नहीं हो सकती।

बहुत से व्यक्ति राजनैतिक कार्यों से बचने का यह बहाना बनाया करते हैं कि राजनीति बड़ा गंदा खेल है और राजनैतिक प्रगतियों में पड़ जाने से मनुष्य व्यर्थ की चख चख फिक्र २ में पड़ जाता है। दुर्भाग्य से यह बात आजकल कुछ सीमा तक सत्य है। और यह भी सत्य है कि राजनैतिक साधनों के बिना हम नये और अच्छे संसार का निर्माण नहीं कर सकते।

राजनीति के एक विकल्प के रूप में हमें कहा जाता है कि हम अपने व्यक्तिगत प्रभाव को काम में लाएँ और अपने को राजनैतिक दलदल से पृथक् रखें। हमें यह भी कहा जाता है कि यदि मनुष्य जाति को अधिक धार्मिक और बुद्धिमान् बनाना अभीष्ट हो तो नैतिक प्रेरणाओं पर विश्वास किया जाय। राजनीति के विकल्प के रूप में जब इस मार्ग का निर्देश किया जाता है तो यह उपदेश अग्राह्य और त्रुटि पूर्ण बन जाता है। नागरिक के रूप में हमारी राजनैतिक उत्तर दायिता होती है। यदि हम इस उत्तरदायिता की अवहेलना करते हैं तो हम अपने संसार के निर्माण में एक पग भी आगे नहीं बढ़ सकते क्योंकि जैसा कि ऊपर कहा गया है राजनीति धार्मिक जीवन के लिये अनिवार्य साधन है।

प्रसिद्ध अमेरिकन लेखक श्री० लुई फिशर ने अपनी पुस्तक A Great Challenge (एक महान् नैतिक चुनौती) में इस सचाई का निम्न प्रकार दिग्दर्शन कराया है:—

Politics used to be a game. Politics was a matter of who cleaned the streets and collected the ashes and appointed the police inspector. Politics has become the woof and warp of life; politics decides whether humanity is to be sated, employed, happy and alive instead of dead by bombs.

But their (of masses) sentiments, views and interests are not fully reflected in the political life of their country. Reformers, idealists, civic leaders, social workers internationalists, Leagues of Women

voters, trade unions, societies for the advancement of this and that noble cause are constantly struggling at the coat-tails of politicians. Would it not be better if they were themselves in politics?"
(P. 422)

"राजनीति को एक खेल समझा जाता था राजनीति उन लोगों से वास्ता रखती थी जो सड़कें साफ़ कराते, कूड़ा कर्कट जमा कराते और पुलीस इन्सपेक्टर की नियुक्ति करते थे। परन्तु अब राजनीति जीवन का ताना-बाना बन गई है। अब वह इसका फैसला करने वाली है कि बमों से मर मिटने के स्थान में मानव जाति को सन्तुष्ट, बेकारी से युक्त, सुखी और जीवित रहना है।

साधारण जनता की मनोभावनाओं, विचारों और हितों की देश के राजनैतिक जीवन में पूरी २ झलक देखने को नहीं मिलती। सुधारक, आदर्श वादी पादरी नेता, सामाजिक कार्य्य कर्त्ता, अन्तर्राष्ट्रवादी महिला निर्वाचकों के संघ, ट्रेड यूनियन तथा विभिन्न प्रकार के उद्देश्यों को लेकर स्थापित की गई अनेकानेक सुधार-समितियाँ लगातार राजनीतिज्ञों के पीछे २ लगी रहती हैं। क्या यह अच्छा न होता कि वे स्वयं राजनीति में पदार्पण करतीं।" प्रत्येक युवक युवती और स्त्री पुरुषों के लिए जो एक नए समाज और स्वतन्त्र संसार के निर्माण का स्वप्न देखते हैं यही नारा होना चाहिये कि राजनीति को अपनाओ।

उपर्युक्त प्रकार के तर्क में एक बड़ी भारी त्रुटि है। राजनैतिक प्रणालियों से अपने को पृथक् रखने का उपदेश देने वालों का वास्तविक अभिप्राय यह है कि सामाजिक और आर्थिक प्रणालियां कैसी ही क्यों न हों, राजनीति से हमारा कल्याण न होगा। उनका मत है कि किसी भी प्रकार की सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था के होते हुए भी पुरुष और स्त्रियां अच्छे बन सकते हैं।

कुछ ईसाइयों ने इस मत का खुले रूप में प्रचार किया है। उनकी धारणा है कि हमारी राजनैतिक व्यवस्था फैसिज्म हो वा प्रजातन्त्र पूंजीवादी वा साम्यवादी, मनुष्य चाहें तो उत्तम व्यवहार कर सकते हैं। धर्म किसी भी राजनैतिक व्यवस्था के प्रति उदासीन रहता है। लोगों की आत्मा का उद्धार करना धर्म्म का एकमात्र उद्देश्य होता है। वस्तुतः यह महान् भयंकर असत्य है।

मनुष्य जिस प्रकार के सामाजिक और आर्थिक वातावरण मे रखे जायँगे उसका प्रभाव उनकी-आत्मा पर अवश्य पड़ेगा। क्या हम निश्चय पूर्वक कह सकते हैं कि यदि कोई बच्चा मजदूरों की घनी और गन्दी बस्तियों में रक्खा जाय तो क्या उसके आचार-विचार पर बुरा प्रभाव न पड़ेगा। अवश्य दो चार व्यक्ति साधु महात्मा हो सकते हैं जो बुरे से बुरे प्रभाव से ऊपर रह सकते हों परन्तु यह बात १०० में से ९९ पर लागू नहीं होती। यदि ९९ का वातावरण दूषित हो तो वह दूषित हो जायँगे। जिस प्रकार कोई व्यक्ति वातावरण पर प्रभाव डालता है उसी प्रकार उस पर भी वातावरण का असर पड़ता है। यह सत्य है हम किसी व्यक्ति को केवलमात्र उसको शिक्षा देकर अच्छा और बुद्धिमान् नहीं बना सकते परन्तु हम उसे अच्छा

और बुद्धिमान् बनने का अवसर दे सकते हैं। यही राजनीति का मुख्योद्देश्य है और यही इसका उज्जल पहलू है जो धर्म्म से अविभाज्य है। यदि हम उसको घोर निर्धनता और अज्ञान में डालते हैं तो हम उसे उस अवसर से वंचित करते हैं। अज्ञान और निर्धनता के उपद्रवों के विरुद्ध बड़े पैमाने पर कार्यवाही करने के लिये राजनैतिक कार्यवाही की आवश्यकता होगी इसके अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं है।

कभी २ हमारे सामने यह तर्क उपस्थित किया जायगा कि समाज सुधार का विचार एक वहम है। उत्तम संसार के निर्माण से कोई लाभ न होगा। यह संसार कभी अच्छा न होगा। मनुष्य बड़े पापी होते हैं। यदि हम अच्छी आर्थिक व्यवस्था का निर्माण करने में सफल हो जाँय तो इससे नई बुराइयों का जन्म होगा। हम आगे न बढ़ेंगे फिर अपनी शक्ति खोने से क्या लाभ ?

वस्तुतः हमारा काम उन भयंकर त्रुटियों को दूर करना है जो आज हमें परेशान कर रही हैं और वे राजनैतिक यत्न से ही दूर हो सकती हैं। यह संभव हो सकता है कि पुरुष और स्त्रियाँ अवसरों से लाभ न उठायें। यह भी संभव हो सकता है कि सत्ता और शक्ति की खोज में रहने वाले व्यक्तियों के द्वारा हमारा श्रेष्ठ समाज नष्ट भ्रष्ट हो जाय। यह भी संभव हो सकता है कि श्रेष्ठ संसार के निर्माण के पश्चात् नई २ समस्याएं खड़ी हो जायं। परन्तु हमें निराश होने की आवश्यकता नहीं है। हमें पूर्णता की प्राप्ति की कल्पना न करनी चाहिए। हमें तो तात्कालिक अपूर्णता और त्रुटियों को मार्ग में से हटाना है हमारा काम उन बीमारियों से लोहा लेना है जिनका जन्म वर्तमान आर्थिक और सामाजिक प्रणालियों से हुआ है और इसके लिए राजनैतिक कार्यवाही नितान्त आवश्यक है।

हमारा काम यहां पर ही समाप्त नहीं हो जाता। हमें उन बीमारियों और त्रुटियों को दूर करने के साथ साथ सार्वभौम भ्रातृ संघ की स्थापना और इसकी सुरक्षा के लिए सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य की अवस्थाएं उत्पन्न करनी हैं। तब ही देशों में और विश्व में सुख और शान्ति का साम्राज्य होगा और तब ही अखिल विश्व के प्राणियों में एक कुटुम्ब के सदस्यों की नाईं पारस्परिक प्रेम और सौहार्द के भाव अंकुरित होकर उनके द्वारा एक दूसरे के हित की सिद्धि होगी। उत्तम अमेरिका, उत्तम इंगलैंड, उत्तम फ्रांस, उत्तम जर्मनी, उत्तम भारत को उत्तम संसार के निर्माण के लिए पारस्परिक सहयोग से काम करना होगा। शान्ति की समस्या शक्ति मूलक राजनीति से हल न होकर धर्ममय राजनीति से हल होगी। तब ही उत्तम संसार का निर्माण होगा जिसमें सब ही स्वतन्त्र होंगे। अपने विकाश के लिए सबको अवसर प्राप्त होगा। इसके अतिरिक्त बेकारी के जुए से मुक्ति, अन्तर्वेदना से पूरित भेदभाव से छुटकारा। अभाव की पीड़ा से मुक्ति अरक्षा और भय से स्वतन्त्रता, अत्यधिक शासन-नियंत्रण और अत्यधिक सम्पत्ति के प्रपीड़न से मुक्ति, और काबू में न लाए जा सकने वाले राजनैतिक एवं आर्थिक प्रमुखों से छुटकारा मिल जायगा। तब हर एक को कुछ सीखने का, कुछ बढ़ने का, और अन्यों की सेवा करते हुए अपने को जान लेने का अवसर प्राप्त होगा। इस प्रकार के संसार में मानव और मानवों में जो शान्ति होगी, वही राष्ट्रों की शान्ति होगी।

पाकिस्तान असम्भव
(३)
जन संख्या की दृष्टि से

(ले०—श्री डा० सूर्यदेव शर्मा एम० ए० डी० लिट्, अजमेर)

भारत में पाकिस्तान बनाये जाने में व्यावहारिक दृष्टि से कुछ ऐसी कठिनाइयां हैं जो किसी भी प्रकार से हल नहीं की जा सकतीं। श्री राजगोपालाचार्यजी ने अपना प्रस्ताव महात्मा गान्धी की सम्मति से मि० जिन्ना के पास भेजा था और उसमें इस बात की चेष्टा की गई थी कि किसी प्रकार से हिन्दू मुस्लिम समस्या का हल हो जाय। यद्यपि भारत की समस्त हिन्दू जनता इस प्रस्ताव के विरुद्ध थी क्योंकि उसमें मुस्लिम बहुत प्रान्तों को आत्म निर्णय का अधिकार दिया गया था लेकिन इस शर्त के साथ कि उन प्रान्तों के समस्त निवासियों की सम्मति से उन प्रान्तों को भारत संघ से अलग होने का अधिकार होगा, परन्तु मि० जिन्ना ने इसको मानने से इनकार कर दिया क्योंकि वह चाहते थे कि मुस्लिम बहुल प्रान्तों को वहाँ के निवासियों की सम्मति लिये बिना ही हिन्दुस्तान से अलग करके पाकिस्तान बना दिया जाय। मि० जिन्ना ने कभी यह नहीं सोचा कि जिन लोगों की तकदीर (भाग्य) का फैसला करने वह जा रहे हैं उनकी सम्मति लेना भी आवश्यक है। और फिर यह नहीं समझ में आता कि मि० जिन्ना पंजाब, बंगाल और आसाम के उन भागों को पाकिस्तान में कैसे शामिल कर सकते हैं जिस में कि हिन्दुओं की आबादी अधिक है? उदाहरण के लिये पंजाब के केवल उत्तरी पश्चिमी १७ जिले, और बंगाल के पूर्वी १६ जिले तथा आसाम का केवल एक सिलहट का जिला ऐसा है जिसमें मुसलमानों की आबादी अधिक है, शेष पंजाब के १३ जिलों में और बंगाल के १२ जिलों में तथा आसाम के शेष १३ जिलों में हिन्दुओं की जनसंख्या मुसलमानों से कहीं अधिक है। तो यदि संख्या की अधिकता से ही जिले बाँटे जाँय तो उपरोक्त तीनों प्रान्तों के ३८ जिले किसी प्रकार से भी पाकिस्तान में शामिल नहीं किये जासकते। यदि संख्या के आधार पर ही पाकिस्तान बनना है तो बंगाल आसाम और पंजाब के कुल ७२ जिलों में से ३४ जिलों में ही जहाँ कि मुसलमानों की आबादी अधिक है पाकिस्तान बनाया जा सकता है, शेष ३८ जिलों में नहीं क्योंकि उनमें हिन्दुओं की संख्या अधिक है। इस प्रकार उन तीन प्रान्तों में आधे से अधिक जिले हिंदुओं के हिन्दुस्तान में रहेंगे।

और फिर पाकिस्तान में शामिल किये जाने वाले उन ३४ जिलों में भी हिन्दु और सिक्खों की आबादी निम्न प्रकार से रहेगी:—

पंजाब के १७ जिलों में २८ लाख हिन्दू और १७ लाख सिख होंगे बंगाल के १६ जिलों एक १ करोड़ १४ लाख हिन्दू होंगे और आसाम के सिलहट जिले में १२ लाख फिर बताइये कि इन जिलों में इन हिन्दू और सिक्खों का क्या बनेगा? इसी प्रकार यदि सिन्ध, सीमा

प्रान्त और बिलोचिस्तान को भी इन मुसलिम बहुल ३४ जिलों के साथ में जोड़ दिया जाय तो उनमें कुल हिन्दू और सिक्खों की संख्या सन् १९४१ की जन गणना के अनुसार १ करोड़ ६० लाख तक पहुंचती है। ये लोग पाकिस्तान के मुसलिम राज्य में रहना क्यों पसन्द करेंगे? और फिर यह संख्या तो हमने तब बताई है जबकि हिन्दू बहुल ३८ जिले पञ्जाब, बंगाल और आसाम से अलग कर दिये जांय जैसा कि पं० जवाहर लाल नेहरू के शब्दों में किया जाना अति आवश्यक है लेकिन मि० जिन्ना इस बात पर कहां राजी होते हैं? वे तो पूरा पञ्जाब और दिल्ली प्रान्त, पूरा बंगाल और पूरा आसाम पाकिस्तान में शामिल करना चाहते हैं सो भी वहाँ के लोगों की सम्मति के लिये बिना। यह कैसा न्याय है? यदि ऐसा किया भी जाय तो १ करोड़ ६० लाख तो हिन्दुओं की आबादी केवल उपरोक्त जिलों में ही है, कुल पाकिस्तानी प्रान्तों में हिन्दु और सिक्खों की संख्या लगभग ४ करोड़ ८० लाख है। सन् १९४१ की जन गणना के अनुसार सीमाप्रान्त, बिलोचिस्तान, सिन्ध पंजाब, बंगाल और आसामकी कुल आबादी मिलाकर ११ करोड़ से कुछ अधिक है। इनमें से मोटे तौर से ५ करोड़ ६० लाख मुसलमान हैं और ४ करोड़ ८० लाख हिन्दू। इन आंकड़ों से स्पष्ट हो जाता है कि यदि उपरोक्त सब प्रान्तों को पाकिस्तान में रख दिया जाय तो ४ करोड़ ८० लाख हिन्दुओं का क्या होगा? मि० जिन्ना उन को अभी से वोट देने का अधिकारी नहीं समझते। वह उनकी सम्मति लिये बिना ही उनको पाकिस्तान में शामिल करना चाहते हैं तो भला पाकिस्तान बन जाने पर उनकी क्या दुर्दशा होगी यह सरलता से समझा जा सकता है।

फिर सिन्ध की आबादी में लगभग २७ प्रतिशतक हिन्दू हैं तो बिना शिव के २८ नगरों में से २० नगरों में हिन्दुओं की आबादी अधिक है इसलिये उन्हीं के हाथों में सिन्ध का अधिकतर वाणिज्य व्यापार और कला कौशल है। यही दशा सीमाप्रान्त में भी है वहाँ हिन्दुओं की आबादी तो लगभग १० प्रतिशतक हैं लेकिन वहां के २६ नगरों में से ११ नगरों में हिन्दुओं की जन संख्या अधिक है। पंजाब में भी हिन्दुओं की संख्या ४४ प्रतिशतक है और उनकी अधिकतर आबादी नगरों में ही है। यही दशा बंगाल में है। पश्चिमी बंगाल में तो हिन्दुओं की आबादी लगभग ८७ फीसदी है और मुसलमान सिर्फ १३ फीसदी हैं। उसमें कलकत्ता नगर की समस्या सब से कठिन है। उसकी आबादी में लगभग १५॥ लाख हिन्दू हैं और ८० हजार अन्य लोग हैं तथा ४ लाख ९७ हजार मुसलमान हैं। वह २४ परगना जिले में स्थित है जिसकी कुल आबादी में भी कलकत्ता नगर को छोड़ कर लगभग २४ लाख हिन्दू हैं, ८० लाख अन्य लोग हैं और केवल ११ लाख मुसलमान हैं। इस प्रकार कलकत्ता नगर तथा उसके आसपास के जिले में हिन्दुओं की संख्या मुसलमानों की संख्या से तिगुनी और दुगनी से भी अधिक है।

इस प्रकार जन संख्या की इन कठिनाइयों को देखते हुए पाकिस्तान के पक्षपाती कहते हैं कि जन संख्या की समस्या को सुलझाने के लिए प्रान्तों का दुबारा बटवारा कर दिया जायगा। अम्बाला डिविजन को पंजाबसे अलग कर दिया जायगा जिसमें ३१ हिन्दू २ लाख ४० हजार

सिक्ख, और ११ लाख मुसलमान रहते हैं, तो शेष पश्चिमी प्रान्त में मुसलमानों की आबादी ५७ फी सदी से बढ़कर ६२ फी सदी के लगभग हो जायगी इसी प्रकार पश्चिमी बंगाल का बर्द्धवान डिविजन बंगाल से अलग कर दिया जयगा जिस में ८१ लाख १५ हजार हिन्दू और १४ लाख १९ हजार मुसलमान रहते हैं। इसके अलग हो जाने से शेष बंगाल में मुसलमानों की आबादी ५४ फी सदी से बढ़कर ६५ फी सदी हो जायगी। लेकिन मुसलिम लीग के इन प्रान्तों के पूर्व विभाजन के प्रस्ताव से क्या विशेष लाभ होगा? यदि शेष पंजाब और बंगाल में मुसलमानों की आबादी कुछ फीसदी बढ़ भी गई तो क्या? साथ ही इस प्रस्ताव से यह भी सिद्ध होता है कि मुसलिम लीग के लोग हिन्दु बहुल जिलों को आत्मनिर्णय का अधिकार नहीं देना चाहते। उधर मुसलिम लीगी कहते हैं कि वे बचे हुए पाकिस्तानी प्रान्तों में हिन्दू और सिख अल्प संख्यकों को उचित संरक्षायें देंगे लेकिन इन संरक्षणों पर अभी से विश्वास कैसे किया जा सकता है। जब सिन्ध की मुसलिम लीगी सरकार अपने शासनकाल में आर्यों की धर्म पुस्तक 'सत्यार्थप्रकाश' को जो लगभग ५० वर्ष से देश विदेश मे प्रचलित है, जब्त कर सकती है और भारत के समस्त हिन्दुओं, कांग्रेसी नेताओं और समझदार मुसलमानों के उस प्रतिबन्ध के विरोध में दिये गये वक्तव्यों पर कुछ भी ध्यान नहीं देती, तो कैसे आशा की जा सकती है कि पाकिस्तान में हिन्दु अल्प संख्यकों के अधिकारों और हितों की रक्षा हो सकेगी? जैसा कि सरदार वल्लभ भाई पटेल ने ता० १७ नवम्बर १९४५ को वक्तव्य देते हुए कहा था कि अगर मुसलिम लीग पाकिस्तान में रहने वाले अल्प संख्यकों को संरक्षणों का विश्वास दिलाती है तो वह स्वयं हिन्दुस्तान में अल्पसंख्यक मुसलमानों केलिए कांग्रेस द्वारा दिये जाने वाले संरक्षणों पर विश्वास क्यों नहीं करती? जो बात वह दूसरोंके लिए हितकर समझती है, वह अपने लिए हितकर क्यों नहीं समझती? इस अविश्वास की नीति से तो मुस्लिम लीग न मुसलमानों का भला कर सकती है और न पाकिस्तान बना सकती है।

अब इस प्रश्न का दूसरा पहलू लीजिये कुल ब्रिटिश भारत की लगभग ३० करोड़ आबादी में से लगभग १०॥ करोड़ आबादी पाकिस्तानी प्रान्तों की है। उसको निकाल कर शेष हिन्दुस्तान में लगभग १९॥ करोड़ आबादी रहेगी जिसमें से २ करोड़ ४ लाख से अधिक मुसलमान हैं। यह संख्या तो ब्रिटिश भारत की है। देशी रियासतों में भी लगभग १५ लाख मुसलमान हैं। इस प्रकार शेष हिन्दुस्तान में लगभग २ करोड़ २० लाख मुसलमान रहेंगे जो पाकिस्तान से बाहर होंगे उन के लिए मुस्लिम लीग क्या करना चाहती है? क्या उनके संरक्षणों का प्रश्न फिर नहीं उठ खड़ा होगा? सन १९४० के मुस्लिम लीग के लाहौर वाले प्रस्ताव के अनुसार प्रादेशिक पुनर्विभाजन Territorial readjustmont) करने पर भी मुस्लिम लीग पाकिस्तान में केवल ७४ फी सदी मुस्लिम आबादी को रख सकेगी, शेष २६ फी सदी अर्थात लगभग २॥ करोड़ मुसलमान फिर भी हिन्दुस्तान में रहेंगे। जिस साम्प्रदायिक और अल्प संख्यकों की समस्या को सुलझाने के लिये पाकिस्तान की योजना प्रस्तुत की गई है वह अभी तो केवल एक राष्ट्र भारत में ही है।

पाकिस्तान बन जाने पर पाकिस्तान और हिन्दुस्तान दोनों में उठ खड़ी होगी। पाकिस्तान में हिन्दुओं और सिक्खों के संरक्षण का प्रश्न होगा और हिन्दुस्तानमें मुसलमानों के संरक्षणोंका एक जनसंख्या विशेषज्ञ की गणना के अनुसार तो हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की आबादीमें निम्न प्रकार से और भी अधिक परिवर्तन हो जायगा। सीमाप्रान्त, सिन्ध और पश्चिमी पंजाब तथा पूर्व बंगाल का कुल क्षेत्रफल ३ लाख ६७ हजार वर्ग मील होगा और आबादी ५ करोड़ ८६ लाख होगी। इस आबादी में ३ करोड़ १४ लाख मुसलमान ३० लाख हिन्दू और १४ लाख सिक्ख होंगे। शेष हिन्दुस्तान का क्षेत्रफल ११ लाख ५१ हजार वर्ग मील होगा जिसमें लगभग ९ करोड़ आबादी होगी जिनमें से २२ करोड़ ६३ लाख हिन्दू, ३ करोड़ ७४ लाख मुसलमान और १२ लाख सिक्ख होंगे। इस प्रकार प्रति ७६ मुसलमानों में से ३९ को पाकिस्तान में और ३८ को हिन्दुस्तान मे रहना पड़ेगा। इस प्रकार अल्पमत और बहुमत की समस्या वैसी की वैसी उलझी हुई रह जायगी। (नवयुग १८-११-४४)

फिर इस समस्या को हल करने का दूसरा उपाय डाक्टर अब्दुल लतीफ ने यह बताया है कि पाकिस्तान के सब हिन्दुओं और सिक्ख अपना घर बार छोड़ कर हिन्दुस्तान में व मुसलमान पाकिस्तान में जा बसें। इसका अर्थ यह होगा कि पाकिस्तानी प्रान्तों के लगभग ५ करोड़ हिन्दू अपनी जायदाद, भूमि, बाग, बगीचे मठ मन्दिर, घर, बैठक तीर्थ और गुरुद्वारे छोड़ कर हिन्दुस्तान में जाँय और इसी प्रकार हिन्दुस्तान के लगभग २॥ करोड़ मुसलमान अपना सब माल सामान जमीन जायदाद घर मकान छोड़कर पाकिस्तान में जाँय। भला यह कैसे संभव हो सकता है और यह कार्य दोनों के लिए कितना व्ययसाध्य और कितना कष्ट साध्य होगा। इसका अनुमान शायद डाक्टर लतीफ ने नहीं किया। मुहम्मद तुगलक ने केवल एक नगर दिल्ली की आबादी का ही स्थान परिवर्तन दौलताबाद के लिए किया था उसमें ही प्रजा को किनकिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, इतिहास इसका साक्षी है जिसमें मुहम्मद तुगलक को पागल बादशाह की उपाधि दी गई है तो भला अब ७॥ करोड़ की आबादी का स्थान परिवर्तन कराने की सलाह देने वाले को क्या उपाधि मिलेगी। यह तो भविष्य के इतिहासकार ही लिखेंगे लेकिन वह बात निश्चित और निर्विवाद रूप से सिद्ध है कि जन संख्या की अधिकता के आधार पर कभी पाकिस्तान नहीं बनाया जा सकता और यदि ऐसा कभी किया भी गया तो पाकिस्तान और हिन्दुस्तान दोनों मे नवीन समस्यायें उठ खड़ी होंगी। इसीलिये पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अपने १३ नवम्बर १९४५ के बम्बई वाले वक्तव्य में कहा था, "मिस्टर जिन्ना ने पाकिस्तान का जो रूप निर्धारित किया है वह अव्यावहारिक प्रस्ताव है और कभी पूरा नहीं हो सकता। पाकिस्तान की कल्पना केवल उन्हीं क्षेत्रों के रूप मं हो सकती है जहां कि मुसलमानों का भारी बहुमत है। निश्चय ही इसका यह मतलब है कि उस सारे क्षेत्र की जनता की सम्मति ही निर्णायक होगी न कि केवल मुसलमानों की। अतएव यह स्पष्ट है कि इस प्रश्न का फैसला मुस्लिम लीग या कांग्रेस द्वारा न होगा। इसका अन्तिम फैसला तो सारे भारत की जनता ही करेगी। कांग्रेस यह अनुभव करती है कि पाकिस्तान से कोई समस्या हल नहीं होगी किन्तु अनेक नई समस्यायें उत्पन्न हो जायेंगी।

(हिन्दुस्तान १५-११-४५)

निवेदन

अच्छासाहित्य दिल और दिमाग को उज्ज्वल तथा उन्नत करता है। शारदा मन्दिर पुस्तक भण्डार नई सड़क देहलीने गत कई वर्षों से ऐसे साहित्य का प्रकाशन और प्रचार कर केवल अपने ही देश में नहीं अपितु विदेश एवं उपनिवेशों में तक भी इस क्षेत्र में पर्याप्त ख्याति प्राप्त की है। भण्डार अनेक प्रकाशन कर व स्कूल कालेज एवं पाठशालाओं को लौकिक धार्मिकतथा साहित्यिक पुस्तकें उचित मूल्य पर पहुंचा कर उनकी सेवा कर रहा है। आप यदि अपने पुस्तकालय अथवा लायब्रेरी के लिए उत्तम और आधुनिक साहित्य खरीदना चाहें तो शारदा मन्दिर पुस्तक भण्डार को लिखें। आप इसके व्यापारिक व्यौहार से संतुष्ट होंगे और पुस्तकों के संग्रह से पर्याप्त सहायता प्राप्त कर सकेंगे। एक बार परीक्षार्थ अपना आर्डर भेजें अथवा लिखें तो हम आपको अपनी सूची भेज दें।

निवेदकः—

संचालकः— प्रो० सुधाकर एम० ए०

मैनेजर शारदा मन्दिर पुस्तक भण्डार, नई सड़क, देहली

श्री महात्मा गान्धीजी के नाम एक आवश्यक पत्र

श्री पूज्यपाद महात्मा जी !

सादर प्रणामाञ्जलि

आशा है भगवान् की कृपा से आप सर्वथा स्वस्थ और कुशल पूर्वक होंगे। मैं इस पत्र के द्वारा आपका ध्यान कुछ आवश्यक विषयों की ओर आकर्षित करना अपना कर्तव्य समझता हूँ। आशा है आप उनपर प्रकाश डालकर अनुगृहीत करेंगे।

(१) सबसे पहली बात जिसको समाचार पत्रों में पढ़कर मुझे अत्यन्त आश्चर्य हुआ था और जिसके विषय में मैं आपका विचार स्पष्ट-जानना चाहता हूँ (यदि वह समाचार सत्य है यद्यपि मुझे उसमें सन्देह है) वह आपके द्वारा नोआखली के एक ग्राम में राधाकृष्ण की मूर्ति की स्थापना है। आप कई बार इस बात को कह चुके हैं कि आप मूर्ति पूजक नहीं हैं तथा आप सर्व व्यापक परमात्मा के ही उपासक हैं ऐसी अवस्था में आपका राधाकृष्ण की मूर्ति की स्थापना का समाचार यदि सत्य है तो सचमुच आश्चर्यजनक है। राधाकृष्ण की मूर्ति स्थापना के विषय मे दूसरी अत्यन्त आक्षेप-योग्य बात है श्री कृष्ण का राधा के साथ पुराण वर्णित सम्बन्ध। आप स्वयं जानते होंगे कि ब्रह्मवैवर्तादि पुराणों में श्रीकृष्ण का राधा के साथ किस प्रकार का अश्लील सम्बन्ध वर्णित है। राधा श्रीकृष्ण की विवाहित पत्नी न थी, उसका जैसा अश्लील वर्णन पुराणों में पाया जाता है (जिस वर्णन को हम कपोल कल्पित समझते हैं क्योंकि हम श्रीकृष्ण ,को योगिराज मानते हैं) उसको आप जैसे पवित्रात्मा का मूर्ति स्थापना द्वारा प्रोत्साहित करना, क्षमा करें—मुझे सर्वथा अनुचित प्रतीत होता है। कृपया यह सूचित करने का कष्ट उठायें कि यह राधाकृष्ण की मूर्ति की स्थापना का समाचार कहा तक सत्य है तथा आपका इस विषय में क्या विचार है ? क्या आप इस तथ्य को स्वीकार नहीं करते कि श्रीकृष्ण की राधा और गोपियों के साथ रास लीलादि की जो कथायें पुराणों मे वर्णित हैं वे हमारे देश में दुराचार की वृद्धि का प्रधान कारण हुई हैं।

(२) आनन्द बाजार पत्रिका के ६ जनवरी सन् १६४७ के अङ्क में इस आशय का समाचार प्रकाशित हुआ था कि मासिनपुर में आपसे यह पूछा गया कि 'आपके और आर्य समाज के आदर्श में प्रभेद है या नहीं, तो आपने कहा कि आर्य समाज मे ही मतभेद है कारण इसमें विभिन्न शाखायें वर्तमान हैं। किसी विषय में आर्य समाज के साथ एक मत हूँ और बहुत से विषयों में मतभेद भी है। इत्यादि

कृपया सूचित करें कि यह रिपोर्ट कहाँ तक सत्य है तथा आपका आर्य समाज से किन २ विषयों में मतभेद है। आर्य समाज में ही मतभेद है तथा उसमें विभिन्न शाखायें वर्तमान हैं यह आपका कथन यथार्थ नहीं है। प्रतीत होता है कि किसी ने आपको अशुद्ध सूचना देदी है। आर्य समाज में कोई परस्पर विरुद्ध भिन्न २ शाखायें विद्यमान नहीं हैं। शिक्षाप्रणाली आदि विषयक जो परस्पर मतभेद था वह भी अब प्रायः समाप्त हो चुका है।

(३) तीसरी बात जिसकी ओर अभी गत सप्ताह

अमृतसर, लाहौर, मुलतान, रावलपिण्डी आदि उपद्रवग्रस्त प्रदेश की यात्रा के पश्चात् मैं आपका ध्यान आकर्षित करना अपना कर्तव्य समझता हूँ। वह उस विश्वासघात की है जिस के सैकड़ो उदाहरण मुसलमान आततायियोने गत पाशविक उपद्रवों में दिखाये है। मुलतान से १।। मील पर सूरजम्यानी नामक एक ग्राम है। वहा के मुसलमानों ने हिन्दू पड़ोसियों को अपने घरों मे बुलाकर कहा कि हम आप की रक्षा करेंगे फिर उन्हें स्त्रियों और बच्चों सहित मार डाला। मेरे जन्म स्थान दुनियापुर जिला मुलतान के समीपस्थ अगार नामक स्थान मे एक अल्लाबख्श नामक मुसलमान ने ५०० आदमियों सहित प्रवेश किया। वहा के बड़े जमींदार चौ० हरदयाल के समझाने पर उसने कुरान शरीफ की शपथ खाकर विश्वास दिलाया कि हम लोग आप के ग्राम की रक्षा के लिए आये हैं तथा उस के निवासियों पर कोई आक्रमण न करेंगे। ९ माच रात को ८ बजे यह शपथ खाई गई और उसी रात १ बजे ५०० आदमियों सहित उस ग्राम पर धावा बोल कर न केवल लूटमार और अग्निकाण्ड किया गया बल्कि सैकड़ों ग्राम वासियों का क्रूरता पूर्वक वध किया गया। रावलपिण्डी जिले के थोआखालसा नामक स्थान मे हिन्दुओं और सिक्खो को यह विश्वास दिलाकर कि हम आप लोगों पर कोई आक्रमण न करेंगे फिर आक्रमण कर दिया गया और यह कहा गया कि यदि नोजवान औरतों को मुसलमान बनाकर तुम हमारे सुपुर्द करदो तो हम छोड़ सकते हैं जिस पर ६५, ७० नवयुवतियों ने कुए मे छलांग मार कर अपनी बलि दे दी। ऐसी ही घटनाएं अन्य अनेक स्थानों पर हुईं। पूज्य-महात्माजी, जिन के मतग्रन्थ मे काफिरों को मित्र न बनाने और उनके साथ विश्वास घात करने तक का स्पष्ट निर्देश हो वे यदि ऐसेकार्य करें तो आश्चर्य ही क्या है? मैं तो समझता हूँ कि मुसलमानी कालका प्राय समस्त इतिहास ऐसे विद्वेष पूर्ण कारनामों और विश्वासघातों से भरा पड़ा है। क्या इन घोर बर्बरता रक्त पूर्ण अमानुषिक अत्याचारों का प्रतीकार अहिंसा और एकता के उपदेशो से किया जा सकता है? मुझेतो विश्वास नही होता। आपकी बहुत अद्भुत आत्मिक शक्ति के लिए मै अत्यधिक आदर का भाव रखता हूँ किन्तु पूज्य महात्माजी! क्या आप सचमुच समझते है कि पूर्वी बगाल मे अपने शान्ति और अहिंसा के विषय मे आप को सफलता मिली है? यदि सचमुच आप को सफलता मिली है (जिस मे अनेक प्रत्यक्ष दर्शी अनुभवी असहमत हैं) तो आप को देहली के परामर्श कार्यसे निवृत्त होकर पंजाब जाकर वहा के मुसलमानों को समझा बुझाकर सीधे रास्ते पर लाने का यत्न करना चाहिये जिन्होंने विश्वासघात, व्यभिचार और अग्निकाण्ड लूटमार आदि की पराकाष्ठा कर दिखाई है जिन अत्याचारों का वृत्तान्त सुनकर पत्थर भी रोने लग जाएगे और वज्र का हृदय भी टूक २ हो जाएगा। आप कृपया कुछ ऐसा उपाय करें जिससे सच्ची हार्दिक एकता स्थापित हो सके।

भवदीय विनीत

धर्मदेव विद्यावाचस्पति ४-४-४७

गिरमिट की गुलामी

श्रीमती निर्मला देवी ब्रह्मदत्त दयाल, (दक्षिण अफ्रीका)

अब सहा नहीं जाता, वीणा ! जी में तो आता है कि इस दास्य जीवन का ही अन्त कर डालूँ। न रहेगा बॉस, न बजेगी बांसुरी। अन्याय और अत्याचार की भी कोई हद होती है; किन्तु इन श्वेतांगों की नीति और मनोवृत्ति ही निराली है, वीणा !'

वीणा ने विस्फारित नेत्रों से देखा कि मोहन की आंखों में चिन्ता और व्यथा के आंसू भर कर भी थमे हैं, मानो एक साधारण झोंका लगते ही टपक पड़ेंगे। बड़ो कठिनाई से मोहन ने आँसुओं को रोककर कहा—'वीणा, हम गुलाम हैं, गुलामी क्या नहीं कराती ? गुलामी वह पाप है, जिसका कौमी क्रान्ति के सिवा और कोई प्रायश्चित्त नहीं।'

'हां मोहन, दुनिया में नौकरी-चाकरी करके निर्वाह करना क्या कोई बुरी बात है ? सभी कौम के लोग तो नौकरी करते हैं। पर चूँकि हमारा देश पराधीन है, इसी से हमको नौकर नहीं, गुलाम, कुली, समझा जाता है।' वीणा प्रकम्पित स्वर में बोली। पर उसकी बात काट कर मोहन बीच में ही बोल उठा—'हमारे दिल में दुःख की आँधी चले; पर हमारे मुँह से आह भी न निकलनी चाहिये ! भाग्य की कैसी विडम्बना है ! खैर, जाने दो इन बातों को। तुम इस झुलसा देने वाली धूप में पानी भरने आई हो, वीणा ? मुझे भी प्यास लगी है, जरा ठण्डा पानी तो पिलाओ।'

वीणा अपना घड़ा लेकर नदी की चंचल धारा में झुक गई। मोहन उसके सुन्दर-सुडौल शरीर पर टकटकी लगाए बोला—'आज सवेरे से कुछ खाया भी नहीं।। पर जालिम साहब इस कड़कती धूप में सांस लेने का भी अवसर न देगा।'

मोहन झुक गया और वीणा बड़े प्रेम से उसके चुल्लू में पानी ढालने लगी। मोहन पानी पीकर सुस्ता भी न पाया था कि साहब की कड़कती आवाज ने उसे थर्रा दिया—'मोहान, मोहान, मोहान !'

'देखो वीणा ! साहब शैतान आ पहुँचा। नजाने क्या तूफान मचावे। शाम को तुम से भेंट होगी ही; अब विदा।' यह कहकर मोहन चला गया।

वीणा वहीं नदी के किनारे बहुत देर तक बैठी रही। एक-एक कर अपने अतीत की सुखमय स्मृतियां तथा भविष्य के रंगीन चित्र सामने आने लगे। कितना सुन्दर सुखद मदिरासे भी मादक और मधु से भी मधुर नक्शा उसकी आंखोंके सामने खिंच गया। उसकी आंखोंकी बरौनियोंपर आंसूकी नन्हीं-नन्हीं बूँदें ढलककर बिखर गईं। ओह ! मोहन आज बहुत परेशान है, उसके अन्दर एक तूफान उठ रहा है। उसका हृदय कांप उठा, रोंगटे खड़े हो गए। एक अज्ञात आशंका से वह विचलित हो उठी। आंखें आर्द्र हो आईं, मुँहसे आह निकल पड़ी। हृदयमें व्यथा छिपाए जलती जमीनपर जल्दी-जल्दी डग बढ़ाते हुए वीणा मन

ही मन बड़बड़ाती अपने घरकी राह चल पड़ी— 'हे भगवान्, हम दरिद्र, दलित और पीड़ित गुलामोंका भी ध्यान रखना।'

'मोहान, तुम कहां ठा इटनी डेर ?'

'साहब, बहुत ज़ोरोंकी प्यास लगी थी। इसलिए पास ही नदीपर पानी पीने चला गया था। आज सबेरेसे कुछ खाया भी नहीं है, साहब !'

क्यों नहीं खाया? कौन टुमको खानेसे रोका! टुम मस्ती करता, इडर-उडर घूमटा और झूट बोलटा—हमारी आँखमें धूल झोंकने मांगटा है?

'नहीं साहब, झूठ क्यों बोलूँगा? खाता क्या? घरमें तो चूहे डण्डे पेल रहे हैं। भूखसे तो अँतड़ियाँ कुलबुला रही हैं फिर घूमने-फिरने की उमंग कहाँ? मै तो सिर्फ पानी पीनेके लिए गया था और पांच मिनटके अन्दर वापस आ गया।'

'टुमरा चालबाजी हम खूब जानटा है। कुली बहुट झूठा होटा है। कुलीमें करैक्टर नहीं, मोरेल्टी नहीं, सिविलिजेशन भी नहीं। उसका बाटका एटबार नहीं कर सकता। काम करना नहीं मांगटा, हरामका पैसा लेटा है। हुकुम बराबर नहीं मानेगा, काम ठीक नहीं करेगा, तो हम जूटा मारेगा, चमड़ी निकाल लेगा सुना, मोहान !'

मोहनके तन-बदनमें आग लग गई। मनुष्य के साथ क्या मनुष्यका यही व्यवहार है? चमड़े के रंग में यह चमत्कार! उसका चमड़ा गोरा है और मेरा भूरा, इसीलिए वह साहब और मैं गुलाम, कुली! मोहन मर्माहत हो उठा, पर लाचार था। करता ही क्या? चुपके से कुदाली उठाई और अपने काम में जुट गया। पर वह कामपर टिक न सका। अकस्मात् उसकी छाती में दर्द उठा, आखोंके सामने अँधियारी छा गई। उसने कुदाली फेंक दी और चक्कर खाकर वहीं पेड़के सहारे बैठ गया।

साहबकी दृष्टि खेतपर लगी हुई थी। लहलहाती हुई हरी-भरी गन्नेकी खेती देखकर वे आनन्द-विभोर हो रहे थे। ज्यों ही उनकी निगाह उधरसे हटकर मोहनपर पड़ी, वे आग बबूला हो गरज उठे—'क्या यह बदमाश कुली अभी टक बैठा है? फिर मोहनको सम्बोधन कर के बोले —'ओ डैम कुली, सूअर, निगर' काम नहीं करटा, बैठा है?'

बेचारा मोहन क्या बोलता? पेट में आग लगी थी, छातीमें दर्द हो रहा था; तिसपर साहबके वाक्य-बाणसे छिदकर उसका कलेजा छलनी हो रहा था। वह कुछ न बोला, वैसे ही बैठा रहा। इसपर साहबके क्रोधका पारा और भी चढ़ गया। उन्होंने हण्टर उठाया और एक-दो-तीन....! मोहनकी पीठ लहूसे लथपथ हो गई। वह बेहोश हो गया। बेहोशी की हालतमें भी दो-चार ठोकरें और लगाकर साहबने अपनी छाती जुड़ाई। इस क्रूर कर्मपर भी साहबको सन्तोष न हुआ। कुलियों को सबक सिखाने के लिए मोहनको पुलिसके हवाले कर दिया।

जब मोहनकी बेहोशी दूर हुई, आंखें खुलीं, तो उसने अपने को जेलके सेलमें बन्द पाया। जैसे-तैसे राम-राम रटते रात कटी। सबेरे नौ बजे वह वेरूलमके मजिस्ट्रेटके इजलासमें पेश किया गया। उस इलाकेकी कई कोठियोंके और भी अभागे कुली साहबकी हुक्म-उदूलीके अपराधमें सजा पाने के लिए वहाँ पुलिसके पहरेमें लाए गए थे। मोहन कांपता हुआ अदालत के कटघरेमें खड़ा हुआ। साहबने बयान दिया— 'यह कुली हुक्म-उदूली करनेसे बाज नहीं आता।

इसे सख्त से-सख्त सजा मिलनी चाहिए।' मोहन क्या सफाई देता ? गिरमिटके युगमें हुक्म-उदूली कोई मामूली अपराध नहीं था। मजिस्ट्रेटने कुलीसे कुछ पूछनेकी जरूरत नही समझी, साहब का बयान ही कुली को अपराधी ठहरानेके लिए यथेष्ट प्रमाण था। मजिस्ट्रेटने फैसला सुनाया 'छः महीनेकी जेल, कड़ी मेहनतके साथ।'

. मोहनने श्वेतांग मजिस्ट्रेटका फैसला सुनकर हृदय थाम लिया। उसे साहबकी गुलामीसे जेल का नरकवास अधिक पसन्द था; पर वीणाकी स्नेहमयी स्मृतियोंने उसे अधीर बना दिया। दिन -भर कठोर काम करने और अपमान सहनेपर भी शामको वीणाकी मंजुल मूर्त्ति देखकर वह सारा क्लेश भूल जाता था पर अब तो छः मास कारावासकी अवधि में वीणा से मिलनकी कोई आशा नहीं थी। इसलिए वीणाके विछोहसे हृदयमें व्यथा और आँसू छिपाए वह चल पड़ा उस कालकोठरीकी ओर, जहाँ गैर गोरोंके साथ पाशविक व्यवहार किया जाता है और मनुष्यकी दिन-दहाड़े हत्या होती है।

सूर्यकी हँसती किरणें पहाड़ोंकी ओटसे झाँककर एकाएक अस्ताचलमें विलीन हो गईं। सन्ध्या इस भूतलपर अपनी श्यामलताके साथ आई थी। वीणा बिन्स-कोठीके अपने झोंपड़ेके दरवाजेके चौखटपर दुःखके काले-काले बादलोंसे घिरी खड़ी थी। उसके दिलमें धड़कन थी और उसकी आँखें किसीको खोज रही थीं। विचार-जगत्में विचरण करनेका अधिक अवसर उसे न मिल सका, क्योंकि उसके बाबा आ गए—रक्त मांससे सर्वाङ्ग शून्य एक,क्षीणकाय केवल अस्थि पिंजर-शेष मानव शरीर, आंखें धँसी, गाल पिचके और चेहरेपर झुर्रियाँ। बाबाने पूछा—'चौखट पर खड़ी क्या सोच रही है, बिटिया ? वीणाकी तन्द्रा भंग हो गई, वह कुछ लजा सी गई। 'बेटा, पानी तो ले आ, जरा हाथ-मुँह धो लेवें।'

वीणा लोटा माँजकर पानी ले आई और बाबा के हाथमें थमा गई। फिर घर के अन्दर जाकर बाबाके लिए रसोई परोसने लगी। आठ फीट चौड़ा, दस फीट लम्बा और छः फीट ऊँचा था वह कोठीका झोंपड़ा. जिसके घास-फूसके छप्परसे प्रकाश, पवन और पानीके प्रवेशमें कोई बाधा नहीं पड़ती थी। उसीमें एक किनारे सोनेका बिस्तरा पड़ा था और दूसरी तरफ खाना पकाने के लिए चूल्हा चौका लगा था। इस कोनेमें लकड़ी की एक पेटी रक्खी थी और उस कोनेमें दो-चार मुर्गियाँ कुलबुला रही थीं। वह झोंपड़ा वास्तवमें भानमतीके पिटारेका अथवा गिरमिट की गुलामीका एक विशिष्ट नजारा दिखाता था।

वीणाने थाली लगाई। और कुछ तो था नहीं, मकईकी लिट्टी और सेमकी दाल। यही तो कुलियोंका खाना था। जब कभी मोहन कुछ शाक-भाजी दे जाता, वह दिन वीणाके लिए त्योहार बन जाता था।

बाबा भोजनपर बैठे, एकदम चुप्पी साधे। वीणाको आश्चर्य हुआ। जो बाबा नित्य भोजन करते समय वीणाको हँसाए बिना तृप्त न होते थे, वह आज ऐसे गम्भीर और मौन क्यों हैं ? उनका शरीर सुस्त और चेहरे पर चिन्ता की रेखा है। वीणा व्याकुल हो उठी। गुलामोंका संसार कैसा अन्धकारपूर्ण है ! उनके जीवनमें आशाकी एक रश्मि भी दृष्टिगोचर नहीं होती। एक दिन नहीं, दो दिन नहीं, मास-दो मास भी नहीं, वर्षोंके लिए

वही वातावरण, वही झोंपड़ा, वही खाना, वही गुलामी, जुल्मका वही नंगा नाच ! भगवान, यह कैसा जीवन ? इससे तो मौत अच्छी।

बाबाने किसी तरह दो-चार कौर गलेके नीचे उतारे और फिर अपनी टूटी-फूटी चारपाईपर जा गिरे। वीणा एक अज्ञात भयसे कॉप उठी। जैसे तैसे वह खाने बैठी, पर खा न सकी। भोजन वैसे ही रखकर वह भी लेट गई। उसे मोहन की चिन्ता खा रही थी। आज मोहन आया क्यों नहीं ? वह तो कभी चूकता न था। बाबा इतने उदास क्यों हैं ? उसका सिर चकराने लगा, आंखों से आँसुओं की धारा बह चली। रह-रहकर आशा की बिजली कौंधती, पर दूसरे क्षण अन्धकारमें विलीन हो जाती। न-जाने कब तक उसके सामने घनघोर घटाएं घिरी रहीं, कब तक उसकी आंखें सावन-भादोंकी झड़ी लगाए रहीं ! आखिर निद्रादेवीने उसे अपनी गोदमें आश्रय देकर कुछ समयके लिए उसकी चिन्ता और व्यथाएं मिटा दीं।

दूसरे दिन सुबह न-जाने कबसे बाबा पुकार रहे थे—'वीणा' वीणा' उठो बेटी। आज तो बहुत देर तक सोईं।' और वीणा शिथिल पलकोंको बड़ी कठिनाईसे उघाड़ सकी। देखा, सूरजकी किरणें छप्परकी ओटसे घरमें झांक रही हैं। बाबा बाहर निकलकर फिर लौट पड़े-'वीणा' आज मेरा खाना साहबके बंगलेपर ले आना, काम इतना अधिक है कि घर आने का अवकाश न मिलेगा।' यह कह बाबा चले गए। वीणा पगडण्डी पर जाते हुए बाबाको निहारती रही।

४

दोपहरकी बेला थी। सूर्यके तापसे धरती तपी हुई थी। यदा-कदा पेड़ोंके झुरमुटसे चिड़ियों का कलरव आता था। वीणा साहिबके बंगलेपर बाबा के लिये भोजन लेकर जा रही है। उसके बाबा खाना खाने के लिये भी घर नहीं आ सकते, क्योंकि वे गुलाम हैं। साहब के काम के लिये मानो विधाताने उनके शरीर को सृजा है। उस कड़ी धूप में झुलसती हुई वीणा साहिब के बंगले पर पहुँची। देखा, बाबा अभी तक काम में लगे हैं, पसीनेसे तर हो रहे हैं। बाबाको कामसे छुट्टी मिलनेकी प्रतीक्षामें वीणा एक पेड़के नीचे खाना लेकर बैठ गई। अस्त- व्यस्त कपड़े थका- माँदा बदन और अलसाई आँखें मूँदकर वह पेड़की शीतल छाया में लेट गई।

उसी समय साहबका सपूत मटरगश्ती करता वहां आ पहुँचा। वीणाके सौन्दर्यपर उसकी आँखें अटक गईं। एक कुली की लड़की में ऐसा अनुपम लावण्य ! वह अपनी सुधि- बुधि खो बैठा। उसके पैर आप ही आप वीणा की तरफ बढ़ चले। वीणा ने जब उसे अपने सामने खड़ा देखा, तो वह घबरा सी गई। भयसे उसका हृदय काँप उठा। उस श्वेतांग युवकके नेत्रोंमें कामान्धता खेल रही थी। वीणाके होश हवा हो गए। निस्तब्धता को भंग करते हुए वह गौरांग युवक बोला– 'टुमरा नाम क्या है। ? टुम बहुत खूब-सूरट है। हम टुमको बकशीश डेगा, खुश कर डेगा।'

वीणाका भय क्रोधमें बदल गया। श्वेतांग की यह ढिठाई और बदमाशी ! मानो भारतीय नारियोंके सतीत्वका मूल्य चाँदी के चन्द टुकड़े मात्र है। उसने घृणापूर्ण स्वर में कहा—'हट जाओ यहाँ से तुमने क्या मुझे कसबी समझ लिया है ?

बाबा काम समाप्तकर खाना खानेके लिये वीणाकी तरफ चले। पर यह क्या? वीणा तो साहबके पुत्रसे उलझ रही है। वे जल्दी-जल्दी डग उठाते हुये पेड़ के नीचे पहुँचे और ऊँची आवाज में बोले—क्या हो रहा है, बिटिया?'

वीणाने बाबाको देखा और बाबाने वीणाको। वीणा के सजल नयन मानों मूक-भाषामें सारी गाथा कह गए और बाबाकी विवेक-बुद्धिको परिस्थिति से परिचित होनेमें देर न लगा। उन्होंने धोर गम्भीर होकर युवक से कहा— 'साहब, हम कुली- कबाड़ी हैं सही, तुम्हारी गुलामी करने के लिये गिरमिट भी लिखा चुके हैं; पर तुम्हें यह नहीं भूलना चाहिये कि हमारी भी कोई इज्जतआबरू है। सतीत्वकी कीमत हमारे यहाँ प्राणसे भी अधिक है।'

यह सुन श्वेतांग युवक ठहाका मारकर हँस पड़ा'इज्जतआबरू! क्या बोलटा बूढ़ा? कुलीका इज्जत कैसा? पैसाके वास्टे टुमने अपना शरीर बेच दिया। हम इस लड़कीका वडन माँगता, मुफ्टमें नहीं, पैसा डेगा।'

बाबाके आत्म-सम्मानपर असह्य आघात पहुँचा। इच्छा हुई कि कुदाल उठाकर उस नरपिशाचके सिर पर मारें, पर अपनी स्थिति का अनुभवकर सँभल गये। उन्हें चुप देख गौरांग का साहस बढ़ गया। वह वीणासे छेड़खानी करने लगा। वीणाका पहुँचा पकड़कर बोला— 'चलो, हमारे साठ। टुमको बकशीश डेगा।'

अब तो बाबाका धीरज टूट गया। उनकी धमनियोंमें पूर्वजोंका रक्त उबल पड़ा। क्रोधसे उनकी आँखें अंगार उगलने लगीं। क्षीणकाय होते हुये भी उनका अंग-अंग फड़क उठा। उन्होंने कुदाल उठाकर युवक के सिरपर ऐसा वार किया कि यदि वह फुर्तीसे हट न जाता, तो प्राणोंके लाले पड़ जाते। बाबाके सँभलनेमें कुछ देर लगी। इसी बीच उन हट्टे कट्टे युवकने कूद कर वृद्धकी गर्दन पकड़ ली और उन्हें जमीनपर पछाड़ दिया। फिर उसने जेबसे चाकू निकालकर बाबाका एक कान काट लिया। बाबा चीख मार-कर बैठ गये। युवक रफूचक्कर हो गया।

वीणा चिल्ला उठी—'बाबा, बाबा, हाय रे हत्यारा! कमजोर वृद्धपर तेरी यह बहादुरी! आज अगर मोहन होता, तो तेरी सारी शेखी और मस्ती उतार लेता।' और वह दौड़ी मोहन को बुलाने। मोहनके सिवा उसका अपना है ही कौन? रास्तेमें ढेलोंसे टकराती, गिरती-पड़ती, रोती-बिलखती और 'मोहन, मोहन' चिल्लाती वह दौड़ी जा रही थी। उसके क्रन्दनसे गन्नेके खेत गूँज उठे। पर मोहन था कहाँ? उसकी दशा देखकर एक पड़ोसी मजदूर उसका रास्ता रोकते हुए बोला— 'पगली, मोहन, मोहन क्या चिल्लाती है? क्या तुझे खबर नहीं कि मोहन छः महीनेके लिये जेलकी सजा भुगत रहा है?'

वीणाके सिरपर जैसे अचानक वज्र गिर पड़ा। उसके पैरोंके नीचेसे मानों धरती खिसक गई। वह वहीं कलेजा थामकर बैठ गई और संज्ञाशून्य सी हो गई। कुछ देर बाद फिर उठी और बाबा-बाबा चिल्लाती लौट पड़ी। आकर देखा, तो बाबा बेहोश-से थे। खून बहना जारी था। घबराकर बोली—'बाबा' खून तो रुकता ही नहीं। चलो, डिपो अस्पताल चलें। वहाँ कुछ उपाय हो सकेगा।'

पड़ोसके मजदूरोंने बाबाको खटोलेपर अस्प-ताल पहुँचाया। कुलियोंके लिए बना हुआ वह अस्पताल कसाईखानेका संशोधित संस्करण था।

वहाँ न डाक्टरका ठिकाना था, न नर्सका। न खाट बिस्तरकी कोई व्यवस्था थी और न रोगियों के लिये पथ्यको ही। असाध्य रोगी ही वहाँ जाते थे और उनको औषधिकी जगह जहर देकर सारे कष्टोंसे विमुक्त कर देना ही अधिक श्रेयस्कर समझा जाता था। इसलिये सिरपर कफनी बाँधकर ही बीमार मजदूर उस अस्पताल-रूपी कसाईखानेमें दाखिल होते थे। खैर, बाबाके सौभाग्यसे उनकी मरहम पट्टीकी सबील लग गई।

-४-

आज वेरूलमकी अदालतमें प्रवासी भाइयों की बड़ी भीड़ थी। बाबाकी दुर्दशासे मजदूरोंमें काफी आतंक फैल गया था। लोग यह जाननेके लिये उत्सुक थे कि जिस अंगरेजी न्यायकी इतनी तारीफ सुनते आये हैं, वह आज नेटाल की अदालतकी कसौटीपर खरा उतरता है या खोटा? श्वेतांग मजिस्ट्रेटके न्यायासनपर विराजते ही सबकी दृष्टि उसपर जा गड़ी। बाबा और वीणाके बयान हुये। उन्होंने सच्ची सच्ची हकीकत कह सुनाई। इसके बाद अपराधी युवक जोजफ की पुकार हुई। वह छाती फुलाये, सिर उठाये, बड़ी शानसे कठघरेमें जा खड़ा हुआ। मजिस्ट्रेट ने पूछा–'क्या तुमने इस कुली का कान काट लिया है?

'जी हाँ, मैंने ही इसको कनकट्टा बना दिया है।'–जोजफने अभिमानके साथ जवाब दिया।

क्या तुम नहीं जानते कि किसीका कान काट लेना कानूनसे अपराध है?'–मजिस्ट्रेटने पूछा।

जोजफ क्रोधसे लाल हो उठा–'अपराध? कैसा अपराध? मुझे तो यही आश्चर्य है कि इस छोटीसी बातके लिये मुझे अदालत में घसीटा गया। हम अपनी भेड़ बकरियोंके कान काट लिया करते हैं; पर हमसे कोई जवाब तलब करने नहीं आता। फिर इस कुलीका कान काट लेना कैसे अपराध हो गया? क्या वह कुली भेड़ बकरीसे अधिक श्रेष्ठ है?'*

इस बयानसे प्रवासी भारतीयोंमें सनसनी फैल गई। उनके दिलोंपर गहरी चोट पहुँची। वे सोचने लगे—हाय, हम इस देशमें भेड़ बकरी से भी गए-बीते हैं! हमारे देशकी गुलामी भगवान्का सब से कठोर अभिशाप है, उसीका फल हम यहाँ भोग रहे हैं। हमारी पीठपर कोई होता, तो आज इस उद्दण्ड श्वेतांग की जीभ काट लेता। भारत में अंगरेज मालिक बने बैठे हैं और यहाँ भी उनका ही प्रभुत्व है। देशकी पराधीनता और दासताने आज हमको यह दिन दिखाया। राम और कृष्णके वंशज आज भेड़-बकरीकी पंक्तिमे! कब हमारे देशका पाप-मोचन होगा, कब पराधीनताकी कुहू-यामिनी बीतेगी

* यह कोई कपोल-कल्पित बात नहीं, सत्य घटना के आधार पर लिखी गई है। सन् १६०८ में जे० एल० आर्मीटेजने अपने कुलीका एक कान काट लिया था। जब मजिस्ट्रेटने उससे जवाब तलब किया, तो वह अपनी सफाई देते हुवे बोला:"The Government allows the cutting of the sheep's ear and this Indian coolie complainant is no better than a sheep." (The Times of Natal, October 6, 1908.) अर्थात् सरकार भेड़के कान काटनेसे हमें मना नहीं करती और यहां शिकायत करने वाला भारतीय कुली भेड़से किसी हालतमें भी अच्छा नहीं है।

और कब आजादीका मंगल-प्रभात होगा ? साहब ठीक ही कहता है, गुलाम और भेड़में फर्क ही क्या है ? इस जिन्दगीसे तो मौत अच्छी है। कब हमारे देशवासियोंकी आँखें खुलेंगी, कब उनके दिलमें आजादीकी आग सुलगेगी, जिससे अंग-रेजी शासन जल कर भस्म हो सकेगा ?

एक प्रवासी भाई बोल उठा–'देखो, अंगरेजी इन्साफका नमूना ?' दूसरा बोला–'अरे भैया, हाकिम और अपराधी सभी गौरांग एक ही थैली के चट्टे बट्टे जो हैं। '

जोजफको कोई सजा नहीं मिली। वह बेदाग छूट गया। अंगरेज हाकिमने फैसला सुनाते हुए कहा कि जोजफ एक जवान साहिब है, वह कुली द्वारा किया गया अपमान बर्दाश्त न कर सका और उत्तेजनामें आकर यह भूल कर बैठा। इस भूलके लिये उसको चेतावनी दे देना ही काफी है।

'हुर्रे-हुर्रे-हुर्रे' की ध्वनिसे अदालत गूँज उठी। जोजफके हितू-मित्र उसको गोदमें उठाकर अदालतसे बाहर ले गये। और प्रवासी भारतीय वे ग्लानि और गुस्सेसे भरे, अपनी मातृभूमिकी परवशतापर पश्चात्ताप करते और अपनी गुलामी पर लानत देते वहाँसे रवाना हुए।

-६-

जेल के छः मास मोहन के लिये छः युग बन गये। अवधि पूरी होने पर एक दिन सबेरे नौ बजे वह बेदलम के जेलखाने से छूटा और फौरन बिन्स-कोठी की तरफ चल पड़ा। जेलसे तपेदिक की सौगात लेकर निकला था। इसलिए धीरे-धीरे चलते और दम लेते-कुछ देर चलता, कुछ देर बैठकर थकावट मिटाता-कहीं ८ बजे रातको बिन्स-कोठी पहुंचा। चाँदनी रात थी। सोचा, पहले वीणाके घर ही चलना चाहिए—वह कितनी खुश होगी मुझे देखकर। शरीर बुखार और कमजोरीसे शिथिल हो रहा था, पैर उठाए नहीं उठते थे। बड़ी कठिनाईसे किसी तरह वीणाके घरके दरवाजेपर पहुंचकर उसने कुण्डी खट-खटाई। उस टूटी-फूटी झोंपड़ी में क्षीण प्रकाश झांक रहा था। मधुर मिलनकी आशासे मोहनकी तबीयत फड़क उठी। फिर उसने आवाज दी–'वीणा, वीणा, खोलो किवाड़, मैं हूँ मोहन।

वीणा अपने रुग्ण बाबाके पास उनींदी-सी पड़ी गरम-गरम उसाँसें ले रही थी। मोहनकी आवाज सुन वह चौंक पड़ी। झटपट उठकर उसने किवाड़ खोल दिया और एक तरफ हटकर खड़ी हो गई। एक ओर मोहनके अकस्मात् आगमनका आनन्द और दूसरी ओर बाबाकी मरणासन्न अवस्था से वीणा विक्षिप्त सी हो गई। क्षणभर 'किंकर्त्तव्यविमूढ़-सी बनी रही, मानो अपने में ही खो गई हो। फिर उसे अपनी स्थितिका भान हुआ और उसके नेत्रोंसे हर्ष-विषादके अश्रु टपकने लगे। बाबा की ओर बढ़ते हुए उसने गद्‌गद स्वरमें कहा—'बाबा, बाबा, मोहन आगए। आँखें खोलिए। वे आपकी चारपाई के पास खड़े हैं,

और मोहनने देखा कि बाबाका जरा-जीर्ण शरीर और भी क्षीण हो गया है, जीवन-ज्योति विलीन हो रही है। आंखें धंस गई हैं, पेट पीठसे सट गया है, हड्डियां निकल आई हैं। मोहन दुःखसे चीख उठा—बाबा, बाबा, आपकी यह दशा ?

'घबराओ नहीं बेटा ! साहस और धैर्यसे स्थितिका सामना करो। यदि तुम्ह' धीरज खो बैठोगे, तो वीणाकी क्या दशा होगी ? मै तुम्हारी ही प्रतीक्षामें अब तक मौतसे युद्ध करता रहा हूँ। अब तुम आ गए, मै खुशीसे प्राण विसर्जन कर सकूंगा। मोहन, तुम अच्छे तो रहे ? अरे, तुम्हारा यह क्या हाल हो गया ? तुम तो पहचाने भी नहीं जाते। कितने दुर्बल हो गए हो ? मालूम पड़ता है, वर्षोंसे बीमार हो। जेलने तो मानो तुम्हारा सारा रक्त चूस लिया है। हाय, तुम क्या से-क्या हो गए ! बाबा एक ही सांसमें बोल गए, आगे बोलने की शक्ति उनमें नहीं रही।

उनकी आवाज धीमी पड़ गई, सांस तेजीसे चलने लगी। जबसे बाबाका कान कटा, तभीसे उनके जीवनका सोता शनैः-शनैः सूखता गया। उनमें जीवित रहनेकी इच्छा ही शेष नहीं रह गई थी। एक ही इच्छा थी-मोहनको देखनेकी,सो वह भी आज पूरी हो गई। आज वे सबसे विदा मांग रहे हैं—वीणा और मोहनसे विदा चाहते हैं। वे अपनी उस प्यारी मातृभूमिसे विदा मांग रहे है, जिसको सन्तान होनेके अपराध मे उनको यह दुर्दिन देखने पड़े हैं। वे अपने उन तीस करोड़ भाइयोंसे विदा मांग रहे हैं, जो संख्यामें संसारके मनुष्योंका पांचवॉं भाग होते हुए भी अपने ही देशमे मुट्ठी-भर अंगरेजोंकी गुलामी करते हैं और विदेशोंमें अपमानकी ठोकरें खाते फिरते हैं। बाबा आज उस कौमसे विदा मांग रहे हैं, जो दक्षिणअफ्रीकामें कुली-कबाड़ी तथा भेड़-बकरीके समकक्ष कहलानी और अपमान की जिंदगी बिताती है।

बड़े कष्टसे बाबाने फिर आंखें खोलीं और बोले—'मोहन, मैं अब चला। वीणाको तुम्हें सौंपे जाता हूँ। देखो, यह मेरी सबसे बड़ी धरोहर है, इसको यत्नसे रखना। इसी की रक्षामें मेरा कान कटा और मेरे जीवनका अन्त निकट आया। मुझे विश्वास है कि तुम भी इसकी रक्षामें अपने प्राणोंकी बाजी लगा दोगे। यही मेरे दुःखमय जीवनकी, एकमात्र सुखद स्मृति है, जो तुम्हें दिए जाता हूँ। इसकी माँ भी मरते समय यही कह गई थी कि वीणा और मोहनकी जोड़ी देखकर उसकी आत्माको सन्तोष होगा। लाओ अपना हाथ, उसे वीणाको थमाकर मैं सुखसे प्राण छोड़ सकूँ।'

मोहनने अपना हाथ बढ़ाया। बाबाने वीणा का हाथ उसके हाथमें देकर कहा—'बांह गहने की लाज रखना, मोहन।' और उसी रातको बाबा के प्राण-पखेरू उड़ गए।

-७-

जूनमें भयंकर जाड़ा पड़ने लगा था। तिसपर दो दिनसे मेहकी झड़ी लगी थी। मोहन और वीणा आग जलाकर ताप रहे थे। एकाएक मोहनको खांसी उठी और खांसते-खासते उस असह्य सर्दी में भी वह पसीनेसे नहा-सा गया। मोहन अपने भविष्यकी चिन्तासे कांप उठा। उसके जीवन-दीपमे तेल समाप्ति के निकट है। फिर वीणाका जीवन किस घाटपर लगेगा ? बाबा तो वीणाको मेरे हवाले कर गए। उनको क्या खबर थी कि जिस नावमें वे वीणाको बैठा रहे हैं, उसकी पेंदीमें छेद हो चुका है, वह मझधारमें ही डूबेगी, वीणाको पार न लगा सकेगी। मैंने भी उनसे असली बात छिपा ली, अन्यथा

है शान्ति और सन्तोषसे महाप्रस्थान भी न कर सके। पर क्या वीणासे भी अपनी स्थिति छिपा रखना उचित होगा? इससे फायदा क्या? उसकी तो कोई व्यवस्था हो जानी चाहिए, अन्यथा मेरे बादमें वह पंखहीन चिड़ियाकी भांति छटपटानेके सिवा और क्या कर सकेगी? मोहनने वीणाकी पीठपर हाथ रखकर बड़े स्नेहसे कहा—'वीणा, तुम्हें वस्तु-स्थितिसे परिचित हो जाना चाहिए और अपने भविष्यका कार्यक्रम निश्चित कर लेना चाहिए। मेरे जीवनका कोई ठिकाना नहीं है। मैं चन्द दिनोंका मेहमान हूँ। मुझे यदि कोई चिन्ता है, तो यही कि मेरे बाद तुम्हारा क्या होगा?

वीणा मर्माहत हो उठी, मानो हजारों बिच्छुओंने एक साथ ही डंक मारा हो। फिर कुछ सँभल कर बोली—'आज यह सब क्या बक रहे हो, मोहन? होशमें भी हो या स्वप्न देख रहे हो?

'नहीं वीणा, मैं बात नहीं बना रहा हूँ, जो कुछ कह रहा हूँ, वह ध्रुव सत्य है। अरी पगली, क्या तुम देख नहीं रही हो कि मुझे नित्य बुखार आ जाता है, रक्त-मिश्रित कफ निकलता है, शरीर सूखता जा रहा है इसी रोगको क्षय या तपेदिक कहते हैं। इससे बचना मेरे लिए सर्वथा असम्भव है। मुझे यही चिन्ता व्याप्त हो रही है कि तुम्हारा यह यौवन, यह रूप-लावण्य अकेली हो जानेपर तुम्हारे लिए अभिशाप बन जायँगे। अतएव किसी योग्य व्यक्तिको तुम्हारे जीवनकी बागडोर सौंपकर ही मैं सन्तोषसे मर सकूँगा। दूसरा कोई उपाय मुझे नहीं सूझता है।'

वीणा अधीर हो उठी। फिर गम्भीर होकर बोली—'मोहन, आज तुम्हें यह क्या हो गया है? ऐसी बातें क्यों कर रहे हो? जिसका एकमात्र तुम्हारी है। तुम जब तक जीवित हो, तब तक वह तुम्हारी सेवा करेगी। यदि दुर्भाग्यवश तुम चल बसे, तो वह स्मृतिकी पूजा करेगी। वीणा अपने जिस जीवनको मोहनके चरणोंपर चढ़ा चुकी है, अब किसी अन्य पुरुषकी कल्पना करना भी वह घोर पाप समझती है।'

मोहनका हृदय हाहाकार कर उठा। दोनों खूब रोए। मोहनका शरीर क्षयसे क्षीण होता गया। वीणा उसकी सेवामें रात-दिन जुटी रही। उसे न खाने की चिन्ता रही, न आराम करनेकी। पर उसकी सेवासे भी मोहन नहीं बच सका। आखिर एक दिन वह वीणाको छोड़कर चल ही तो बसा। वीणाका सर्वस्व लुट गया, वह कंगाल हो गई।

वीणा रोते-रोते बेहोश हो गई। जब उसे होश आया, तो वह वीणा न रह गई थी, पगली हो गई थी। उसका चेहरा बदल गया, आंखें लाल हो आईं। वह घरसे निकल पड़ी, गली-गली घूमने लगी। वस्त्र अस्त-व्यस्त, बाल बिखरे हुए और हाथमें एक लम्बी और तेज छुरी। बच्चे तालियाँ पीटते हुए उसके पीछे हो जाते और 'पगली-पगली' चिल्लाकर उसे चिढ़ाते। पर वह बच्चोंसे कुछ न कहती। यदि किसी श्वेतांग को देखती, तो घृणासे उसकी तरफ थूक देती। यदि कोई गोरा दयाकर उसे कुछ देता, तो वह उसपर थूककर ऊपर फेंक देती। कभी वह 'मोहन-मोहन' चिल्लाती हुई दौड़ती और ठोकर खाकर गिर पड़ती।

एक दिन उसी तरह गलियोंका चक्कर काटती हुई वह साहब के बंगलेपर जा पहुंची। बच्चों की भीड़ उसके पीछे थी। हल्ला-गुल्ला सुनकर जोसफ बंगलेके बाहर निकल आया।

बच्चोंको डांट-डपट कर उसने वहाँसे भगाया। वीणाकी सूरत गौरसे देखकर वह दंग रह गया और बोला—अरे, यह टो मैड (पागल) हो गया है। इसको इस तरह घूमने-फिरने दे। खतरेसे खाली नहीं है। पीटर मेरित्सवर्गके पागलखानेमें इसको पहुंचा देना चाहिए।

'कौन पागल ? तू पागल, तेरा बाप पागल। मेरा घर उजाड़कर तू अक्लमन्द बना है। जालिम, मुझे पागल कहता है। मैं पागल हूँ, अच्छा तो देख। और यह कहती हुई वीणा ऐसी तेजीसे जोसफ पर झपटी, जैसे बिल्ली अपने शिकार चूहेपर झपटती है। जोसफ उस अचानक हमलेसे संभल भी न पाया था कि उसकी नाक कटकर वीणाके हाथमें आ चुकी थी। यही ग़नीमत हुई कि वीणाकी छुरी उसकी पीठमें न घुसने पाई।

इसके बाद वीणा मेरित्सबर्गके पागलखाने में बर्षों जीवित रही। जब किसी हिन्दुस्तानीको देखती, तो हाथ जोड़कर कहती--बाबा, और मोहनसे कहना कि वीणाका काम खत्म हो चुका है। वह शीघ्र ही उनसे आ मिलेगी। कभी कहती--यह ईश्वरका विधान है, या अत्याचारीके जुल्मका परिणाम ? कभी अट्टहास करती, कभी बिलखकर रोती, कभी नाचने लगती, कभी सिर धुनती और छाती पीटती। कभी 'मोहन,-मोहन, चिल्लाती और कभी 'बाबा-बाबा।

* * *

प्रिन्स-कोठीसे दो घोड़ोंकी सुन्दर बग्घीपर एक नकटा साहब कभी-कभी डरबन शहर आया करता है। हिन्दुस्तानियोंसे उसको बड़ी चिढ़ है। इस साहबके बारेमें प्रवासी भारतीयोंमें तरह तरह की बातें फैली हुई हैं। बिहारी कहते हैं कि सन् १८५७ में नकटा साहब जब जनरल कुंवरसिंह और अमरसिंहकी शरणमें पहुंचा, तो उन्होंने शरणार्थीका वध करना क्षत्रियधर्म के प्रतिकूल समझा और नाक काटकर इसको छोड़ दिया। (इसीसे तो हिन्दुस्तानियोंसे इसे इतनी नफरत है !) कोई कहता है कि यह नकटा साहब किसी भारतीय मजदूरकी जवान बेटीपर लट्टू हो गया था। एक दिन रातमें कुली-लेनमें उसके झोंपड़ेमें जा घुसा। घरवाले सजग और सावधान थे। उन्होंने इसको पकड़कर खूब पीटा और इसको जानसे मारकर फेंक देना चाहा। पर यह उनके पैरोंपर गिरकर जीवनकी भीख माँगने लगा। उनको दया आ गई और इसे नाक काट-कर छोड़ दिया। जो-कुछ भी हो, पर यह सच है कि नकटा साहब भारतीयोंको फूटी आँख भी देखना नहीं चाहता। उसके घरमें केवल हब्शी नौकर है। अगर कोई भारतीय कभी भूल चूकसे उसके दरवाजेपर नौकरीकी खोज में पहुंच जाता है, तो यह नकटा साहब हण्टर लेकर उसको मारने दौड़ता है।

प्रचारक की आवश्यकता

आर्य समाज वरंगल (हैदराबाद राज्य) को एक तेलुगु भाषा जानने वाले उपदेशक की आवश्यकता है। वेतन ५०) मासिक होगा गुरुकुल के स्नातक को १००) मासिक दिया जायेगा। पत्र व्यवहार का पता:-

मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

आर्य जगत्

काठियावाड़ में महर्षि का स्मारक

सेठ नानजी भाई कालिदास मेहता का भव्य स्वप्न

रामनवमी के दिन जामनगर में सेठ नानजी भाई कालिदास महेता के दस लाख रुपये के व्यय दान से महर्षि दयानंद महा विद्यालय की स्थापना प्रो० अर्जुन देव जी M. Sc. के आचार्य पद में हो गई।

इस महान् प्रसंग पर जामनगर के दीवान साहेब श्रीयुत सोलंकी ने महर्षि को भव्य अंजलि प्रदान की थी। उन्होंने जामनगर राज्य में महर्षि दयानंद का स्मारक बनाने का जो शुभ संकल्प सेठ नानजी भाई आर्य ने किया है उस के लिये उन्हें धन्यवाद प्रदान किया।

संस्था के संथापक सेठ नानजी भाई आर्य ने कहा—'महर्षि का जन्मस्थान काठियावाड़ है। अतः मैंने काठियावाड़ मे ऋषि ऋण से उऋण होने के लिए स्थान स्थान पर आर्य संस्थाओं का निर्माण करने का शुभ संकल्प किया है। जाम नगर में महर्षि दयानन्द महा विद्यालय-की स्थापना करने का मेरा उद्देश्य यह है कि—चरित्रवान् आर्य संस्कृति प्रेमी युवक उत्पन्न हों। जो औद्योगिक शिक्षण प्राप्त कर यहां से जावें जिससे बाद के जीवन में उन्हें भोजन की समस्या न रहे। इस कार्य में २५ लाख रु०खर्च होंगे। जामनगर में दयालबाग आगरा के अनुरूप मैं दयानंद बाग का निर्माण करूँगा। २५ लाख की धनराशि में से दस लाख तो मैं देरहा हूँ। बाकी १५ लाख आर्यसंस्कृति के प्रेमियों से एकत्र करना है। मैं आर्य जगत् से अपील करता हूँ कि वे इस धनराशि को एकत्रित कर देने में सहायक हों।

पं० आनन्द प्रिय जी ने बतलाया कि इसी वर्ष सेठ नानजी भाई ने आर्य संस्थाओं के निर्माण में कई लाख रुपये दान दिया है। १० लाख जामनगर के लिये और पांच लाख राजकोट में कन्या महा विद्यालय की स्थापना के लिये। सेठ जी पोरबन्दर में भव्य कन्या गुरुकुल चला रहे हैं। बड़ौदा विद्यालय के पोषक हैं। और आज राजकोट में भी कन्या विद्यालय स्थापित कर उनका स्वप्न है कि गुजरात काठियावाड़ में एक आर्य महिला विद्यापीठ का निर्माण करें। जिस प्रकार आर्य कन्या शिक्षा के वे कुल पिता हैं वैसे कुमारों के लिये भी आप कदम बढ़ा रहे हैं। जामनगर का महर्षि दयानन्द महा विद्यालय एक औद्योगिक संस्था होगी। ५०० कुमारों को आश्रम जीवन के साथ शिक्षा आज सेठ जान जी भाई समस्त आर्य जगत् के धन्यवाद के पात्र हैं। उन्होंने ऋषि ऋण से उऋण होने के लिये काठियावाड़ में कार्य प्रारम्भ कर दिया है। हर्ष का विषय है कि नवीन संस्थाओं को जामनगर राज्य ने ३०० बीघा भूमि प्रदान की है। और प्रारम्भ में मासिक एक हजार रुपये और बाद मे दो हजार सहायता देंगे।

संस्था के आचार्य श्रीयुत अर्जुन देवजी ने सेठ साहिब के भव्य स्वप्न को मूर्त रूप देने का कार्य भार संभालने का अभिवचन दिया और

आर्य जगत् से प्रार्थना की कि वे सेठ जानकी माई को २५ लाख रुपया एकत्र कर देने में सहायक हों। उन्होंने महर्षि दयानन्द महा विद्यालय की उपयोगिता का सुन्दर वर्णन किया।

स्थापना यज्ञ पं० आनन्द प्रिय जी बड़ौदा, प्रो० अर्जुन देव जी M. Sc. तथा श्री चतुर भाई प्रिन्सीपल गुरुकुल सोम गढ़ ने कराया था। यजमान रूप में सेठ नाम जी भाई तथा उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सन्तोष देवी जी पधारे थे। इस वर्ष १५० बालक प्रविष्ट कर दिये जायंगे। प्रवेश शुल्क ५०) और मासिक शुल्क ३०) होगा।

आर्य समाज हनुमान रोड का २४ वां वार्षिकोत्सव

आर्य समाज, हनुमान रोड, नई देहली का २४ वाँ वार्षिकोत्सव २८ मार्च से ३१ मार्च तक हेवलाक स्क्वेयर में बड़े समारोहपूर्वक मनाया गया। उत्सव से पूर्व २१ मार्च से २७ मार्च तक श्री स्वामी सत्यानन्दजी महाराज की मधुर तथा ओज युक्त कथा हुई। उत्सव में श्री पं० रामस्वरूप जी शान्त, श्री पं० शिवकुमार जी शास्त्री, श्री पं० क्षितीशकुमार जी वेदालङ्कार तथा श्री पं० हरिशरण जी सिद्धान्तालङ्कार के प्रभावशाली व्याख्यान हुए। ३० मार्च को श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० मन्त्री सार्वदेशिक सभा के सभापतित्व में रामनवमी महोत्सव मनाया गया जिसमें श्री पं० बालकृष्ण जी शर्मा एम० एल० ए० तथा श्री पं० खुशीराम जी बी० ए० आर्य मिशनरी इत्यादि के रामजीवन पर शिक्षाप्रद व्याख्यान हुए। ३१ मार्च की रात्रि को माननीय लाला गोविन्दलाल जी सदस्य कौंसिल आफ स्टेट के सभापतित्व में जाति भेद निवारक सम्मेलन हुआ जिसमे श्री प्रो० गोपाल जी, श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति अध्यक्ष जाति भेद निवारक संघ देहली श्री पं० क्षितीशकुमार जी वेदालङ्कार, श्री पं० सत्यदेव जी विद्यालङ्कार, श्रीमती सुशीलादेवी जी विद्याविभूषिता आदि ने प्रमुख भाग लिया तथा निम्न प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुएः—

वार्षिकोत्सव में पंजाब के पीड़ितों की सहायता के लिये विशेष व्याख्यान कराये गये जिसके फलस्वरूप लगभग २०००) एकत्रित हुआ। धन संग्रह में श्री बाबा मिलखा सिंह जी तथा श्री पं० आशानन्द जी भजनोपदेशक आ० प्र० सभा पंजाब ने विशेष सहयोग दिया।

जातिभेद निवारक सम्मेलन में स्वीकृत प्रस्ताव

१—यह सम्मेलन गुण, कर्म और स्वभाव पर आश्रित चातुर्वर्ण्य व्यवस्था को ही शास्त्रोक्त और वैज्ञानिक मानता है इसके विपरीत जन्मगत वर्ण व्यवस्था तथा सहस्रों जाति व उपजातियों को पारस्परिक प्रेम व सहयोग के लिये विनाशक समझता है। जन्मगत जाति भेद की यह कुप्रथा न केवल हमारे धर्म और संस्कृति पर कलंक है किन्तु हमारे देश की राजनैतिक सामाजिक व आर्थिक उन्नति में प्रबल बाधक है। इसी कुप्रथा के कारण हमारे विरोधियों को सदा हम पर कीचड़ उछालने, अखण्ड भारत की भावना के विरुद्ध विषवमन करने और रोड़े अटकाने का अवसर मिलता है। इसी जन्मगत जातिभेद ने योग्य लड़के व लड़कियों के विवाह विषयक चुनाव क्षेत्र को बहुत संकुचित कर दिया है। इसलिये यह सम्मेलन प्रत्येक धर्म प्रेमी व देश प्रेमी से प्रबल अनुरोध करता है कि इस

जन्म गत जातिभेद को क्रियात्मक रूप में नष्ट करने के लिये पूर्ण उद्योग करें।

प्रस्तावक—श्री प० गोपाल जी बी० ए०

अनुमोदक—श्री एन्, बी० गाद्‌गिल जी प्रधान महाराष्ट्र प्रांतीय कांग्रेस कमेटी

समर्थिका—श्रीमती सुशीला देवी जी विद्या-विभूषिता।

(२) यह सम्मेलन युक्त प्रान्तीय धारा सभा के सदस्य श्री महावीर त्यागी जी के उस प्रस्ताव का हार्दिक स्वागत करता है जिसके अनुसार उन्होंने समस्त सरकारी कागजों, वोटरों की सूची तथा पोलीस, अदालत और रजिस्ट्री के दफ्तरो में से व्यक्तियों के नामों के साथ जो उनकी जात बिरादरी पूछने की प्रथा है उसको कानून विरुद्ध घोषित किये जाने का अनुरोध किया है। साथ ही यह सम्मेलन युक्तप्रान्त की सरकार को इस बात पर बधाई देता है कि उसने सिद्धान्त रूप से इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया है और वोटरों की सूची से जातपात का कोष्ठक निकाल देने की आज्ञा जारी कर दी है।

क्योंकि जातपात के भेदभाव आर्य जाति की उन्नति में बहुत बाधक सिद्ध हो रहे है इसलिये यह सम्मेलन भारत की अन्य समस्त प्रान्तीय सरकारों और केन्द्रीय सरकारों से अनुरोध करता है कि वे भी युक्त प्रान्तीय सरकार का अनुकरण करते हुए अपने सब सरकारी फार्मो मे से जातपात का कोष्ठक अलग करदे।

प्रस्तावक—पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति
अनुमोदक—पं० क्षितीशकुमारजी वेदालङ्कार
समर्थक—पं० सत्यदेव जी शास्त्री

आर्य महिला सभा का वार्षिकोत्सव

आर्य महिला सभा खगड़िया का प्रथम वार्षिकोत्सव श्रीमती प्रभावती देवी जी गुरुकुल कांगड़ी की अध्यक्षता में कई हजार देवियों की उपस्थिति में २३-३-४७ को मनाया गया। अन्तर्जातीय विवाह, पति निर्वाचन में स्त्रियां स्वतंत्र हों, विधवा विवाह, तथा बंगाल पीड़िता एवं अपहृता देवियों की सहायतार्थ एवं उनके पुनः समाज मे ग्रहणार्थ जोरदार प्रस्ताव स्वीकृत हुए। लगातार ५ घन्टे के धुआंधार कार्यक्रम के उपरान्त उत्सव अत्यन्त सफलतापूर्वक समाप्त हुआ। इस अवसर पर कविता पाठ, भाषण संवाद आदि कई सुन्दर कार्यक्रम सम्पादित हुए।

सुशीलादेवी प्रधान मन्त्रिणी,
आर्य महिला सभा, खगड़िया।

दयानन्द उपदेशक विद्यालय में प्रवेश

दयानन्द उपदेशक विद्यालय गुरुदत्त भवन लाहौर के नये वर्ष का प्रवेश आरम्भ हो चुका है। जो आर्य युवक धर्म, जाति और देश सेवा के इच्छुक हो और कम से कम मैट्रिक अथवा प्राज्ञ की योग्यता के हों वे शीघ्र ही अपने प्रार्थना पत्र एक छपे हुए फार्म जो विद्यालय से मंगवाया जा सकता है, पर भेज दें। योग्य विद्यार्थियों के भोजनादि का सारा व्यय विद्यालय की ओर से होता है।

स्वामी वेदानन्दतीर्थ आचार्य

वैदिकाश्रम ऋषीकेश

स्वर्गीय श्री स्वामी शुक्लानन्दजी ने फरवरी सन् १९३४ में श्री बाबू गंगाप्रसाद जी रिटायर्ड जज के करकमलों से वैदिकाश्रम की आधार शिला रखाई थी। आश्रम मे इस समय तक २३ बड़ी छोटी कुटिया बरामदे सहित दो चौबारे, समाज मन्दिर, यज्ञशाला, दो रसोईघर अभ्यासी

जनों के लिए भूगर्भ गुफा और कुआ बन कर तैयार हो चुके हैं।

कुए पर हरिजन और सवर्ण सभी लोग पानी भर रहे हैं। आश्रम का रजिस्टरी पत्र सार्वदेशिक सभा देहली के नाम करवा दिया गया है। वैदिकाश्रम के बनने से पूर्व ऋषिकेश में आर्य सन्यासी, विद्यार्थी, वानप्रस्थी और गृहस्थी जनों के ठहरने के लिए कोई स्थान न था बड़ा कष्ट होता था। अब वह कष्ट नहीं रहा अपितु प्रत्येक साम्प्रदायिक साधु विद्यार्थी और गृहस्थी लोगों के ठहरने का पर्याप्त प्रबन्ध है।

और सभी लोग ठहरते भी रहते हैं। आश्रम में नियमपूर्वक साप्ताहिक सत्संग होता है। छोटा सा पुस्तकालय भी है।

दैनिक साप्ताहिक और मासिक पत्र भी आते हैं, आश्रम की ओर से ऋषीकेश मे व्याख्यानों द्वारा और मौखिक बातचीत में प्रचार होता रहता है।

ट्रैक्ट भी बांटे जाते हैं, और कभी २ कोई संस्कार भी करवाया जाता है। इस प्रचार कार्य पर एक पाई भी खर्च नहीं होती।

ऋषिकेश की अन्य संस्था अथवा मठ आश्रम और अन्य क्षेत्रों के साथ वैदिकाश्रम के अध्यक्ष स्वामी देवानन्द जी का आदर सत्कार मान प्रतिष्ठा मेल-मिलाप का व्यवहार है। किसी से भी कोई विरोध नहीं है।

स्वामीजी के सभी सार्वजनिक सभा सोसाइटियों के लोग सत्कार पूर्वक भाषण कराते हैं।

आर्य जगत् को अब तक इस संस्था का कोई अधिक परिचय नहीं हुआ था इस लिए आर्य-जगत् को चाहिए कि जब कभी सपरिवार या अकेले ऋषीकेश में पधारें तो आश्रम में विश्राम करने का यत्न करें।

रहन सहन में किसी भी प्रकार का कष्ट न होगा।

आश्रम ऋषीकेश रेल्वे रोड पर स्थापित है जहां से स्टेशन ८ मिनट की दूरी पर है।

गंगाघाट, बाजार, डाकखाना, हस्पताल और मोटर अड्डा ५-५ मिनट की दूरी पर है।

नारायण स्वामी

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी का स्वागत

२ मार्च को १२ बजे दिन की गाड़ी से श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज का ऋषीकेश में आगमन हुआ। आपके साथ आर्य वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर के २२ सज्जन थे जिनमें श्री भक्त सुन्दरदास जी, श्री हरप्रकाश जी, बा० ज्योतिप्रसाद जी और आर्योपदेशक विद्यालय के विद्यार्थी थे। रेलवे स्टेशन पर ऋषीकेश के धनी मानी प्रतिष्ठित साधु संन्यासियों ने स्वामी जी महाराज का फूल मालाओं, वैदिक धर्म, ऋषि दयानन्द जी, महात्मा नारायण स्वामी जी की जयघोषों से स्वागत किया और वहां से जलूस बनाकर स्वामी जी महाराज को वैदिक आश्रम में लाया गया। आश्रम मे दो दिन ऋषीकेश की भिन्न २ संस्थाओं, क्षेत्रों के मैनेजरों, मोटर कम्पनियों और दुकानदारों की ओर से स्वामी जी का फल मेवा मिठाई नकदी और फूल मालाओं से सत्कार होता रहा। ३ मार्च की शाम को श्री बाबा काली कमली वाले क्षेत्र में सभा की गई। स्वामी जी महाराज को आश्रम से जलूस बनाकर सभा में ले जाया गया। क्षेत्र के अधिकारियों व कर्मचारियों ने स्वामी जी का श्रद्धापूर्वक फूलों की वर्षा और फूलमालाओं से सत्कार

किया। तत्पश्चात् श्री स्वामी जगदीश्वरानन्द जी भारती महाराज, कैलाश आश्रम, स्वामी दयानिधि जी आचार्य आयुर्वेद कालिज, देवानन्द संन्यासी और पं० श्रीदत्त जी आनरेरी सेक्रेटरी क्षेत्र काली कमली वाले के स्वामी जी के उपकारों पर व्याख्यान हुए। तत्पश्चात् वैदिक धर्म ऋषि दयानन्द जी, महात्मा नारायण स्वामी जी और बाबा काली कमली वाले के जयघोषों के साथ सभा विसर्जन हुई। फिर वहां से जलूस बनकर बाजार *गंगाघाट* होता हुआ आश्रम में आकर समाप्त हुआ, ५ मार्च को श्री स्वामी जी अपने साथियों सहित ज्वालापुर आश्रम को प्रस्थान कर गये।

देवानन्द
मैनेजर सेवा आश्रम

एशिया सम्मेलन के कुछ प्रतिनिधियों

का

आर्यसमाज सरदारपुरा द्वारा स्वागत

जोधपुर

महान् एशिया सम्मेलन के कुछ प्रतिनिधि राजस्थान भ्रमणार्थ जोधपुर पधारे। आर्य समाज सरदारपुरा जोधपुर के मंत्री श्री "हंस" ने अपने अन्य सहयोगियों सहित अफ्रीका के प्रतिनिधि मि० डबू, डा० नाथरकर एवं मलाया के प्रतिनिधि डा० बरहानुद्दीन से भेंट की और उन्हें महर्षि दयानन्द सरस्वती का एक एक रंगीन चित्र, फिलासफी आफ दयानन्द व आर्योद्देश्य रत्नमाला प्रदान की। सभी प्रतिनिधियों ने महर्षि के मिशन की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की और कहा—"हमें आपकी यह प्रेम भरी भेंट सदैव याद रहेगी—महर्षि ने भी महान् संकट के समय अंधकार का अन्धेरा का नाश किया था।" अब सारा एशिया एक होकर आगे बढ़ेगा। सार्वदेशिक सभा की ओर से भी प्रतिनिधियों को आर्य साहित्य भेंट किया गया।

प्रशंसनीय कार्य

सैकड़ों वर्षों से सीकरी में दुर्गा देवी का मेला लगा करता है जिसमें सहारनपुर, मेरठ, मुजफ्फरनगर, बुलन्दशहर आदि दूर २ के यात्री सम्मिलित होते हैं, और २ से ३ हजार तक बकरे बलि कर दिया जाया करते थे तथा लगभग ३०, ४० हजार रुपया मुसलमान जमींदार और कसाइयों के पास जाता था, इस वर्ष ता० २८ से ३० मार्च तक मेला हुआ, मेला सुधार कमेटी और श्री देशबन्धु जी अधिकारी के घोर परिश्रम से परिणाम स्वरूप एक भी बकरा बलि न हो सका। बलि के स्थान पर ४८ घण्टे का अखण्ड यज्ञ १५ पण्डितों की देख रेख में हुआ और आर्य समाज का प्रचार किया गया।

मंत्री
मेला सुधार कमेटी
मोदी नगर मेरठ।

आर्य रिलीफ कैम्प रावलपिंडी

कार्य विवरण

यह कैंप २० दिसम्बर सन् ४६ से दुःख तथा अत्याचार पीड़ित शरणार्थियों की सेवा कर रहा है। इस कैंप ने ४ मास तक हजारा के हजारों पीड़ित भाइयों की हर प्रकार की सेवा की है। १८ मार्च से ही इस कैंप में रावलपिंडी तथा अटक जिले के भिन्न २ कस्बों तथा गाँवों से भागे हुये शरणार्थी बड़ा बड़ पहुँचने लगे। इस कैंप की रोजाना औसत संख्या ८०० तक है। इसके अतिरिक्त कैंप के अधिकारी भोजन तथा

आर्य वीर दल के नौजवान दिन रात एक करके शहर के मुहल्लों तथा घरों में ठहरे हुए पीड़ितों की हर प्रकार की सहायता पहुंचा रहे हैं। इस तरह यह कैंप रोजाना १५०० व्यक्तियों की सेवा कर रहा है। खाना कपड़ा—कपड़ा—बर्तन, बिस्तरा, कपड़े तथा औषधि आदि सब प्रकार की सहायता इस कैम्प की तरफ से दुःख पीड़ित भाई बहिनों को पहुंचाई जा रही है। शारीरिक भोजन के साथ २ स्थानीय आर्य समाज मे दुख पीड़ित संत्रस्त भाइयों को प्रचार द्वारा आध्यात्मिक तथा धार्मिक भोजन भी दिया जा रहा है ताकि स्वतन्त्र जनता के दिलों में से भय का भूत भाग जावे। शरणार्थियों को वैयक्तिक रूप से बसाने तथा बेकारी की समस्या को हल करने के लिये भी कैंप सतत प्रयत्नशील है। सैण्ट्रल रिलीफ कमेटी तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब का पूरा २ सहयोग इस कैम्प को प्राप्त है। आशा है कि सहृदय जनता इस धर्मरक्षा और जाति रक्षा के पुनीत कार्य के लिये उदारता पूर्वक दिल खोल कर दान देगी। सहायता निम्न पतों पर आनी चाहिये।

१. आर्यसमाज गुरुकुल विभाग
रावलपिण्डी शहर।

२. मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब
गुरुदत्त भवन लाहौर।

३. आर्य सर्वदेशिक सभा—बलिदान-भवन
देहली।

कर्तव्य वेला में उद्बोधन

(कवयिता—क्रान्तिकारी राष्ट्रकवि पं० गिरीशचन्द्र जी राजस्थान भूषण सुजानगढ़)

'कवि' उठो ? "कर्त्तव्य" वेला ,
लेखनी से, शंख फूँको ?
अधरों में, आग भरदो ??
धक धकाती, ज्वाल थूँको ???

फट पड़ो, 'ज्वालामुखी' से ?
भभकते, "अङ्गार" फेंको ?
युग-युगों की, दासता का
सदा सर से, भार फेंको ??

फोड़दो ? 'चट्टान' सारे,
तोड़दो इन "भूधरों" को ?
मुक्त करदो, शीघ्रता से
कल-कलाते, "निर्झरों" को !!!

गा उठो ? अब "रौद्र-रव" में
क्रान्तिकारी, "रक्त—गाने" !
छेड़दो ! अब राग "दीपक',
तमतमाती, तीव्र तानें !!!

'सप्त-स्वर' को साथ पहिले;
पुनः 'पञ्चम' पर अलापो।
विश्व-व्यापी गीत- गूँजो
झनझनाती, वीणा थापो ॥

बज उठे, स्वातंत्र्य भेरी ;
कम भीषण, "नाद" होवे !
देश को, स्वाधीन करने ;
धर्म, क्षेत्रे "याद" होवे" !

आज "भूखी" भारती-माँ ;
रो रही है, नयन झरते !
बन्दिनी के, आँसुओं में;
क्यों ? नहीं तुम, डूब मरते !!

दब रहे क्यों ? दासता से;
बेचदी क्यों कनक काया ?
क्या इसी कारण जगत में;
हाय !! तुमने, जन्म पाया।

श्वान जैसा, आज जीवन;
रोटियों के, आज लाले !
"मक्खियों" से, मर रहे हैं;
हाय देखो हिन्दवाले ?

आज मरणासन्न माता;
भूख से व्याकुल व्यथित है !
चीथड़ों में, लाज लिपटी;
पद दलित, शोषित पतित है !!

गल गई है, क्षीण काया
झड़ गए हैं, केश देखो !
रह गई है, आज केवल;
हड्डियाँ, अवशेष देखो ??

शोक हा ! तुम पुत्र होकर,
देखते दुर्दशा मां की !
फूट जाते, नेत्र क्यों नहीं,
झाँक कर, यह दुखद झांकी !!

शूरवीरों के सरों में;
पड़ रही है, धूल देखो,
इस पतन का, मूल खोजो !
इस पतन की, भूल देखो ।

मरण जीवन, हो रहा क्यों ?
भाल उन्नत, आज नत है !
विश्वजेता विश्वाओं का;
हो रहा क्यों तेज हत है !!

बन रहे, पाषाण क्यों ! तुम;
मिल रहे, क्यों ! मट्टियों में !!
बन रहे, क्यों ! राख जलजल;
दासता की, भट्टियों में !!

कांपती क्यों ? कलम लिखते;
भीत होती, भारती क्यों ?
शारदा के, मन्दिरों की;
बुझ रही है, "आरती" क्यों ?

सिंह क्यों ? गीदड़ बने हैं;
मांगते क्यों ? भीख दानी !
खौलता खौ', खनखनाता,
बन गया क्यों ? खून पानी !!

सूर्य क्यों ? तुम से ढका है,
अग्नि में, क्यों ? शीत आया !
अचल क्यों ? आंधी बनी है
क्यों ? 'हिमालय' सर झुकाया !

प्राण रहते, शव बने क्यों ?
स्वाँस रहते, मूक वाणी !
रक्त रहते, चाहते क्यों ?
आज रक्षा, "विश्व-प्राणी" !!

क्यों ? बने, चैतन्य जड़ हैं;
क्रांति युग में, शांति कैसी !
युग-युगों के, साधकों की-
साधना में, भ्रांति कैसी !!

जागृति में, घोर निद्रा,
ज्ञान में, अज्ञान कैसा ?
कर्ण भेदी करुण क्रन्दन-
के समय हा, ध्यान कैसा ?

दासता को, भस्म करने;
जल उठो ? शमशान होकर
अमरता का, मंत्र फूंको !?
देश हित, बलिदान होकर।

है यही "कर्त्तव्य" युग का
"धर्म" भी; कहता यही है !
जग उठो ? जागो जगो हा !
उजड़ती, भारत-मही है !!

उजड़ते, घर द्वार देखो ?
उजड़ते "नर-नार" देखो
सुरपुरी, सौहागिनी के-
उजड़ते शृंगार देखो !

दीन दुखियों, सिसकतों के;
गलों पर, तलवार देखो
कौरवों की, जीत देखो
पाण्डवों की, हार देखो

वीर जननी, प्रसविनी हा
आज "वन्ध्या" हो रही है !
कोटि दिन कर किरण रहते
आज "संध्या" हो रही है !

सो रही है; आज ऊषा;
मुस्कराहट, रो रही है !
धार उलटी, बह रही है;
चरण "गंगा" धो रही है !!

कँप कँपाता, आज लोहा
थरथराती, आज शक्ति
बने भक्षक, आज रक्षक
भूप भूले, देश-भक्ति !

क्रमशः

॥ ओ३म् ॥

कार्यालय—
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
देहली ८-४-१९४७

पीड़ित पंजाब की सहायता करो

विज्ञप्ति सं० २

पिछली विज्ञप्ति में पंजाब सहायता फण्ड के लिये आर्य जनता से अपील करते हुए लिखा गया था कि "सार्वदेशिक सभा अपने कार्य कर्ताओं को वहाँ की स्थिति जानने तथा पीड़ितों की सहायता करने के लिये पंजाब भेज रही है।" तदनुसार सभा की ओर से हम दोनों ने २० मार्च को देहली से प्रस्थान किया और अमृतसर, लाहौर, मुलतान और रावलपिण्डी इत्यादि उपद्रवग्रस्त प्रदेशों की स्थिति का निरीक्षण करते हुए अनेक प्रतिष्ठित सज्जनों और सहायता कार्य से सम्बद्ध संस्थाओं के संचालकों से विचार विनिमय किया, अग्निकाण्ड के जो भयङ्कर दृश्य हमने इन प्रदेशों में अपनी आंखों से देखे और लूटमार, निर्दोष नर नारियों और बच्चों तक की क्रूर हत्या, व्यभिचार, विश्वासघात और गोमांस खिलाकर जबर्दस्ती मतपरिवर्तन कराने के जो हृदयद्रावक समाचार अत्यन्त विश्वसनीय सूत्रों से ज्ञात किये उनका वर्णन करने में हमारी लेखनी सर्वथा असमर्थ है। इतना ही लिखना पर्याप्त है कि अमृतसर, मुलतान और रावलपिण्डी तथा तत्समीपस्थ ग्रामों में मतान्ध मुसलमानों ने हिन्दुओं और सिक्खों पर बड़े भयङ्कर अत्याचार किये, उनके मकानों, मन्दिरों, गुरुद्वारों और दुकानों को आग लगा दी, लूटमार की और जिन्होंने मुसलमान बनना स्वीकार न किया उन्हें तलवार के घाट उतार दिया। यद्यपि निश्चित मृत्यु संख्या का देना अभी सम्भव नहीं प्रतीत होता तथापि जो सूचना हमें विश्वस्त सूत्रों द्वारा प्राप्त हुई उसके अनुसार कहा जा सकता है कि अमृतसर में लगभग ४००, मुलतान की ओर लगभग ५०० और रावलपिण्डी झेलम के जिलों में लगभग ५००० हिन्दू व सिक्खों का क्रूरतापूर्वक वध उपद्रव कारियों ने किया जो प्रायः अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित थे और जिन्हें मुस्लिम पोलीस का भी सहयोग प्रायः सर्वत्र प्राप्त था। ऐसे विश्वासघात के अनेकों उदाहरण हमारे सामने आये कि सूरजम्यानी (मुलतान समीपस्थ) में पड़ोसी हिन्दुओं को यह विश्वास दिलाकर कि हम तुम्हारी रक्षा करेंगे तुम निश्चिन्त रहो मुसलमानों ने अपने पास बुला लिया और फिर उन्हें स्त्री बच्चों सहित मार डाला। मुलतान जिले के त्रग्गर नामक स्थान में ५०० साथियों को लेकर अल्लाबख्श नामक एक व्यक्ति ने प्रवेश किया। चौ० हरदयाल नामक वहां के जमीन्दार के समझाने बुझाने पर अल्लाबख्श ने कुरान शरीफ की शपथ खाकर कहा कि हम इन ग्राम वासियों पर किसी प्रकार का आक्रमण न करेंगे। किन्तु रात को ८ बजे यह शपथ खाकर उसी रात १ बजे धावा बोलकर चौ० हरदयाल तथा अन्य उस ग्राम के हिन्दुओं को मार डाला। जिला रावलपिण्डी के दुर्भरती, थोआखालसा आदि में भी हिन्दू सिक्खों को आक्रमण न करने क

विश्वास दिला कर ऐसी ही क्रूर हत्याएं की गईं, यहां तक कि अपने सतीत्व की रक्षा के लिये ६५, ७० नवयुवतियों ने थोआखालसा में छलांग मारकर अपनी बलि देदी। इन उपद्रवों के कारण हिन्दुओं की असंख्य हानि हुई है जिसकी पूर्ति असम्भव है, अमृतसर में श्रद्धानन्द बाजार आर्य-समाज को आग लगा दी गई जिससे हानि का अनुमान हमें ५० हजार रु० के लगभग बताया गया। ८ मार्च को गुरुकुल मुलतान को लूट कर हजारों रु० की हानि पहुंचाई गई। रावलपिण्डी समीपस्थ गुरुकुल रावल पर २००, ३०० गुण्डों ने बन्दूकों सहित आक्रमण किया और धर्मशाला को आग लगाई। बचाव करते हुए कुछ ब्रह्मचारियों, भिक्षुओं तथा अन्य सज्जनों को पर्याप्त गम्भीर चोटें आई। जो व्यक्ति इन उपद्रवों के कारण मारे गये उनके परिवारों की सहायता की भी तुरन्त आवश्यकता है। जो हजारों व्यक्ति उपद्रवकारियों के भय से भाग कर शहरों में आ गये और अब बहुत बड़ी संख्या में मुलतान (इन शरणार्थियों की संख्या सेवा समिति के कैम्प में ३०५० थी जब हमने २४ मार्च को उस शिविर का निरीक्षण किया तो संख्या १००० के लगभग थी) रावलपिण्डी (यहां शरणार्थियों की संख्या ६००० से ऊपर थी जो आर्य समाज तथा सिंह सभा गुरुद्वारा आदि में आश्रय पाए हुए थे) वाह नामक सरकारी शिविर में १० हजार से अधिक शरणार्थी हैं ऐसे ही चकवाल आदि अन्य स्थानों में हैं। इन स्थानों में आर्य समाज के सहयोग से सेवा समिति, केन्द्रीय सहायता समिति आदि संस्थाएं प्रशंसनीय सेवा सहायता-कार्य कर रही हैं, हजारों शरणार्थियों के भोजन, वस्त्र, औषधादि की व्यवस्था उन्हें करनी पड़ती है अतः उन्हें आर्थिक सहायता पहुंचाने की तुरन्त आवश्यकता है जिससे इस पीड़ित सेवा के पुण्यकार्य को वे निश्चिन्तता पूर्वक कर सकें। सार्वदेशिक सभा की ओर से मुलतान और रावलपिण्डी के पीड़ितों की सहायतार्थ ५०००) की सहायता इस यात्रा से लौटते ही तुरन्त भिजवा दी गई है किन्तु वर्तमान आवश्यकताओं को देखते हुए वह सर्वथा अपर्याप्त है। अतः हम आर्य जनता से पुनः अपील करते हैं कि वे पंजाब के पीड़ित भाई बहिनों की सहायतार्थ धन तथा वस्त्रादि सार्वदेशिक सभा की पंजाब सहायता निधि में तुरन्त भेज कर अपने कर्तव्य का पालन करें। इस कार्य में विलम्ब होने से सहायता कार्य में बड़ी बाधा पहुंचेगी। जिन्हें जबर्दस्ती मुसल्मान बनायागया उनकी शुद्धि का कार्य भी सार्वदेशिक सभा की ओर से कराया जाएगा।

सहायता का समस्त धन मन्त्री अथवा कोषाध्यक्ष सार्वदेशिक सभा बलिदान भवन, देहली के पते पर भेजना चाहिये।

गङ्गाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
सम्पादक 'सार्वदेशिक' देहली।

साहित्य समीक्षा

शास्त्रचर्चा अर्थात् दिल्ली दिग्विजय

सम्पादक श्री पं० हरिदत्त जी शास्त्री, सप्त तीर्थ एम० ए०। प्रकाशक- श्री विश्वम्भर नाथ सक्सेरिया, बेलन गंज, आगरा। पुस्तक मिलने का पता-श्रीमती लक्ष्मीदेवी जी धर्म पत्नी स्व० पं० व्यास देव जी शास्त्री, एम० ए० एल् एल बी० बिस्सोमल बिल्डिंग्स पास आर्य समाज दीवान हाल देहली मूल्य ।।।)

यह यमुना नदी के पार धर्म सङ्घ के विशाल मण्डप में शत मुख कोटि यज्ञ के अवसर पर ७ फरवरी सन् १६४४ को सनातन धर्म के स्वरूप पर हुये उस शास्त्रार्थ का विस्तृत और टिप्पणी सहित वर्णन है जिसमें आर्य समाज की ओर से स्व० पण्डित व्यासदेव जी शास्त्री और पौराणिक पक्ष की ओर से पं० माधवाचार्य जी शास्त्री वक्ता थे। शास्त्रार्थ से पूर्व का समस्त पत्र व्यवहार भी आर्य भाषानुवाद सहित प्रकाशित कर दिया गया है। शास्त्रार्थ में जिन विषयों की चर्चा हुई थी और जिन पर समय संकोच के कारण विस्तृत रूप से उस समय प्रकाश न डाला जा सका था उन पर सुप्रसिद्ध आर्य कवि तथा विद्वान् श्री० पं० हरिदत्त जी शास्त्री सप्त तीर्थ मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल महा विद्यालय ज्वालापुर ने सप्रमाण उत्तम प्रकाश डालकर इस विवरण को शास्त्र प्रेमियों के लिये अत्यन्त उपयोगी बना दिया है। इस पुस्तक की बिक्री से प्राप्त समस्त धन स्व० पं० व्यासदेव जी शास्त्री के परिवार के भरण पोषण में व्यय किया जायगा इस दृष्टि से भी इस अत्यन्त उपयोगी शास्त्रार्थ विवरण को आशा है धर्मप्रेमी विशेष रूप से अपनायेंगे तथा इसका प्रचार करेंगे। प्रतीत होता है कि छापने की शीघ्रता में प्रूफ संशोधनादि में कई त्रुटियाँ विशेषतः संस्कृत उद्धरणों में रह गई हैं उन्हें अगले संस्करण में ठीक कर लेना चाहिये। यह विवरण संग्रहणीय है।

सर्व दर्शन परिचय—लेखक श्री प्रो० गोपाल जी, अध्यक्ष प्राच्य साहित्य सेवा मण्डल, १५ हनुमान रोड, नई, देहली, प्रकाशक शारदा मन्दिर नई, सड़क देहली। मूल्य ।।।)

इस ३२ पृष्ठों की पुस्तक में सब आस्तिक और नास्तिक दर्शनों का संक्षेप से दिग्दर्शन कराया गया है। यह सुयोग्य लेखक महोदय की आगे प्रकाशित होने वाली 'सर्वदर्शन मीमांसा' की भूमिका के रूप में हैं।

योग्य लेखक महोदय ने सांख्य दर्शन के विषय में इस भ्रम का निराकरण किया है कि वह निरीश्वर वाद का प्रतिपादक है। दर्शनों के सिद्धान्तों की रूप रेखा इस छोटी सी पुस्तक में होने के कारण इसकी उपयोगिता है किन्तु प्रारम्भ में 'दो शब्द' इस शीर्षक से जो लेखक महोदय ने यह लिखा है कि:—

"सर्व दर्शन परिचय' में नास्तिक तथा आस्तिक दोनों प्रकार के दर्शनों का उल्लेख है, उन्हें ध्यानपूर्वक पढ़ने से यह स्पष्ट हो जायगा कि भारतीय विचार शृङ्खला का विकास उसी प्रकार हुआ है जिस प्रकार पश्चिमीय विचार धारा का विकास हुआ है। उदाहरण के तौर पर प्रमाण (Epistemology) विषय पर दृष्टि डालिये।

चारवाक के सन्मुख प्रत्यक्ष प्रमाण ज्ञानउपलब्धि का एक मात्र साधन है ; बौद्ध और जैन दर्शन में प्रत्यक्ष तथा अनुमान दोनों ही ज्ञानोपलब्धि के साधन हैं, यो । और साख्य के मत मे प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द ज्ञानोपलब्धि के साधन हैं, परन्तु न्याय और वैशेषिक के मत में प्रत्यक्ष अनुमान, उपमान और शब्द ये चार साधन हैं। इस प्रकार प्रमाण विषय पर भिन्न २ विचार का क्रमशः विकास हुआ है।"

इससे पाठकों पर यह प्रभाव होता है कि नास्तिक दर्शनों की रचना पहले हुई और उसके पश्चात् आस्तिक दर्शनों की इस प्रकार क्रमशः विकास हुआ है। यह बात यथार्थता के विरुद्ध है और स्वयं लेखक महोदय के तात्पर्य के भी प्रतिकूल है जैसे कि उनके साथ बातचीत से हमे ज्ञात हुआ किन्तु ऊपर उद्धृत शब्दों मे प्रयुक्त विकास शब्द भ्रमजनक है । आशा है सुयोग्य लेखक अपने अभिप्राय को अधिक स्पष्ट कर के भ्रम को दूर कर देंगे।

अखण्ड भारत—लेखक स्वर्गीय पण्डित चन्द्रगुप्त जी वेदालङ्कार। सम्पादक श्री जगत् कुमार जी शास्त्री साहित्य मण्डल, दीवान हाल, देहली मूल्य ।।।)

स्व० पं० चन्द्रगुप्त जी वेदालङ्कार के नाम तथा काम से कौन हिन्दू संगठन प्रेमी अपरिचित है? उनके अन्दर आर्य जाति और आर्यावर्त के उत्थान की ज्वाला धधक रही थी। इस छोटी सी पुस्तिका में उनके अखण्ड भारत विषयक दो अत्युत्तम व्याख्यान जो युवक सम्मेलनों के अध्यक्ष पद से दिये गये थे अविकल रूप से उद्धृत किये गये हैं जो पाकिस्तान योजना की निस्सारता को सिद्ध करते हैं। अन्त में कवि जोरावरसिंह जी की 'पाकिस्तान-पचीसी' भी इसमे जोड़दी गई है जो अत्यन्त ओजस्विनी भाषा मे लिखी गई है। पुस्तक उपादेय है।

शिवा बावनी—महाकवि भूषण विरचित टीकाकार श्री जगतकुमार शास्त्री, प्रकाशक साहित्यमण्डल, दीवानहाल देहली मूल्य ।।।) ।

महाकवि भूषण ने अत्यन्त ओजस्विनी ब्रजभाषा की कविता मे छत्रपति शिवा जी का गुण कीर्तन किया था उसका सरल आधुनिक भाषा मे अनुवाद पं० जगतकुमार जी ने किया है जिससे सब कविता प्रेमी लाभ उठा सकते हैं। महाकवि भूषण की वीररसमयी सुन्दर कविता मृत प्राय व्यक्तियों में भी नवीन जीवन का सचार करने वाली है। ब्रजभाषा का संयुक्त-प्रान्त के बाहर प्रचार न होने के कारण उसे समझना अन्यों के लिये कठिन था इसलिये श्री जगतकुमार जी ने उसकी टीका करके उपयोगी कार्य किया है। कठिन ब्रजभाषा के शब्दों का वे सरल अर्थ भी अन्त मे दे देते तो अच्छा होता।

क्रान्ति चिरञ्जीवी हो—लेखक तथा प्रकाशक श्री विश्वम्भर सहाय जी प्रेमी—प्रेमी प्रिटिङ्ग प्रेस, मेरठ मूल्य २)।

इस पुस्तक मे श्री प्रेमी जी ने अपनी लिखित २० कहानियों का संग्रह प्रकाशित किया है जो राष्ट्रीय आन्दोलन के साथ विशेष संबंध रखने वाली है। 'कुछ शब्द' इस शीर्षक से लिखी प्रस्तावना मे सुयोग्य लेखक महोदय ने इन कहानियों के लिखने का उद्देश्य निम्न शब्दों में प्रयोग किया है :—

"इन कहानियों के लिखने का मेरा मुख्य अभिप्राय अपने देश के नवयुवकों में राष्ट्रीय भावना को जागृत करना है। इन कहानियो मं कल्पना से बहुत कम काम लिया गया है अधिकांश भाग वास्तविकता पर निर्भर है।"

यद्यपि लेखक महोदय ने प्रस्तावना में लिखा है "सम्भव है पाठकों को इनमें सरसताका अभाव प्रतीत हो" परन्तु वस्तुतः ये कथायें शिक्षाप्रद तथा राष्ट्रीय भावना वर्धक होने के अतिरिक्त सरस भी हैं। शैली अत्यन्त सरल और ओजस्विनी भाषा है। दृश्यों का चित्रण उत्तमता से किया गया है। 'क्रान्ति चिरञ्जीवी हो' सत्याग्रत, फांसीघर, स्वतन्त्रता यज्ञ में आहुति, दुखिया की दीवाली, गोलीकाण्ड, आजादीपथ, विद्रोह की आग इत्यादि शीर्षकों की कथायें विशेष प्रभावोत्पादिनी हैं। नवयुवकों अथवा नवयुतियों अथवा कुमार कुमारियों के हाथों में अश्लील शृङ्गारमय उपन्यासों के स्थान पर ऐसा साहित्य देने से विशेष लाभ हो सकता है। इस उत्तम रचना के लिये हम अपने मित्र प्रेमी जी को हार्दिक बधाई देते हैं।

धर्मदेव वि० वा०

आर्य अन्तर्जातीय विवाह विज्ञापन

एक धनाढ्य, प्रसिद्ध, कुलीन आर्य परिवार की दो सुन्दर, स्वस्थ, गृह कार्य कुशल, हिन्दी अंग्रेजी उच्च शिक्षा प्राप्त १७ और १४ वर्ष की कन्याओं के लिए बिना जातिभेद के विचार के किन्तु पक्के आर्य वरों की आवश्यकता है। इन कन्याओं के पिता की वार्षिक आय १५००) है। ये चाहते हैं कि सम्बन्ध लगभग अपनी बराबरी के पक्क आर्य परिवार में किया जाए। कन्याएं हिन्दी, बंगला, गुजराती, पंजाबी, छत्तीस गढ़ी तथा अंग्रेजी अच्छी जानती हैं।

पत्र व्यवहार का पताः—

रवीन्द्र आयुर्वेद भवन विलासपुर, सी० पी०

सम्पादकीय

महत्वपूर्ण अन्तः एशियाई-सम्मेलन—

२३ मार्च से २ अप्रैल तक जो अन्तःएशियाई सम्मेलन देहली में हुआ, वह प्रत्येक दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण था इस में किसी को सन्देह नहीं हो सकता। अन्तःकालीन भारत सरकार के उपाध्यक्ष माननीय पं० जवाहर लाल जी, महात्मा गांधी तथा श्रीमती सरोजिनी देवी आदि के भाषण विशेष प्रभावशाली और चिरस्मरणीय थे। पं० जवाहर लाल जी ने २ अप्रैल को भाषण देते हुए कहा कि "एशिया का युगों से चला आ रहा सनातन सन्देश मानवजगत् के लिए अत्यन्त मूल्यवान् है। पश्चिम की आधुनिक सभ्यता के लिए भी उसका भारी मूल्य है। इस संदेश के अभाव में ही समस्त वैज्ञानिक साधनों के बावजूद पश्चिम के लोग परस्पर लड़रहे हैं और युद्ध की भाषा में सोचते हैं। मित्र राष्ट्र संघ भी अब तक शान्ति, सद् भावना और पारस्परिक सहयोग का आदर्श पेश नहीं कर सका। पश्चिम की इस शक्ति शालिनी सभ्यता ने जो मनुष्य के मापदण्ड को उठाने में कृत कार्य हुई है किसी सत्य के अभाव के कारण ही मनुष्य को पशुता के निम्न स्तरपर उतार दिया है। वह अभाव किस वस्तु का है यह मैं नहीं जानता। सम्भव है कि एशिया का सन्देश उसके इस अभाव की पूर्ति कर सके। किन्तु अपने इस सन्देश को सर्व प्रथम हमें स्वयं सुनना होगा। आज हम लोग अपने आपको पाने के प्रयत्न में लगे हैं और जिसदिन हम अपने आपको पा लेंगे उस दिन शेष संसार भी हमें पा लेगा।" यह सम्मेलन न केवल एशिया के इतिहास में अपितु संसार के इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना है।" इत्यादि

माननीय पं० जवाहर लाल जी के उपर्युक्त शब्द यथार्थ और महत्वपूर्ण हैं किन्तु उनसे यह भी स्पष्ट प्रतीत होता है कि उन्होंने स्वयम् एशिया वा भारत के प्राचीन सन्देश को अभी तक नहीं समझा और पाश्चात्य देशों में जिस यथार्थ तत्व के अभाव के कारण इतना नैतिक पतन हो गया है इसको भी वे निश्चिततया अब तक नहीं जान सके। एशिया और उसके मुख्य केन्द्र भारत का यह सन्देश सच्ची आध्यात्मिकता का है जिस के अभाव से सभ्यताभिमानी पाश्चात्यों की वस्तुतः नैतिक दृष्टि से इतनी शोचनीय दुर्दशा हुई है। श्री जवाहर लाल जी सच्चे देशभक्त होते हुए भी पाश्चात्य शिक्षा और वातावरण में पले होने के कारण उस के यथार्थ स्वरूप को नहीं समझ पाये परन्तु पूज्य महात्मा गान्धी जी का अपना जीवन आध्यात्मिकता पूर्ण होने के कारण वे उस सन्देश को निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त करने में समर्थ हो सके। उन्होंने एशिया के भिन्न २

प्रदेशों से आये हुए प्रतिष्ठित अतिथियों को सम्बोधित करते हुए भारत का निम्न सन्देश उन्हें २ अप्रैल के अधिवेशन में दिया है:–

"पूर्व का सन्देश पश्चिम के चश्मे से या परमाणु बम के अनुकरण से नहीं सीखा जा सकता। यदि आप पश्चिम को कोई सन्देश देना चाहते हैं तो वह सत्य और प्रेम का सन्देश होना चाहिये। पश्चिम आज परमाणु बम के निर्माण के कारण निराश और उद्विग्न हो रहा है क्योंकि परमाणु बमों के निर्माण और वृद्धि का अर्थ है न केवल पश्चिम का अपितु समस्त संसार का महा विनाश।

आपका कर्तव्य है कि आप समस्त संसार को उसके पापों का ज्ञान करायें। यह आपके व मेरे गुरु की शिक्षा और एशिया को उनकी महान् विरासत है। दरिद्रों के जागरण और अभ्युत्थान एवं जन तन्त्र के इस युग में आपको यह महान् सन्देश पूर्ण बल के साथ संसार में पहुँचाना चाहिये तभी आप पश्चिम को विजय कर सकेंगे। यदि आप सम्पूर्ण मन और सम्पूर्ण हृदय से एशिया के उन महान् मनीषी पैगम्बरों जरदुश्त, बुद्ध, ईसा और मुहम्मद आदि के सन्देश के रहस्य को सम्यक् हृदयंगम करें और अपने आप को सत्य के अनुरूप बनाएं तब आप सहज ही यह अनुभव कर सकेंगे कि पश्चिम की विजय को सरलता से पूर्ण किया जा सकता है और वह विजय प्रेम से ही हो सकती है।" इत्यादि

पूज्य महात्मा जी द्वारा प्रदत्त यह सन्देश सच्ची आध्यात्मिकता का सन्देश है जो सत्य और प्रेम के रूप में व्यक्त होती है। 'सत्येनोत्तभिता भूमिः" ऋतस्यहि शुरुधः सन्ति पूर्वीः ऋतस्य धीतिर्वृजिनानि हन्ति। ऋतस्य श्लोको बधिरा ततर्द कर्णा बुधानः शुचमान आयोः॥"

'दृते दृं ह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्तां मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे॥' (यजु ३६।१८) इत्यादि वेद मन्त्रों में सत्य और प्रेम के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए यह बताया गया है कि पृथिवी का वास्तविक धारण सत्य के द्वारा ही होता है। सत्य का अद्भुत महत्त्व है, सत्य का धारण सब पापों को दूर कर देता है। सत्य का शब्द इतना तेजस्वी होता है कि वह मानो बहरे कानों पर भी पड़ कर उन्हें प्रभावित कर देता है। हमें सब प्राणी मित्र की दृष्टि (प्रेम) से देखें। हम सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि (प्रेम) से देखें।

निस्सन्देह असत्य और विद्वेष भावना से सन्तप्त विश्व को इस समय इसी वैदिक सन्देश की विशेष आवश्यकता है। सत्य और प्रेम के प्रचारकों में पैगम्बर मुहम्मद साहेब का नाम लेना कुरान की शिक्षा और मुसलमानी इतिहास से परिचित प्रायः सभी विद्वानों को अखरेगा। खेद है कि मुहम्मद साहेब द्वारा प्रचारित प्रेम केवल अपने मत के अनुयायियों तक ही सीमित रहा और वह अन्य मतावलम्बियों के प्रति घृणा के भावों से दब गया अतः जरदुश्त बुद्ध भगवान और ईसामसीह की कोटि में उन्हें परिगणित करना यथार्थता के विरुद्ध है।

महात्मा गांधी जी के सन्देश की ओर प्रतिष्ठित प्रतिनिधियों का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करते हुए भारत-कोकिल श्रीमती

सरोजिनी देवी ने अपने अन्तिम भाषण में उस सन्देश को देश देशान्तर में लेजाने की प्रेरणा को तथा काव्यमयी भाषा में कहा कि भारत की अन्धकार की दीर्घ रात्रि अब समाप्त हो रही है। एशिया वासी मेरे बन्धुओ! सहवीं गयो! उठो! याद रक्खो कि रात्रि का अन्धकार अब समाप्त हो गया है। चलो अब हम सब नर नारी उषा की ओर मिलकर प्रयाण करें।

इण्डोनेशिया के प्रधान मन्त्री डा० शरियार ने भारत को धन्यवाद देते हुए सत्य, मानवता और आदर्शवाद से कभी विचलित न होने, आशा और स्फूर्ति का सन्देश सम्मेलन से ग्रहण करने की प्रबल प्रेरणा की। ऐसे ही अन्य वक्ताओं के भी प्रशंसनीय भाषण हुए। यह प्रसन्नता की बात है कि इस महत्त्वपूर्ण सम्मेलन के साथ ही एशिया वासियों के परस्पर सम्पर्क की समाप्ति नहीं हो गई किन्तु इसे स्थिररूप देने का निश्चय किया गया है। वास्तव में एशिया निवासियों में जिनकी भाषा, धर्म और संस्कृति में बड़ी समानता है परस्पर सम्पर्क बढ़ाने की बड़ी भारी आवश्यकता है। आशा है आयोजित सङ्घ अपने उच्च उद्देश्य की पूर्ति में विशेष प्रयत्न शील होगा। आर्य विद्वानों और नेताओं को भी ऐसे प्रगतिशील आन्दोलनों में पूर्ण सहयोग देना चाहिये तथा एशिया के भिन्न २ प्रदेशों में सार्वभौम आर्य धर्म के प्रचार की व्यवस्था करनी चाहिये। इस अवसर पर प्रतिनिधियों को आर्य साहित्य वितरण करके उस दिशा में प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया है जिसे जारी रखने और बढ़ाने की आवश्यकता है।

पाश्चात्यों में सदाचार का दिवाला:—

सभ्यताभिमानी पाश्चात्यों में प्रकृति वाद जन्य नास्तिकता और सहशिक्षा(Co-education) आदि के कारण सदाचार का किस प्रकार दिवाला निकल रहा है इसका एक ताजा उदाहरण रेवरेन्ड ब्रायन् ग्रीन (Rev. Brian Green) नामक पादरी ने अमेरिका की यात्रा के बाद अभी हाल में दिया है जो अत्यन्त भयंकर है। उसने होली ट्रिनिटी चर्च लन्दन में इस सम्बन्ध में व्याख्यान देते हुये बतलाया कि:—

"Sexual intercourse between schoo[l] students is very common. In State universities 90 percent of the male students and 70 Percent of the women have sex relations outside of marriage."

(Amrit Bazar Patrika Allahabad dated 16 —4 — 47)

अर्थात् स्कूल विद्यार्थियों और विद्यार्थिनियों में सम्भोग अत्यन्त सामान्य बात हो गई है। यह अन्दाजा लगाया गया है कि स्टेट् की यूनीवर्सिटियों में विद्यार्थियों में लगभग ९० प्रतिशतक और विद्यार्थिनियों में से ७० प्रतिशतक का विवाह के बाहर मैथुनादि प्रचलित है।

यह अवस्था कितने घोर नैतिक पतन की द्योतक है यह लिखने की आवश्यकता नहीं। जहाँ प्राचीन भारतीय आदर्श के अनुसार ब्रह्मचर्य अर्थात् पूर्ण पवित्रता और संयम मय जीवन शिक्षा का आधार होना चाहिये वहाँ सभ्यताभिमानी देशों मे इतनी सदाचार शून्यता आ रही है यह कितनी शोचनीय बात है। इस नैतिक

पतन के कारणों पर विचार प्रकट करते हुए रेवरेन्ड ग्रीन ने यह भी बताया कि लड़कों, लड़कियों की सहशिक्षा इस के प्रधान कारणों में से एक है। "The minister (Rev Green) added that co-education must bear a large portion of the blame for what he described as "moral laxity".(The report of the speech published in 'The Amrit Bazar Patrika' dated 16 — 4 — 47).

हमारे देश की जो सुशिक्षित नरनारियां पाश्चात्यों के अनुकरण में ही भारत का कल्याण समझती हैं और लड़कों लड़कियों की सह-शिक्षा की पक्षपाती हैं उन की आँखें इस भयङ्कर नैतिक पतन के आंखों देखे उदाहरण से खुल जानी चाहिये। यह अत्यन्त दुःख की बात है कि हमारे देश के अनेक विद्यालयों में भी सदाचार की ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता तथा अध्यापक अध्यापिकाओं की नियुक्ति के समय सदाचार को सर्वथा गौण व उपेक्षणीय समझा जाता है जिसके भयङ्कर परिणाम डा० भगवान दास जी जैसे मान्य महानुभाव विचार शील नर नारियों के आगे रखते रहे हैं। अब तक इस विषयक जो उपेक्षा की गई उस पर हार्दिक दुःख प्रकाशित करते हुए समस्त देश हितैषियों और समाज प्रेमियों का कर्तव्य है कि वे भारतीय आदर्शानुसार पुनः ब्रह्मचर्य को ही समस्त राष्ट्रीय शिक्षा का आधार बनायें और इस प्रकार राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य के निर्माण में सहायक हों। इन विषयों में हमें पाश्चात्यों का अनुसरण न करते हुए उनके सामने अपने प्राचीन आदर्शों का महत्त्व प्रस्तुत करना चाहिये। केवल विद्यार्थियों में ही नहीं, पश्चिम के गृहस्थ स्त्री पुरुषों में भी कितनी निर्लज्जता और नैतिक पतन उत्पन्न हो गये हैं इसका अनुमान इस चीज से किया जा सकता है कि न्यूयार्क (अमेरिका) से प्रकाशित होने वाले " Readers' Digest " नामक मासिक पत्र के जनवरी १९४६ के अङ्क में एक लेख "A woman needs three husbands"इस शीर्षक से पृष्ठ ६५-६६ पर प्रकाशित हुआ है जिसमें ऐलेक्जंडर ब्लैक ने बताया है कि प्रत्येक स्त्री को तीन पतियों की एक ही समय में आवश्यकता है जिनके नाम उसने सुविधार्थ Business husband (व्यापारी पति) Handy husband (घरके काम काज को देखने वाला पति) तथा Lover husband (प्रेमी पति रक्खे हैं। इस लेख के उपसंहार में तीन पतियों के कार्यों का निर्देश करते हुए लेखक ने कहा है कि "Each,like an endowed specialist, would be winged by high purpose. In ensemble they would assure the perfect home. Automatically, the wife also would become perfect. "

अर्थात् इन में से प्रत्येक एक विशेषज्ञ की भांति उच्च उद्देश्य से प्रेरित होगा। वे तीनों मिल कर एक पूर्ण गृह का विश्वास दिला सकेंगे। स्वभावतः स्त्री भी स्वयं पूर्ण हो जायगी।

इन निर्लज्जता और नैतिक पतन की पराकाष्ठा के सूचक शब्दों का उल्लेख करते हुए

भी हमे लज्जा आती है पर अनेक पाश्चात्य सभ्यताभिमानी नर नारियों को इन नीच भावों के प्रकट करने मे कोई सकोच नहीं होता क्योंकि 'Eat' drink and be merry, अर्थात् 'खाओ, पियो और मौज उड़ाओ' को ही उन्होंने जीवन का उद्देश्य समझ रक्खा है। यदि राज नैतिक दृष्टि से स्वतन्त्र होकर भी भारत पाश्चात्य सभ्यता के अन्ध अनुसरण मे तत्पर रहा तो ऐसी स्वतन्त्रता उसके विनाश का कारण बन जायगी। अत. यह अत्यन्त आवश्यक है कि भारतीय अपनी सदाचार प्रधान सभ्यता के तत्व को समझ कर उसे ही अपनायें और समस्त विद्यालयों मे ब्रह्मचर्य को ही शिक्षा का आधार बनाया जाए।

माननीय श्री प्रकाश जी का प्रशंसनीय हिन्दू अन्तर्जातीय विवाह बिलः—

केन्द्रीय धारा सभा के सदस्य माननीय श्रीयुत श्रीप्रकाश जी ने भिन्न २ जातियों उपजातियों के हिन्दुओं के परस्पर विवाह को नियमित और कानून के अनुकूल बनाने के उद्देश्य से एक बिल केन्द्रीय धारा सभा मे प्रस्तुत किया है जिस में निम्न लिखित मुख्य धाराए है —

इस ऐक्ट के अनुसार हिन्दुओं मे अन्तर्जातीय विवाह निम्न शर्तों पर हो सकता है कि—

(१) विवाह के समय वरवधू मे से किसी की भी पूर्व पत्नी व पति विद्यमान न हो।

(२ यदि कन्या की आयु २१ से कम हो तो उसे अपने पिता वा सरक्षक की अनुमति विवाह के लिये अवश्य प्राप्त कर लेनी चाहिए।

(३) वर वधू का परस्पर ऐसा निकट सम्बन्ध न होना चाहिये जिस के कारण प्रचलित कानून के अनुसार उनका विवाह अवैध ठहराया जा सके।

(४) जिले के रजिस्ट्रार को प्रस्तुत विवाह की सूचना देकर ३ मास के अन्दर विवाह करना होगा।

(५) यदि कोई विवाहित पुरुष जिस की पत्नी जीवित हो अथवा स्त्री जिस का पति जीवित हो इस ऐक्ट के अनुसार विवाह करेगा तो वह भारतीय दण्डविधान की धारा ४९४, ४९५ के अनुसार दण्डनीय समझा जाएगा। हम श्रीयुत श्री प्रकाश जी द्वारा प्रस्तुत इस बिल को अत्यन्त उपयोगी समझते हुए साधारणतया इसका समर्थन करते है। हमारे विचार मे इस ऐक्ट मे कम से कम आयु २१ के स्थान मे २४ रक्खी जाए तो अधिक उत्तम हो। वैसे भी वैद्यक ग्रन्थानुसार १६ और २४ का ही अनुपात ठीक माना गया है। साधारणतया २४ वर्ष की आयु से पूर्व पुरुष के विचारों मे परिपक्वता नही आती इस लिये वेदादि सच्छास्त्रों मे कम से कम २४ वर्ष की आयु तक प्रत्येक पुरुष और १६ की आयु तक प्रत्येक कन्या को ब्रह्मचर्य रखने की आज्ञा है। इस बिल मे एक विवाह की जो धारा रक्खी गई है वह विशेष महत्वपूर्ण है इसके अभाव मे अनेक कामी पुरुष ऐसे नियमों का दुरुपयोग करके समाज सुधार को कलङ्कित करते रहे है जो अत्यन्त अवाञ्छनीय अवस्था है। माननीय श्री घनश्यामसिंह जी द्वारा प्रस्तुत और स्वीकृत आर्य विवाह ऐक्ट (सन् १९३७) मे आर्यों को अन्तर्जातीय विवाह विषयक जो सुविधा प्राप्त हो गई थी वही इस बिल के स्वीकृत

होने पर समस्त अन्य हिन्दुओं को भी मिल जाएगी जिस से जाति बन्धन की शृङ्खलाओं के तोड़ने में बड़ी सहायता मिलेगी। आर्य विवाह ऐक्ट में एक विवाह विषयक धारा न होने की त्रुटि इस प्रस्तुत मसविदे में दूरकर दी गई है यह प्रशंसनीय बात है। जातिभेद की समाज संघटन विघातक सङ्कीर्णता वर्धक बुराइयों से परिचित प्रत्येक समाज प्रेमी सज्जन और देवी से तथा समाजोद्धारक संस्थाओं से हमारा अनुरोध है कि इस लोकोपकारक बिल का अनुमोदन कर के इस को उपर्युक्त संशोधन के साथ कानून का रूप दिलाने में सहायक हों।

शारदा ऐक्ट में प्रस्तुत संशोधन

केन्द्रीय धारा सभा के सदस्य पं० ठाकुरदास भार्गव ने गत २ अप्रैल के केन्द्रीय धारा सभा के अधिवेशन में श्री हर विलास शारदा के बाल विवाह निषेधक ऐक्ट मे ऐसे संशोधन प्रस्तुत किये हैं जिनसे उस ऐक्ट को अधिक प्रबल बनाया जा सके। उदाहरणार्थ उनका प्रस्ताव है कि बाल विवाह निषेधक ऐक्ट को तोड़ने वालों को जेल का दण्ड अनिवार्य कर दिया जाए और उसकी अवधि १ मास के स्थान में ३ मास हो। शारदा ऐक्ट को तोड़ने वाले (अर्थात् १८ वर्ष से कम आयु वाले) विवाहार्थी को भी १५ दिन की सादी सजा अथवा जुर्माने का दण्ड दिया जाये जो वर्तमान ऐक्ट में नहीं है।

इन संशोधनों को प्रस्तुत करते हुए पण्डित भार्गव ने बतलाया कि शारदा ऐक्ट प्रायः एक मृत पत्र सा बना हुआ है। अब भी ग्रामों और पिछड़ी जातियों में बहुत से विवाह इसे तोड़कर बिना संकोच व भय के किये जा रहे हैं। श्रीमती अम्मू स्वामी नाथन् ने पं० भार्गव के संशोधनों का समर्थन करते हुए कहा कि वर्तमान कानून अपराधियों को दण्ड देने में अत्यन्त निर्बल है। ऐसे भी उदाहरण प्रायः सुनने में आते हैं जहाँ लोग इस कानून को तोड़ने के लिए अपने को पहले से तैयार रखते हैं और जुर्माने के धन को दहेज आदि की राशि में सम्मिलित कर लिया जाता है।

ये संशोधन जनमत जानने के लिए वितरित किये जा रहे हैं। हम इन संशोधनों को इस ऐक्ट को वस्तुतः उपयोगी और प्रबल बनाने के लिए आवश्यक समझते हैं। यह खेद की बात है कि शारदा ऐक्ट जैसा उपयोगी कानून अपनी आन्तरिक त्रुटियों के कारण मृत पत्र सा बन जाये।

वर्तमान शारदा ऐक्ट की निर्बलता के विषय में मुझे वैयक्तिक अनुभव तब हुआ था जब कि १०, ११ वर्ष हुए सीडेड डिस्टिक्ट कालेज अनन्तपुर (आन्ध्र) के एक रसायन शास्त्र के प्रो० चायप्पा M. A. L. T. के विरुद्ध मैंने अनेक मित्रों की प्रेरणा से शारदा ऐक्ट के अधीन मुकदमा चलाया। ८ महीनों तक मुकदमा चलता रहा इस बीच में उस कालेज के कई प्रोफेसरों ने ऐसी साक्षियाँ प्रो० चायप्पा के पक्ष में दीं जिन्हें डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट ने सर्वथा अविश्वसनीय मानते हुए अभियुक्त को २०० रु० जुर्माना अथवा २ दिन की सादी कैद का दण्ड सुनाया। सेशनकोर्ट में अपील करने पर आक्षेपयोग्य अनुचित साधनों की सहायता से अभियुक्त निर्दोष घोषित कर दिये गये जबकि मुझे एक मास पश्चात् अपील सुनने की सूचना देकर मेरे अनन्तपुर से बंगलौर जाते ही अगले दिन मुक-

समा पुनर्विचारार्थ ले लिया गया। वहीं ज्ञात हुआ था कि शारदा ऐक्ट के होते हुए भी हजारों विवाह शिक्षित, अशिक्षित सब वर्गों में बिना संकोच के किये जा रहे हैं क्योंकि किसको इतनी गर्ज पड़ी है कि पहले १००) जमा करा कर इतनी परेशानी में अपने आप को डाले और उस अमानत से भी हाथ धोने का भय हर समय बना हुआ हो। अतः हम शारदा ऐक्ट को प्रबल बनाने के लिये प्रस्तुत संशोधनों का हार्दिक समर्थन करते हैं और समस्त समाज प्रेमी सज्जनों और देवियों तथा आर्य समाजों, आर्य कुमार सभाओं व हिन्दू सभाओं से अनुरोध करते हैं कि वे भी इन संशोधनों का समर्थन कर के शारदा ऐक्ट को वस्तुतः उपयोगी बनाने में सहायक हों।

महात्मा गांधी और मि० जिन्ना की संयुक्त अपील

१५ अप्रेल को महात्मा गांधी और मि० जिन्ना ने देश में हो रहे उपद्रवों और हिंसात्मक कार्यों की जिन से हजारों निरपराध व्यक्तियों को कष्ट उठाना पड़ रहा है घोर निन्दा करते हुए समस्त देश वासियों से अपील की है कि वे न केवल सब प्रकार के हिंसात्मक और अव्यवस्था जनक कार्यों से दूर रहें बल्कि भाषण और लेख द्वारा ऐसे किसी कार्य को प्रोत्साहन न दें। हम जहाँ इस संयुक्त अपील का जो वायसराय की प्रेरणा से प्रकाशित की गई है हार्दिक अभिनन्दन करते हैं वहाँ यह लिखे बिना नहीं रह सकते कि यदि मि० जिन्ना इस प्रकार की अपील अपने अनुयायियों के नाम आज से कई मास पूर्व निकालते जैसे कि महात्मा गांधी लेखों, भाषणों और इस वृद्धावस्था में भी पूर्वी बंगाल और बिहार के ग्रामों में निरन्तर भ्रमण करके करते रहे हैं तो देश इन भयङ्कर अमानुषिक राक्षसी उपद्रवों से बच जाता। अभी कुछ दिन पूर्व भी मि० जिन्ना ने Truce वा अस्थायिसन्धि के नाम से एक वक्तव्य अवश्य निकाला था जिस में पाकिस्तान की स्वीकृति को ही उसका आधार बताते हुए यहाँ तक स्पष्ट निर्देश किया था कि अखण्ड भारत का अर्थ निरन्तर हत्या और उपद्रव तथा घरेलू युद्ध होंगे पर उसे शान्ति की अपील का नाम न देकर उपद्रवों के प्रोत्साहन के रूप में ही लिया जा सकता था। मुलतान मे तथा अन्यत्र उसके जो भयङ्कर परिणाम हुए 'कैसे लेंगे पाकिस्तान! जैसे लिया था हिंदुस्तान! लड़ के लेंगे पाकिस्तान! इत्यादि नारे लगाते हुए मि० जिन्ना के अनुयायियो ने जैसे भीषण हत्या और अग्निकाण्ड किये उनसे यदि मि० जिन्नाने शिक्षा ग्रहण करते हुए अब वास्तविक शान्ति के लिये अपील की है और राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिये हिंसा के प्रयोग को सर्वथा निन्दनीय घोषित किया है तो भी अच्छा ही है। हम चाहते हैं कि मुस्लिमलीगी मि० जिन्ना की इस अपील पर ध्यान दें तथा अपनी मांगों के औचित्य को तर्क द्वारा प्रमाणित करें न कि ऐसे अमानुषिक बर्बरता पूर्ण कार्योंकी धमकी देकर। महात्मागांधी जी की हार्दिक अपील का तो हिन्दुओं तथा राष्ट्रीयता वादी अन्य समस्त-भारतीयों पर प्रभाव होगा ही। इस प्रकार देशमें शान्ति और सौहार्द के साम्राज्य की स्थापना हो और सब मिलकर राष्ट्रके अभ्युदय तथा सच्ची स्वतन्त्रता की प्राप्ति में सहायक हों यही हमारी हार्दिक कामना है।

श्री महात्मा नारायणस्वामी जी की चिन्ता जनक अस्वस्थताः—

हमारे समस्त पाठकों को यह जानकर अत्यन्त दुःख होगा कि सार्वदेशिक सभा के मान्य प्रधान श्री महात्मा नारायणस्वामीजी जिनका स्वास्थ्य कई मासों से शिथिल चला आ रहा था इस मासके प्रारम्भ में अत्यधिक रुग्ण हो गये और १० ता० को श्री म० कृष्णजी मन्त्री पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा लाहौर उन्हें मूत्र-कष्ट की चिकित्सा के लिए लाहौर ले गये जहाँ अनुभवी डाक्टरों के परामर्शानुसार उनका सर गङ्गाराम हस्पताल में आपरेशन कराया गया। इस टिप्पणी को लिखते समय तक भी उनकी अवस्था पर्याप्त चिन्ता जनक है। हम भगवान से पूज्य स्वामी जी के पूर्ण और शीघ्र स्वास्थ्य लाभ के लिये हार्दिक प्रार्थना करते हैं और समस्त आर्यों से भी निवेदन करते हैं कि वे वैयक्तिक और सामूहिक रूप से ऐसी प्रार्थना प्रतिदिन करते रहें जिससे आर्य जगत् उन जैसे त्यागी, तपस्वी, स्वाध्याय-शील, अनुभवी मान्य नेता के पथप्रदर्शन से बहुत वर्षों तक लाभ उठा सके।

आर्य वीर दल का प्रशंसनीय कार्यः—

अमृतसर, रावलपिण्डी तथा अन्य उपद्रव ग्रस्त प्रदेशों की गत मास यात्रा करते हुये हमें यह जान कर प्रसन्नता हुई थी कि आर्य वीरदल के सदस्यों ने सर्वत्र अपने कर्तव्य का उत्तमता और धीरता से पालन किया। अमृतसर में श्रद्धानन्द बाजार आर्य समाज मन्दिर के निचले भाग में जब किसी मुसलमान गुण्डे ने आग लगाई तो समाज मन्दिर के सम्मुखस्थ शङ्कर-नाथ मन्दिर के महन्त श्री बलरामदास जी के सुपुत्र श्री मुल्खराज ने जिनकी आयु लगभग ३० वर्ष की थी। जो आर्य वीरदल के उत्साही सदस्य थे अपने प्राणों की परवाह न करते हुए उसे बुझाने का प्रयत्न किया और उसी समय पीछे से एक मुसलिम की गोली का शिकार होकर वीर गति पाई। इस प्रकार अपने प्राणों की आहुति उन्होंने कर्तव्य वेदी पर देकर आर्य वीरदल के नाम को अमर कर दिया। रावल-पिण्डी में भी आर्य वीरों के ऐसे अनेक वीरता और साहस पूर्ण कार्य सुनने का हमें सुअवसर प्राप्त हुआ था। गुड़गाँवा जिले में पिछले दिनों जो उपद्रव हुए। उनके अवसर पर भी वहां के तथा देहली के आर्यवीरों ने रक्षा और सहायता का अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य किया जिसका संक्षिप्त विवरण पाठकों ने समाचार पत्रों में पढ़ा होगा। आर्य जनता का कर्तव्य है कि ऐसे कामों में आर्यवीरदल को पूर्ण आर्थिक तथा नैतिक सहयोग दे जिससे वह 'आर्य जाति में क्षात्र धर्म का प्रचार एवम् आत्मरक्षा की योग्यता उत्पन्न करना, जनता में सेवाभाव का प्रचार करना, आर्यधर्म, सभ्यता संस्कृति की समस्त उचित उपायों से रक्षा करना, इत्यादि पवित्र उद्देश्यों की पूर्ति में सफलता प्राप्त कर सके। आर्यवीरदल के संगठन को प्रबल बनाने की वर्तमान परिस्थिति में अत्यधिक आवश्य-कता है यह लिखने की आवश्यकता नहीं। हम समस्त आर्यों से अनुरोध करते हैं कि देश की परिस्थिति की विषमता को ध्यान में रखते हुए वे आर्यवीरदल के संगठन को प्रबल बनाने में पूर्णतया सहायक हों। सच्ची एकता की स्थापना के लिये भी ऐसा प्रबल संगठन आव-श्यक है ऐसा हमारा दृढ़ विश्वास है। ध० दे०

आर्य रिलीफ कैम्प रावलपिण्डी:—

हमें सार्वदेशिक सभा के मान्य मन्त्री श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय के साथ गत २६ मार्च को रावलपिण्डी जाकर उपर्युक्त आर्य समाज रिलीफ कैम्प के प्रशंसनीय कार्य को अपनी आँखों से देखने का अवसर प्राप्त हुआ था अतः हम इस अपील का हार्दिक समर्थन करते हैं और जनता से धन और वस्त्र के रूप में सहायता तुरन्त सार्वदेशिक सभा की पंजाब पीड़ित सहायता निधि में जिसकी अपील इसी अङ्क में अन्यत्र प्रकाशित की गई है, भेजने की प्रबल प्रेरणा करते हैं। इस पुण्य कार्य में विलम्ब न करना चाहिये। —सम्पादक सा० दे०

कन्यागुरुकुल में नवीन कन्याओं का प्रवेश।

कन्यागुरुकुल देहरादून का वार्षिक-महोत्सव ६ मई से १२ मई तक बड़ी धूमधाम से मनाया जायगा। इस अवसर पर ३० नवीन कन्यायें प्रविष्ट की जायेंगी। जो महानुभाव अपनी कन्याओं को प्रविष्ट कराना चाहते हैं उन्हें कार्यालय से प्रवेश फार्म मंगाकर तथा भरकर भेज देना चाहिए। नवीन कन्याओं का प्रवेश तथा वेदारम्भ-संस्कार १२ को प्रातः काल होगा। नियमावली तथा प्रवेश फार्म के लिए मुख्याधिष्ठाता कन्या गुरुकुल ६० राजपुर के पते से पत्र लिखें।

निवेदक
मुख्याधिष्ठाता।

आर्य जगत्

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद्, परीक्षा-फल (१९४७)

भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् की ओर से गत फरवरी मास के प्रथम सप्ताह में जो धार्मिक परीक्षाएं भारतवर्ष के १४४ केन्द्रों में हुईं थीं, उनका परीक्षा-फल नियमानुसार समस्त केन्द्रों को इसके साथ भेजा जा रहा है। उसका सारांश निम्न प्रकार है:—

सिद्धान्त सरोज

कुल १९२३ आवेदन पत्र भरे गये। उनमें से १५२७ छात्र परीक्षा में सम्मिलित हुये। १०७६ उत्तीर्ण हुए, (१५७ प्रथम श्रेणी में, ४१५ द्वितीय श्रेणी में, तथा शेष ५०४ तृतीय श्रेणी में) परीक्षा फल ७० प्रतिशत रहा।

सर्व प्रथम—(रोल नं० ६१६) भगवान्साह, अतरौली (अलीगढ़)

सर्व द्वितीय—(रोल नं० १६३१) बाबूराम निगम, सासनी।

सर्व तृतीय—(रोल नं० ९३७) खेमसिंह, कुबेर इन्टर कालेज, छिबाई।

तथा...(रोल नं० १६२४) रामनिवास, सासनी।

सिद्धान्त रत्न

कुल ८६३ आवेदन पत्र आये, ७३७ छात्र सम्मिलित हुए, ६३४ उत्तीर्ण हुए (८३ प्रथम श्रेणी में, २८५ द्वितीय श्रेणी में, २६६ तृतीय श्रेणी में) परीक्षा-फल ८६ प्रतिशत रहा।

सर्व प्रथम—(रोल नं० ४०८ मंगलप्रसाद आर्य, केन्द्र उतरौला (गोंडा)।

सर्व द्वितीय—(रोल नं० ४३७) गोकुलप्रसाद, केन्द्र हसनपुर (मुरादाबाद)।

सर्व तृतीय—(रोल नं० ८१८) ब्र० हरदेव शर्मा, गुरुकुल रायखंडी (सहारनपुर)।

सिद्धान्त भास्कर

कुल १७१ आवेदन पत्र आये, १४२ छात्र सम्मिलित हुए, ९६ उत्तीर्ण हुए (३ प्रथम श्रेणी में, ४५ द्वितीय श्रेणी में, ४८ तृतीय श्रेणी में) कुल परीक्षा फल लगभग ६८ प्रतिशत रहा।

सर्व प्रथम—(रोल नं० ३१) नित्यानन्द, भूड़ बरेली।

सर्व द्वितीय—(रोल नं० ७०) रणजीतसिंह, सैदपुर (बुलन्दशहर)।

" (रोल नं० ५) विन्ध्येश्वरीप्रसाद शर्मा खड़गपुर (बंगाल)।

सर्व तृतीय—(रोल नं० ८२) शिवचरनलाल ठाकुरदास (मुरादाबाद)।

" (रोल नं० ३) श्री कृष्णकुमारी (बी० ए० बी० आसनसोल)।

सिद्धान्तशास्त्री

कुल १३५ आवेदन पत्र आये, ११६ छात्र परीक्षा मे सम्मिलित हुये, जिनमें से ९९ उत्तीर्ण हुए (६ प्रथम श्रेणी में, ३६ द्वितीय श्रेणी में, ५७ तृतीय श्रेणी में) परीक्षा फल ८९ प्रतिशत रहा।

सर्व प्रथम—(रोल नं०) रामहरिलाल,खुसुरुपुर (पटना)।

सर्व द्वितीय—(रोल नं० ७३) वेदभानु आर्य मेरठ।

सर्व तृतीय—(रोल नं० ६१) मनोहरलाल, शिकोहाबाद।

नोट—उपरोक्त चारों परीक्षाओं में सर्व प्रथम, द्वितीय, तथा तृतीय छात्र को परिषद् की ओर से पदक अथवा अन्य पुरस्कार प्रदान किये जायेंगे। समस्त उत्तीर्ण हुये छात्रों को परीक्षा-

मन्त्री की ओर से अभी हार्दिक बधाई दी जाती है तथा शीघ्र ही प्रमाणपत्र प्रेषित किये जायेंगे।

[मै आर्यकुमार परिषत् की धार्मिक परीक्षाओं मे उत्तीर्ण सब छात्र और छात्राओं को परिषत् के का प्रधान के रूप मे हार्दिक बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि भविष्य मे और भी अधिक सख्या मे कुमार कुमारियॉं तथा युवक युवतिया इन परीक्षाओं मे सम्मिलित हो कर धार्मिक स्वाध्याय का लाभ उठाएंगी।

धर्म देव विद्यावाचस्पति का, प्रधान आर्यकुमार परिषत्]

दैनिक पत्र तथा वैदिक साहित्य प्रकाशन

कार्यालय—
सार्वदेशिक आर्य-
प्रतिनिधि सभा
श्रद्धानन्द बलिदान भवन,
देहली।
२५-४-१९४७

श्रीमान् जी नमस्ते !

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के तत्वावधान मे "सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड" नाम की एक कम्पनी खोली गई है जिसके द्वारा एक उच्चकोटि का अंग्रेजी दैनिक पत्र, हिन्दी दैनिक पत्र आर वैदिक धर्म प्रचार की प्रगति को तीव्र करने वाला साहित्य प्रकाशित होगा। इसके उद्देश्यो मे से कुछ मेंमोरेंडम से उद्धृत किये जाते है।

(१) महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिपादित आर्य समाज के सिद्धान्तों का प्रचार करना।

२) विभिन्न भाषाओं मे वैदिक धर्म सम्बन्धी पत्रिकाएं, पुस्तके तथा अन्य साहित्य मुद्रित तथा प्रकाशित करना।

(३) सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की नीति को आगे कार्यान्वित करना।

(४) समाचार पत्र, मासिक, पाक्षिक, साप्ताहिक पत्र तथा पत्रिकाएं, पुस्तकें तथा अन्य साहित्यिक कार्यों की स्थापना, सम्पादन, मुद्रण तथा प्रकाशन करना आदि आदि।

यह कम्पनी दस दस रुपये के एक लाख हिस्से खरीद कर दस लाख रुपया जमा करेगी और ४ लाख की लागत के हिस्से बिकने पर कार्य आरम्भ हो जायगा। इस कम्पनी का मुख्य उद्देश्य यह है कि आर्य समाज की आवाज को उच्च से उच्च और निम्न से निम्न वर्गों तक पहुचाया जाय और विदेश मे भी आर्य समाज के आदर्शों का ओर लोग आकर्षित हो सके अतः सभा की नीति यह है कि इसके अधिकतर हिस्से आर्य समाज, प्रतिनिधि सभाओ, आर्य संस्थाओ और वैदिक धर्म के श्रद्धालु आर्य भाइयो तक ही सीमित रक्खे जाय जिससे कम्पनी किसी दशा मे भी बाहरी हाथो मे न पड़ सके। अतः आपसे नम्र निवेदन है कि:—

(१) आप अति शीघ्र ही आर्य समाज की ओर से हिस्से खरीद लें जिससे कम्पनी के चालू करने मे देर न लगे।

(२) इस काम मे आप विलम्ब न करें।

(३) एक हिस्सा १०) का है। २॥) प्राथनापत्र के साथ आने चाहिये २॥) हिस्से की स्वीकृति पर फौरन भेज देने होंगे। शेष ५) दो किस्तों मे पीछे से लिये जायंगे।

यदि आप आर्य समाज को शक्तिशाली संस्था बनाना चाहते है तो विना प्रकाशन योजना के नहीं हो सकेगी। आप आज ही हमारी अपील पर हिस्से खरीदिये। धन मन्त्री या कोषाध्यक्ष सार्वदेशिक सभा दिल्ली के पास आना चाहिए किसी व्यक्ति के नाम से नहीं। बैंकों के क्रास चेक या ड्राफ्ट भेजना अच्छा होगा।

भवदीय—
गंगा प्रसाद उपाध्याय
मन्त्री—
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली।

* ओ३म् *

हिस्सों के लिए आवेदन-पत्र

सेवा में

श्री डायरेक्टर महोदय,

सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड दिल्ली

श्रीमन्महोदय,

श्री सार्वदेशिक प्रकाशन लिमिटेड के दस-दस रुपये के............हिस्सों के लिए उसके चौथाई..............रुपये धरोहर के रूप में मैं/हम/आप के पास जमा कर रहे हैं। आप जितने हिस्से मुझे/हमें देंगे उन्हें मैं/हम लेना स्वीकार करता/करते हूँ/हैं। मैं/हम यह भी स्वीकार करता/करते हूँ/हैं कि कम्पनी के मेमोरैण्डम तथा आर्टिकल्स आव एसोसिएशन मुझे/हमें मंजूर हैं और आप मेरा/हमारा नाम कम्पनी के रजिस्टर्ड मैम्बरों की सूची में लिख सकते हैं और मैं/हम हिस्सों की शेष रकम हिस्सों के एलाटमैन्ट के बाद आपको दे दूँगा/देंगे।

भवदीय—

साधारण हस्ताक्षर ____________________

पूरा नाम ____________________

पिता या पति का नाम ____________________

पता ____________________

____

—१६ पेशा ____________________

____

श्री पं० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा
"चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार देहली मे मुद्रित

Regd. NO. L 212



मई १९४७ ई०	सम्पादक	वार्षिक मूल्य
	[illegible]	विदेश १० शि०
२००४ सं०	[illegible]	

विषय-सूची

मतमतान्तर की पुस्तकें

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष २६ | मई १९४७ ई० | वैशाख २००४ | दयानन्दाब्द १२२ | अङ्क ३

* वैदिक प्रार्थना *

सन्मार्ग से धन कमायें

(ले०—रामनाथ जी वेदालङ्कार, गुरुकुल कांगड़ी)

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।

युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम॥ ऋग्॥ १.१८९.१

अर्थ- (अग्ने) हे प्रभो। (राये) धन-दौलत कमाने के लिये (अस्मान्) हमें (सुपथा नय) सुपथ से ले चल, (देव) हे देव! तू (विश्वानि वयुनानि) हमारे सब इरादों को (विद्वान्) जान लेने वाला है। (अस्मत्) हम (से जुहुराणम्) कुटिल-चरण कराने वाले (एनः) पाप को (युयोधि) दूर कर दे। हम (ते) तेरे लिये (भूयिष्ठा) बहुत अधिक (नम उक्तिं) नमस्कार (विधेम) करते हैं॥

वेदों में धन कमाने के विषय मे अनेक सुन्दर प्रार्थनायें मिलती हैं। कहा गया है कि हम भरपूर धन कमायें, धनों के अधिपति बन जायें।

इस मन्त्र में यह बताया गया है कि यह धन हमें कैसे मार्ग पर चल कर उपार्जन करना चाहिये। धन प्राप्ति के लिये प्रयत्न शील मनुष्य कह रहा है कि ऐ मेरे प्रभो! तू ऐसी कृपा कर कि मैं सदा सन्मार्ग पर चल कर ही धन कमाऊँ। प्रायः देखा जाता है कि जब मनुष्य धन को अपना लक्ष्य बना लेता है तब वह अन्धाधुन्ध धन के पीछे भागा चलता है, उसे इस बात की चिन्ता नहीं रहती कि मेरा धन-प्राप्ति का मार्ग अच्छा है या बुरा है। यह एक कहावत हो गई है कि व्यापार तो बिना झूठ के चल ही नहीं सकता। परन्तु जिस व्यक्ति के अन्दर धन की वैदिक महत्त्वाकांक्षा है वह तो सदा सन्मार्ग से ही धन कमायेगा। वेद जहाँ "वयं स्याम पतयो रयीणाम्" आदि वचनों के द्वारा प्रचुर मात्रा मे धन कमाने की प्रेरणा करता है वहा साथ ही इसके लिये भी सतर्क कर देता है कि यह धनोपार्जन सन्मार्ग पर चलते हुए सचाई और ईमानदारी के साथ होना चाहिये। वेद का आदेश है—"युव भग सं भरत समृद्धम्, ऋत वदन्तो-ऋतोद्येषु। अथर्व १४.१.३१" हे पति-पत्नी! तुम यथेष्ट धन कमाओ, किन्तु सच बोल कर।

प्रस्तुत मन्त्र मे वेद के इसी आदेश के विषय मे सतर्क रहना चाहता हुआ एक व्यक्ति अपने प्रभु से प्रार्थना कर रहा है। आइये इस प्रार्थना मे हम भी सम्मिलित होवें —

"हे अग्निदेव हे सबको पथ प्रदर्शन कराने वाले मेरे अग्रणी प्रभो! तुम धन कमाते समय मुझे सदा सुपथ से ही ले चलो। मै जानता हूँ, धन प्राप्ति के मार्ग मे अनेक प्रलोभन आया करते हैं। अनेकों बार ऐसे अवसर आयेंगे कि मन कहेगा-जरा सा धोखा कर लो, देखो सहस्त्रों का लाभ हो रहा है। परन्तु हे देव! उन भीषण समयों मे सदा तुम मेरी रक्षा करते रहना। कभी मुझे सन्मार्ग से विचलित मत होने देना क्यों कि पाप की कमाई कभी स्थिर नहीं रहती।

हे प्रभो! तुम प्रत्येक के प्रत्येक इरादे को जान लेने वाले हो। ज्यों ही एक दूध बेचने वाला यह इरादा करता है कि क्यों न इस एक मन दूध में दस सेर पानी मिला कर इसे बढ़ा लूँ, ज्यों ही एक सुनार अपने मन में यह विचार लाता है कि इस चार तोले सोने मे एक तोला तांबा मिला कर शुद्ध सोने के भाव से ग्राहक को दे दूँ, ज्यो ही एक घी का व्यापारी सोचता है कि इस बीस सेर शुद्ध घी मे बीस सेर बनस्पति आयल मिला कर मै सहज ही इसे एक मन घी बना लूँ, ज्यों ही कोई धन प्राप्ति के लिये इच्छुक मनुष्य यह विचार बनाता है कि मै अमुक धनी व्यक्ति की जेब मे रक्खा हुआ चालीस हजार रुपया चालाकी से निकाल कर मालामाल हो जाऊँ, त्यो ही तुम इनमे से प्रत्येक के इरादे को जान लेते हो। धन के लिये यत्नशील छोटे से लेकर बड़े से बड़े तक के एक-एक मनोगत भाव को तुम तुरन्त जान लेने वाले हो। इसलिये हे परमेश! तुम अवश्य ही उसकी उस विचार से रक्षा कर सकते हो। अत एव मै भी तुमसे यह प्रार्थना करता हूँ कि जब भी मेरे मन में कोई ऐसा कुटिलता की ओर ले जाने वाला पाप विचार आये तभी तुम उसे मेरे मन से पृथक् कर देना। हे प्रभो! मै तुम्हें बार २ नमस्कार करता हूँ, बारबार नमस्कार करता हूँ।"

वैदिक स्वाध्याय मञ्जरी

[स्वाध्यायान्मा प्रमदः, अर्थात् वेदादि सत्य शास्त्रों के स्वाध्याय में कभी प्रमाद न करो इत्यादि प्राचीन शास्त्रों और 'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है' वेद का पढ़ना, पढ़ाना, सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। इस ऋषि दयानन्द के आदेशानुसार प्रत्येक आर्य नर नारी और बालक बालिका को वैदिक स्वाध्यायका दृढ़ नियम बनाना चाहिए। इस विषय म पाठक पाठिकाओं की सहायता के लिये हम इस स्तम्भ में कुछ वेद मंत्र प्रतिमास शब्दार्थ तथा स्वकृत पद्यानुवाद सहित देने का प्रयत्न करेंगे जिससे उनके स्मरण करने में सुगमता हो। आशा है पाठक इस मञ्जरी से लाभ उठाएँगे और कम से कम ५ मंत्र प्रतिमास अर्थ सहित याद कर लेंगे

—सम्पादक सा० दे०]

(१) ओ३म् ते छेदग्ने स्वाध्यो ऽहा विश्वा नृचक्षसः। तरन्तः। स्याम दुर्गहा ॥ ऋ.८ ४३ ३०

शब्दार्थः—(अग्ने) हे ज्ञान स्वरूप परमेश्वर ! हम सब (ते घा इत्) तेरे ही लिये (स्वाध्यः) उत्तम कार्य करने वाले (विश्वा अहा) सदा (नृचक्षसः) मनुष्यों के यथार्थ स्वरूप को समझने वाले (दुर्गहा) आपत्तियों को (तरन्तः) तैरने वाले बन जाएँ। पद्यानुवादः—

हे परमेश्वर हम तेरे ही,
लिये कर्म शुभ सदा करें।
तत्व ज्ञानी बन कर सारे,
कष्टों को हम पार करें॥

२) ओ३म् अरण्योर्निहितो जातवेदा गर्भ इव सुधितो गर्भिणीषु। दिवे दिव ईड्यो जागृवद्भिर्हविष्मद्भिर्मनुष्येभिरग्निः ॥ ऋ. ३। २९। २

शब्दार्थः—(अरण्योः निहितःजातवेदाः) दो अरणियों के बीच मे जिस प्रकार आग गुप्त रूप से रहती है (गर्भिणीषु सुधितः गर्भः इव) गर्भ वती स्त्रियों में जिस प्रकार गर्भ सावधानता से धारण किया हुआ रहता है वैसे ही (जात वेदाः अग्निः) सर्व व्यापक ज्ञान स्वरूप परमेश्वर (जागृवद्भिः जागरूक—ज्ञानी, कर्तव्यपरायण (हविष्मद्भिः मनुष्येभिः) त्यागी मनुष्यों द्वारा (दिवे दिवे) प्रति दिन (ईड्यः) पूजा किया जाने योग्य है। पद्यानुवादः—

अरणि मध्य में अग्नि यथा अति गुप्त रूप से रहती है।
गर्भवती जैसे स्वगर्भ को
सावधान हो धरती है।
वैसे विभु सर्वज्ञ ईश को
त्यागी ज्ञानी लोग सदा।
भक्ति भाव से पूजा करते
पाते परमानन्द सदा ॥

(३) ओ३म् मन्येत्वा यज्ञियं यज्ञियानां मन्ये त्वा च्यवनमच्युतानाम्। मन्ये त्वा सत्वनामिन्द्र केतुं मन्ये त्वा वृषभं चर्षणीनाम् ॥ ऋ. ८ ९६ ४

शब्दार्थः—

(इन्द्र) हे परमेश्वर ! मै (त्वा) तुझे (यज्ञियानां यज्ञियम्) पूज्यों में सब से अधिक पूजनीय (मन्ये मानता हूँ (त्वा) तुझे (अच्युतानाम् च्यवनम् , न गिरने वाली स्थिर पर्वतादि वस्तुओं को भ गिराने का सामर्थ्य रखने वाला (मन्ये) मानता हूँ। (त्वा) तुझे (सत्वनां केतुं मन्ये) बलों

के झण्डे के समान सर्वशक्तिमान् मानता हूँ (त्वम्) तुझे (चर्षणीनाम्) मनुष्यों का (वृषभम्) सुख वर्धक स्वामी (मन्ये) मानता हूँ।

पूज्यों में भी पूज्य तुझे मैं
सदा मानता हूँ स्वामी।
प्रबलों में अतिशय बल शाली
मानूं मैं अन्तर्यामी।
मानों झण्डा सारे बल का
उठा रखा है तू ने।
सुख की वर्षा हम लोगो पर
कर रक्खी है तू ने॥

(४) ओ३म् मा चिदन्यद् विशंसत सखायो मारिषण्यत। इन्द्रमित् स्तोता वृषणं सचासुते मुहुरुक्था च शंसत॥ ८।१।१

शब्दार्थः—

(सखाय:) हे मित्रो! (अन्यत् चित्) ईश्वर को छोड़ कर किसी अन्य की (मा विशंसत) स्तुति न करो (मा (रिषण्यत) ऐसा करके दुःख मत उठाओ। (सुते) प्रत्येक यज्ञादि शुभ काम मे (सचा) मिल कर (वृषणम्) सुख की वर्षा करने वाले (इन्द्रम् इत्) परमेश्वर की ही (स्तोत) स्तुति करो (मुहुः उक्था च शंसत) बार बार वेद मन्त्रों द्वारा उसी ईश्वर की स्तुति करो

पद्यानुवादः—

ईश्वर को तज किसी और की
मित्रो! जग में स्तुति न करो।
ऐसा करके दुःखी न होओ
नहिं तुम अपना नाश करो।
सुख के वर्धक परमेश्वर की
ही स्तुति तुम दिन रात करो।
मिल करके सब शुभ कर्मों में
उसका कीर्तन प्रात करो॥

(५) ओ३म् त्वयेदिन्द्र युजावयं प्रति ब्रुवी-महि स्पृधः। त्वमस्माक तवस्मसि॥

ऋ० ८।९२।३२

शब्दार्थः—

(इन्द्र) हे परमेश्वर! (वयम्) हम (त्वया युजा) तुझे साथी या सहायक बनाकर (स्पृधः) शत्रुओं का (प्रति ब्रुवीमहि) मुकाबला कर सके (त्वम्) तू (अस्माकम्) हमारा है और हम (तव) तेरे (स्मसि) हैं॥

पद्यानुवादः—

तुझ को नाथ बना कर साथी
शत्रु विजय हम करते हैं।
तू है देव हमारा हम सब
तेरे बने विचरते हैं॥

महिला जगत

भारतवर्ष का वर्तमान युग तथा भारतीय स्त्री का कर्तव्य

(लेखिका—श्रीमती लक्ष्मी देवी जी विद्याविभूषिता कन्या गुरुकुल हाथरस)

आज से कुछ ही समय पूर्व हमें इस बात का ध्यान नहीं आ सकता था कि मनुष्य मनुष्यता से इतना गिर जायेगा जितना गिरा हुआ कि आज हम उसे देख रहे हैं। हम जिधर भी नजर दौड़ाते हैं हमें वे चीजें मनुष्यता पर धब्बा साबित होती हैं।

क्या हम यह बात कभी अपने विचार में ला सकते थे कि एक प्राणी जंगली जानवरों की तरह दूसरे प्राणियों की हत्या करने में सौभाग्य समझेगा। हमे स्वप्न मे भी यह आशा नहीं थी कि छोटे छोटे निपराध बच्चों की खुले तौर पर हत्यायें की जायेंगी। मकानों की चहार दीवारी के अन्दर बैठी हुई शरीफ तथा पतिव्रता नारियों की प्रतिष्ठा को लूटने के लिये दिन दहाड़े उनके घरों पर धावा बोला जायेगा और वह देवियां जिन्होंने अपने पतियों की सेवा में अपने जीवन, बिता दिये हैं जिन्होंने कभी अपने दरहेज के बाहर कदम नहीं रक्खा उनके माथे की सुहाग बिन्दियों को दुष्ट की दुष्टता के द्वारा मिटा दिया जावेगा जैसे कि वह कई वर्षों से अपने सुहाग पर आँसू बहा रही हो। क्या हम कभी इस बात का अनुमान कर सकते थे कि इस प्रकार खून और पसीने को एक करके कमाई गई दौलतके द्वारा बने हुये लोगों के मकान केवल इसीलिये पेट्रोल तथा अग्नि की भेंट कर दिये जावेंगे कि उन मकानों के मालिक अग्नि लगाने वाले गुण्डे तथा बदमाशों के विचारों से मतभेद रखते थे। पर हमने देखा कि वह सब कुछ हुआ जिसकी कि हमे स्वप्न में भी संभावना नहीं थी हमने शहरों को अग्नि की भेंट चढ़ते हुये देखा वह अग्नि जो आकाश के साथ बात कर रही थी। शहरों के शहर, कस्बों के कस्बे तथा गाँवों के गाँव दियासलाई के भेंट चढ़ा दिये गये। उन मकानों में लाखों और करोड़ों रुपये का समान जलाकर राख कर दिया गया। दिन दहाड़े मानवता रो रही थी और दुष्ट अपनी दुष्टता पर हँस रहे थे। जलते हुये मकानों में से भुलसते हुये बच्चों तथा अग्नि का भोजन बनने वाली स्त्रियों तथा पुरुषों की चीत्कारों की भयंकर आवाजे आ रही थी। देखते ही देखते सहस्रों की संख्या में बच्चे अनाथ हो गये। सहस्रों देवियों को विधवा बना दिया गया और हमारी आँखें यह सब कुछ देखती ही रह गई। हमने ऐसे गाँवों के समाचार भी दैनिक पत्रों में पढ़े हैं जिन गाँवों की वीराङ्गना देवियों ने कुँओं में छलांग लगा कर केवल इसलिये आत्म हत्यायें कर लीं ताकि उनकी इज्जत सुरक्षित रह सके। हमने सैकड़ों तथा सहस्रों की संख्या में ऐसे मनुष्यों के समाचार भी दैनिक पत्रों में पढ़े हैं जिनके मकानों में आग लग रही थी उनका सर्वस्व लूट लेने के बाद उन्हें शस्त्र दिखाते हुये कहा गया या तो अपने धर्म को तिलांजली देकर हमारे धर्म को स्वीकार करो अन्यथा तुम हमारी तल-

वारों की धारों तथा छुरों और भालों की नोकों के रास्ते पहुँचा दिये जावोगे। सब मनुष्य एक समान नहीं होते, जहाँ हकीकत राय जैसे शुद्ध विचार वाले ऐसे सज्जन होते हैं जिनकी आत्मिक शक्ति इतनी प्रबल होती है कि संसार की बड़ी से बड़ी शक्ति भी उनको अपने विचार बदलने पर मजबूर नहीं कर सकती, वहाँ जयचन्द्र जैसे ऐसे व्यक्ति भी इसी सृष्टि पर विद्यमान हैं जो अपनी नासमझी का प्रमाण देते हुये इतिहास के लिये ये शब्द छोड़ जाते हैं कि उक्त आदमी अत्यधिक कमजोर हृदय का मनुष्य था अतः उनमें से कमजोर आदमियों को पतित कर दिया गया तथा वे वीर तथा वीराङ्गनायें जिनकी आत्मिक शक्ति प्रबल थी तथा मौत भी जिनके विचारों को नहीं बदल सकती थी उन विधर्मियों के द्वारा छुरों तथा चाकुओं की नोक के रास्ते हमेशा के लिये शान्ति की मीठी नींद सुला दिये गये हैं। बंगाल तथा सरहद और भी दूसरे प्रदेशों वह सब कुछ हुआ जिसे आसानी के साथ भुलाया नहीं जा सकता। यह सब कुछ जिसे हम देख चुके हैं और भारतवर्ष का भविष्य हम नहीं कह सकते कि कब तक अन्धकार पूर्ण रहेगा हमें क्या कुछ देखना पड़ेगा।

ऐसी भयंकर परिस्थिति में प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या भविष्य में भी इन अथवा इस प्रकार की असाधारण घटनाओं को हम केवल देखती अथवा सुनती ही रहेंगी या अपनी रक्षा के लिये कुछ विचार भी करेंगी। इस प्रश्न का उत्तर दूसरे लेख में देने की कोशिश करूँगी। (अपूर्ण)

—*—

आर्य समाज का वेद विषयक दृष्टि कोण

(ले० श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० मन्त्री सार्वदेशिक सभा देहली ।

श्रीयुत पं० जवाहरलाल जी नेहरू ने अभी हाल में एक उत्तम पुस्तक लिखी है जिसका नाम है डिस्कवरी आफ इण्डिया (Discovery of India) उसमें अनेक उत्तम-उत्तम बातों के अतिरिक्त आर्य्य समाज और वेदों के विषय में भी दो उल्लेखनीय वाक्य हैं।

1

Many Hindus look upon the Vedas as revealed scriptures. This seems to me to be peculiarly unfortunate, for thus we miss their real significance the unfolding of the human mind in the earliest stages of thought,

(p-78)

(2)

Its slogan was back to the Vedas This slogan really meant an elimination of development of the Aryan faith since the Vedas.

(p. 398)

इन वाक्यों का अनुवाद

(१)

बहुत से हिंदू वेदों को ईश्वर कृत मानते हैं। मैं इसको बड़ा दुर्भाग्य समझता हूँ। क्योंकि इस से वेदों की वास्तविक उपयोगिता जाती रहती है अर्थात् विचार के आरंभ काल में मानवी मस्तिष्क ने कितना विकास किया।

(२)

(आर्य्य समाज) ने घोषणा की कि 'वेदों की ओर लौटो' इस घोषणा का अर्थ यह है कि वेदों के काल से लेकर आर्य्य धर्म में जो विकास हुआ उसका परित्याग कर दिया जाय।

इन दोनों वाक्यों का एक दूसरे से सम्बन्ध है। अर्थ प्रायः एक ही है। अर्थात् वेदों की यह उपयोगिता तो है कि संसार के आरंभ काल में मानवी मस्तिष्क ने जो उन्नति की उसका पता लग जाय। परन्तु यदि हम वेदों को ईश्वर कृत मानलें तो वेद आज भी आचरण करने योग्य पुस्तक सिद्ध होजाते हैं। ऋषि दयानन्द का दृष्टि कोण वेदों के विषय मे श्री पं० जवाहरलाल जी से भिन्न था। और आजकल के संस्कृतज्ञों का लगभग वही दृष्टि कोण है जो पं० जवाहरलाल जी का। परन्तु यह तो निश्चत ही है कि स्वामी दयानन्द का दृष्टि कोण वही है जो प्राचीन ऋषियों का है। यहाँ तक कि श्री शंकराचार्य जी आदि मध्यकालीन आचार्य भी वेदों को ईश्वर कृत ही मानते आये हैं। श्री शंकर स्वामी ने बौद्धों का खण्डन भी इसीलिये किया था कि वे श्रुति को स्वतः प्रमाण मानते हैं। वे लिखते हैं कि वेद सूर्य्यवत् स्वतः प्रमाण हैं। अन्य शास्त्रों को उन्होंने स्मृति की कोटि में गिना है जो परतः प्रमाण है।

पं० जवाहरलाल जी का कहना है कि हम वेदों का मान तो करते हैं परन्तु हम आज कल

पर चलने के लिये तैयार नहीं। दृष्टान्त के तौर पर आप आज स्टीवेन्सन के रौकेट नामक इंजन को लीजिये। यह सबसे पहला इंजन था। रेल गाड़ी के इतिहास में जार्ज स्टीवेन्सन का नाम अमर रहेगा और रौकेट को लोग बड़े सन्मान से याद करते हैं क्योंकि जितने इंजन आजकल चल रहे हैं या जितने भविष्य मे चलेंगे उन सब का आदि पुरुष (लकड़ दादा) रौकेट था। परन्तु कोई इंजन चलाने वाला आज रेल मे रैकिट को लगाने के लिए तैयार न होगा। रकिट इंजनों का पूर्वज तो है परन्तु विकसित नहीं है। आजकल उन्नत करते करते इंजनों मे बहुत बड़ा सुधार हो गया है। यही हाल वेदों का है। वेद हमारी प्राचीन पुस्तक हैं। हमारे ऋषियों की महती कृति है। परन्तु उस समय से लेकर आज तक इतनी उन्नति हो चुकी है कि वेदों की हम पूजा तो कर सकते हैं। उनको सम्मान से याद भी कर सकते हैं। परन्तु उनके अनुकूल आचरण नहीं कर सकते। वेदों का मूल्य तो है परन्तु ऐतिहासिक, न कि व्यावहारिक। वह पुराने सिक्के हैं। अद्भुतालय मे रखने के योग्य, प्रदर्शनी मे प्रदर्शन के योग्य। परन्तु इस योग्य नहीं कि आधुनिक काल मे उनको पथ प्रदर्शक समझा जा सके।

यह है मौलिक भेद पं० जवाहरलाल जी के दृष्टिकोण में और आर्यसमाज के दृष्टिकोण में। और यदि पं० जी की बात ठीक है तो आर्य्य-समाज की नींव ही धड़ाम से नीचे आ गिरती है और ऋषि दयानन्द का किया कराया सब नष्ट हो जाता है। वेदों का ऐतिहासिक मूल्य तो ईसाई और मुसलमान भी मानने के लिए तैयार हैं। प्रत्येक पुस्तक का ऐतिहासिक मूल्य है, क्योंकि वह अपने युग के विषय में कुछ बताती है। परन्तु इतने से वह धार्मिक पुस्तक नहीं हो सकती।

यहां एक प्रश्न उठता है और वह वेदों की आन्तरिक साक्षी पर निर्भर है। क्या वेदो की शिक्षा ऐसी है, जैसे मनुष्य के बचपन की चीज होती है अर्थात् अधूरी और धुंधली। और क्या वेदों के पश्चात् मनुष्य ने वेदों के अतिरिक्त जो कुछ अन्वेषण किया वह अधिक स्पष्ट और अधिक पूर्ण है। क्या यह ज्ञात होता है कि जैसे तेल का मिट्टी का दीपक मनुष्य ने पहले बनाया और अब बिजली के बल्ब बनाये, जो अधिक उपयोगी और अधिक पूर्ण है। इसी प्रकार वेदों मे जो सिद्धान्त दिये गये हैं, वे अपूर्ण और धुंधले हैं और आजकल जो विकास हुआ है, वह अधिक तात्विक, अधिक उपयोगी और अधिक स्पष्ट है।

(२)

यह बात तो ठीक है कि वेदों का आविर्भाव मानव जाति के बाल्यकाल की चीज है। परन्तु बाल्यकाल का अर्थ क्या? इसके दो अर्थ हो सकते हैं। पहला यह कि जब वेदों का आविर्भाव हुआ तो मानव जाति को उत्पन्न हुये बहुत समय व्यतीत नहीं हुआ था। सृष्टि के कितने पदार्थ हैं जो मानव जाति के बाल्यकाल में हुये परन्तु वे सर्वथा पूर्ण थे। जैसे सूर्य्य, चन्द्र, वायु आदि। सूर्य्य मे तत्पश्चात् क्या उन्नति हुई यह कहनाकठिन है। दूसरा अर्थ यह है कि मनुष्य ने अपने बाल्यकाल में जो वस्तुएं बनाई वह सर्वथा अविकसित थीं। आरम्भ मात्र थीं। शनैः शनैः

उत्तरोत्तर उन्नति हो ही गई, जैसे कपड़े, मकान, बर्तन इत्यादि। अब प्रश्न यह है कि जब हम कहते हैं कि वेद मानव जाति के बाल्यकाल की वस्तु हैं, तो इन दोनों में से हमको कौनसा अर्थ अभिप्रेत है। यदि वेदों को मनुष्य ने अनुभव-शून्य और अधमतम अवस्था में आरम्भ किया, जैसे बच्चा आरम्भ में पाठशाला में भरती होते समय किया करता है, तो वेदों की भाषा सवथा अपूर्ण, वेदों का शब्दविन्यास सर्वथा संकुचित. वेदों के अलंकार हर प्रकार से भोंडे, वेदों के भाव पूर्णरूपेण अशिक्षित अनुभवशून्य, वेदों के छन्द सर्वथा बेतुके होने चाहियें और वेदों के पश्चात आने वाली पुस्तकों की भाषा विकसित, भाव परिमार्जित, सिद्धान्त पूर्ण दार्शनिक, युक्तियां सर्वथा विशद, अलंकार सर्वथा समुन्नत और कोमल होने चाहियें। वेदों की भाषा और भावों में वर्तमान ग्रन्थों की भाषा और भाव की अपेक्षा उतनी ही कमी होनी चाहिये, जितनी आजकल के वायुयान और पुरानी भैंसों की गाड़ी में है। यदि ऐसा है तो हम मान लेंगे कि वेदों का ईश्वरकृत होना गलत है और वेद हमारे पूर्वजो की उस समय की कृति हैं, जब उन्होंने उन्नति का मार्ग बनाना आरम्भ ही किया था। अभी भूमि खनन ही आरम्भ हुआ था सीमेण्ट की सड़क की स्वच्छता और सुगमता प्राप्त न थी! यदि ऐसा ठीक है तो यह भी कहना पड़ेगा कि वेद हमारी पूजा के योग्य अवश्य हैं क्योंकि वे पुराने हैं, परन्तु वे प्रयोग में लाने के योग्य नहीं।

और यदि पहला अर्थ है अर्थात् वेदों की भाषा अत्यन्त विशद, भाव समुन्नत और सिद्धान्त विकसित हैं तो दो बातों में से एक अवश्य ही ठीक होगी। या तो वेद सूर्य के समान ईश्वरकृत होंगे या जब मानव जाति ने उनको बनाया होगा, उस समय वह पूर्ण विकसित हो चुकी होगी और उससे पूर्व का मानवीय साहित्य वेदों की अपेक्षा प्रारम्भिक और अपूर्ण तथा अविकसित होना चाहिए। आज जो कुछ मै लिख रहा हूँ, वह विकास की एक नियत अवस्था में प्राप्त हो चुका है। साठ वर्ष पूर्व जब मैं पाठ-शाला में भरती ही हुआ था और लकड़ी की पट्टी पर लिखता था. उस समय के मेरे अक्षरों और आजकल के अक्षरों म भेद है। परन्तु यदि मेरी कोई पुरानी कापी मिल जाय और उसमें अत्यन्त सुन्दर अक्षर मिलें तो यही कहना पड़ेगा कि वह अक्षर मेरे नहीं अपितु किसी अधिक विकसित पुरुष के हैं।

इस प्रकार वेदों के विषय में तीन सम्भा-वनायें हो सकती हैं।

(१] वेद अत्यन्त अपूर्ण और प्रारम्भिक हैं। इसीलिए पिछली शताब्दी के विद्वान् वेदों को गड़ारियों के गीत या बच्चों की बिलबिलाहट बताया करते थे।

(२) वेद अत्यन्त विशद, विकसित और अतः ऐसी अवस्था के हैं जब मनुष्य जाति पूर्ण विकास को प्राप्त हो चुकी थी। उस दशा में उनका अविकसित या अर्द्ध विकसित साहित्य मिलना चाहिए, जो वेदों से पूर्व था, जिससे पता चल जाय कि वेदों तक पहुंचने से पूर्व मानव जाति के साहित्य को किस-किस अवस्था में होकर गुजरना पड़ा। इसके साथ ही यह भी सिद्ध

होना चाहिए कि वैदिक काल के पश्चात् मानवी भाषा और भावों ने इतनी उन्नति और की।

(३) यह कि वेद हैं तो प्राचीनतम परन्तु इतने विकसित और पूर्ण हैं कि इनको मानवी कृति कहना ही असंभव है।

स्वामी दयानन्द और आर्य्य समाज की तीसरी पोजीशन है और स्वामी दयानन्द से पूर्व के ऋषि मुनि तथा मध्य कालीन आचार्यों का भी यही मत रहा है। मनुष्य ने उन्नति की है और अनेक विभागों में, परन्तु उसकी कृति वेदों से अब भी उतनी पीछे है जितनी बिजली के लैम्प सूर्य्य से पीछे हैं। सूर्य्य अत्यन्त प्राचीन और अत्यन्त पूर्ण है। आरम्भिक इस लिये है कि सृष्टि के आरम्भ में हुआ। पूर्ण इसलिये है कि मनुष्य ने बनाया नहीं। सूर्य्य की उत्पत्ति के समय मनुष्य का बाल्यकाल अवश्य था। उसका अनुभव भी शून्य के समान था। परन्तु जो चीज उसकी बनाई न थी उस में पूर्णता थी। विद्यार्थी की कापी पर अध्यापक उसके अनुकरण के लिये जो पहली सुन्दर पंक्ति लिख देता है वह प्रारंभिक होते हुये भी पूर्ण होती है क्योंकि प्रारंभिक तो बच्चों की अपेक्षा से है जिस गुरु ने लिखा है उसका बाल्यकाल नहीं, वह तो पहले से विकसित हो चुका है।

ऋग्वेद ने इस विषय में एक बात लिखी है जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वेद मे लिखा है।

"सूर्य्याचन्द्रमसौ धाता यथा पूर्व मकल्पयत्।"

(ऋग्वेद मंडल १०)

यह छोटा सा मंत्र है और पूर्ण परिचित। परन्तु इसके महत्त्व पर लोगों ने विचार नहीं किया। इसका अर्थ यह है कि परमात्मा ने इस कल्प में सूर्य्य चन्द्र आदि को उसी प्रकार बनाया जैसे पूर्व कल्पों में "यथा पूर्व"। यह विचित्र वाक्य है। इसके अर्थ बड़े विस्तृत हैं। इससे पता चलता है कि सृष्टि को बनाने वाली कोई नयी, अनुभव-अप्राप्त प्रारंभिक शक्ति नहीं है। वह शक्ति पूर्ण है। अत्यन्त पुरानी है। सृष्टि के विषय में यह धारणा भूत, भविष्यत् और वर्तमान तीनों कालों तक जाती है यह अपूर्ण और अविकसित या अर्द्ध विकसित भावना नहीं हो सकती। वेद के 'धाता' और "यथा-पूर्व" पर विचार कीजिये, मनुष्य कर्त्ता हो सकता है, परन्तु 'धाता' नहीं 'धाता' और विधाता का परस्पर सम्बन्ध है वास्तविक विधाता तो धाता ही है जो न केवल सृष्टि को बनाता है अपितु धारण भी करता है।

इस विषय में वेदों के पश्चात् आने वाले साहित्य ने क्या उन्नति की ? यह देखना है। वेदों के पश्चात् का साहित्य दो भागों में बटा है। एक वैदिक और दूसरा अवैदिक। वैदिक साहित्य तो वेदों की ही नकल है।

श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्।

वेद अपौरुषेय और समस्त ऋषि-कृत साहित्य स्मृति समझा जाता है।

दूसरा अवैदिक। यह वेदों के विरोध में अथवा उपेक्षा में बनाया गया। कुरान बाइबिल आदि मे उपर्युक्त मंत्र के भाव से विशद क्या कोई भाव मिलता है। यदि मिलता है तो क्या ? उत्तर कालीन पुस्तकों में इतना ही विशद ज्ञान मिले तो इसको अनुकरण कहेंगे। यदि कम मिले तो कहेंगे कि साहित्य में अवनति आगई। और यदि इससे बढ़कर कोई विचार है तो कौन सा ?

जो ऋषि अपनी अन्तरात्मा में सृष्टि के आरम्भकाल में इस भाव को "देख" सके उनकी चक्षु कितनी विचित्र और विकसित रही होगी।

फिर थोड़ा सा भाषा सम्बन्धी बातों पर विचार कीजिये। ध्वनि, शब्द, वाक्य, छन्द इत्यादि अनेक बातें हैं जिनसे वेदों की विशदता का परिज्ञान हो सकता है। केवल भाषा मात्र में एक बात नहीं अपितु कई बातें हैं। संज्ञाओं के रूप, उनके रूपान्तर, क्रियाओं के रूपान्तर इत्यादि इत्यादि। विद्वानों का कहना है कि संस्कृत भाषा संसार की सब भाषाओं में विशदतम है। 'धाता' "अकल्पयत्" इन दो शब्दों में निहित भावों पर विचार कीजिये। सृष्टि का विधाता मेज़ के बनाने वाले बढ़ई के समान नहीं। बढ़ई विधाता है धाता नहीं। विधाता भी क्यों कहो। बढ़ई जिस प्रकार मेज़ बनाता है उस में विधातृत्व अथवा धातृत्व कहां। वह तो बाहरी वस्तु को घड़ देता है। उसका और लकड़ी का बाह्य संपर्क है। कल्पना कीजिए उस मस्तिष्क की विशदता का जिसने सृष्टि-कर्त्ता के लिए विधाता या धाता शब्दका उपयोग किया।

अच्छा! ऋग्वेद के एक और छोटे से वाक्य को लीजिए।

"एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति"

समस्त सृष्टि के 'एकत्व' और उसके रचयिता के 'एकत्व' का भाव क्या बच्चों की अनुभव-शून्य अवस्था का भाव है? क्या आज तक दार्शनिकों, वैज्ञानिकों, धर्म-संस्थापकों आदिगुने इस से विशद भाव का आविर्भाव किया? ईश्वर का एकत्व और उसके गुणों और उन गोंके सूचक शब्दों का बहुत्व। कितनी बड़ी बात है। "विप्रा बहुधा वदन्ति" की मनोवैज्ञानिक महत्ता पर विचार कीजिये। मानवी मस्तिष्क की प्रगतियों की भिन्नता को देखिये। "विचित्र-रूपाः खलु चित्तवृत्तयः"। संसार की वस्तुओं को देखते समय मनुष्य की भावनाओं में कितनी विभिन्नता होती है और उस विभिन्नता से प्रेरित होकर उसके शब्दों मे कितनी विभिन्नता आजाती है। परन्तु उस समस्त विभिन्नता के पीछे सत्यता की एकता कैसी छिपी है। सत्य एक है। शब्द अनेक हैं। ईश्वर एक और उसके सूचक शब्द अनेक। वेदों के पश्चात् उन की प्रतिद्वन्द्विता में अनेक सिद्धान्त और मतों की स्थापना हुई परन्तु क्या किसी संस्थापक ने इस से अच्छा कोई विचार पेश किया। कई नवीन धर्म इस बातका दावा करते हैं कि उन्होंने एक ईश्वरवाद की स्थापना की। यह संभव है कि अनेक-ईश्वर-वाद के प्रचार की अवस्था में उन्होंने कुछ सुधार किया हो परन्तु ईश्वर का जो स्वयं स्वरूप वेदों ने अति प्राचीन काल में रक्खा वह पीछे के मतों में दृष्टिगोचर नहीं होता।

समाजवाद का सबसे अच्छा सिद्धान्त वर्णाश्रम धर्म है। यह समाज-सिद्धान्त सूर्य्य की भाँति प्राचीनतम है और सूर्य्य के समान ही पूर्ण। इसमें पीछे स अवनति तो हुई परन्तु उन्नति नहीं हुई। आधुनिक साम्यवाद पूंजीवाद की अपेक्षा उत्कृष्ट हो सकता है परन्तु यह न टिकाऊ है न सर्वोत्कृष्ट। मानवजाति के अनेक व्यक्ति जब स्वभाव से ही सम नहीं तो उनका जीवन का पुरोगम समान कैसे हो सकता है? कहीं न कहीं तो भेद करना ही पड़ेगा। यह भेद

गुण कर्म स्वभावानुसार ही अत्यन्त नैसर्गिक और कल्याणप्रद हो सकता है।

इसी प्रकार जीवन के अनेकानेक सिद्धान्त हैं जिनका वेदोक्त रूप ही पूर्णतम कहा जा सकता है। उदाहरण के लिए एक बात पर विचार कीजिए।

समाज की नींव है विवाह व्यवस्था। वेदों में विवाह की एक पति भाव और एक पत्नी भाव की जो व्यवस्था है उससे अच्छी कोई व्यवस्था नहीं है।

इहैव स्त मा वियाष्ट विश्वमायु व्यश्नुतम्।
क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृहे ॥
(ऋग्वेद १०)

इस में दाम्पत्य भाव का कितना उच्चतम चित्रण है। स्त्री, पुरुष घर में साथ रहें। कभी अलग न हों, पुत्रों और पौत्रों के साथ आनन्द से रहें। वैदिक काल के पश्चात विवाह व्यवस्था में जो जो और जहां जहां परिवर्तन हुए उन्होंने समाज में आपत्तियां तो उत्पन्न कर दीं। उन से समाज की बुराइयां दूर नहीं हुई। आज कल वैज्ञानिक युग में विवाह में जो सुधार हो रहे हैं उन से विवाह-व्यवस्था की जड़ ही कट रही है। अमीर लोग धोखे में हैं वे समझते हैं कि दाम्पत्य दासता को दूर करने से वह सुखी हो जायगे परन्तु वे यह नहीं देखते कि जिस समाज रूपी वृक्ष को वह सींचना चाहते हैं उसी की जड़ कट रही है। आज कल प्रत्येक युवक पति तो बनना चाहता है परन्तु उसको पिता बनना स्वीकार नहीं। प्रत्येक युवती को माता और जननी बनने से घृणा है। वह कर्त्तव्य की मर्यादा को दासता की बेड़ी समझ कर तोड़ना चाहती है। क्या यह वैदिक सिद्धान्तों के ऊपर सुधार है या बिगाड़। इसी प्रकार एक और बात लीजिये। कहते हैं कि वैदिक काल में मनुष्य जंगली थे। रहे होंगे। हमको आक्षेप नहीं। सृष्टि के आरम्भ में जंगल बहुत थे ऋषि लोग जंगलों में ही रहते होंगे। भवन निर्माण की व्यवस्था पीछे से हुई होगी जब कि वैदिक ज्ञान को कार्य में परिणत किया होगा। परन्तु जंगल में रहना पाप नहीं। जंगली कानून (Law of Jungle) को बरतना पाप है। आज उच्च और, गगन चुम्बी भवनों के रहने वाले भेड़ियों और चीतों की तरह एक दूसरे के रक्त के प्यासे रहते हैं। वेद के आदर्श को देखिये। "अन्यो ऽन्यमभिहर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या"।

अथर्व वेद ३। ३०। १

इस प्रकार एक दूसरे के साथ व्यवहार करो जैसे गाय अपने नवजात बच्चे के साथ करती है। इतना उच्च आदर्श मानव जाति के शैशव काल में कैसे स्थापित हो सकता है जब तक कोई पूर्ण शक्ति उनका नेतृत्व न करे। और यदि वैदिक आदर्श इतना उच्च हो सकता है तो सृष्टि के आरम्भ से उसका होना उस के ईश्वर कृत होने का अकाट्य प्रमाण है।

यह सम्भव है कि आर्य जाति समय समय पर इस आदर्श से गिर गई हो और उन्होंने सन्मार्ग को छोड़ कर ठोकरें खाई हों परन्तु यह तो होगा मनुष्यों का दोष, उनकी निर्बलता, उनका स्वार्थ। इस में वेदों का तो कोई दोष नहीं। श्री प० जवाहर लाल जी ने शिकायत की

है कि आर्य समाज और स्वामी दयानन्द उन सिद्धान्तों का परित्याग करना चाहते हैं जो सुधार के रूप में वेदों के पश्चात् हिन्दू सुधारकों की ओर से किये गये। परन्तु यदि विचार किया जाय तो प्रतीत होगा कि वह वैदिक सिद्धान्तों को उन्नति-शील नहीं अपितु अवनति-शील बनाते हैं। उदाहरण के लिये श्री शंकर स्वामी ने अद्वैतवाद का प्रतिपादन किया। लोग समझते हैं कि वैदिक सिद्धान्तों का यह सुधार है। बौद्ध मत का खंडन करने के लिये संभव है यह कुछ लाभदायक ठहरा हो परन्तु इस सिद्धान्त ने वैदिक धर्म की सजीवता नष्ट करके मायावाद का प्रचार कर दिया जो वैदिक ऋषियों को कभी अभीष्ट न था। इसी प्रकार हिन्दू जाति ने वैदिक धर्म की प्राचीन शुद्धता को छोड़ कर अनेक नवीन बातें मिला दीं। जिन के कारण आज सनातन धर्म चूं चूं का मुरब्बा हो गया है यह सुधार नहीं अपितु बिगाड़ है। इसी लिये स्वामी दयानन्द ने कहा था कि "वेदों की ओर लौटो" (Back to the Vedas)। क्यों ? इस लिये कि सन्मार्ग छोड़ आये। सीधा रास्ता पीछे रह गया, किस ओर चल रहे हो वह अभीष्ट स्थान पर पहुचाने वाला नहीं अपितु दूर लेजाने वाला है ! लौटो। लौटो !! जितनी जल्दी लौटोगे उतना ही अच्छे रहोगे। जिस मार्ग पर चल रहे हो उस पर एक कदम आगे बढ़ाना ही निर्दिष्ट स्थान से दूर होना है।

—गंगा प्रसाद उपाध्याय

तामिल भाषा का संस्कृत से सम्बन्ध

(लेखक—श्री दौरेस्वामी आयङ्गार श्रद्धानन्द भवन बंगलौर नगर)

यह प्रायः कहा जाता है मद्रास की तामिल भाषा एक सर्व तन्त्र स्वतन्त्र भाषा है। यह संस्कृत से बिल्कुल सम्बन्ध नहीं रखती। इसके उदाहरण के लिये 'कम्ब रामायण' को दर्शाया जाता है। परन्तु यह बात भ्रममात्र है क्योंकि न केवल आधुनिक तामिल ग्रन्थों मे प्रत्युत पुरातन ग्रन्थों में भी जो तामिल कविताएं पाई जाती हैं उन में बहुत से संस्कृत के शब्द (कई जैसे के तैसे और कई अपभ्रंश रूप में) प्रयुक्त किये गये हैं। तामिल की बोल चाल की भाषा तो संस्कृत शब्दों से भरी पड़ी है। इनके बिना काम ही नहीं चल सकता। 'कम्ब रामायण' को भी ध्यान से पढ़ें तो उसमें भी अपभ्रंश रूप से अनेक संस्कृत शब्द मिल जाएंगे। स्थाली पुलाक न्याय से कुछ थोड़े से उदाहरण हम अपने वक्तव्य की पुष्टि में देते हैं।

'तिरुप्पवै' में जो पुरातन तामिल शास्त्र है बहुत से संस्कृत शब्द मिलते हैं जैसेः—

नीराड़ (स्नान करना, पानी मे खेलना इत्यादि) नीर जलवाचक संस्कृत शब्द है।

'नालायारं तिरुवाम् मोषि' में जो तामिल वेद कहा जाता है बहुत से संस्कृत शब्द हैं यथाः—

नैटकले दैवमनरु—दैवं संस्कृत शब्द है। "अञ्जि लावपडि तञ्जु प्रकाशमाम् आनन्द पूर्ति यडि" इस में प्रकाश, आनन्द, पूर्ति शुद्ध संस्कृत शब्द हैं। दैनिक बोल चाल की भाषा में जलम् (पानी) संस्कृत शब्द है ही।

शक्करै (शक्कर) संस्कृत के शर्करा शब्द का अपभ्रंश है। आम्=हां संस्कृत शब्द ही है।

इस तरह अन्य बहुत से उदाहरण दिये जा सकते हैं। तामिल लिपि मे अक्षर कम होने के कारण उसमें संस्कृत शब्द स्पष्ट रूप से लिखे नहीं जाते। इसलिये संस्कृत के प्रकाशनार्थ एक अलग लिपि बन गई है जो ग्रन्थाक्षरम् के नाम से प्रसिद्ध है। इसमे ग्रन्थ, अक्षरम् दोनों ही संस्कृत शब्द हैं।

इस प्रकार तामिल भाषा भी संस्कृत के शब्दों के बिना नहीं चलती। भला, जननी की सहायता के बिना कोई सन्तान उन्नति को पा सकती है? कदापि नहीं॥

—*—

दो उपदेशकों को आवश्यकता

मेरठ जिले में वैदिक धर्म का प्रचार करने के लिए दो योग्य उपदेशकों तथा दो भजनीकों की आवश्यकता है। वेतन योग्यतानुसार ४०) से ७०) तक दिया जा सकेगा। प्रार्थी महोदय को वैदिक सिद्धान्त का अच्छा ज्ञान होना चाहिये। मिशनरी ध्येय से कार्य करने वाले हों। ग्रामों में घूमकर प्रचार कर सकें। प्रार्थना पत्र निम्न पते पर भेजने का कष्ट करें।

—जयदेवसिंह ऐडवोकेट
मन्त्री आर्य्योप प्रतिनिधि सभा मेरठ

अध्यात्म सुधा

विनय

१ करुणामय भगवान तू,
सुख मङ्गल का धाम।
भक्ति सहित जपते रहें,
हम तव पावन नाम॥

२ रविशशि सागर गिरि नदी,
तरु तारे तव नाथ।
महिमा को गाते सभी,
रहे सदा तू साथ॥

३ तेरा करता ध्यान जो,
विमल चित्त में देव।
उसका हिय आनन्द से,
भर जाता स्वयमेव॥

४ मात पिता तू मित्र है,
तू ही जग करतार।
भक्ति सुधा हमको पिला,
भव सागर से तार॥

५ सुमिरन हम तेरा करें,
रहें पाप से दूर।
सर्व शक्तिमय देव तू,
हमें बना दे शूर॥

६ हरि तू हिय में रम रहा,
तू ही प्राणाराम।
प्रीति लगा तुझ से सदा,
देव करें शुभ काम॥

७ सुख में हम बिसरें नहीं,
दुख मे नहिं अकुलाय।
प्रेम रंग गूढ़ा प्रभो,
हम पर देव चढ़ाय॥

८ ज्योति देव तव देखते,
करते गुण गण गान।
आनन्दित हम नित रहें,
जान तुझे ही जान॥

९ जगदम्बे तव गोद है,
हरती सारे खेद।
इस में हम आसीन हो,
भूल जांय सब भेद॥

१० रहें परस्पर प्रेम से,
न हो किसी से द्वेष।
भक्त बनें तेरे सभी,
छूटे सारे क्लेश॥ "ध्रुव"

गोत्र विषयक प्रश्नावलि

(१) गोत्र से क्या तात्पर्य है ? इसका सम्बन्ध पुत्र पौत्र परम्परा से है अथवा गुरु शिष्य परम्परा से ? सप्रमाण उत्तर दें।

(२) गोत्र कितने हैं ? क्या उनकी संख्या नियत है ? यदि हां, तो वह संख्या क्या है ?

(३) यदि गोत्रों की संख्या नियत है तो बौधायन श्रौत सूत्र के इस श्लोक का क्या अर्थ है ?

"गोत्राणां तु सहस्राणि, प्रयुतान्यर्बुदानि च।"
अर्थात् गोत्र हजारों, लाखों बल्कि अरबों हैं।

(४ क्या वेदों में कहीं वर्तमान अर्थ मे गोत्र शब्द का प्रयोग अथवा सगोत्र विवाह का निषेध पाया जाता है ? यदि नहीं तो सगोत्र विवाह निषेधविषयक विधान किस प्रामाणिक ग्रन्थ मे तथा किस रूप मे पाया जाता है तथा इसका प्रारम्भ कब से हुआ ?

(५) गोत्र केवल ब्राह्मणो मे है अथवा अन्य वर्णों मे भी ! बौधायन श्रौत सूत्रादि में क्या यह वर्णन नहीं कि क्षत्रिय वैश्यादि को पुरोहितो का गोत्र प्रवर ही ग्रहण कर लेना चाहिये।

६. क्या सगोत्र विवाह का निषेध निकट सम्बन्धियों मे विवाह के निषेध के तात्पर्य से है ? यदि ऐसा है तो क्या वह प्रयोजन सपिण्ड विवाह निषेध से नहीं हो जाता ?

७. वर्तमान काल में प्रचलित गोत्रों का आधार क्या है ? पितृ-पुत्र परम्परा, गुरु-शिष्य परम्परा, स्थान विशेष या व्यवसाय आदि ? इन मे से किस आधार पर सगोत्र विवाह निषेध युक्ति युक्त है ?

८. यदि गोत्र जन्म परम्परा पर आश्रित है तो आर्य जो जन्म गत वर्ण व्यवस्था को नही मानते उनकी इस विषय मे क्या स्थिति होगी ?

आर्य विद्वानों से निवेदन है कि इस प्रश्नावली का उत्तर मेरे पास लिखकर भेजने की कृपा करें।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
स०मंत्री सार्वदेशिक धर्मार्य सभा बलिदान भवन,
देहली

आर्य्य वीर दल

(लेखक—स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी नेता पंजाब आर्य्य वीर दल दीनानगर पंजाब)

आर्य्य वीर दल क्या है और आर्य्य वीर दल क्यों बनाना चाहिए यह हम पहिले लिख चुके हैं। अब हम यह दिखलाते हैं कि आर्य्य वीर दल का काम क्या है। इस लेख मे आर्य्य शब्द का कई बार प्रयोग करेंगे। इसलिए पहिले इसे ही साफ कर देना चाहते है। ऋषि दयानन्द जी ने इस तरह लिखा है। आर्य्य—जो श्रेष्ठ स्वभाव, धर्मात्मा, परोपकारी, सद्विद्यादि गुण-युक्त और आर्य्यावर्त देश मे सब दिन से रहने वाले है उनको आर्य्य कहते है। (आर्यो द्देश्य रत्नमाला ४०) आर्य्यावर्त देश, हिमालय, विन्ध्याचल, सिन्धु नदी और ब्रह्मपुत्र नदी इन चारो के बीच और जहा तक उनका विस्तार है, उनके मध्य मे जो देश है, उसका नाम आर्य्यावर्त है। (आर्यो द्देश्य रत्नमाला)।

आर्य्यावर्त देश इस भूमि का नाम इसलिए है कि इसमे आदि सृष्टि से आर्य्य लोग निवास करते है। परन्तु इसकी अवधि उत्तर मे हिमालय, दक्षिण मे विन्ध्याचल, पश्चिम मे अटक और पूर्व मे ब्रह्मपुत्र नदी है। इन चारों के बीच मे जितना देश है, उसको आर्य्यावर्त कहते है और जो इसम सदा रहते है. उनको भी आर्य्य कहते है। (स्व मन्तव्या मन्तव्य प्रकाश ३०)

उत्तर मे हिमालय, दक्षिण मे विन्ध्याचल, पूर्व और पश्चिम मे समुद्र तथा सरस्वती, पश्चिम मे अटक नदी, पूर्व मे दृषद्वती जो नेपाल के पूर्व भाग पहाड़ से निकलकर बंगाल के आसाम के पूर्व और ब्रह्मा के पश्चिम मे होकर दक्षिण के समुद्रमे मिलती है जिसको ब्रह्मपुत्रा कहते हैं और जो उत्तर के पहाड़ों से निकलकर दक्षिण के समुद्र की खाड़ी मे अटक मिली है। हिमालय की मध्य रेखा से दक्षिण और पहाड़ों के भीतर और रामेश्वर पर्यन्त विन्ध्याचल के भीतर जितने देश हैं, उन सबको आर्य्यावर्त इसलिए कहते हैं कि यह आर्य्यावर्त देव अर्थात् विद्वानों ने बसाया और आर्य्य जाति को निवास करने से आर्य्यावर्त कहलाया है। (सत्यार्थप्रकाश समु० ८)

इन प्रतीको से ऋषि दयानन्द जी का यह भाव है कि पिशावर से रामेश्वर और जगन्नाथ-पुरी से कराची तक सब देश को आर्य्यावर्त और इसम बसने वालों को आर्य्य कहते है।

यह आर्य नाम देश के लिहाज से है धर्म के लिहाज से नही। जैसा कि अमेरिका आदि देशों मे हर एक भारतवासी को हिन्दू नाम से पुकारते है। इसका अर्थ यही है कि जो हिन्दुस्तान मे रहता है वह हिन्दू है।

इसके बाद ऋषि ने आर्य्य के लिए लिखा है "जैसे आर्य्य श्रेष्ठ और दस्यु दुष्ट मनुष्यों को कहते है वैसे ही मै भी मानता हूं। (स्व मन्तव्या मन्तव्य प्रकाश २६) इसमे कर्म के लिहाज से दो नाम दिये गये है। एक आर्य्य दूसरा दस्यु। जो नेक काम करते हैं जिनका स्वभाव नेक है अर्थात भले आदमी है वे सब आर्य्य है और जो

बुरे काम करते हैं और जिनका स्वभाव बुरा है अर्थात् बुरे आदमी हैं उनको दस्यु कहते है यह नाम आचार की दृष्टि से हैं मजहब की दृष्टि से नहीं। इसलिए इस लेख में जहां हम आर्य्य लिखें वहां पाठक ऊपर लिखे अर्थों की दृष्टि से आर्य्य का अर्थ करें। वे आर्य्यों का अर्थ केवल आर्य्य समाजी या इस तरह के और न समझें इसी लिए मैंने ये उदाहरण लिख दिये हैं।

मैं यह बात मानता हूँ कि हम आर्य्य समाजी हैं आर्य्य वीर दल आर्य्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का है जो पंजाब की सब आर्य्य समाजों की शिरोमणि सभा है। हमारा मुख्य काम है कि हम आर्य्य समाज की सेवा करें। आर्य्य समाज की उन्नति के लिये जो कुछ हम से हो सकता है हम करेंगे परन्तु इसके साथ साथ प्रत्येक आर्य्य की उन्नति चाहते हैं। और दुनिया के अत्याचार मिटा कर सुख और शान्ति की स्थापना करना चाहते हैं। महर्षि दयानन्दजीने हमें ऐसा करनेको आदेश दिया है। "मनुष्य उसी को कहना कि जो मनन शील हो कर स्वात्मवत् अन्यों के सुख दुःख और हानि लाभ को समझे अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे वे महा अनाथ निर्बल और गुण रहित क्यों न हों उनकी रक्षा उन्नति प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ महा बलवान और गुणवान् भी हो तथापि उसका नाश अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करें अर्थात् जहां तक हो सके अन्याय-कारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करें। इस काम में चाहे उनको कितना ही दारुण दुःख हो चाहे प्राण भी भले जावें परन्तु इस मनुष्य पन रूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।" (सत्यार्थ प्रकाश, स्व मन्तव्यामन्तव्य प्रकाश)

ऋषिकी इस आज्ञा को ध्यानमें रखकर हम इस पर आचरण करना चाहते हैं जहाँ कहीं अत्याचार होगा हम उसको मिटाने के लिये प्रयत्न शील होंगे। हम आर्य्यों की उन्नति और दस्युओं की अवनति पर कटि बद्ध रहेंगे हमें कार्य्य करते समय मजहबों को ध्यान में न रख कर सदाचार और अनाचार को देख कर सदाचारियों की सहायता करनी होगी और दुराचारियों को दुराचार से रोकना होगा। सम्भव है हमें इस काम में कष्ट हो, यह भी सम्भव है कि हमारे कई वीरों को इस में प्राणों की आहुति देनी पड़े परन्तु हम सदा ही इसी आदर्श को रख कर आगे बढ़ने का प्रयत्न करेंगे और हमें पूर्ण आशा है कि हम इस में सफल होंगे।

इस सेवा के अतिरिक्त हमारे सामने एक बात औरभी है वह है स्वराज्य की प्राप्ति। "हमारे लिये चक्रवर्ती राज्य और साम्राज्य धन को सुख से प्राप्त कर अर्थात् आपकी करुणा कटाक्ष से हमारा राज्य और धन सदा वृद्धि को प्राप्त हो।" (आर्य्याभिविनय ४३, इस आज्ञा के आधार पर हम आर्य्य राज्य की स्थापना चाहते हैं। आर्य्य राज्य की स्थापना के साथ साथ विदेशी राज्य से भी मुक्त होना चाहते हैं। क्योंकि ऋषि दयानन्द जी ने लिखा है " अब अभाग्योदय से और आर्य्यों के आलस्य प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की कथा ही क्या कहना किन्तु आर्य्यावर्त्त में भी आर्य्यों का अखंड स्वतन्त्र

स्वाधीन निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है भी सो विदेशियो से पादाक्रान्त हो रहा है कुछ थोड़े राज्य स्वतन्त्र हैं। दुर्दिन जब आता है तब देश वासियों को अनेक प्रकार के दुःख भोगने पड़ते हैं कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है अथवा मत मतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य प्रजा पर पिता माता के समान कृपा न्याय और दया के साथ विदेशियो का राज्य भी पूर्ण सुखदायी नहीं है परन्तु भिन्न भिन्न भाषा पृथक् पृथक् शिक्षा अलग अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति दुष्कर है। बिना इसके छूटे परस्पर का पूरा उपकार और अभिप्राय सिद्ध होना कठिन है" (सत्यार्थ प्रकाश समु० ८)

इस आज्ञा को मान कर हम यत्न करेंगे कि लोगो मे भ्रातृ भाव का सचार हो। अपनी आत्मा की तरह दूसरे के दुःख को दुःख और सुख को सुख और जाने, कोई किसी को कष्ट देने का साहस न करे। हम सब आर्य्यों मे परमात्मा को पिता मानकर वेद की आज्ञानुसार भाई का भाई से स्नेह हो और हम एक दूसर के साथ सद्व्यवहार करते हुए आर्य राज्य की स्थापना के लिये कटिबद्ध हो।

दक्षिण अमेरिका से आवाज
ट्रिनीडाड में आर्योपदेशक की आवश्यकता

(ले० स्वामी भवानीदयालजी संन्यासी, प्रवासी भवन, आदर्शनगर अजमेर)

अमेरिका के दक्षिण भाग में ट्रिनीडाड नामक अंग्रेजों का एक उपनिवेश है जिसकी लम्बाई ४८ मील है और चौड़ाई ३५ मील। हिन्दुस्तान की खोज में निकले हुए कोलम्बस को सन् १४९८ मे ट्रीनिडाड मिला था, इसलिए उसका नाम ही "वेस्ट इण्डीज" पड़ गया। सन् १७९७ तक ट्रिनीडाड पर स्पेन का शासन था, इसके बाद अंग्रेजों ने उस पर अधिकार जमाया। संसार में गुलामी की प्रथा उठ जाने पर जब ट्रिनीडाड मे मजदूरों की कमी से अंग्रेज किसानों को दिवाला निकलने की नौबत आ गई तो भारत की विदेशी सरकार ने जाति भाइयों की रक्षा और सहायता करने के विचार से सन् १८४४ में भारत से गिरमिट में भर्ती करके मजदूर भेजने का सिलसिला जारी कर दिया। सन् १९३१ में प्रवासी भारतीयों की संख्या १३८,६०० थी पर अब बढ़ कर डेढ़ लाख तक पहुंच चुकी है।

ट्रिनीडाड के प्रवासी भारतीयों में हिन्दुओं की संख्या अधिक है। जिस समय स्वामी विवेकानन्द जी अमेरिका में हिन्दू धर्म का प्रचार कर रहे थे, ठीक उसी समय ट्रिनीडाड के शिक्षित हिन्दू धड़ाधड़ ईसाई हो रहे थे। नेटाल, मोरिशस और फिजी में आर्यसमाज के प्रचार के कारण हिन्दुत्व की रक्षा हो गई, पर ट्रिनीडाड और डमरेरा की तरफ किसी ने ध्यान नहीं दिया। इसलिये जब अमेरिका प्रवास के समय भाई परमानन्द जी डमरेरा गये तो उनको यह देख कर बड़ा दुःख हुआ कि वहां के सारे शिक्षित हिन्दू युवक ईसाई बन चुके हैं। हिन्दू भी लेक्चर देता है, यह बात वहां के प्रवासी भारतीयों के लिए बिलकुल नई थी। ईसाइयों ने ही भाई जी के भाषण का प्रबन्ध किया था।

इसके बाद जब विश्वधर्म सम्मेलन में शरीक होने के लिए पं० अयोध्याप्रसाद जी अमेरिका गये तो वहां उनके प्रवास की अवधि पूरी हो जाने पर विवश होकर ट्रिनीडाड और डमरेरा में आश्रय लेना पड़ा। पं० अयोध्याप्रसादजी ने ट्रिनीडाड में विशेष रूप से वैदिक धर्म का प्रचार किया, आर्यसमाजों और आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना की, जिससे वहा के हिन्दुओं में काफी जागृति तथा उन्नति हुई। वहां सुचारु रूप से वैदिक धर्म प्रचार करने के लिए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने पं० सत्याचरण शास्त्री एम०ए० को वहां भेजा पर मानवी निर्बलता के शिकार होकर वे अपने उच्च पद से गिर गये, जिससे आर्यसमाज की बड़ी अपकीर्ति हुई।

वहां की हिन्दू जनता को वैदिक धर्म का सहारा तो मिल ही गया है पर एक सुयोग्य

प्रचारक के बिना वहां आर्यसमाज की प्रगति शिथिल है। इस लिए ट्रिनीडाड आर्यप्रतिनिधि सभा के मंत्री श्री जी० बी० लाल ने मेरे पास हवाई डाक से एक पत्र भेज कर मार्मिक अपील की है कि यदि शीघ्र ही कोई योग्य आर्य उपदेशक वहां पहुंच कर वहां की स्थिति को नहीं संभालेगा तो ट्रिनिडाड में हिन्दुत्व का अस्तित्व अवशेष न रहेगा। ट्रिनीडाड की आर्य प्रतिनिधि सभा ऐसा एक पंडित प्रचारक चाहती है जो अंग्रेजी का वक्ता हो, विवाहित, और आयु तीस साल से अधिक हो। हिंदी की अपेक्षा अंग्रेजी मे ही अधिक काम करना पड़ेगा। उर्दू भी मालूम हो तो और भी अच्छा पर नितान्त नहीं। आने जाने का मार्ग व्यय, रहने के लिए सजासजाया मकान और २५० पाउण्ड (वर्तमान विनिमय के अनुसार लगभग छत्तीससौ रुपया) वार्षिक दक्षिणा। कम से कम तीन साल प्रचार करने की प्रतिज्ञा करनी चाहिए। यदि पांच साल तक रह सकेंगे तो और भी अच्छा।

कार्य के लिए विस्तृत और फलदायक क्षेत्र तैयार है। वहां के हिन्दू वैदिक धर्म और संस्कृति के उपदेशामृत से तृषा शांत करना चाहते हैं, पर उनकी इच्छा की पूर्ति करना भारत के किसी अंग्रेजी जानने वाले उत्साही पंडित का ही काम है।

क्या ट्रिनीडाड प्रवासी आर्य-भाइयों की यह पुकार व्यर्थ जायगी? क्या वहां हिन्दुत्व का नामो-निशान मिटतेहुए देखकर भी हम शांत बैठे रहेंगे? क्या यहां के लाखों शिक्षित पंडितों में से एक भी ऐसा उत्साही व्यक्ति न मिलेगा जो ट्रिनीडाड में वैदिक धर्म और आर्य्य संस्कृति की पताका फहराने के लिए तैयार हो? आशा है कि एक नहीं अनेक पुरुषार्थी सज्जन ट्रिनीडाड जाने के लिये तैयार हो जायेंगे और वहाँ के भाइयों को निराश न होने देंगे। जो भाई ट्रिनीडाड में वैदिक धर्म प्रचारार्थ जाना चाहे उनको मेरे साथ अथवा इस पते से पत्र व्यवहार कर सब बातें तय कर लेनी चाहिये।

G. B. Lall. Esquire,
Secretary, Arya Pratinidhi Sabha,
67-B. Chacon Street,
San Fernando, Trinidad,
British West Indies.

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली को भी अपने विचार से सूचित करना चाहिये।

ऋषि दयानन्द जी कृत वेदभाष्यानुशीलन

(लेखक — अनुसन्धान विद्वान् श्री शिवपूजनसिंह जी साहित्यालंकार, सिद्धान्तभास्कर, साहित्यरत्न, साहित्य शिरोमणि, कानपुर)

अखिल विश्व के प्रायः विद्वान् यह मानते हैं कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है। * वेदों में क्या क्या वर्णन है इसको जानने के लिये भाष्यों का आश्रय लेना पड़ता है, परन्तु अब तक जितने वेद भाष्य उपलब्ध होते हैं, उनमें परस्पर अत्यन्त मतभेद है। साधारण जनता उन भाष्यों को पढ़कर उलझन में पड़ जाती है और उनके लिये यह निर्णय करना दुष्कर हो जाता है कि कौन सा भाष्य सही है। प्राचीन काल में ऋषियों ने वेद भाष्य नहीं किया इसका तात्पर्य यह नहीं कि वे भाष्य नहीं कर सकते थे, परन्तु उन्हें वेद भाष्य करना अभीष्ट नहीं था। इसका मुख्य कारण यह है कि वेद "सर्वज्ञानमयो हि सः" सम्पूर्ण ज्ञान का भण्डार है, वेदमें सब सत्य विद्याएँ हैं, यह ऋषियों की निश्चित धारणा थी। किसी भी व्यक्ति को सम्पूर्ण विद्याओं का ज्ञान नहीं हो सकता। जब एक व्यक्ति चाहे वह ऋषि हो या मुनि, आचार्य या महान् विद्वान्, सब विषयों का ज्ञाता कदापि नहीं हो सकता, तो भला वह सम्पूर्ण वेद-भाष्य कैसे कर सकता है। इसीलिये ऋषि-मुनि वेदों के सम्पूर्ण भाष्य न कर गये। किन्तु पठन पाठन के लिये, अर्थ करने की परिपाटी बताने के लिये और मन्त्रों में भ्रम करने के लिये निरुक्त जैसे ग्रन्थ बना लिये गये थे। शतपथ, गोपथ, ऐतरेयादि जितने ब्राह्मण ग्रन्थ हैं सब वेदों के व्याख्यान ही हैं।

कहते हैं कि वेदभाष्य करने का सबसे प्रथम आरम्भ रावण ने किया।* उसके बाद पौराणिक काल में आचार्य उव्वट, महीधर, सायण प्रभृति ने वेदों पर भाष्य किए। श्री सायणाचार्य के पूर्व उद्गीथ, हरिस्वामी, उव्वट, वररुचि, भट्ट-भास्कर, वेङ्कटमाधव, आत्मानन्द, आनन्दतीर्थ, रात्रुघ्नाचार्य, गुणविष्णु, माधव और भरत-स्वामी, देवपाल, प्रभृति विद्वानों ने भी वेदों पर भाष्य किये। †पाश्चात्य पण्डितों में मैकडो-नल्ड, फिलिप, मोनियर, विलियम, प्रो० मैक्स-मूलर, ओल्डेनबर्ग, सर विलियम जोन्स, ब्लूम-फील्ड, गोल्डस्टकर, आफ्रेक्ट, ग्रिफिथ, वेबर, विटनी, बोटलिंग आदि ने भी वैदिक साहित्य

* देखो मासिक "आर्यधर्म सन्देश" जयपुर वर्ष ३, फरवरी १९५४ ई० अङ्क ४, पृष्ठ १०-से १३, अङ्क ३, ४, ५, ६, ७ में प्रकाशित मेरा "पाश्चात्योंकी दृष्टिमें वेद अपौरुषेय है" शीर्षक लेख।

"वैदिक सम्पत्ति" द्वितीय संस्करण पृष्ठ ५८३।

† वेद भाष्यकारों के विषय में अत्यधिक जानने के लिये द्रष्टव्य ग्रन्थ, रीसर्च स्कॉलर पं० भगवद्दत्त जी बी० ए० कृत "वैदिक वाङ्मय इतिहास" द्वितीय भाग :— लेखक।

पर बहुत कुछ लिखा है। परन्तु इन विद्वानों के ग्रंथो मे वेदों की आत्मा का विकास नहीं हुआ है। पौराणिक भाष्यकार तो याज्ञिकवाद, देवतावाद, ऐतिहासिकवाद आदि वादों की बाधाओं मे जकड़ गये है। पाश्चात्य विद्वानों के भाष्य अक्षरश: अनुवादमात्र है। यद्यपि ये सायणाचार्य जी के पद-चिन्हो पर चलते है, परन्तु विकासवाद * की रट लगाकर वेदो के वास्तविक तात्पर्य से दूर हो गये हैं।

आजकल एक दो नही सैकड़ो पुरुष वेदों पर महाप्रहार कर गए है तथा कर रहे है परन्तु इनका समाधान कहीं नहीं होता। मिश्रवारिधि प० ज्वालाप्रसाद मिश्र का 'मिश्र भाष्य" महीधर का अनुवादमात्र है। महीधर स्वय वाममार्गी और काशीवासी था $।

श्रीयुत राजेन्द्रलाल मित्र ने वेदों और शास्त्रो का जैसा उपहास किया, वैसा प्राय कोई न कर सकेगा †। इसी कारण इनका नाम योरोप तक हुआ। पाश्चात्य पण्डितों ने अपनी पुष्टि मे इनको साक्षी बनाया है। महाशय भण्डारकर भी इसी कक्षा मे है। श्री रमेशचन्द्र दत्त ने ऋग्वेद का अनुवाद बंग भाषा मे किया है। इन्होंने भी वेदो को दूषण देने मे कोई कमी नहीं की। कृष्णलाल भट्टाचार्य, शिवनाथ शास्त्री, रमानाथ सरस्वती. हरप्रसाद शास्त्री आदि महानुभावों ने वेदों पर महाक्रूर दृष्टिपात किया है। इन्होंने वेदों को समझने मे कोई परिश्रम नहीं किया। ये सब योरोपीय विद्वानों के शिष्यमात्र हैं।

ब्राह्मण ग्रन्थकार, पौराणिक भाष्यकार और योरोपीय भाष्यकारों के अतिरिक्त आधुनिक समय मे वेदों पर युगपरिवर्तनकारी कलम उठाने वालों मे सबसे प्रमुख नाम तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्वी, महासमीक्षक, बालब्रह्मचारी, वाग्मी योगिराज, महर्षि दयानन्द जी का है। प्रस्तुत लेख मे हमे महर्षि के वेदभाष्य पर ऊहापोह से अनुशीलन कर यह प्रदर्शित करना है कि इनकी वेदभाष्य शैली अपूर्व है और नैरुक्त प्रक्रिया के अनुसार है।

यास्काचार्य वेदार्थ के लिये निम्न साधन निर्दिष्ट करते है —

"अय मन्त्रार्थचिन्ताभ्यूहो ऽभ्यूढ.। अपि-श्रुतितो ऽपि तर्कत न तु पृथक्त्वेन मन्त्राः निवक्तव्य प्रकरणश. एवतु निवक्तव्या.। नह्येषु प्रत्यक्षमस्त्य न्षेरतपसो वा पारोवर्यवित्सु तु खलु वेदितृषु भूयो विद्य· प्रशस्यो भवति" ।*

अर्थात्-यह शास्त्र (निरुक्त) मन्त्रो के अर्थों के परिज्ञान के लिये उत्तम साधन है। मन्त्रों के अर्थ करने के लिये श्रुति के प्रमाणों को लेकर और वेदों से अप्रतिकूल तर्क के द्वारा प्रकरण के अनुसार मनन करना चाहिये। मन्त्रों को अलग अलग लेकर उनका स्वतन्त्र अर्थ करना अनुचित है क्योकि मन्त्रों के विषय गहन होते हैं। अतः जो ऋषि और तपस्वी नहीं हैं वे मन्त्रार्थ का साक्षात्कार नहीं कर सकते।

* विकासवाद के खण्डन के लिये देखो "वैदिक सम्पत्ति" द्वितीय संस्करण, पृष्ठ १६६ से १७४ तक

$. देखो "वैदिक वाङ्मय का इतिहास" द्वितीयभाग।

†· देखो श्रीराजेन्द्रलाल मित्रकृत "Indo Aryans"

*. निरुक्त १३।१२

साधारण लोगों में बहुश्रुत की ही पूछ होती है।

श्री वेङ्कटमाधव भी कहते हैं:—

"संहितायास्तुरीयांशं विजानन्त्यधुनातनाः ॥
तस्माज्जाल्पश्रुतैर्मन्दैः कार्यो वेदार्थनिर्णयः ॥
शाकल्यः पाणिनिर्यास्क इत्यृगर्थ परास्त्रयः ।
यथाशक्त्यनुधावन्ति न सर्वं कथयन्त्यमी" ॥ ८ ।

अर्थात्--आज कल के विद्वान् संहिता का चतुर्थांश जानते हैं। इस लिए अल्पश्रुतों को वेदार्थ का निर्णय नहीं करना चाहिए। शाकल्य पाणिनि और यास्क ये ऋग्वेद के अर्थों के ज्ञाता हैं, परन्तु ये भी यथाशक्ति अर्थ का प्रतिपादन करते हैं सब नहीं कहते। ऋषि दयानन्दजी के भाष्य मे ही आपको विशेषता मिलेगी कि उन्होंने वेद के अर्थ को संकुचित नहीं किया, अपितु आप्त ऋषि-मुनियों की शैली के अनुसार व्यापक अर्थों का निर्देश अपने सस्कृतपदार्थ में किया है।

ऋषि के भाष्यग्रन्थः--ऋषि का सम्पूर्ण भाष्य यजुर्वेद पर ही मिलता है। ऋग्वेद पर सातवें मण्डल ६१ वें सूक्त के दूसरे मन्त्र से आगे किन्हीं अपरिहार्य कारणों से भाष्य नहीं कर सके हैं। अतः वर्तमान समय मे ऋषि के भाष्य यजुर्वेद पर तथा आधे से अधिक ऋग्वेद पर ही उपलब्ध होते हैं। इनकी भाष्य शैली का परिचय इन्हीं भाष्यों से भी हो जाता है।

ऋषि दयानन्दजी ने ऋग्वेद भाष्य का प्रारंभ संवत् १९३४ वि०, मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष की छठी को किया था। इस विषय मे ऋग्वेद भाष्य के आरम्भ में लिखा है:—

"विद्यानन्दं समवति चतुर्वेद संस्तावना या,
संपूज्येशं निगमनिलयं संप्रणम्याथ कुर्वे ।
वेद त्र्यङ्के विधुयुतसरे मार्गशुक्लेऽङ्कभौमे,
ऋग्वेदस्याखिल गुण गुणिज्ञानदातृहि भाष्यम् ॥"

अर्थात्—जो चारों वेदो की भूमिका विद्यानन्द को देती है उसे पूरा कर भगवान् को प्रणाम कर संवत् १९३४ मार्ग शुक्ल ६ठी मंगलवार के दिन ऋग्वेद-भाष्य का आरम्भ करना है।

इसके कुछ समय के अनन्तर विक्रमीय संवत् १९३४ के पौष सुदी १३ गुरुवार के दिन यजुर्वेद भाष्य का प्रारम्भ किया।

इस सम्बन्ध मे भाष्यारंभ मे निम्न श्लोक दिया गया है।

"चतुस्त्र्यङ्कैकै रवनिसहितैर्विक्रमसरे ।
शुभे पौषे मासे सितदलभविश्वोन्मिततिथौ।
गुरोर्वारे प्रातः प्रतिपदमतीष्टं सुविदुषां,
प्रमाणैर्निर्बद्ध शतपथनिरुक्तादिभिरपि ॥"

विक्रमीय सं० १९३४ पौष सुदी गुरुवार त्रयोदश तिथि के दिन यजुर्वेदभाष्य का बनाना आरम्भ किया जाता है।

एवम् ऋग्वेदभाष्य के प्रारम्भ से लगभग एक मास पीछे ऋषि ने यजुर्वेदभाष्य निर्माण शुरू कर दिया था। इस भाष्य की समाप्ति के विषय में भाष्य-समाप्ति पर निम्न लेख दिया गया है।

मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष १, शनिवार सवत् १९३९ मे समाप्त किया। वैशाख शुक्ल ११ सं० १९४६ मे छपकर समाप्त हुआ। एवं ऋग्वेद तथा यजुर्वेद का भाष्य ऋषि ने लगभग एक ही समय प्रारम्भ कर दिया था। उनमें यजुर्वेद का लगभग ५ वर्षों मे पूरा कर लिया था। साथ ही साथ आधे से

---

८ देखो "ऋग्भाष्यानुक्रमणी" पृष्ठ ७४,७७।

अधिक ऋग्वेद का भाष्य भी ऋषि निर्माण कर चुके थे।

वेद भाष्यों का मुद्रण तथा संशोधन ऋषि के परलोकवासी (संवत १६४० वि०) होने के पश्चात् भी होता रहा। ऋषि के भाष्य प्रारम्भ में मासिक अङ्कों मे ही मुद्रित किए गये थे। उन के जीवनकाल मे यजु० के ११ अध्याय और कुछेक मंत्र ही ५१ अङ्कों तक मुद्रित हुए थे। और ऋग्वेद प्रथम मण्डल ८६ सूक्त के पांचवे मंत्र तक ही उनमे प्रसिद्ध हो सके थे। इस प्रकार ऋषि के जीवनकाल मे दोनों भाष्यों के लगभग पांचो हिस्से ही मुद्रित हो सके थे। यजुर्वेद का सम्पूर्ण मुद्रण तो ऋषि की मृत्यु के ६ वर्ष बाद वि० १६४६ मे हुआ। और इससे १० वर्ष बाद लगभग १६५६ वि० मे ऋग्वेद का पूर्ण प्रकाशन हुआ है।

इन भाष्यो का हिन्दी अनुवाद पं० भीमसेन जी तथा पं० ज्वालादत्तजी प्रभृति विद्वानों ने किया है। संस्कृत भाष्य के प्रकाशन, मुद्रण की देखरेख प्रायः पण्डितो ने का है। अतः ऋषि के भाष्यो मे कहीं कोई त्रुटि प्रतीत हो तो आश्चर्य नही करना चाहिये + परन्तु अत्यन्त हर्ष के साथ लिखना पड़ता है कि इधर आर्य विद्वानों का ध्यान आकर्षित हुआ है। ऋषि दयानन्दजी के अनन्य भक्त, वैयाकरण शिरोमणि विद्वद्वरेण्य पं० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु प्रयत्न कर रहे हैं और यजुर्वेद भाष्य १० अध्याय तक विशेष टिप्पणियों सहित अक्टूबर १६४५ में प्रकाशित हो चुका है। संस्कृत भाष्य में ऋषि ने पदों का अर्थ देने में अपनी अनुपम योग्यता का परिचय दिया है। ऊहापोह से दृष्टिपात करने से प्रतीत होता है कि यह भाष्य ब्राह्मण, निरुक्त तथा उपनिषद् की आर्ष शैली से सुसङ्गत तथा अनुकूल है।

ऋषि स्वयं अपने भाष्य के विषय मे लिखते हैं:—

"परन्त्वेतैर्मन्त्रैर्यत्र यत्राग्निहोत्राद्यश्वमेधान्ते यद्यत् कर्त्तव्यं तत्तदत्र विस्तरतो न वर्ण-यिष्यते । कुतः ? कर्मकाण्डानुष्ठानस्यैतरेय शतपथ पू॰ मीमांसा श्रौतसूत्रादिषु यथार्थ विनियोजितत्वात् ।···तथैवोपासनाकाण्डस्यापि प्रकरणशब्दानुसारतो हि प्रकाशः करिष्यते।····

+ स्वामीजी का पत्र "और समर्थदान से लिखा है कि ज्वालादत्त नई भाषा बनाता है। यदि यह हमारे संस्कृत और अभिप्राय के अनु-कूल हो तो ठीक है नहीं तो जो पोपलीला की भाषा बना कर वहीं छपवा दे और हम को मालूम नहीं, पश्चात् प्रसिद्ध होने से कोलाहल होगा तो क्या होगा हां, अब तक तो उसने कुछ नहीं किया परन्तु सम्भव है कुछ गड़बड़ करे तो हो सकता है। इस लिए जो कुछ यह बनावे उसपर समर्थदान देखलो। जैसा कि अब भाष्य में एक गोलमाल शब्द (देवता) लिख दिया था। सो यह हमारे दृष्टिगोचर होने से शुद्ध हो गई। यदि वह ऐसी छप गई तो बड़ी हानि की संभावना है। इस लिए ऐसा न होना चाहिये।"

मि० आ० व० ६
शुक्रवार सं १६४०
जोधपुर (मारवाड़) } दयानन्द सरस्वती

[मासिक "सार्वदेशिक" देहली, वर्ष ११, नवम्बर १६३७ ई० अङ्क ६, पृष्ठ ३५८]

एवमेव ज्ञानकाण्डस्यापि ।" *

अर्थात् ऋषि की प्रतिज्ञा है कि उनके भाष्य में ज्ञान, कर्म, उपासनाकाण्ड का विचार नहीं किया जायगा, क्योंकि दर्शन, उपनिषत् तथा ब्राह्मण ग्रन्थों मे इनका विवेचन किया गया है। अतः भाष्य मे केवल अर्थ ही दिये जायेंगे।

इससे स्पष्ट है कि ऋषि के भाष्यों म अन्वय पूर्वक अर्थ का ही प्रयोग है। अन्य भाष्यों की तरह मन्त्रगत भावों की व्याख्या नहीं है। इसका कारण पाठको की मननशक्ति तथा विचार स्वातन्त्र्य की रक्षा करना ही है।

ऋषि दयानन्द जी की असाधारण योग्यता व मौलिकता का परिचय "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" + से हो जाता है। इनकी शैली का रहस्य इस ग्रन्थ की पंक्ति २ मे प्रतिभासित होता है। जिस विषय का विशेष प्रतिपादन भूमिका मे किया है उसी को भाष्य मे फैलाया गया है। भूमिका मे ५७ विषयों पर विवेचना की गई है।

पाश्चात्य विद्वान् प्रो० मक्समूलर भी इसकी मुक्तकण्ठ से प्रशसा करते हुए लिखते है.—

"We may divide the whole of Sanskrit literature beginning with the Rigveda, and ending with Dayananda's introduction to his edition of Rigveda, his by no means uninteresting Rigveda Bhumika in two great periods "१०

अर्थात्-सस्कृत साहित्य का प्रारम्भ ऋग्वेद से होता है और समाप्ति दयानन्द जी की भाष्य भूमिका मे। यह बहुत मनोरंजक है।

ऋषि-भाष्य की अपूर्वता –(क) इसमे लौकिक और वैदिक शब्दो के भेद को ध्यान म रखकर यास्क, पाणिनि, पतञ्जलि आदि ऋषि-मुनियो के आधार पर वेद के शब्दो के लिये सम्पूर्ण वैदिक नियमो का आश्रयण किया गया है।

सबसे प्रथम वैदिक भाषा सम्बन्धी कठिनता है। यह तो प्राय. सभी स्वीकार करते है कि वैदिक भाषा यौगिक होने से प्रवाही है, भाव प्रधान है, तथा नाम और आख्यात के रूपो से बनी है। लेकिन आज जहा इस भाषा ज्ञान के साधन व्याकरण (Vedic grammar) और कोष आदि ग्रन्थ हमे पर्याप्त रूप म उपलब्ध नहीं होते वहा पर इससे भी बढकर एक और कठिनता है। वह कठिनता वैदिक सस्कृत और साधारण सस्कृत मे भेद न करने से उत्पन्न होती है। दोनों प्रकार की सस्कृत मे प्रचुर समानता है और भेद भी। वेद का अर्थ करते हुए यदि इस सत्य को भुला दिया जाय तो उनके अनर्थ

---

* मासिक "सार्वदेशिक" देहली वर्ष ११, नवम्बर १९३७ ई० अङ्क ६, पृष्ठ ३८०

\+ प० सुखदेव विद्यावाचस्पति कृत विशेष टिप्पणी सहित ऋ०भा०भूमिका श्रीगोविन्द राम हासानन्द, वैदिक पुस्तकालय, नई सड़क देहली ने प्रकाशित किया है—लेखक।

१० "India, what Can teach us" Lecture III। "भूमिका प्रकाश" पृष्ठ १४८-१४९।

व्यपन्न हो जाते हैं * इसलिये केवल लौकिक संस्कृत के ज्ञान के आधार पर ही वेद का अर्थ करना सर्वथा अनुचित है। तुलनात्मक भाषा-विज्ञान की दृष्टि से तो वैदिक भाषा के समझने में साधारण संस्कृत (Classical Sanskrit) संभवतः उतनी सहायक नहीं है जितनी की जिन्दावस्ता की छन्दभाषा। भाषा-विज्ञान की दृष्टि से सम्भवतः लौकिक संस्कृत का वैदिक भाषा से उतना साम्य तथा सामीप्य नहीं है जितना छन्द भाषा का *।

वैदिक (Vedic) संस्कृत और लौकिक (Classical) संस्कृत का भेद देखना उचित है। इस विषय में V S. Ghate (वी० एस० घेटे) की "Lectures on Rigveda" * पुस्तक की भूमिका का निम्न अवतरण ध्यान देने योग्य है:—

"Though the dialect of the Veda or more particularly the Rigveda is essentially Sanskrit, still it differs from the latter in many considerable respects, so much so that to a student of Classical Sanskrit pure and simple, the Vedic language would be almost Greek and Latin. The Vedic Sanskrit, if I may so call it, is much simple, more regular and less artificial than the classical Sanskrit. The forms of declension and conjugation are more regular in character though more varied at the same time. Sandhis are simple and far more intelligible.

---

*उदाहरण के लिये देखिये—"अतिसृष्टो अपां वृषभो ऽतिसृष्टा अग्नयो दिव्याः"(अथर्व० १६।१।१) विटनी साहब का अर्थ—"Let go the bull of the waters. Let go the heavenly fires," ग्रिफिथ साहब का अर्थ "The bull of the waters hath been let go. The heavenly fires have been let go."

अर्थात्- जलों का बैल छोड़ दिया जाय और छोड़ दी जायें आसमान की अग्नियां।" यह कैसा अर्थ है! जलों के बैलों को छोड़ दो और आसमान की आगों को छोड़ दो। क्या इनमें परस्पर कोई सम्बन्ध जुड़ता है। जलों का बैल कौन? आकाश की अग्नियां कैसी? विटनी और ग्रिफिथ महोदय के मस्तिस्क की बलिहारी है। मंत्रद्रष्टा ऋषि की दृष्टि में वैदिक शब्द प्रवाही एवं यौगिक होने से "वृषभ" शब्द का अर्थ "वर्षणार्थक" "वृष्" धातु से बरसाने वाला होता है। सबसे पूर्व मन्त्रगत "वृषभ" शब्द का यौगिक अर्थ करने से मन्त्र का रहस्य खुल जाता है। प्रकरणानुसार मन्त्र का वास्तविक अर्थ हुआ:— "वीर्यरूप जलों को बरसाने वाला (व्यभिचारी काम) मैने छोड़ दिया। और छोड़ दी है अप्राकृतिक व इन्द्रिय सम्बन्धी कामाग्नियां।" लेखक।

* देखो Haug (हाग) कृत "Essays on the sacred language, writings and religion of the Parsis." P.P.67-70.

* देखो-मासिक "क्षात्रधर्म संदेश" वर्ष ३, सन् १९५४ ई० मई अङ्क-५, पृष्ठ कालम २ की पाद टिप्पणी।

The infinitive mood, for instance has not less than six forms in the Veda, wheres in latter Sanskrit, we have only one form.......... ......"

इस अवतरण का भाव यह है कि वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत की अपेक्षा अधिक सरल नियमित तथा स्वाभाविक है, Delcension विभक्ति तथा Conjugation (रूपकरण) के स्वरूप वैदिक संस्कृत में अधिक नियत हैं, वैदिक भाषा की सन्धियां सरल तथा सुस्पष्ट हैं, वेद में Infinitive mood के ६ रूप हैं जहां लौकिक संस्कृत में केवल एक है। कहने का तात्पर्य यह है कि लौकिक संस्कृत तथा वैदिक संस्कृत में पर्याप्त भेद है।

ऋषि दयानन्द जी ने वदिक व्याकरण का अपने भाष्य में बहुत ही सहारा लिया है। महीधर, उव्वट प्रभृति पौराणिक भाष्यकारों ने उसका बहुत कम सहारा लिया है अधिकांश लौकिक संस्कृत के व्याकरण का सहारा लिया है।

वैदिक और लौकिक संस्कृत के कोष भी भिन्न २ हैं।

वैदिक संस्कृत का कोष निघण्टु है जिनकी टीका निरुक्त नाम से प्रसिद्ध है और लौकिक संस्कृत का कोष, अमर कोषादि हैं। वेद वैदिक संस्कृत में है इसलिए वेद का अर्थ वैदिक कोष के अनुसार उचित होगा। लौकिक संस्कृत कोष से यदि अर्थ किया जावेगा तो वह अशुद्ध होगा।

इसका एक उदाहरण देखिये—यजु० १६। २८ का २८ का पहला टुकड़ा "नमः श्वभ्यः" है। इसका श्री महीधराचार्य अर्थ करते हैं—"श्वानः कुक्कुरास्तद्रूपेभ्यो नमः इति नमस्कार मन्त्राः" अर्थात् कुत्तारूप जो रुद्र भगवान् हैं उसको नमस्कार है। वास्तव में इसका शब्दार्थ महीधर के लौकिक कोषानुसार "कुत्तों को नमस्कार हो।" यह था। महीधर मन में सोचने लगे होंगे कि "कुत्तों को नमस्कार करना ठीक नहीं" इस कारण अपने आप 'कुत्तों को रुद्र का रूप गढ़ लिया जो मन्त्र में कहीं नहीं और अर्थ किया 'कुत्ता रूपी रुद्र को नमस्कार हो।"

इस मन्त्र के टुकड़े का अर्थ ऋषि दयानन्द जी अपने भाष्य में करते हैं :—

लोग (श्वभ्य :) कुत्तों को (नम :) अन्न देवें।"

महीधर ने लौकिक कोष अमरादि का सहारा लिया है उनमें 'नम': के अर्थ केवल 'नमस्कार' के हैं। अन्न के नहीं। प्रत्युत ऋषि दयानन्द जी ने निघण्टु का सहारा लिया उसमें 'नमः' के अर्थ हैं: —"आयु अन्न, वर्चः, यशः, अन्नम्" (निरुक्त ३।६।१३)

(ख) ऋषि ने यौगिक अर्थ करने की प्रणाली पर विशेष बल दिया है।

यह सिद्धान्त निरुक्तानुकूल है।

आख्यात या नाम जिनसे कि प्रत्यय जोड़ा जाता है, वैयाकरण उसे 'प्रकृति' कहा करते हैं।

---

१३. मिलाओ "शतपथ ब्राह्मण" ६।३।१।१७ "अन्नं नमः" अन्न ही नमः है। (रुद्र के विषय में अत्यधिक जानने क लिये साप्ताहिक पत्र "आर्य्य-मित्र" लखनऊ, वर्ष ५० बृहस्पतिवार १७ अप्रैल १६४७ ई०, अङ्क १५, पृष्ठ ५, ६, ११ में मेरा "रुद्र का वास्तविक स्वरूप" शीर्षक लेख देखिये— लेखक)

जो शब्द प्रकृति और प्रत्यय की उपेक्षा करके केवल सामुदायिक शाक्त से अपने वाच्य पदार्थ को सूचित करता है, उसे रूढ कहते हैं।

जो शब्द प्रकृति और प्रत्यय दोनों की उपेक्षा करता हुआ समुदायशक्ति से वाच्यार्थ को बताता है उसे योग रूढ कहते है।

दार्शनिक लोग शब्द का एक स्वभाव बताया करते है कि शब्द पहले पहल अपने वाच्य अर्थ को योगवृत्ति से कहता है फिर धीरे २ जब उसका वह अर्थ स्थिर सा हो जाता है तब दोनों वृत्तियों से योगरूढ कहा जाता है फिर चिरकाल के अनन्तर अतिप्रख्यात होने पर योगवृत्ति को छोड कर केवल रूढवृत्ति से वाच्य अर्थ को सूचित करता है इस प्रकार जो शब्द अपने वाच्य अर्थ को योगवृत्ति से कहे वह यौगिक, जो योग और रूढ दोनों वृत्तियों से कहे वह योगरूढ और जो कि योगरूढ मध्यम तथा यौगिक वृत्ति उत्तम तथा ज्येष्ठ केवल रूढवृत्ति से अपने अर्थ को बतावे उसे रूढ समझना चाहिए। तीनों वृत्तियो मे रूढवृत्ति अन्तिम और निकृष्ट है अत यह यौगिक वृत्ति ही विशेष आदरणीय है।

वैदिक दृष्टि मे शब्द अपने वाच्य अर्थ को प्रकृति तथा प्रत्यय के आधार पर बताते है।* इसलिए वैदिक शब्द यौगिक हैं।

ऋषि दयानन्द जी की वैदिक शब्दो को यौगिक समझने की शैली में यास्क प्रभृति आचार्यों के विचार भी देखने चाहिये।

'तत्र नामान्याख्यातजानीति शाकटायनो नैरुक्त समयश्च न सर्वाणीति गार्ग्यो वैयाकरणा नाख्येके।' यह लिखते हुये यास्क ने शब्दों को यौगिक स्वीकार किया है। इसके अग्रिम लेख से यौगिक मत विरोधी गार्ग्य की सात युक्तियों का "तदेतन्नोपपद्यते" (निरुक्त १।१२) इस उपष्टम्भ से खण्डन करते हुये वे यौगिक मत ही पुष्ट करते है। वनयुक्तियों मे योगिक अर्थ पर किये जाने वाले सम्पूर्ण आक्षेपों का सुन्दर समाधान है।*

ब्राह्मण ग्रन्थ भी वैदिक शब्दों को यौगिक ही मानते है।

वैदिक नाम पदों को यौगिक न मानने पर क्या आपत्ति आती है इस सम्बन्ध मे भी श्री द्विजदास दत्त एम० ए० अपनी पुस्तक † मे लिखते हैं —

How a word may deceive a Vedic student and may be the mother of all kinds of legends myths and superstitions, we will cite one example from

यौगिक शब्द के विषय मे अत्यधिक जानने के लिये पाठकों को श्री गुरुदत्त जी विद्यार्थी एम० ए० की "Terminology of the Vedas" का 'A yogik word is one that has a आदि उद्धरण देखना चाहिये—लेखक।

* देखो "वैदिक धर्म" का वेदाङ्क। वर्ष १६, जनवरी १६३८ ई०, अङ्क १ पृष्ठ १००

* देखो, शतपथ ब्रा० १४।८।४।१ मे 'हृदय की यौगिक व्याख्या, ऐतरेयब्रा० ६।५।६ गोपथब्रा० १।७ मे अङ्गिरा शतपथब्रा १।८।२।७ मे 'अनुयाज्ञ शतपथब्रा १०।१।१।१५ में ग्रह, तै० २।०।६।६ मे 'देव' शत० ३।६।४।२३ मे यज्ञ इत्यादि शब्दों की यौगिक व्याख्या।

† "Rigveda Unveiled" Page 130–131,

the Rigveda. The word 'हस्ती' to day we all know, means an elephant. And in that sense we meet with the word 'हस्ती' even in the Rigveda, "मृग इव हस्तिनः खादथावना" (1-64-7) (ye Maruts or God in storms) "Like wild elephants, ye destroy the forests. "Again we have in the Rigveda "अंशुं दुहन्ति हस्तिनः (3-36-7) If you took "हस्तिनः" here in the sense of 'elephants' and interpreted it. "The elephants cut up the Soma-Creeper into small pieces, and extracted the juice, you might accuse the Rishis of the wildest superstitions and perversities, such as believing elephants, like men, to have performed the soma sacrifice! More formidable still, the universal food giver (Indra) or God himself, is called in the Rigveda a 'great elephant' 'महाहस्ती, " आ तू न इन्द्र क्षुमन्तं चित्रं गृभं संगृभाय। महा हस्ती दक्षिणेन' (ऋ०८।८१ १) If you interpreted 'महाहस्ती' as a "Great elephant"—"O thou great elephant, do thou take on thy powerful hands somethings most acceptable, most beautiful, something that would call forth high praises, for giving to us, "you might accuse the Rishis of believing the elephant also to be an incarnation of God, and swell the number of animal Avatars, by adding to the fish and the tortoise, elephant also! But go back to the root meaning of 'हस्ती' as one "Having a hand," the elephant is a हस्ती, because of its hand like proboscis, the priest is a हस्ती, because of those human hand of his, and God is, "Great handed," because he is Almighty It is on this "Paronomasia" or "श्लेषालङ्कार" in the Rigveda, that Swami Dayanand lays the greatest stress, for it was a necessary condition of the Rishis, very existence, and without realising it, you could not catch the Rishis' true meaning."

अर्थात्—"किस प्रकार एक शब्द वैदिक विद्यार्थी को धोखा दे सकता है और नाना कथा-कहानियों तथा भ्रमात्मक विचारों का कारण बन सकता है इसका एक उदाहरण ऋग्वेद से उपस्थित किया जाता है। वर्तमान समय में 'हस्ती का अर्थ हाथी है—यह सभी जानते हैं और इस अर्थ में हस्ती शब्द का प्रयोग ऋग्वेद में भी हुआ है। यथाः—

'मृग इव हस्तिनः खादथा वना' (१।६४।७) इत्यादि। ऋग्वेद में यह भी कहा है कि हस्ती सोम औषधि में से सोमरस निकालते हैं। यथाः—'अंशुं दुहन्ति हस्तिनः' (ऋ ३।३६।७)। यहां हस्ती का अर्थ यदि हाथी लिया जाय तो मानना पड़ेगा कि इस मन्त्र का ऋषि इस भ्रम में था कि हाथी भी सोमयाग करते हैं। (हस्ती शब्द को

यौगिक मानने पर हस्ती का अर्थ "हाथ वाले" ऋत्विग् लोग, जो अर्थ कि सोमयाग के सम्बन्ध में बहुत उपपन्न दिखाई देता है)। और देखिए वेद में इन्द्र को महाहस्ती कहा गया है। यथा— 'आ न तू इन्द्र क्षुमन्तं चित्र गृभं संगृभाय। महा-हस्ती दक्षिणेन, (ऋ ८।८१।१) यहा यदि महा-हस्ती का अर्थ बड़ा हाथी किया जाय तो महान् अनर्थ होगा क्योंकि इससे यह बात सिद्ध होगी कि इस मन्त्र का ऋषि बड़े हाथी को भी देव का रूप मानता था, इस प्रकार पशु-अवतार नाना मानने पड़ेंगे।

अब हस्ती शब्द के यौगिक अर्थ की ओर चलिये इसका यौगिक अर्थ है 'हाथवाला'। हाथी हस्ती है चूंकि उसकी सूंड होती है जो कि उसे हाथ का काम देती है। ऋत्विक् हस्ती है, चूंकि उसके हाथ होते हैं। इन्द्र अर्थात् देव या परमात्मा महाहस्ती है चूंकि वह सर्वशक्तिमान् है।

इसीलिए स्वामी दयानन्द ने वेदों में श्लेषा-लंकार की सत्ता पर अधिक बल दिया है, क्योंकि बिना इस कथन का गौरव समझे ऋषि का वास्त-विक अभिप्राय समझा नहीं जा सकता।'

(क्रमशः)

ओ३म्

भ्रान्ति निवारण

निष्पक्ष विद्वान् और कन्योपनयन

(ले०—पं० धर्मदेवजी विद्यावाचस्पति स० मन्त्री सार्वदेशिक धर्मार्यसभा देहली)

मुल्तान सनातनधर्म कालेज के पं० दीनानाथ जी शास्त्री ने 'सिद्धान्त' मे "स्त्रियों के वेदाधिकार पर विचार" इस शीषक से जो लेखमाला लिखी है उसम मुख्य विषय से असम्बद्ध, असगत तथा उपहासजनक बहुत सी बातें लिखी हैं जिन सब पर विमर्श करना हमे सर्वथा अनावश्यक और समय तथा शक्ति का दुरुपयोग प्रतीत होता है किन्तु कुछ थोड़ी सी ऐसी बातें है जिन से साधारण जनता मे भ्रम फैलने की सम्भावना हो सकती है अतः उन पर सक्षेप से प्रकाश डाल कर भ्रान्ति निवारण करना उचित प्रतीत होता है। मैने अपना 'सार्वदेशिक' मे प्रकाशित 'स्त्रियों के वेदाध्ययन और वैदिक कर्मकाड मे अधिकार विषयक लेखमाला मे जिसका कुछ अश सिद्धान्त म भी प्रकाशित हो चुका है अनेक वैदिक प्रमाणों के अतिरिक्त गोभिलगृह्यसूत्र का प्रावृता यज्ञोपवीतिनी-मभ्युदानयन् जपेत 'सोमोऽददद् गन्धर्वायेति' यह प्रमाण उद्धृत किया था जिस मे वधू का विशेषण 'यज्ञोपवीतिनीम्' यह दिया है। इस पर मैंने बगाल के सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान् प० सत्यव्रतसामाश्रमी के भाष्य से 'यज्ञोपवीतिनीम्' का अर्थ यज्ञोपवीतयुताम् अर्थात् यज्ञोपवीतवाली और उसका ठाकुर उदय नारायणसिंह के हिंदी अनुवाद मे दिया उपर्युक्त भाव वाला अर्थ भी उद्धृत किया था। पक्षपात रहित सब विद्वान् इस बात को स्वीकार करेंगे कि पं० सत्यव्रत-सामाश्रमी कृत अर्थ 'यत्परःशब्दः स शब्दार्थः' इस नियम के अनुसार कि शब्द का अर्थ वही मानना चाहिए। जो शब्दों से प्रकट होता हो जिसकी दुहाई पं० दीनानाथजी अपने अनेक लेखो और पत्रों मे देते रहते हैं सर्वथा यथार्थ है। पर प० दीनानाथजी इस पर बड़े तिलमिलाए हैं। कुछ पौराणिक पक्षपातग्रस्त भाष्यकारों की सम्मति को उद्धृत करते हुए उन्होंने लिखा 'तब हमारा पक्ष समूल है, उनमे बहुतों की साक्षी है। कोई खैचातानी नहीं, किन्तु इनमें सोपपत्तिकता है। आप के पक्ष मे सामाश्रमी के अतिरिक्त किसी की सम्मति नहीं, कोई उसमे उपपत्ति नहीं बल्कि आपके स्वामीजी की भी उसमे सम्मति नहीं। हम स्नातक ऐसों को खुला आह्वान देते हैं कि यदि 'आप लोगों मे कुछ शक्ति हो तो अपना यहाँ का पक्ष सोपपत्तिक सिद्ध कीजिये। इतने प्राचीन पण्डितों के सामने अकेले अर्वाचीन सामाश्रमी का 'यज्ञोपवीतयुताम्' यह अर्थ कसे मान्य हो सकता है क्योंकि जब वह विवाह्यमान स्त्री 'ब्रह्मवादिनी' ही नहीं, ब्रह्मचर्याश्रमारम्भ मे नहीं, तब उसे वेद विचार वाला मुख्य यज्ञोपवीत दिया ही किस तरह जाय ? ('सिद्धान्त' माघ शु० १४ सं० २००६) इसी लेख मे शास्त्रीजी ने यह सिद्ध

करने का भी यत्न किया है कि स्वामी दयानन्द जी ने भी 'सत्यार्थ प्रकाश' संस्कार विधि आदि में कन्याओं का यज्ञोपवीत नहीं माना। इत्यादि हमारे मुख्य विषय के साथ इस का सम्बन्ध होने तथा शास्त्रीजी के खुले आह्वान के कारण इसकी यथार्थता पर विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है। जहां तक खैंचातानी का प्रश्न है यह स्पष्ट है और 'यज्ञोपवीतिनीम्' शब्द का "यज्ञोपवीतवाली" यह अर्थ बिल्कुल सरल तथा स्पष्ट है और "यज्ञोपवीतवत् कृतोत्तरीयाम्' अथवा "यज्ञोपवीतवत् परिहितोत्तरीयवसनाम्" यह पौराणिक चन्द्रकान्त तर्कालङ्कारादि कृत अर्थ कि 'यज्ञोपवीत की तरह जिसने उत्तरीय वस्त्र दुकूलादि पहना हुआ है ऐसी कन्या को यह निस्सन्देह खैंचातानी है। पं० चन्द्रकान्त तर्कालंकार की व्याख्या मूलविरुद्ध होने तथा अत्यन्त पक्षपात ग्रस्त होने के कारण भी अमान्य है। उनके भाष्य से जो उद्धरण शास्त्री जी ने अपने लेख में दिया है, उससे उनका इस विषयक पक्षपात स्पष्टतया सूचित होता है। वे स्वयं प्रश्न उठाते हैं। 'यज्ञोपवीत वतीम्' इत्येव कुतोनवर्ण्यते? अर्थात् यज्ञोपवीतिनीम् का अर्थ स्पष्ट यज्ञोपवीत वाली ऐसा ही क्यों नहीं करते? इस प्रश्न से हमें 'चोर की दाढ़ी में तिनका' वाली प्रसिद्ध कहावत का स्मरण हो जाता। अस्तु इस युक्तियुक्त प्रश्न को जो प्रत्येक विचारशील निष्पक्षपात सज्जन के मन में स्वभावतः उठेगा पं० चन्द्रकान्त जी उत्तर देते हैं 'तदभावा दित्याह' न खलु अस्ति योषितो यज्ञोपवीतं येनानूद्येत। अर्थात् स्त्रियों का यज्ञोपवीत नहीं होता इसलिए 'यज्ञोपवीत वाली' यह अर्थ नहीं बन सकता। आगे फिर प्रश्न करते हैं कि 'अनुमीयतामितिचेत्' अर्थात् 'यज्ञोपवीतिनीम्' इस विशेषण से अनुमान करना चाहिये कि कन्याओं का भी यज्ञोपवीत होता है ऐसा यदि कहा जाए, तो उस पर उत्तर देते हैं कि 'न, अन्यथोपपत्तेः' अन्यथैवोपपन्नोऽयम् अनुवादो न विधिमनुमापयितुमलम्। ...मिद्धवत खल्वेतदुपदिश्यते यज्ञोपवीतिनीम् इति सिद्धं खलु-आसां वधूनां यज्ञोपवीत शब्दमुत्तरीयं तस्मात् सिद्धि योषितां यज्ञोपवीतस्य इत्यादि।

अर्थात् नहीं, ऐसा अनुमान नहीं कर सकते क्योंकि इस अर्थ के विना भी काम चल सकता है। जहां उसके माने विना काम न चले वहीं विधि का अनुमान किया जाता है। यहां तो 'यज्ञोपवीतिनीम्' यह प्रयोग सिद्ध अर्थात् स्पष्ट वस्तु की तरह है। वधुओं के लिए स्पष्ट वस्तु यज्ञोपवीत (जनेऊ) नहीं बल्कि ऊपर ओढ़ने का कपड़ा है इसलिए यज्ञोपवीत से उसी को लेना चाहिये।'

पं० दीनानाथ जी इस व्याख्या से प्रसन्न होकर लिखते हैं कि इसमें कैसी सोपपत्तिकता है? यह मुझे निश्चय है कि पक्षपात रहित होकर विचार करने वाले सभी विद्वानों को इसमे भाष्यकार की पक्षपात ग्रस्तता स्पष्टतया दिखाई देगी। 'यज्ञोपवीतिनीम्' इस विशेषण से कन्याओं का यज्ञोपवीत स्पष्टतया सूचित होता है पर उसका खैंचातानी से दूसरा अर्थ करके यह कह देना इस स्पष्ट शब्द से सूचित अर्थ के माने विना भी काम चल सकता है यह कोई युक्ति नहीं है यह तो धींगाधागी है। महामहोपाध्याय मुकुन्द शर्मा ने गोभिल गृह्य सूत्र की 'मृदुला व्याख्या'

में जो चौखम्भा संस्कृत सीरीज मे छपी है चन्द्र-कान्त तर्कालंकार का खण्डन करते हुए 'तदेव सूत्रं ब्राह्मणोपनीतमिह यज्ञोपवीत पदार्थः। 'उपवीतं ब्रह्मसूत्रम् 'इत्याग्नेय कोशेन स्मृत्याच ब्रह्मसूत्रम् उपवीतं तद् यज्ञोपयिकमिति यज्ञोपवीत समाख्यास्य तद् विद्यते ऽस्यास्तद्वतीम्' इत्यादि व्याख्या की है। महामहोपाध्याय पं० शिवदत्त जी शर्मा मिन्सिपल ओरियन्टल कालेज ने जैमिनीय न्यायमाला की टीका में लिखा था कि

अस्यैवाधिकरणस्यानुसारेण 'अष्ट वर्षं ब्राह्मणमुपनयीत तमध्यापयीत इत्यत्रापि स्त्रिया-अप्यधिकारः अतएव प्रावृतां यज्ञोपवीतिनीम् अभ्युदानयम् जपेत इति गृह्यसूत्रम् २-१-१६ पश्चादग्नेः संवेष्टितं कटम् एवं जातीयकं वान्यत् पदा प्रवर्तयन्ती वाचयेत्—प्र मे पतियानः पन्थाः कल्पताम् (२-१-२०) इति च गोभिल सूत्रम् मनसा भर्तुरभिचारे त्रिरात्रं यावकं क्षीरोदनं वा भुञ्जाना ऽ धः शयीत ऊर्ध्वं त्रिरात्रम्सु निमग्नायाः सावित्र्याष्टशतेन शिरोभिर्जुहुयात् पूता भवति (अ-२०-स-५) इति वासिष्ठ-स्मृतिः अथ य इच्छेत्-दुहिता मे पण्डिता जायेत सर्वमायुरियात्–इति तिलौदनं पाचयित्वा सर्पिष्मन्तमश्नीयाताम् ईश्वरौ जनयितवै इति बृहदारण्यकोपान्त्यश्रुतिश्च कठी बह्वृचीत्यादि प्रयोग साधकम् शाखाध्येतृ वाचीष शब्दो जातिकार्यं 'लभते' इत्यर्थकम् 'गोत्र'' च चरणैः सह, इति वार्तिकं च संगच्छते। किंच यजमान पत्न्या अध्ययनमन्तरेण ऋत्विगादि प्रोक्तार्थस्य ज्ञानाभावादुक्तकर्मणि प्रवृत्तिरेव न स्यात। संस्कृतातिरिक्त भाषणंतु 'नायज्ञियां वाचं वदेत' इत्यादिना निषिद्धमेव। उपलभ्यते च प्राचीनेतिहासादिषु सीता महाश्वेतादीनां सन्ध्यो पासनमपि।"

(जैमिनीय न्याय माला विस्तारः—आनन्दाश्रम प्रेस पूना पृ० ३०५)

अर्थात् इस अधिकरण (मीमांसा अ.६.सा. १ अधि. ४ में वर्णित 'यागे दम्पत्योः सहाधिकाराधिकरणम्' के अनुसार अष्ट वर्षं ब्राह्मणमुपनयीत तमध्यापयीत इत्यादि वाक्यों में कन्याओं का भी उपनयनाधिकार सिद्ध होता है। इसी लिये गोभिलगृह्य सूत्र २-१-१६ में स्त्री के लिये 'यज्ञोपवीतिनीम्' यह विशेषण प्रयुक्त हुआ है। वसिष्ठ स्मृति अ० २० खण्ड ५ में मन से भी पाप होने पर स्त्री को १०८ बार सावित्री वा गायत्री मन्त्र के जाप से शुद्ध होने का विधान है। बृहदारण्यक उपनिषत् की श्रुति में पुत्री पण्डिता हो इस के लिये साधन बताये गये हैं, कठी, बह्वृची इत्यादि प्रयोग व्याकरण शास्त्र में कहे गये हैं जिन से स्त्रियों का वेद शाखाओं का अध्ययन सूचित होता है। यदि यजमान पत्नी वेदादि शिक्षिता न हो तो ऋत्विजों के कहे वाक्यों के अर्थ को भी वह न समझ सकेगी और न उस के अनुसार कार्य कर सकेगी। 'नायज्ञियां वाचं वदेत्' इस आदेश के अनुसार यज्ञ में संस्कृत के अतिरिक्त भाषा में भाषण निषिद्ध है। प्राचीन इतिहासों में सीता, महाश्वेता आदि के सन्ध्योपासनादि का स्पष्ट वर्णन पाया जाता है इत्यादि।

इस उद्धरण में जो प्रबल शास्त्रीय प्रमाणों द्वारा समर्थित और युक्ति युक्त है महामहोपाध्याय पं० शिवदत्त जी शर्मा ने गोभिल गृह्यसूत्र के 'यज्ञोपवीतिनीम्' का स्पष्ट यज्ञोप-

वीत वाली' यही अर्थ माना है तथा स्त्रियों के उपनयन, वेदाध्ययन, गायत्री जप इत्यादि के अनेक प्रमाण प्रस्तुत किये हैं जिन्हें काटना पं० दीनानाथजी शास्त्री के लिये सर्वथा असम्भव है। महामहोपाध्याय पं० शिवदत्त जी शर्मा अपने को कट्टर 'सनातन धर्मी' ही मानते थे और इसी रूप में उनका समस्त पौराणिक मण्डली मे मान था। आर्य्य समाज के साथ उनका किसी प्रकार का सम्बन्ध न था तथापि इस विषयक शास्त्रीय सिद्धान्त को उन्होंने वैय्याकरणसिद्धान्त कौमुदी, न्यायसिन्धु, जैमिनीय न्यायमाला,— आर्य विद्या सुधाकर आदि की पाद टिप्पणियों मे प्रबल रूप से स्पष्ट शब्दों मे प्रकट किया। अत: पं० दीनानाथजी का यह कथन कि पं० सत्यव्रत सामाश्रमी को छोड़ कर और किसी भी विद्वान् ने 'यज्ञोपवीतिनीम्' का अर्थ यज्ञोपवीत वाली नहीं माना न कन्याओ का उपनयन माना है सर्वथा अशुद्ध है आशा है वे महामहोपाध्याय प० शिवदत्त जी की गणना मूर्खों म करने की धृष्टता न करेंगे।

महामहोपाध्याय पं० शिवदत्त शर्मा जी के समान सुप्रसिद्ध दाक्षिणात्य विद्वान् श्री काशी शेष वेंकटाचल शास्त्री जी ने जो मैसूर महाराज के आस्थान विद्वान् थे स्पष्ट लिखा कि 'ब्राह्मणेन षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च। अष्टवर्षं ब्राह्मणमुपनयीत तमध्यापयीत' इत्यादि। अत्र ब्राह्मणपद जातिपरम्। तेन ब्राह्मणजातीयानापुंसामिव स्त्रीणामपि तज्जातीयाना तदध्ययनमध्यापनम उपनयनं च भवति।"

(कन्यपनयन संस्कारः धर्म दिवाकर प्रेम मुरादाबाद विक्रमाब्द १९६५ पृ० ४७)

अर्थात् 'अष्टवर्षं ब्राह्मणमुपनयीत' इत्यादि वाक्यों के अनुसार ब्राह्मण कुमारों के समान कन्याओं का भी वेदाध्ययन' अध्यापन तथा उपनयन शास्त्र विहित है।

क्या पं० दीनानाथ जी जैसे अत्यन्त संकुचित और अनुदार दृष्टि वाले सज्जन ऐसे उदार विद्वानों की मूर्ख श्रेणी मे गण ा करने का साहस करेंगे ? क्या ये महामहोपाध्याय प० दीनानाथ जी से कम विद्वान् थे जैसे कि ताने हम आर्यों को मारने का उनका स्वभाव है ?

ऐसे ही मैसूर के जगद्विख्या प्राच्य पुस्तकालय (Oriental Library) तथा ऐड्यार मद्रास पुस्तकालय के अध्यक्ष पं०महादेव शास्त्री ने अपने Vedik Law of Marriage अथवा वैदिक विवाह पद्धति इत्यादि ग्रन्थों में हारीत धर्म-शास्त्र तथा गोभिल गृह्यसूत्रा द के प्रमाण उद्धृत करते हुए लिखा कि प्राचीनकाल मे कन्याओं का यज्ञोपवीत होता था तथा वे वेदों का अध्ययन करती थीं। जब से कन्याओं का यज्ञोपवीत तथा वेदाधिकार छीन लिया गया तथा बाल्यविवाह प्रारम्भ हुआ तभी से भारत की अधोगति शुरू हुई इत्यादि।

महर्षि दयानन्दजी इस युग के महान और वैदिकधर्मोद्धारक शिरोमणि आचार्य हुए हैं। उनके विषय में भी पं० दीनानाथजी ने अपने लेखों में यह सिद्ध करने का निन्दनीय और असफल प्रयत्न किया है कि उन्होंने भी कन्याओं के उपनयन वा यज्ञोपवीत का सत्यार्थप्रकाश, संस्कारविधि इत्यादि ग्रन्थों में प्रतिपादन नहीं किया बल्कि निषेध किया है यद्यपि कन्याओं के

वेदाध्ययन का अधिकार उन्होंने माना है। इस प्रकार उन की इस विषयक स्थिति को परस्पर विरुद्ध दिखाने का शास्त्रीजी ने यत्न किया है किन्तु निम्न लिखित उद्धरणों से जो सत्यार्थ-प्रकाश संस्कारविधि और वेदभाष्य मे से दिये गये हैं यह सर्वथा स्पष्ट है कि ऋषि दयानन्द ने कन्याओं के उपनयन और ब्रह्मचर्य पूर्वक नियमितरूप से वेदाध्ययन का प्रतिपादन किया है।

(१) सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास मे मनुस्मृति २।१६४ की व्याख्या करते हुए ऋषि दयानन्द ने लिखा है कि "इसी प्रकार से कृतोपनयन द्विज ब्रह्मचारी कुमार और ब्रह्मचारिणी कन्या धीरे २ वेदार्थ के ज्ञानरूप उत्तम तप को बढ़ाते चले जाएं। (शताब्दीसंस्करण पृ० १३५)

यहां मूल श्लोक मे आये "कृतोपनयनो द्विजः" इस पद को मीमासा शास्त्र के "स्त्री चाविशेषात्' इत्यादि व्यवस्थानुसार कुमार और कुमारी दोनों के लिए माना है जैसे कि महामहोपाध्याय पं० शिवदत्तजी शर्मा, श्री काशी वेंकटाचल शास्त्री, श्री महादेव शास्त्री आदि सनातनधर्माभिमानी विद्वानों ने भी स्वीकार किया।

ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्॥ अथर्व ११।६।१८ इनकी व्याख्या में ऋषि दयानन्द ने लिखा है कि "जैसे लड़के ब्रह्मचर्य सेवन से पूर्ण विद्या और सुशिक्षा को प्राप्त अपने अनुकूल प्रिय सदृश स्त्रियों के साथ विवाह करते हैं वैसे (कन्या) कुमारी (ब्रह्मचर्येण) ब्रह्मचर्य सवन से वेदादि शास्त्रों को पढ़ पूर्ण विद्या और उत्तम शिक्षा को प्राप्त युवती हो के पूर्ण युवावस्था मे अपने सदृश प्रिय विद्वान् पूर्णयुवावस्थास्थ पुरुष को प्राप्त हो इस लिए स्त्रियों को भी ब्रह्मचर्य और विद्या को ग्रहण अवश्य करना चाहिए।"

(सत्यार्थप्रकाश ३य समु० शताब्दी संस्करण पृ०१६५

मनु० ७-१५२ की व्याख्या करते हुए ऋषि दयानन्द ने लिखा है कि 'राजा की आज्ञा से अष्टवर्ष के पश्चात् लड़का व लड़की किसी के घर मे न रहने पावें किन्तु आचार्य कुल मे रहें जब तक समावर्तन का समय न आवे तब तक विवाह न होने पावे।"

(सत्यार्थप्रकाश स० ३ शताब्दी सं० पृ० १६५)

यहां लड़कियों को भी आचार्य कुल मे रहकर ब्रह्मचर्य पूर्वक वेदाध्ययन का विधान ऋषि ने किया है जो उपनयन संस्कार के बिना असंभव है।

ऐसे ही संस्कार विधि के वेदारम्भ प्रकरण में भी अनेक स्थानों पर ऋषि दयानन्द ने इस प्रकार के वाक्यों का प्रयोग किया है यथा 'सब से छोटा यह मत है कि २४ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य पुरुष और १६ वर्ष तक स्त्री ब्रह्मचर्याश्रम यथावत् पूर्ण करे।

(संस्कार विधि पृ० १०१)

'जब कन्या को ८ से २४, २२, २० १८ अथवा १६ वर्ष तक आचार्य की शिक्षा प्राप्त हो तभी पुरुष वा स्त्री विद्यावान् होकर धर्मार्थ काम मोक्ष के व्यवहारों में अति चतुर होते हैं।"

(संस्कार विधि पृ० १००)

'जब विद्या, हस्तक्रिया ब्रह्मचर्य व्रत भी पूरा होवे तभी गृहाश्रम की इच्छा स्त्री और पुरुष करें।"

(समावर्तन प्रकरण पृ० ११६)

ऋग्वेद १।७१।९ के भाष्य में ऋषि दयानन्द ने लिखा :—

'यथा वैश्या धर्मं धृत्वा धनमर्जयन्ति तथैव कन्या विवाहात्प्राक् शुभब्रह्मचर्येणाप्ता विदुष्योऽध्यापिकाः प्राप्य पूर्णां सुशिक्षां विद्यां चादायाथ विवाहं कृत्वा प्रजासुखं चार्जयेयुः ॥

अर्थात् जिस प्रकार वैश्यलोग धर्म धारण करके धनोपार्जन करते हैं उसी प्रकार कन्याओं को चाहिये कि विवाह से पहले शुभ ब्रह्मचर्य व्रत धारण करके विदुषी अध्यापिकाओं को प्राप्त करके सुशिक्षा और विद्या संचय करके विवाह करें।

ऋ० १।१।५ के भाष्य में ऋषि दयानन्द ने लिखा :—

"या कन्याः यावच्चतुर्विंशति वर्षमायुस्तावद् ब्रह्म ‹ण जितेन्द्रियतया साङ्गोपाङ्ग वेद विद्या अधीयते ताः मनुष्य जाति भूषिका भवन्ति।"

अर्थात् जो कन्या लोग २४ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य सेवन और जितेन्द्रिय होकर अङ्गउपाङ्ग सहित वेद विद्याओं को पढ़ती है वे सब संसारस्थ मनुष्यजाति की शोभा करने वाली होती हैं।

ऋ० १।१।६।५ के भाष्य में ऋषि दयानन्द ने लिखा :—

यथा ब्रह्मचर्यं कृत्वा प्राप्तयौवनावस्था विदुषी कुमारी स्वप्रियं पतिं प्राप्य सततं सेवते यथाप्र कृत ब्रह्मचर्यो युवा स्वाभीष्टा स्त्रियं प्राप्यानन्दति तथैव सभा सेनापती सदा भवेताम् ॥

यहां भी कन्या के ब्रह्मचर्य का स्पष्ट विधान है। यदि ऋषि के वचन इतने स्पष्ट होते हुये भी किसी मूढ़मति या हठ धर्मी को सन्देह हो कि ऋषि द्वाराप्रयुक्त ब्रह्मचर्य शब्द से द्विजत्वसूचक उपनयन का स्पष्ट ग्रहण है या नहीं तो उसे ऋषि दयानन्द के यजुर्वेद के १४।१४ के भाष्य में दिये ये शब्द ध्यान से पढ़ने चाहियें कि

"यदि मनुष्या अस्यां सृष्टौ ब्रह्मचर्यादिना कुमारान् कुमारीश्च द्विजान् सम्पादयेयु स्तर्हि ते सद्यो विद्वांसः स्युः॥"

यजुर्वेद भाष्य पृ० ६३६

भाषानुवाद—यदि इस सृष्टि में मनुष्य ब्रह्मचर्य आदि के सेवन से कन्या पुत्रों को द्विज करें तो वे सब शीघ्र विद्वान् हो जाएं ॥

इस प्रकार ऋषि दयानन्द ने कन्याओं का उपनयन तथा वेदाध्ययन स्पष्ट माना है तथा पं० दीनानाथ जी का इस विषयक लेख सर्वथा अयथार्थ है इसमे किसी को सन्देह नहीं हो सकता। विवाह संस्कार में ऋषि ने जो यह लिखा कि वधू दुपट्टे को यज्ञोपवीतवत् धारण करे इससे यह सिद्ध नहीं होता कि वे कन्याओं के यज्ञोपवीत को न मानते थे जैसे कि उपयुक्त वचनों से सर्वथा स्पष्ट है। सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम संस्करण मे लेखक पण्डितों ने बहुत सी बातें ऋषि दयानन्द के भाव के विरुद्ध मिला दी थी जिसके कारण उन्हें द्वितीय संस्करण शुद्ध रूप में निकालना पड़ा उन मिलावटों मे से ही वे वाक्य भी है कन्या लोगों को यज्ञोपवीत संस्कार कभी न करना चाहिये। (क्रमशः)

कर्तव्य वेला में उद्बोधन

(कविता—क्रान्तिकारी राष्ट्रकवि पं० गिरीशचन्द्र जी राजस्थान भूषण, सुजानगढ़)

[गतांक से आगे]

खेत खाते, अन्न देखो ?
प्यास मरते, आज जलधर !
बन गए हैं, रत्न मंडित
स्वर्ण-मेरु, आज मरुधर !!!

टीस उठती, है हृदय में;
देख शासन, का खिलौना !
आज शासन, हो रहा है,
घूँस खोरी, का घिनौना !!

छिप रहे हैं, आज क्षत्री;
है करुण, इनकी कहानी !
बन गई "कारा" इन्हीं को;
स्वयं इनकी, राजधानी !!

मिट रही है, आज भाषा,
मिट रहा है, भेष देखो ?
आर्य्यों की, संस्कृति का;
हो रहा है, शेष देखो ?

बाज चिड़िया बन गया है;
बाघनी है, आज बिल्ली !
पाण्डवों की महा-नगरी;
"इन्द्रप्रस्था" आज दिल्ली !!

छत्र, चामर; योग्य नेता
आज सारे, खो गये हैं !
प्रजा-पालक, देश रक्षक;
सुरा पीकर, सो गए हैं !!

शूल, सिंहासन बने हैं;
कर रहे शासन अधर्मी !
प्रजा पीड़न, हो रहा है
राज करते, हैं अधर्मी !!

संस्कृत के, स्तूप सारे;
आज खंडहर, हो रहे हैं !
याद कर कर, पूर्व युग की;
आज पत्थर, रो रहे हैं !!

न्याय नाटक, हो रहे है;
खेलते, अन्याय कारी !
न्यायकारी नर पिशाचों
से, दुखी है प्रजा सारी !!

ग्रन्थ-गौरव, गिर गया है;
वीर गाथा, है बिरानी !
भस्म वैभव, हो गया है;
मर गई है, "हिन्दुस्तानी" !

बदलती, आती दिनों दिन,
राष्ट्र की हा ! "रूप—रेखा" ?
जहाँ देखा, पतन देखा,
जहाँ देखा, कूप देखा ??

पढ रहे, भाषा विदेशी,
वैदिकों के, वश देखो।
मोतियों को, छोड़ चुगते,
कंकरों को, "हँस" देखो।

बन गई, काशी बनारस,
मर गए "पण्डे पुजारी" !!
राष्ट्र भाषा, रो रही है,
पण्डितों की प्राण प्यारी !!

गढ़ रहे हैं, आज "गुरुकुल"
"मन्दिरों" का, ध्वंस देखो।
रो रहे हैं, "कृष्ण" देखो।
हँस रहे हैं, "कंस" देखो ?

आर्य जगत्

शुद्धि समाचार

हुबली में यवनों की शुद्धिः—

आर्य समाज हुबली जिला धारवाड़ ने बुडण साहेब कासिम साहेब काजीनामक जन्मतः मुसलमान नौजवान को वैदिक धर्म की दीक्षा देकर आर्य समाज में सम्मिलित किया।

गजेन्द्र गढ़ नामक स्थान में आर्य समाज हुबली की ओर से २२ लोगों के (स्त्री पुरुष बाल बच्चों सहित) आर्य धर्म में लिया गया।

ये मुसलमान स्त्रियां तथा उन की सन्तानें थीं।

काली कट में शुद्धिः—

श्रीयुत टी० नारायचन्द्र, ठा० बुधसिंह जी, और श्रीमती सुगन्धिबाई जी आर्योपदेशिका ने काली कट तथा तत्समीपस्थ चेवन्कुम् ग्राम में २९ शुद्धियां की। इन में से ४ मुसलमान और २५ ईसाई थे।

प्रशंसनीय दान

आर्य समाज शिवगंज के सदस्य श्रीयुत बनवारीलाल जी पचेड़ी वाला ने आर्य समाज मन्दिर के निर्माण के लिये १० हजार का दान दिया है जिसके लिये आर्य समाज उन्हें हार्दिक धन्यवाद देती है। मन्त्री आर्य समाज शिवगंज।

———

"शुगर मिल मंसूर पुर के मालिक दान-वीर श्री कुँअर राजेन्द्र लाल जी ने गुरुकुल घासीपुरा मुजफ्फर नगर को ४०००) रुपये का भवन-निर्माणार्थ दान दिया है। एतदर्थ गुरुकुल-सभा आप को शतशः धन्यवाद देती है।"

परशुराम
मुख्याधिष्ठाता

दक्षिण में एक आदर्श अन्तर्जातीय आर्य विवाह

मैं बड़ी प्रसन्नता के साथ आर्य जनता के सम्मुख यह समाचार प्रस्तुत करना चाहता हूँ कि इसी अप्रैल २४ के दिन उत्तर मलाबार के तलचेरी नगर में मेरे ज्येष्ठ पुत्र चि० विजयेन्द्र का शुभ विवाह, तलचेरी के लब्ध-प्रतिष्ठ कैप्टेन राघवन् टायले की ज्येष्ठ पुत्री चि० जया के साथ वैदिक पद्धति के अनुसार सम्पन्न हुआ। बेंगलूर आर्यसमाज के श्री पं० सुधाकर जी ने वैदिक रीति से विवाह कराके प्रधान मन्त्रों की व्याख्या अंग्रेजी में करके सुनाई, जिसका अच्छा प्रभाव उपस्थित जनता पर पड़ा।

इस सम्बन्ध में दो अनुकरणीय बातें हैं। एक तो यह है कि यह विवाह अन्तर्जातीय है, वर्तमान जात-पात के बन्धन को तोड़ कर हुआ है और दूसरी यह कि यह अन्तः प्रान्तीय भी है।

इस विवाह की सारी तलचेरी में धूम रही और सुसंस्कृत और सभ्य नागरिकों में आर्य-समाज का अच्छा प्रचार भी हुआ। मैं चाहता

हूँ कि हमारे आर्य बन्धु इसी प्रकार जन्मगत जातिपद्धति और प्रान्तीयता के बन्धन से मुक्त हो कर अपने पुत्र पुत्रियों के विवाह किया करें, ताकि सारे आर्यावर्त मे एक जातीयता और एक राष्ट्रीयता का प्रचार हो कर आर्य धर्म सुचारु रूप से सर्वत्र फैल सके।

अप्रैल ३०को सायंकाल इसी सम्बन्ध मे बेंगलूर नगरस्थ आर्यसमाज श्रद्धानन्द भवन मे स्वागत समारम्भ भी हुआ। आर्य जनता अच्छी संख्या मे उपस्थित थी। श्री पं० विश्वामित्र जी और श्री० प० भास्करपन्त सुब्बनरसिंह शास्त्री जी के 'वैदिक विवाह' विषय पर भाषण भी हुए, जिनका प्रभाव अच्छा रहा। इसी समय श्री प० विश्वमित्र जी की कन्नड़ मे लिखी हुई वदिक-संस्कार विषयक पुस्तिका की प्रतियॉ जनता मे वितरित की गयी।

इसी दिन प्रातः काल मेरे द्वितीय पुत्र चि० अभय कुमार का उपनयन सस्कार भी वैदिक पद्धति से किया गया। श्री० पं० विश्वमित्र जी ने वैदिक उपनयन पद्धति पर प्रकाश डालते हुए प्रभावजनक भाषण दिया।

आपका विनीत, आर्यमूर्ति

हमारे चिर परिचित मित्र

[श्रीयुत आर्यमूर्तिजी दक्षिण भारत के एक अत्यन्त उत्साही दृढ़ आर्य सज्जन हैं। उन्होंने अपने सुपुत्र का अन्तर्जातीय तथा अन्तःप्रातीय विवाह करा कर आर्यो के सम्मुख एक उत्तम आदर्श रक्खा है जिसके लिए हम उनका हार्दिक अभिनन्दन करते है। हम नवदम्पती को इस मगलोत्सव के लिए बधाई देते है और उनकी दीर्घआयु, स्वास्थ्य, समृद्धि तथा कीर्ति के लिए भगवान से प्रार्थना करते है और अन्य आर्यों से भी अनुरोध करते हैं कि वे भी साहस करके जाति बन्धन की शृङ्खला को तोड़ कर वैदिक आदर्श पर चले—सम्पादक सा० दे०]

परोपकारिणी सभा उपसमिति

निश्चय सं० ६

श्री पं० गंगाप्रसादजी उपाध्याय का ता० ६-८-४३ का पत्र संस्कार विधि के शोधने बाबत विषय पेश हुआ निश्चय हुआ कि निम्न लिखित पण्डितों की उपसभा बनाई जावे और वह इस पत्र के विषय मे अपनी राय दें कि क्या किया जावे। उनका खर्चा सभा दे और उनकी जो राय आवे वह सभा मे पेश हो-जहा तक हो सके तीन महीने मे यह उपसभा रिपोर्ट करे।

(१) पंडित भगवद्दत्तजी
(२) पं० जयदेवजी शर्मा
(३) प० ब्रह्मदत्तजी जिज्ञासु

हरविलास शारदा
मन्त्री परोपकारिणी सभा

[खेद है कि यह पत्र प्रेस की भूल से न छप सका था। अब छापा जा रहा है। इस उपसमिति के सदस्य विद्वानों का उत्तर प्राप्त होने पर उसे हम यथासम्भव 'सार्वदेशिक' मे प्रकाशित कर देंगे—सम्पादक]

आर्य युवक सम्मेलन

भारत वर्षीय आर्य कुमार परिषद् के तत्वावधान मे भारत भर के आर्य युवकों की बैठक माननीय घनश्याम सिंह जी गुप्त स्पीकर सी० पी० असेम्बली की अध्यक्षता मे २४-२५ मई को

मुरादाबाद में होगी। इस अधिवेशन में युवकों के भावी कार्यक्रम एवं उनके संगठन को मजबूत बनाने के विषय में सोचा जावेगा। यह अधिवेशन युवकों का रचनात्मक कार्यक्रम निश्चित करने के लिये होगा अतः इस में सभी आर्य कुमार सभाओं व सम्बद्ध अन्य सभाओं को भाग लेना चाहिये। इस अधिवेशन का कार्यक्रम निम्न प्रकार होगा।

ता० २४ मई शनिवार

प्रातः ८ बजे से ११ बजे तक विषय निर्वाचनी समिति।

मध्याह्न-३ बजे से ६ बजे तक विषय समिति निर्वाचनी।

ता० २५ मई रविवार

प्रातः-८ से ११ तक खुला अधिवेशन

मध्याह्न-१ से ३॥ तक विषय निर्वाचनी सभा।

सायं—५ से ६ तक खुला अधिवेशन

मन्त्री,
भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद्
मुरादाबाद।

आर्य कुमार और साक्षरता प्रचारः—

१५ मई के लगभग प्रायः सर्वत्र विद्यालयों मे ग्रीष्मावकाश प्रारम्भ हो रहे हैं। समस्त शिक्षित आर्यकुमारों और आर्य कुमारियों का कर्तव्य है कि अपने अवकाश के दिनों के अधिक समय को निरक्षरता के निवारण और ग्रामीण अशिक्षित जनता में साक्षरता के प्रचार म लगाएं। प्रत्येक आर्य कुमार कुमारी यदि कम से कम ५ अशिक्षित नर नारियों को भी साक्षर बनाने का निश्चय करे तो निरक्षरता के निवारण मे अच्छी सहायता मिल सकती है। इसके साथ ही ग्रामीण जनता का ध्यान, सफाई तथा स्वास्थ्य के नियमों की ओर आकर्षित करने का प्रशंसनीय प्रयत्न किया जाना चाहिये। तम्बाकू तथा मद्य पान निषेधादि का भी प्रचार करना चाहिये।

धर्म देव विद्यावाचस्पति
का० प्रधान अ० भा० आर्य कुमार परिषद्
(बलिदान भवन देहली)

समाजों को सरक्यूलर

श्री मन्त्री जी आर्य समाज

श्रीमान जी नमस्ते।

मुझे पूर्ण आशा है कि गत २३।३।४७ को समस्त आर्य समाजों में स्थापना दिवस समारोह मनाया गया होगा और उसदिन इस सभा की वेद प्रचार निधि के लिये धन की अपील की गई होगी। जिस गति से समाजों से इस निधि के लिये धन आता रहा है वह सन्तोष जनक नहीं कही जा सकती। समस्त आर्य समाजो को विदित है कि प्रान्तीय सभाओं की तरह इस सभा की स्थिर आय का कोई साधन नहीं है। इस कमी की पूर्ति के लिये कई वर्ष हुए सार्वदेशिक सभा ने प्रान्तीय सभा के परामर्श से स्थापना दिवस की आय को अपनी स्थिर आय का साधन बनाया था। अतः प्रत्येक समाज के लिये आवश्यक है कि वह अपना भाग भेजकर इस निश्चय को सफल बनाने में योग दें। सभा ने निश्चय किया हुआ है कि आर्य समाज का, प्रत्येक सभासद् स्वयं तथा अपने परिवार के

प्रत्येक सदस्य का कम से कम ।) के हिसाब से भाग दे। अत इस भाग को देने तथा सग्रह करने मे कोई कठिनाई नहीं उपस्थित हो सकती है। केवल मात्र आर्य समाजों को इस ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

सभा की जिम्मेदारिया दिन पर दिन बढ रही है। उनको सफलता पूर्वक निबाहन के लिये धन तथा स्थिर आय की आवश्यकता भी समानान्तर रूप से बढ रही है। उडीसा आदि प्रान्तों में जहा अबतक नियमित रूप से प्रचार नहीं हुआ है, प्रचार आरम्भ कर दिया गया है। आसाम आदि प्रान्त सभा की विचार कोटि में हैं। यदि सभा की स्थिर आय आयोजन सफल सिद्ध नहीं होता है तो विवश होकर इन सबको या इनमे से किसी को छोड़ना पड़ जायगा और मेरे ख्याल मे आय समाज के लिय हितकर न होगा।

जिन आर्य समाजों ने स्थापना दिवस के अवसर पर धन की अपील न की हो वे अब अपन कोष से अथवा सग्रह करक धन भिजवाए। उनको यह नोट कर लेना चाहिये कि उन्हें सभा की इस अपील मे अनिवार्य रूप से अपना योग देना है। इस धन को प्रान्तीय सभाओ को भेजे जाने की आवश्यकता नहीं है। यह धन सीधा सार्वदेशिक सभा में आना चाहिये। जिन समाजों ने अपना अपना भाग अपनी प्रान्तीय सभाओं को भेज दिया हो तो उन्हें उचित है कि वह अपने धन की राशि सहित तत्काल मुझे सूचित करें। वर्ष मे ।) देदेना किसी अल्प से अल्प आय वाले सभासद् के लिए भी कठिन नहीं है और जिस देश मे ४०-५० लाख आर्य हों उसमे यदि पाचवा भाग ।) वार्षिक देदें तो कई लाख रुपये हो सकते हैं। आवश्यकता केवल इस बात की है कि आय भाई बहिन अपने कर्त्तव्य को समझें और इस बात का अनुमान लगा लें कि एक पुरुष को ।) देने से सभा का कितना भारा काम हो सकता है और उसके ।) न देने से सभा को कितनो हानि हो सकती है।

गगा प्रसाद उपाध्याय मन्त्री
सार्वदेशिक आय प्रतिनिधि सभा, देहली

साहित्य समीक्षा

"कांग्रेस, लीग और हिन्दू महासभा"

लेखक—श्री विजयकुमार जी पुजारी। पुस्तक मिलने का पता—पं० विश्वेश्वर दयालु, सरस्वती भण्डार, शाहदरा देहली। मूल्य ३)।

उपयुक्त पुस्तक में जैसे कि इसके नाम से ही स्पष्ट है कांग्रेस और मुस्लिम लीग के राजनैतिक विचारों तथा कार्यों की युक्तियुक्त आलोचना सभ्य भाषा मे करते हुए हिन्दूमहासभा के दृष्टि कोण को बड़ी उत्तमता से दरशाया गया है। हिन्दू महासभा के अनेक समर्थक कांग्रेस की आलोचना में बड़ी असंयत और अशिष्ट भाषा का प्रयोग भाषणों तथा लेखो मे करते पाये जाते हैं पर इस पुस्तक के लेखक ने प्रत्येक विषय पर सप्रमाण तथा युक्तियुक्त विचार प्रकट करते हुए कांग्रेसी नेताओं के विचारों की आलोचना भी संयत भाषा मे यहां तक लिखा है कि 'हिन्दू जनता को चाहिये कि वह स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिये किये जाने वाले संघर्ष में कांग्रेस का पूरा साथ दे, पर साथ ही हिन्दू महासभा को सुदृढ़ बनाने का ख्याल रक्खे। (पृ० २४६) हिन्दू इस बात को भली-भांति समझें कि उनका कोई जातीय, सुदृढ़ संगठन न होने से ही मुस्लिम लीग ने जोर पकड़ा है। हिदुओं का अपना सुदृढ संगठन होता, तो मुस्लिम लीग को 'खुला संघर्ष' का प्रस्ताव पास करने की हिम्मत न होती।" (पृ० २५०)

"हिन्दू समाज और राष्ट्रधर्म" शीर्षक अध्याय हमें अत्यधिक मननीय प्रतीत हुआ जिसमे सुयोग्य लेखक ने ठीक ही लिखा है कि "जाति भेद से हिंदुओं की शक्ति बिखर गई। जाति भेद से जाति-जाति में सहानुभूति तथा समवेदना की भावना कम हो गई।......"आज हिन्दू समाज स्पर्श बन्दी, रोटी बन्दी, बेटी बन्दी तथा व्यवसाय बन्दी विद्यमान है। इन चार समाज घातक रूढ़ियों के होते हुए हिन्दू समाज संगठित नहीं हो सकता। इन रूढ़ियों को मलियामेट करना ही होगा।" (पृ० २३७) "जन्म मूलक उच्चनीच की कल्पनाओं का मिटा देना होगा और समानता के आधार पर हिन्दू समाज के संगठन को मजबूत करना होगा। हिन्दू समाज 'संगच्छध्वं संवदध्वम ...समानो मन्त्रः समितिः समानी ...समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।' समानी प्रपा सह वा अन्नभागः" इत्यादि वेदाज्ञा को कार्य रूप मे परिणत करे। "हमारा शुद्धि आन्दोलन तब तक सफल नहीं हो सकता, जब तक कि हिन्दू धर्म को स्वीकार करने वाले विधर्मी स्त्री पुरुषो से हिन्दू लोग खुले दिलसे रोटी बेटी व्यवहार न करेंगे।" (पृ० २४०) शुद्धि और संगठन हमारा राष्ट्र धर्म है। सब जातियां दूसरे के यहां खान पान कर सकें। अन्तर्जातीय विवाह की प्रथा प्रचलित हो।...... योग्यता हो तो भंगी भी कथावाचक बन सके और होटल या भोजनालयका धन्धा कर सके।... शुद्धि और संगठन का अर्थ है वर्तमान हिन्दू समाज व्यवस्था मे आमूल क्रान्ति। यह क्रान्ति हिन्दू समाज को करनी होगी।" (पृ० २४४) यह पुस्तक राजनैतिक दृष्टि से भी बड़ी उपयोगी है। भाषा और भाव दोनों

दृष्टियों से प्रशंसनीय और मननीय है। कांग्रेस के कार्यकर्ता और नेता भी इससे लाभ उठा सकते हैं। पृ० ७५ में गंगे च यमुने चैव' इस श्लोक को मन्त्र लिखना अशुद्ध है।

वीर पंजाबी—

लेखक श्री पं भीमसेन जी विद्यालङ्कार
प्रकाशकः—
राजपाल एण्ड संस, अनार कली, लाहौर
मूल्य ४)

प० भीमसेन जी विद्यालङ्कार गुरुकुल विश्वविद्यालय काङ्गड़ी के सुयोग्य स्नातक और आर्यभाषा के सिद्ध हस्त लेखक हैं। आपने प्रस्तुत पुस्तक में पंजाब की ऐतिहासिक रूप रेखा, असाम्प्रदायिक भौगोलिक, राजनैतिक दृष्टि से लिखी है। जो अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वैदिक काल से अब तक के पंजाब के इतिहास की रूप रेखा इस में सात धाराओं के रूप मे वर्णित की है। भाषा अत्यन्त परिमार्जित तथा प्रभावोत्पादक है। परिश्रम तथा अनुसंधान भी अत्यन्त प्रशंसनीय है। पुस्तक सब प्रकार से उपादेय है। तक्षशिला, दस गुरुओं की शिक्षा और कार्य, वीर हकीकत का बलिदान, महाराज रणजीतसिंह का आदर्श इत्यादि पर बड़ा उत्तम प्रकाश डाला गया है।

कृष्णकाव्य—रचयिता पं राधाकृष्ण जी त्रिपाठी (कृष्ण) मुरादाबाद। प्रकाशक-पं० सत्यदेव जी उपाध्याय सरस्वती प्रेस, मुरादाबाद मूल्य १।)

इस पुस्तक में पं० राधाकृष्णजी त्रिपाठी की जिन्होंने अपना उपनाम 'कृष्ण' रखा हुआ है अधिकतर ईश्वरभक्ति विषयक कृतियों का संग्रह है। जनता में भक्तिभाव को उपजाने की दृष्टि से ये भजनादि अच्छे उपयोगी हैं। पौराणिक कीर्तनों से जिस अन्धविश्वास की वृद्धि होती तथा अनर्थ उत्पन्न होते हैं उनको दूर करके ईश्वर में सच्चा प्रेम तथा भक्तिभाव भरने के लिए इनका उपयोग किया जा सकता है जिस की वस्तुतः आर्यसमाज में भी बड़ी आवश्यकता है यद्यपि जैसे कि भक्त लेखक महोदय ने भूमिका में स्वयं लिखा है कि 'इसी भक्तिभाव को लक्ष्य में रखकर यद्यपि सर्वथा अयोग्य होते हुए भी, ईश्वर की प्रेरणा से और निस्वार्थ भाव से निष्काम ईश्वर स्तुति प्रार्थना को छन्दोबद्ध करने का दुस्साहस किया है। इसमे निस्सन्देह अनेक त्रुटियां और अशुद्धियां होंगी अतएव विद्वान भक्तों और कवियो से नम्र निवेदन है कि त्रुटियों को सुधार कर मुझे सूचित करने की कृपा करें।" इसमें छन्द आदि की दृष्टि से कई त्रुटियां रह गई हैं जिन्हे आशा है दूसरे संस्करण मे अच्छे भक्त कवि और गायकों की सहायता से सुधार लिया जायगा। लेखक की भक्तिभावना अत्यन्त प्रशंसनीय है और हम चाहते हैं कि समस्त आर्य इस प्रकार के संग्रहों से लाभ उठा कर उस भावना को अपने अन्दर भरने का यत्न करें। वैदिक संध्या के मन्त्रों के भजनरूप अनुवाद के अतिरिक्त वैदिकधर्म और हिन्दी के महत्व पर भी इसमें कई अच्छे भजन हैं।

नौआखाली का भीषण हत्याकाण्ड-लेखक देशभक्त कुंवर चांदकरणजी शारदा प्रधान राजस्थान आर्य प्रतिनिधिसभा, अजमेर।

इसमें कुंवर चाँदकरणजी शारदा ने गत वर्ष सार्वदेशिक सभा के उप प्रधान और राजस्थान प्रतिनिधि सभा के प्रधान के रूप में पूर्वी बंगाल

का दौरा करके अपनी आंखों देखी घटनाओं का रोमाञ्चकारी वर्णन किया है, जो अत्यन्त हृदयद्रावक है। इसमें हिन्दू महिलाओं पर विधर्मियों द्वारा किए गये बाधित विवाह, बलात्कार तथा गौमांस खिला व कलमा पढ़ा कर जबर्दस्ती मत परिवर्तन, अमानुषिक बर्बरतापूर्ण अत्याचारादि का ऐसा हृदयद्रावक वर्णन प्रायः साक्षियोंके अपने शब्दों में दिया गया है जिससे पत्थर का भी दिल पसीज जाय। बंगाल की सरकार तथा मुस्लिमलीगियों की ओर से पूर्वी बंगाल के मुसलमान गुण्डों द्वारा (जिन में से बहुतों के नाम भी इस वृत्तान्त में विश्वसनीय सूत्र के आधार पर दे दिये गये हैं) किये गये अत्याचारों को तुच्छ रूप में दिखाने का प्रयत्न किया जा रहा है। इस वृत्तान्त से उनका वास्तविक, भयङ्कर, अत्यन्त निन्दनीय रूप स्पष्टतया ज्ञात होता है। यह वृत्तान्त प्रत्येक समाज और देशप्रेमी के लिए संग्रहणीय है ताकि वास्तविक तथ्य को दृष्टि में रखकर भविष्य के कार्यक्रम का निश्चय किया जा सके।

सिन्ध में सत्यार्थ प्रकाश:—लेखक श्री जीवानन्द जी शर्मा प्रकाशक—आर्य समाज सुजानगढ़ (बीकानेर) मूल्य ।।)

इस लगभग ५० पृष्ठ की पुस्तिका में लेखक महोदय ने सिन्ध में सत्यार्थ प्रकाश विषयक आन्दोलन का इतिहास 'सार्वदेशिक' तथा अन्य पत्रों में प्रकाशित सामग्री के आधार पर संक्षेप में दिया है। साथ ही श्री महात्मा नारायण स्वामी जी, राजगुरु धुरेन्द्र जी शास्त्री, कुंवर चांदकरण जी शारदा, स्वामी अभेदानन्द जी आदि नेताओं के चित्र भी दिये गये हैं। पुस्तक सर्व साधारण के लिये उपयोगी है। किन्तु हमारी सम्मति में ऐसे प्रकाशन प्रामाणिक रूप से सार्वदेशिक सभा जैसी संस्थाओं को ही करने चाहिये अन्य व्यक्तियों वा आर्य समाजों को नहीं। इसके संग्रह में लेखक ने प्रशंसनीय परिश्रम किया है किन्तु कई पर्याप्त गम्भीर त्रुटियां रह गई हैं। उदाहरणार्थ प्रथम पृष्ठ पर ही 'सिन्ध सरकार की प्रथम विज्ञप्ति' का उल्लेख करके लिखा गया है कि "इस पर आर्य जगत में इसके विरुद्ध आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। समाचार पत्रों ने विरोधी लेख लिखे।" वस्तुतः सार्वदेशिक सभा की ओर से २६-६-४३ को सिन्ध सरकार की विज्ञप्ति निकलते ही जो तार सिन्ध के गवर्नर तथा प्रधान मन्त्री आदि को इस सम्बन्ध में दिये उनका उल्लेख करना आवश्यक था। फरवरी १९४४ में देहली में जो अखिल भारतीय आर्य महा सम्मेलन हुआ था उसको अन्तर्राष्ट्रीय आर्यन् कान्फ्रेन्स का नाम दिया गया है जो कि ठीक नहीं। तथापि लेखक का परिश्रम अत्यन्त प्रशंसनीय है।

ध० दे.

—*—

सम्पादकीय

२ मई को जब महात्मा गान्धी जी भङ्गी बस्ती में प्रार्थना के लिये उपस्थित हुए और नित्य नियम की तरह कुरान की कुछ आयतों का भी पाठ होने लगा तो किसी सज्जन ने इस पर आक्षेप किया जिसे पोलिस ने उसी समय पकड़ लिया। महात्मा जी ने तब प्रार्थना बन्द कर दी परन्तु अपने भाषण में ऐसी संकुचित हृदयता पर उन्होंने बड़ा दुःख प्रकाशित किया और कहा मेरी समझ मे नहीं आता कि कुछ हिन्दू प्रार्थना में कुरान की आयतें पढ़ने पर क्यों आक्षेप करते हैं? इन वाक्यों में ईश्वर (खुदा) की स्तुति और प्रार्थना की गई है। इस से हिन्दू धर्म को क्या हानि पहुंच सकती है?

इस प्रसंग में उन्होंने और जो मुख्य बात कही वह ११ मई के अंग्रेजी 'हरिजन' में इन शब्दों में दी गई है:—

"He (Gandhi ji) had been told by a friend that a prayer with the same meaning was also found in the Yajurveda. Those who had studied the Hindu Scriptures knew that among the 108 Upanishads there was one called the Allopanishad. Did not the man who wrote it knew his religion?" (Harijan 11-5-47)

अर्थात् मुझे एक मित्र ने बताया है कि उसी आशय की (जो कुरान की इस आयत में है) एक प्रार्थना यजुर्वेद में भी पाई जाती है। जिन्होने हिन्दू धर्म ग्रन्थों को पढ़ा है वे जानते हैं कि १०८ उपनिषदों में से एक अल्लोपनिषत् भी है क्या जिस व्यक्ति ने उसे लिखा उसे अपने धर्म का ज्ञान न था?

महात्मा जी के इस प्रवचन में जिस प्रकार अल्लोपनिषत् का निर्देश किया गया है उससे पर्याप्त भ्रम फैलने की सम्भावना है अतः इस पर कुछ प्रकाश डालना हमें आवश्यक प्रतीत होता है। वास्तविक बात यह है कि ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय छान्दोग्य, बृहदारण्यक और श्वेताश्वतर उपनिषद् ये ११ ऋषिकृत उपनिषदें हैं इनके अतिरिक्त सौ के लगभग नृसिंह तापनी, राम तापनी, गोपाल तापनी आदि साम्प्रदायिक ग्रन्थ स्वार्थी लोगों ने उपनिषदों के नाम पर घड़ लिये जिनमें से एक अल्लोपनिषत् भी है। इसके विषय में महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश के चतुर्दश समुल्लास के अन्त में ठीक ही लिखा है कि "अकबर के समय यह किसी संस्कृत और अरबी के पढ़े हुए ने बनाई है। यदि इसका अर्थ देखा जाता है तो यह कृत्रिम, अयुक्त, वेद और व्याकरण रीति से विरुद्ध है। जैसी यह

उपनिषद् बनाई है वैसी बहुत सी उपनिषदें मतमतान्तर वाले पक्ष-पातियों ने बना ली हैं जैसा कि स्वरोपनिषद् नृसिंह तापनी, राम तापनी, गोपाल तापनी आदि बहुत सी बना ली हैं। देखिये इस अल्लोपनिषत् का नमूना 'अस्माल्लां इल्ले मित्रा वरुणा दिव्यानि धत्ते। इल्लल्ले वरुणो राजा पुनर्दुदुः। हया मित्रो इल्ला इल्लल्ले इल्ला वरुणो मित्रस्तेजस्काम। अल्लो ज्येष्ठं श्रेष्ठं परमं पूर्णं ब्रह्माणम् अल्लाम्। अल्लो रसूल महामदरकबरस्य अल्लो अल्लाम्।

इल्ला कबर इल्ला कबर इल्ला इल्लल्लेति इल्लल्ला। ओम अल्ला इल्लल्ला अनादि स्वरूपाय अथर्वणा श्यामा हु ह्रीम् अल्लो रसूल महमदरकबरस्य अल्लो अल्लाम इल्लल्लेति इल्लल्ला।।'

इस रचना से जिसमे अरबी और संस्कृत का भद्दा असङ्गत सा मिश्रण है यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि किसी ने मुसलमानी मत को भी वेद और उपनिषद् के अनुकूल दिखाकर आर्य हिन्दुओं को फँसाने के लिये इस कृत्रिम ग्रन्थ की उपनिषद् के नाम पर रचना कर डाली। महात्मा गांधीजी का उसे प्रामाणिक उपनिषद् जैसा मान कर प्रवचन में उल्लेख कर देना सर्वथा भ्रमजनक है। ऐसे विषयों में महात्मा जी को अधिक सावधान होने की आवश्यकता है क्योंकि दुर्भाग्यवश उनका वेदादि सत्यशास्त्रों का ज्ञान अत्यन्त सीमित है जैसा कि वे स्वयं कई बार स्पष्ट स्वीकार कर चुके हैं।

प्रार्थना में क़ुरान की आयतों का पाठ:—

दूसरा विषय जिस पर हमें इस टिप्पणी में विचार करना है वह यह है कि एक हिन्दू मन्दिर में क़ुरान की आयतों का पाठ कहाँ तक उचित है? महात्मा गान्धी सब मतों की समानता में विश्वास रखते हैं अतः वे वेद, उपनिषद्, गीता के वचनों के साथ प्रार्थना के समय ज़िन्द अवस्था तथा क़ुरान की आयतों का भी पाठ करवाते हैं। उन्होंने तो यहां तक कहा है कि "मैं एक सनातनी हिन्दू होने का दावा करता हूँ और चूंकि हिन्दू मजहब और दूसरे सब मजहबों का निचोड़ मजहबी रवादारी या धार्मिक सहिष्णुता है, इस लिये मेरा दावा है कि अगर मैं एक अच्छा हिन्दू हूँ तो एक अच्छा मुसलमान और एक अच्छा ईसाई भी हूँ अपने मजहब को दूसरे मजहबों से बड़ा मानना सच्ची मजहबी भावना के खिलाफ है। अहिंसा के लिये नम्रता जरूरी है। क्या हिन्दू धर्म शास्त्रों में भगवान् के हजारों नाम नहीं बतलाये गये हैं? रहीम भी उनमें से एक क्यों न हो? कलमे में तो सिर्फ भगवान् की तारीफ की गई है और मोहम्मद साहिब को उनका पैगम्बर माना गया है। जिस तरह मैं बुद्ध, ईसा और जरदुश्त को मानता हूँ उसी तरह मुझे खुदा की तारीफ करने और मोहम्मद साहब को पैगम्बर मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं होती।" ("हरिजन सेवक" ११ मई सन् १९४७) हम महात्मा जी के इन विचारों से सहमत नहीं हैं। हम यदि वैदिक धर्म को युक्तियुक्त, पक्षपात रहित तथा सार्वभौम होने के कारण सर्वोत्तम मानते हैं तो इसे सच्ची धार्मिक भावना के विरुद्ध कैसे कहा जा सकता है? धार्मिक सहिष्णुता का यह अर्थ है कि दूसरे मत वालों से भी हमारा द्वेष न हो और उनकी बातों को सुन कर हम उन पर विचार करें और

युक्तियों से ही उ. के विचारों को बदलने का प्रयत्न करें न कि जबर्दस्ती व तलवार के बल से। किन्तु इसका अर्थ उनकी बुद्धि विरुद्ध असङ्गत बातों को मानना नहीं है। क्या महात्मा गांधी जी कह सकते हैं कि अहिंसा, ब्रह्मचर्य, दयालुता आदि का जो आदर्श आर्यों के धर्म शास्त्रों मे बतलाया गया है वही कुरान इत्यादि में भी पाया जाता है? हमें इन आदर्शों में आकाश पाताल का अन्तर प्रतीत होता है। कहां तो हमारे धर्मशास्त्रों का दूर देश और कुल में विवाह का आदेश और एक पत्नीव्रत व पतिव्रत का आदर्श और कहां मामे चाचे की पुत्री बहिनों के साथ विवाह तथा यथेच्छ तलाक आदि? कहां निराकार सर्वव्यापक न्यायकारी ईश्वर और कहां आस्मान में तख्त पर बैठने वाला शरीर धारी खुदा! ऐसी अवस्था में सब मतों को विशुद्ध सार्वभौम युक्ति सङ्गत वैदिक धर्म के समान ही मानना हमें सर्वथा अयथार्थ प्रतीत होता है। वेदादि शास्त्रों में 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति' कह कर भगवान् के हजारों गुण सूचक नाम बताये गये हैं। यदि ईश्वर के लिये रहीम आदि नाम भी कोई प्रयुक्त करे तो इस में कोई विशेष आक्षेप की बात नहीं पर कलमा तो अवश्य आक्षेप योग्य है। उन्होंने जो यह लिखा है कि 'मुझे इस का कोई कारण नहीं दिखाई देता कि मैं कलमा क्यों न पढ़ूं, अल्लाह की स्तुति क्यों न करूं और मोहम्मद साहब को अपना पैगम्बर मान कर उनकी इज्जत क्यों न करूं? हर मजहब के महान् पैगम्बरों और साधु सन्तों में मेरा विश्वास है।" ("हरिजन सेवक" २७-४-४७) कलमा का यह हिस्सा तो ठीक है कि ईश्वर एक और अनुपम है किन्तु 'मुहम्मद रसूलल्ला' अर्थात् मुहम्मद उस खुदा का दूत है ऐसा कहना और जो मुहम्मद साहेब को पैग़म्बर नहीं मानते चाहे वे कितने भी अच्छे क्यों न हो उन को दोजख (नरक) का अधिकारी बताना—जैसे कि कुरान की आयतो और हदीसों में में सब पुराने और प्रामाणिक भाष्यकारों के अनुसार बताया गया है वह सर्वथा अनुचित तथा युक्ति विरुद्ध है। मुहम्मद साहेब ने मूर्ति पूजा, मद्यपान, लड़कियों को मार डालना, जुआ चोरी आदि कई बुरी प्रथाओं को दूर करने के लिये जो प्रयत्न किया उसकी हम प्रशंसा करते हैं किन्तु उन के अपनी पुत्रवधू जैनब के साथ तथा लगभग ५५ वर्ष की आयु में ६ वर्ष की आयशा और स्वयं अधिक से अधिक ४ स्त्रियों के साथ विवाह का नियम बना ११ स्त्रियोंसे विवाह इत्यादि बातों को हम कैसे आदर्श व अनुकरणीय मान सकते हैं? कैसे उनकी महात्मा गौतम बुद्ध, ईसामसीह तथा महर्षि दयानन्द आदि के साथ तुलना की जा सकती है?

महात्माजी के इस प्रकार के लेखों और भाषणों से सर्वधारण जनता में बहुत से भ्रम फैल सकते हैं इसमें सन्देह नहीं है। यद्यपि जो कुरान की आयतें महात्माजी की प्रार्थनासभा में प्रायः पढ़ी जाती हैं (जिनका अनुवाद ख्वाजा हसन निजामी आदि के शब्दों में इस प्रकार है कि 'हर प्रकार की प्रशंसा अल्लाह ही को योग्य है जो सर्व संसार का पालन करता है और जो बड़ा कृपालु है। कर्मों के फल मिलने वाले दिन का मालिक अर्थात प्रलय के दिन का बादशाह है। हम तेरी ही

स्तुति करते हैं और तुझ से ही सहायता मांगते हैं। हमें सीधा मार्ग दिखा उन लोगों का मार्ग जिन पर तूने कृपा की और अपने प्रदान से उन को हिस्सा दिया। उनका नहीं जिन पर क्रोध किया गया अर्थात् जो बेराह हैं और उनका जो मार्ग से भटके हुए हैं (और ये दोनों समूह आज्ञा न मानने के कारण तेरे क्रोध भाजन रहते हैं।)' (देखो ख्वाजाहसन निजामी कृत हिन्दी क़ुरान पृ० २) स्वयम् विशेष आक्षेप योग्य नहीं विशेष इस लिए कि इसमें भी खुदा को प्रलय के दिन का बादशाह माना गया है और उसके क्रोध का भी वर्णन है—तथा यजुर्वेद अ० ४० के सुप्रसिद्ध मन्त्र 'अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्' अर्थात् हे ज्ञानस्वरूप परमेश्वर! हमें सब प्रकारके ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए सदा उत्तम धर्ममार्ग पर चला—के साथ कुछ समानता है तथापि यह भय अवश्य है कि लोग क़ुरान आदि की दूसरी आयतों को भी वैसे ही मान्य न समझने लग जायें जिससे बड़ी हानि की संभावना है। महात्मा गांधीजी के सब मतों की समानता पर अत्यधिक बल देने से यह सम्भावना और भी अधिक बढ़ जाती है। इसलिए हमें यह स्वीकार करते हुए भी जैसे कि महर्षि दयानन्दजी ने भी लिखा है कि सब मतों में कई सच्ची तथा अच्छी बातें हैं, हिन्दू मंदिरों में क़ुरान की आयतो को वेद, उपनिषद् गीतादि के साथ पढ़ने की प्रवृत्ति वाञ्छनीय नहीं प्रतीत होती। हां, ऐसे वाक्यों का महात्मा गांधीजी तथा अन्य प्रवचनों में तुलना के रूप से प्रयोग करें तो कोई हानि नहीं। आशा है सत्यव्रती महात्माजी इस पर यथोचित ध्यान देंगे तथा जनता में भ्रम फैलाने का कारण न बनेंगे।

म० गांधी-जिन्ना मिलन :—

७ मई को महात्मा गांधी जी २८-४५ मि० तक नई देहली में मुस्लिम लीग के प्रधान मि० जिन्ना से मिले और भारत के विभाजन तथा शान्ति स्थापना की अपील पर उनसे बातचीत की। हमें तो इस भेंट से पहले ही कोई आशा न थी और इसका परिणाम वही निकला जो इससे पहले की ऐसी मुलाकातों का होता रहा है। मि० जिन्ना टस से मस नहीं हुए और सदा की तरह पाकिस्तान की ही रट लगाते रहे। संयुक्त शान्ति की अपील के विषयमें मि० जिन्ना ने अपने वक्तव्य में अवश्य कहा कि उस अपील को क्रियात्मक रूप देने का हम अधिक से अधिक प्रयत्न करेंगे। किन्तु पंजाब, सीमा प्रान्त तथा अन्य स्थानों में जो अत्यन्त बर्बरता पूर्ण अमानुषिक अत्याचार मुस्लिम लीगी निरन्तर कर रहे हैं और स्वयं मि० जिन्ना ने सीमा प्रान्त के आन्दोलन को जारी रखने विषयक जो वक्तव्य दिया है उससे दो बातें स्पष्टतया सूचित होती हैं या तो मि० जिन्ना का अपने अनुयायियों पर कोई प्रभाव नहीं और या उनकी शान्ति विषयक अपील हृदय के अन्तस्तल से निकली हुई नहीं है। महात्मा गांधी जैसे वर्तमान जगत् के सर्वश्रेष्ठ माने जाने वाले वृद्ध महानुभाव का बार बार जिन्ना जैसे अभिमानी व्यक्ति के द्वार खटखटाना हमें न केवल निरर्थक किन्तु हानिकारक भी प्रतीत होता है। इस प्रकार की मुलाकातों ने मि० जिन्ना को आकाश पर चढ़ाकर उसकी प्रमुखता को सर्वथा अनावश्यक रूप से बढ़ा दिया है यह हमारी निश्चित धारणा है। मि० जिन्ना ने संसार के सर्वोत्तम कहे जाने वाले वृद्ध महात्मा की मुलाकात के समय

सभ्यजनोचित साधारण शिष्टाचार तक का परिचय नहीं दिया ऐसे व्यक्ति से बार बार मिल कर क्यों महात्मा गांधी जी अपने अमूल्य समय और शक्ति को नष्ट करते हैं यह हमारी समझ में नहीं आता। यदि इसी समय, शक्ति और प्रभाव को वे हिन्दुओं को पूर्णतया संगठित करके और मुसलमान की साम्प्रदायिक संकुचित मनोवृत्ति को (जो वस्तुतः कुरान और हदीसों की शिक्षाओं पर आश्रित है) निर्भयता पूर्वक बदलने में लगाएं तो अधिक लाभ हो सकता है उसके बिना महात्मा जी की शान्ति और एकता की अपील विशेष लाभदायक नहीं हो सकती।

माननीय टण्डन जी की यथार्थोक्ति—

संयुक्त प्रान्तीय धारासभा के अध्यक्ष माननीय पुरुषोत्तमदास जी टण्डन उन निर्भीक राष्ट्रीयता वादियों में से हैं जो कभी अपनी आत्मा की आवाज को नहीं दबने देते और निर्भय हो कर अपने विचारों का प्रचार करते हैं। ऐसा करते हुए वे महात्मा गाँधी जी जैसे जगद्विख्यात महापुरुष के व्यक्तित्व की तनिक परवाह भी नहीं करते। अभी गत १० मई को झाँसी से ३० मील दूर ताल भीट स्थित काँग्रेस स्वयं सेवकों के शिक्षणशिविर में भाषण करते हुए माननीय पुरुषोत्तमदास जी ने सब देशभक्तों का आह्वान किया और कहा कि "आप लोग बढ़ती हुई साम्प्रदायिकता, गुण्डे शाही एवं सामूहिक हत्या-काण्ड के विरुद्ध शस्त्र ग्रहण करें। २५ वर्ष के पुराने सिद्धान्त एवं निर्देश अब हमारा पथ प्रदर्शन नहीं कर सकते। आज पुरानी बातों के लिये कोई स्थान नहीं है। फलतः वर्तमान स्थिति में हमें अहिंसा के अपने तरीके को बदलना होगा। बिना शस्त्र ग्रहण किये हुए हम अपनी स्वाधीनता और स्थिरता की रक्षा नहीं कर सकते।" (विश्वमित्र ११-५-४७) हम ब्राह्मणों और संन्यासियों के लिये अहिंसा धर्म के पूर्ण पालन का महत्व स्वीकार करते और महात्माओं की आत्मिक शक्ति के अद्भुत प्रभाव में विश्वास रखते हैं किन्तु हम समझते हैं कि वर्तमान परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए माननीय पुरुषोत्तम दास जी ने जो कहा है वह सर्वथा सत्य है। वर्णाश्रम धर्म के प्राचीन आदर्श में विश्वास के कारण हम क्षत्रियों द्वारा अन्य साधनों के असफल होने पर हिंसा प्रयोग के विरोधी नहीं हो सकते और हम माननीय पुरुषोत्तम दास जी के इस विचार से सर्वथा सहमत हैं कि बिना शस्त्र ग्रहण किये हुए भारतीय अपनी स्वाधीनता और स्थिरता की रक्षा नहीं कर सकते। केवल अहिंसा और शान्ति के उपदेश द्वारा पंजाब, सीमाप्रान्त, पूर्वी बंगाल तथा अन्य स्थानों मे खुले तौर पर नग्न नृत्य करती हुई गुण्डा शाही का क्या मुकाबला किया जा सकता है। इसलिये कोरे आदर्श वाद का नाम ले कर यथार्थता से आंखें मूंद लेना हमें उचित नहीं प्रतीत होता। जैसे कि उपर्युक्त भाषण में माननीय टण्डन जी ने मण्डल और काँग्रेस कमेटियों से अपील की कि "वे तत्काल ही अपने यहां शारीरिक शिक्षण के लिये शिक्षण केन्द्र खोलें एवं हिंसात्मक कार्यों एवं साम्प्रदायिकता का सामना करने के लिये कम से कम ५००० नवयुवकों की सेना तय्यार करें" वैसे ही सर्वत्र कार्य करने की आवश्यकता है। आर्य वीर दल

के सर्वत्र प्रबल सगठन की आवश्यकता पर हम इसी दृष्टि से सदा बल देते रहे हैं किन्तु खेद है कि इस तरफ सब आर्यों का पर्याप्त ध्यान अभी तक नहीं गया।

सर्वथा असङ्गत और अन्यायपूर्ण माग—

१३ मई को दिल्ली प्रातीय पाकिस्तान कमेटी ने भारत-मन्त्री और वायसराय को तार देकर कहा है कि दिल्ली को मुस्लिमबहुल प्रात और मुस्लिम सस्कृति का केन्द्र होने के नाते पाकिस्तान मे शामिल किया जाये। इसके अलावा दूसरे किसी हल से हमे सन्तोष नहीं होगा।"

वैसे तो मुस्लिमलीग की पाकिस्तान या भारत के विभाजन विषयक सारी मार्गें ही हमे सर्वथा असङ्गत, अन्यायपूर्ण तथा अत्यन्त हानि कारक प्रतीत होती हैं किन्तु देहली जैसे केन्द्रीय स्थान के जहा हिन्दुओं की सख्या मुसलमानों से बहुत अधिक है पाकिस्तान में मिलाने की माग तो इतनी बेहूदा और शरारतपूर्ण है कि किसी भी निष्पक्षपात व्यक्ति को उस पर हसी आये बिना नहीं रह सकती। यदि शाहजहा द्वारा दिल्ली के बसाये जाने के कारण मुसलमान उस पर अपना अधिकार समझते हैं तो पाण्डवों द्वारा इन्द्रप्रस्थ (देहली का पुराना नाम) बसाये जाने और हजारों वर्षों तक उनके ही इस पर अधिकार के कारण हिन्दुओं का इस पर अधिकार होना चाहिए। ऐसी बेहूदी मार्गें प्रस्तुत करके मुस्लिमलीगी अपने को केवल उप-हासास्पद बनाने के अतिरिक्त दूसरों के विश्वास को बिल्कुल खो रहे हैं। जब उनके ही अपने बताये आत्म निर्णय (Self-determination) के सिद्धात के अनुसार जिसकी दुहाई मि० जिन्ना तथा मुस्लिमलीगी नेता बार २ देते रहे हैं मुस्लिमेतरों की ओर से पजाब और बगाल के विभाजन का प्रश्न प्रबल रूप से उठाया जा रहा है तब ये लीगी नेता तिलमिला रहे हैं और कहते हैं कि ऐसी माग करने का हिन्दुओं व सिक्खों को कोई अधिकार नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि न्याय, बुद्धि, विवेक और उदारता को सर्वथा तिलाञ्जली देकर धमकियों और गुण्डाशाही के बल पर मुस्लिमलीगी अपनी मॉगों को पूरा करवाना चाहते हैं जिनको स्वीकार करना सर्वथा अनुचित होगा। राष्ट्रीय नेताओं को जिनके हाथ मे शासन शक्ति कुछ अश तक (क्योंकि मुस्लिमलीगियों ने सरकार मे सम्मिलित होकर उसे वस्तुत प गु बना दिया है यह बड दुर्भाग्य की बात है) विद्यमान है ऐसी असगत मागो का घोर विरोध करना चाहिए और लीगियों के आगे झुकने की नीति का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिये।

सकटमय परिस्थिति का दुरुपयोग—

हमे यह जानकर अत्यन्त खेद हुआ है कि पटियाला महाराज के निमन्त्रण पर रावलपिंडी झलम, सीमाप्रात आदि के जो पीड़ित हिन्दू शरणार्थी पटियाला में पहु चे हुए हैं उनमें से लगभग ५०० को (जिन में १५० विद्यार्थी भी सम्मिलित हैं) सिख बनाया जा चुका है और यह क्रम पजाब, बिहार तथा युक्तप्रात मे अब भी जारी है। हम इसे सकटमय परिस्थिति का घोर दुरुपयोग समझते हैं और जो सस्थायें इस सकट से लाभ उठा कर यह मत परिवर्तन

का कार्य करने में तत्पर हैं उनके संचालकों से अनुरोध करना चाहते हैं कि ऐसा करना सवथा अनुचित है। यह समय समस्त मुस्लिमेतरों को मिल कर कार्य करने का है क्योंकि संकुचित मुस्लिम मनोवृत्ति के कारण उन सब पर आपत्ति आई है। इस समय इस प्रकार प्रलोभनादिवश मतपरिवर्तन कराने का आन्दोलन छेड़ने से पारस्परिक सम्बन्धों में कटुता उत्पन्न हो जाएगी जो सब दृष्टियों से हानिकारक होगी।

(ध० दे०)

सार्वदेशिक सभा की सूचनाएं

२०-४-४७ के बृहदधिवेशन में निर्वाचित

अधिकारी तथा अन्तरङ्ग सदस्य १९४७-१९४८

अधिकारी—

१ प्रधान-श्री महात्मा नारायण स्वामी जी

२ उप प्रधान-(१) श्री० मदन मोहन जी सेठ एम० ए० एल० एल० बी०

३ „ (२) श्री० पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति

४ „ (३) श्री० प्रो० ताराचन्द जी एम०ए०

५ मन्त्री-श्री० पं० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम०ए०

६ उप मन्त्री-श्री० पं० लक्ष्मीदत्त दीक्षित

७ कोषाध्यक्ष-श्री० लाला नारायणदत्त जी

८ पुस्तकाध्यक्ष-श्री० ला० हरशरणदास जी

अन्तरंग सदस्य—

(९) श्री० पं० वासुदेव जी (बिहार)

(१०) श्री० पं० चंचलदास जी (सिंध)

(११) श्री कुंवर चान्दकरण जी (राजस्थान)

(१२) श्री० घनश्यामसिंह जी (मध्यप्रदेश)

(१३) श्री० मिहिर चन्द्र जी धीमान् (बंगाल)

(१४) श्री० म० कृष्ण जी } पंजाब

(१५) श्री० पं० ज्ञानचन्द्र जी } पंजाब

(१६) श्री० पं० रामदत्त जी शुक्ल } (संयुक्तप्रांत)

(१७) श्री० चौ० जयदेव सिंहजी } (संयुक्तप्रांत)

(१८) श्री० चौ० देशराज जी (आर्य समाजों के प्र०)

(१९) श्री० बा० ज्योति स्वरूप जी (आजीवन सदस्यों के प्र०)

(२०) श्री० प्रताप चन्द्र जी (बड़ौदा)

(२१) श्री० राजगुरु पं० धुरेन्द्र शास्त्री जी

(२२) श्रीमती लक्ष्मी देवी जी

(२३) श्री० पं० भीमसेन जी विद्यालङ्कार

(२४) श्री० पं० भगवान स्वरूप जी

(२५) श्री० प्रो० धर्मेन्द्र नाथ जी शास्त्री एम० ए०

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

दान सूची

(१) बंगाल सहायता फंड

(गताङ्क से आगे)

६२८१४।≈)॥ गत योग

५१) आर्य समाज खिड़की, पूना

५८॥) आर्य समाज करॉची

१४७५) आर्य समाज नरवाना, पटियाला स्टेट

२५) ला० कर्मचन्द जी चावला डिवीजनल अकाउन्टैन्ट करा बाग डिवीजन, दाऊदखेल जि० मियाँवाली.

१०) महादेवप्रसाद जी वैश्य, साकिन भटपुर डा० हथिगाम जि० फतेहपुर

१५) ठाकुर त्रिलोकसिंह रुद्रपालसिंह जी गॉव कुलीपुर डा० खागा जि० फतेहपुर

५) प० शीतलप्रसाद पॉडे ग्राम मालादेई डा० मंझवा जि० फतेहपुर

१७) ठा० शिवरत्नसिंह जी जगेश्वर कुम्मिपुर डा० खागा फतेहपुर

१५) घनश्यामलाल चावला, सिकन्दराबाद (दक्खिन)

१५०) आर्य समाज किशनपोल जैपुर सिटी

१००) श्री गयाप्रसाद जी जमींदार, तिडोला आर्य समाज हसन गंज पार, लखनऊ

४६) श्री पन्नालाल सुपुत्र श्री गंगासहाय जी अहीर, अनन्तपुर डा० बहरोड़ (अलवर)

२५०) जि० वेद प्रचार बरेली रुहेलखंड कमायूँ- यू० पी०

१०) श्री पं० रामदुलारे शुक्ल-ग्राम बबॉर डा० गाजीपुर जि० फतेहपुर

१०) पंचायती चन्दा मौजा नौ बस्ता डा० थईगाम जि० फतेहपुर

५) पं० श्यामा चरन त्रिवेदी, ग्राम छिवलहा फतेहपुर

१०) श्री राम कुमार शर्मा चिमाणी व रामेश्वर दयाल मौजा बचन पुरवा। डा० थरियांव जि० फतेहपुर

१५) पंचायती चन्दा चम्पतपुर डा० छविलहा जि० फतेहपुर

५१) कपड़ा गुरूप, छविलहा का, दान माफत लाला राम राम धनी इत्यादि (फतेहपुर)

१०) ठाः इन्द्रपाल सिंह जी-शिव बहादुरसिंह मानापुर डा० छविलहा जि० फतेहपुर

५०) श्री मंगल सिंह जी ग्राम आजवाँ डा० जींद स्टेट

५०) आर्य वीर दल २१ बाजार गेट-फोर्ट बम्बई

२०) सार्वजनिक चन्दा-ग्राम सिपाही डा० छिवलहा फतेहपुर

२०) पंचायती चन्दा-ग्राम छिवलहा फतेहपुर

५) श्री बल भद्र प्रसाद जी वैश्य, हथिगाम जि० फतेहपुर

१०) श्री सीताराम सिंह जी सुपरवाइजर, बीज गोदाम हथिगाम, फतेहपुर

५) श्री शिवप्रसाद जी गुप्त, छबिलहा-फतेहपुर

५१) आर्य समाज बालोदा बाजार रायपुर-सी०-पी के मंत्री, श्री सुन्दर लाल जी की माता श्रीमती भगवती माई का दान

१०) आर्य समाज सिकन्दरपुर जि० फर्रुखाबाद

१८) आर्यसमाज तेराजाकट जि० फर्रुखाबाद

१०१॥=) श्रीयुत पी० एन० बेली० वकील बुलन्दशहर आर्य महिलाओं द्वारा एकत्र

१०) श्री पी० आर० जोशी-ग्राम पूरन कोट डा० दुगड्डा -गढ़वाल

१०॥) मंत्री आर्य समाज केलुन्दा-मेवाड़

११) श्री शिव नारायण सिंह जी-मुकाम-हसन गंज डा० शेखपुर जि० मुंगेर।

३०) श्री महादेव प्रसाद शर्मा-ग्राम सेमोरी डा० ऐरायां-जि० फतेहपुर

१०) श्री भगवती प्रसाद, ला० रामप्रसाद जी श्रीवास्तव ग्राम अल्लीपुर भाडर डा० गोंती जि० फतेहपुर

५) श्री बैज नाथ सिंह जी चौधरी कर्वेपुर डा० ऐरायां-फतेहपुर

१०) श्री० पं० शिवनायक प्रसाद जी शर्मा ग्राम घोष, डा० ऐरायां फतेहपुर

५) श्री सूरज दीन साहू " "

५) श्री पं० रवी दीन शर्मा-ग्राम सेमोरी डा० ऐरायां-फतेहपुर

५) श्री दर्शन सिंह जी "

५) श्री मठ राधे लाल जी चौथ निवासी डा० ऐरायां-फतेहपुर

५) श्री पं० रामशरण जी पाँडे घोष निवासी (फतेहपुर)

५) " श्री बैजनाथ सिंह जी मुखिया ग्राम बिराहिमपुर-डा० ऐराया जि० फतेहपुर

२०) ग्राम अल्लीपुर-आर्य समाज की ओर से पंचायती चन्दा। डा० गौती, जि० फतेहपुर।

५) श्री नारायण जी वैश्य-ग्राम सेमोरी-डा० ऐरायाँ, फतेहपुर

१०) श्री ठाकुर शिव मोहन सिंह जी, राजाराम जिमींदार, ग्राम सेमोरी डाकखाना ऐरायाँ फतेहपुर।

५) मनोहरसिंह, लोकपालसिंहजी--ग्राम सेमोरी डा० एरायाँ (फतहपुर)

१०) ठा० जगजीतसिंह जमींदार "

१०) " शिवमोहनसिंहजी "

४॥=) आर्यसमाज बिहारीपुर बरेली

१०) ला० नित्यानन्दजी द्वारा--रामकिशोर गुप्त Octrai Supdt. Municipality, सम्भल (मुरादाबाद)

१०) आर्यसमाज तिरवां--फतेहगढ़

४१) मंत्रिणी महिला आर्यसमाज गंजीपुरा जबलपुर

६५५) प्रधान आर्य समाज मैनपुरी

२००) मंत्री आर्यसमाज अमरोहा (मुरादाबाद) द्वारा श्री बाबूरामजी आर्य (विवरण बाद में दिया जायगा)

१०००) मंत्री आर्यसमाज कोल्हापुर

४१) " " केराकत--जौनपुर

२१) श्री चौ० कृष्णपालसिंहजी रईस ग्राम ओरम्हां डा० ऐरायाँ (फतेहपुर)

१०) श्री चौ० बैजनाथसिंहजी रईस खड्गपुर डा० ऐरायाँ फतेहपुर
१०) श्री चौ० बनवारीसिंहजी फतेहपुर
२५) " परतापसिंहजी "
६०) " आर्यसमाज सरदारपुरा जोधपुर
५) " चौ० गंगाबहादुरसिंह-ग्राम ओरम्हा डा० ऐरायाँ फतेहपुर
१००) श्री कल्लूसिंहजी रईस "
५) श्री चाबेराम जी सैदपुरा डा० ऐरायाँ, जि० फतेहपुर,
१००) " मन्त्री आर्य समाज घोटकी, सिन्ध
४६) " " " जवाहर नगर देहली
१०००) " अध्यक्ष वीर अर्जुन-देहली
१००) आर्य समाज पहासू (बुलन्दशहर)
२६) श्री फूलसिंह जी ग्राम-चमोंक तहसील बनल, जि० गुड़गांव
१३५।) मन्त्री आर्य समाज नावली जि० खेड़ा बम्बई,
११) पं वेदरत्न जी गौतम-मन्त्री बन्धु समाज रामबाग-कानपुर
३५००) आ० स० युगंडा (विदेश)
३५३) " नया बाँस-देहली
१४।=) श्री रूपसिंह,, जी जयपुर स्टेट रेल्वे जयपुर
३०) श्री हुनेन्द्रसिंह त्यागी-ग्राम भूड़, अस्मौली मुरादाबाद
१००) मन्त्री आ० स० जौनपुर
२९६४।≡) आर्य समाज नरौबी (ईस्ट अफ्रीका)
१।।) श्री चाँदमल जैन-दौसा-जयपुर
।।) १७८४ २२-११-४७ का संशोधन आ० स० मुरार

१०८३०७≡)।। (क्रमश:)

दान स्थापना दिवस

४।।।) आ० समाज कालपी (संयुक्त प्रान्त)
४।।=) " " प्रागपुर-पंजाब-कॉंगड़ा
५) " " कुसमरा (मैनपुरी)
२) बुआदत्त शर्मा वैद्य बल्हरबाल-अमृतसर
१०) आर्य समाज दुर्ग -सी-पी
१०) " " फरीदपुर-बरेली
३) " " मिठा टिवाना (सरगोधा)
२१।) " " बच्छोवाली-लाहौर
१५।।) " " फरीद कोट-(पंजाब)
२५) " " वरंगल (हैदराबाद स्टेट)
१०।) " " अकोला
५) " " लखीसराय (मुंगेर)
२) " " रामदास पाई मर्चेन्ट उडीपी (दक्षिण)
१०) " " गंगोह-सहारनपुर

१२८।=) (क्रमश:)

दान दाताओं को धन्यवाद

इस निधि मे अपना भाग देना प्रत्येक समाज को अपना आवश्यक कर्त्तव्य समझना चाहिये। जिन समाजों का भाग अप्राप्त है उन्हे शीघ्र से शीघ्र भाग देना चाहिये। अन्यथा इस सभा को पत्रों द्वारा प्रेरणा करनी होगी। मुझे आशा है समाजे इसका अवसर न देंगी।

आ० स० दान पंजाब सहायता फंड

१००१) " मह्न छावनी
१००१) " " हिन्दू रिलीफ कमेटी माटुंगा बम्बई
२०००) " ब्यावर "
२६४६) प्रधान कच्छ काठियावाड़ प्रादेशिक सभा भावनगर।
१००१) आर्य समाज मह्न छावनी (दूसरी किस्त)
१०००) श्री गंगाविशन वारसेन गुप्ता द्वारा

(क्रमश:)

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा
'चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार देहली में मुद्रित

सार्वदेशिकसभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

नाम पुस्तक — लेखक व प्रकाशक — मूल्य

(१) वैदिक सिद्धान्त स० (सार्व० सभा) १)
(२) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर „ १।
(३) आर्य सिद्धान्त विमर्श „ १॥)
(४) सार्वदेशिक सभा का इतिहास „ अ० -)
(५) आर्य डायरेक्टर „ अ० १।)
(६) आर्य विवाह एक्ट की व्याख्या „ ।)
(७) आर्य पर्व पद्धति प० भवानीप्रसाद जी १।)
(८) आर्य पर्व रामायण शर्विर ओमप्रकाशजी)
(९) आर्य वैदिक बोधक शिक्षा प० इन्द्रजी) =
(१०) यम पितृ परिचय प० प्रियरत्न आर्य २
(११) अथर्ववेद चिकित्सा शास्त्र „ २)
(१२) वैदिक सूर्य विज्ञान „ =)
(१३) वेद में असित शब्द „ -।
(१४) ऋग्वेद में देवृकामा „ -)
(१५) वेद में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तियां १।
(१६) विमान शास्त्र „ ।=॥
(१७) नया संसार श्री प० रघुनाथ प्रसाद पाठक ≡)
(१८) मातृत्व का आर „ अ १।)
(१९) कथा माला „ ॥)
(२०) आर्य जीवन गृहस्थ धर्म „ ॥=)
(२१) आर्य शब्द का महत्व „ -)
(२२) श्रीमद्भगवान श्री नारायण स्वामी जी २)
(२३) श्री नारायण स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ ५)
(२४) योग रहस्य श्री महात्मा नारायण स्वामी जी १)
(२५) विद्यार्थी जीवन रहस्य „ ॥)
(२६) प्राणायाम विधि „ ≡
(२७) उपनिषद् ईश ≡) केन ॥) कठ ॥)
प्रश्न ।-) मुण्डक ≡) माण्डूक्य ≡), ऐतरेय ।)
तैत्तिरीय ॥)
(२८) श्री नारायण स्वामी जी की संक्षिप्त जीवनी -)
(२९) नारायण सुधा सजिल्द १॥)
(३०) शहीदी पद्धिका ।=)
(३१) आर्यसमाज मन्दिर चित्र ।)
(३२) इजहार हकीकत श्री ला० ज्ञानचन्द्र जी आर्य ॥-)
(३३) बहिनों की बात (प० सिद्धगोपाल जी कविरत्न) १)
(३४) दयानन्द जन्म स्थान निर्णय
(प० विजयशङ्कर मूलशङ्कर जी) ॥)
(३५) भूमिका प्रकाश श्री द्विजेन्द्रनाथ जी) ४॥)
(३६) वेद और विज्ञान श्री श्यामसुन्दरलाल जी ≡
(३७) सत्यार्थ प्रकाश आन्दोलन का इतिहास -- ॥ट
(३८) सत्यार्थ प्रकाश गान (सत्यभूषण जी))
(३९) हमारे घर श्री निरंजनलाल जी गौतम) ॥-)
(४०) भारतवर्ष में जाति भेद ।)
(४१) हमारी राष्ट्र भाषा (प० धर्मदेव जी) ≡)
(४२) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता -)
(४३) सत्यार्थप्रकाश और उसकी रक्षा -
(४४) आर्य समाज के सामाहिक सत्संग का कार्य
क्रम -)
(४५) सरल संध्योपासना ।)
(४६) एशिया का वेनिस (स्व० स्वामी सदानन्द जी)
॥)
(४७) आर्यसमाज के नियम उपनियम -॥
(४८) वैदिक वीर गर्जना (श्री रामनाथ वेदालङ्कार) ॥-)
(४९) धर्मार्य सभा की घोषणानुसार दैनिक सन्ध्या
हवन की विधि -)
(५०) वीरमाता का उपदेश
(प्रो० विश्वनाथ विद्यालङ्कार) ।)
(५१) महाराणा सांगा श्री हरविलास शारदा १)
(५२) सिन्धी सत्यार्थ प्रकाश ५)



१९४७ ई०	सम्पादक—	वार्षिक मूल्य
		विदेश १० शि०
२००४ सं०		

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष २६ | जौलाई १६४७ ई०] श्रावण २००४ दयानन्दाब्द १२२ | अङ्क ५

* वैदिक प्रार्थना *

वैदिक प्रार्थना

ओ३म् उरुं नो लोकमनुनेषि विद्वान् स्वर्वज्ज्योतिरभयं स्वस्ति ।

ऋष्वा त इन्द्र स्थविरस्य बाहू उपस्थेयाम शरणा बृहन्ता ॥

शब्दार्थः-(इन्द्र) हे परमेश्वर तू (विद्वान्) ज्ञान सम्पन्न (नः) हमें (उरुं लोकम्) विस्तृत लोक-विशाल हृदयता की अवस्था (स्वर्वत्-ज्योतिः) सुखमय ज्ञान की ज्योति (अभयम्) निर्भयता और (स्वस्ति) कल्याण की ओर (अनुनेषि) ले जाता है। तुझ (स्थविरस्य) सनातन के (बाहू ऋष्वा) रक्षक शक्ति रूप बाहू अत्यन्त महान हैं उन (बृहन्ता) बड़े (शरणा) दुःखनाशक आश्रयदायक तेरे बाहुओं के सहारे हम (उपस्थेयाम) शान्त हो कर बैठें या तेरी उपासना करें ।

विनयः—हे सर्वज्ञ जगदीश्वर ! तुम्हारी कृपा और उपासना से हमें वह अवस्था प्राप्त होती है जहां मनुष्य का हृदय अत्यन्त विशाल बन जाता है। वह सब प्राणियोंको आत्मवत् समझने लगता है। उसे नित्यसुख, ज्ञानज्योति, निर्भयता और सच्चे कल्याण की प्राप्ति होती है। इस उच्च अवस्था में सदा स्थित रहने की शक्ति आप हमें प्रदान करें। हम आप के आश्रय में कभी भयभीत व व्याकुल न हों। सदा निर्भय और निश्चिन्त हो कर अपने कर्तव्य का पालन करने में तत्पर रहें ॥

सच्चा आनन्द

इस से बढ़ कर क्या आनन्द ।
मस्त बने मन वाणी बन्द ॥ ध्रुव

१ तेरा ध्यान करूं सुखमूल,
दूर करे तू सारा शूल।
सब कुछ करता है अनुकूल,
देता है आनन्द अमन्द ॥

२ तू मेरी मङ्गलमयि माता,
विश्वविधाता जग का त्राता।
तेरी शरण में मै प्रभु आता,
बस रहने दे तू स्वच्छन्द ॥

जिधर-जिधर भी दृष्टि फिराता,
चहुं दिश तेरी महिमा पाता।
हर्ष न मेरा कहीं समाता,
तुझ को ध्याता परमानन्द ॥

४ जब भी तेरा पल्ला पकड़ा,
टुकड़ा टुकड़ा हो गया दुखड़ा।
मङ्गल मूल सखा तव मुखड़ा,
पाप ताप संशय सब बन्द ॥

५ तेरी गोद खेद बिनसाती,
भव भाव को दूर भगाती।
शान्ति सुधा का पान कराती,
बैठ वहां खाऊं सुख कन्द ॥ 'ध्रुव'

वैदिक राष्ट्रियता

(ले० श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी भू० पू० प० प्रियरत्न जी 'आर्ष')

यद्यपि कई शताब्दियों से विदेशियों की दासता में रहकर हम लोग राष्ट्रियता से गिर चुके हैं और राष्ट्रीय विषय पर कुछ कहने सुनने के अनधिकारी से बन गए तथापि अपनी राष्ट्रियता का संस्मरण कर हमारे अन्दर अपने किये हुए पर पछतावा हो जावे तो स्यात् हमारे उत्थान की कोई रूप रेखा बन जाए अतएव इस विषय पर विचार किया जाता है। राष्ट्रीयता के तीन पात्र है, राजा या राष्ट्रपति, प्रजा और राष्ट्र, अराजकता बड़ी हानिकर है अतएव राजा तीनों मे प्रधान पात्र है। राजाओं का सर्वप्रथम जब प्रादुर्भाव हुआ तो वह दो प्रकार के राजाओं का, एक आर्य राजा बने दूसरे दस्युराजा। आर्य और दस्यु के नाम से ही मनुष्य जाति के दो वर्ग थे "विजानीह्यार्यान् ये च दस्यवः" (ऋ० १। ५१। ७) श्रेष्ठ उदार सहृदय परमार्थी हितबुद्धि को आर्य और निकृष्ट अनुदार निहृदय स्वार्थी हिंसकबुद्धि को दस्यु कहते हैं। आर्यों मे आर्य राजा और दस्युओं मे दस्यु राजा बने और दोनों प्रकार के राजाओं का प्रादुर्भाव भी एक दूसरे के विपरीत ढग से हुआ। आर्य जनों के सम्मुख व्यावहारिक (वर्ताव सम्बन्धी), व्यापारिक (लेन देन सम्बन्धी), पारस्परिक (रिश्ते नाते सम्बन्धी), सामाजिक (वर्णाश्रम सम्बन्धी), नागरिक (नगर की सुव्यवस्था सुरक्षा सम्बन्धी) बातों की पञ्चप्रश्नी खड़ी हुई। उक्त पञ्चप्रश्नी को पूरा करने एवं सुलझाने के लिये उन्होंने अपने मे जिस बलवान्, जनवान्, ज्ञानवान्, गुणवान् आचारवान्, और धर्मवान् (नित्यनियम न्याय दया धैर्य पुण्यकर्मों से युक्त) षट्सम्पत्ति वाला पाया उसे अपना राजा बनाया "त्वां विशो वृणता राज्याय" (अथर्व ३। ४। २६) 'तुझे प्रजा जन राज्य के लिये वरें अपनावें' ऐसा प्रजाद्वारा राजा के वरने—बनाने का वेद में वर्णन आया है। एवं जब किसी एक नगर का राजा बना दिया गया तो फिर प्रजाजनों मे से ही राजसभा (Parliament) का निर्वाचन भी हो गया* साथ में उस नगर के चारों ओर प्राकार (परकोटा) या दुर्ग भी रक्षार्थ आवश्यकतानुसार बना दिया गया। पुन: उस नगर से बाहिर के आसपास वाले जिन ग्रामों (ग्रामवालों) का आना जाना वहा होता था उन्होंने जब उस नगर मे सुव्यवस्था देखी तो वे भी अपनी सुव्यवस्था के लिये उस नगर से मिल गए उस नगर के राजा को अपना लिया, इस प्रकार नगरराज्य के साथ कुछ ग्राम भी मिल गए। छोटे नगर राज्य के

*एषामहं समासीनाना वर्चो विज्ञानमाददे।
अस्याः सर्वस्याः संसदो मामिन्द्र भगिनं कृणु ॥
(अथर्व० ७। १२। ३)

"हे परमात्मन् इस सारी सभा का मुझे तू प्यारा बनादे, मैं इन सब विराजमान सभासदों के बल और ज्ञातव्य मत को ग्रहण करता हूँ" यह राजा की अभ्यर्थना है।

साथ थोड़े ग्रामों और बड़े नगर राज्य के सब बहुत ग्रामों का सहयोग होगया। काठियावाड़ प्रान्त में यह उदाहरण स्पष्ट मिलता है, अनेक ऐसे छोटे छोटे नगरराज्य हैं जहां एक नगरराज्य का दूसरे नगरराज्य से अन्तर पांच पांच दश दश मील तक होता है। इस प्रकार नगरराजाओं का प्रादुर्भाव हुआ।

प्रत्येक नगर राज्य का निर्वाचित प्रमुख जन समान रूप से राजा कहलाया चाहे वह नगर राज्य छोटा हो या बड़ा, कारण कि वेद में राजा शब्द है महाराजा नहीं अतएव सब का राजपद समान है। हां! सम्राट् शब्द वेद में अवश्य आया है। आर्यावर्त देश के समस्त राजा आर्य राजा कहलाए, आर्यावर्तीय आर्य राजाओं ने आर्यावर्त से भिन्न देशों के दस्युराजाओं के आक्रमण से बचने तथा समस्त आर्यावर्त देश की समृद्धि के हेतु संगठित हो मध्यस्थ नगर (देहली) में अपना एक सम्राट् बनाया वहां विशेष सैनिक शक्ति को स्थापित किया। उक्त नगर इन्द्रप्रस्थ नाम से प्रसिद्ध हुआ कारण कि इन्द्र राजा को कहते हैं और प्रस्थ प्रस्थान का नगर, आर्यावर्त पर बाहिरी दस्यु राजाओं के आक्रमण काल तथा अन्य विशेष समारोह के अवसर पर आर्यावर्तीय समस्त राजा वहां प्रस्थान करते थे अतएव उसका इन्द्रप्रस्थ नाम हुआ।

आर्यावर्त देश से बाहिर के राजा दस्युराजा कहलाए। दस्युराजाओं का प्रादुर्भाव आर्य राजाओं से सर्वथा विपरीत ढंग पर हुआ। नगर में जो व्यक्ति सबसे अधिक बलवान् और जनवान् हुआ उसने नगर निवासियों को लूटना सताना शुरू किया, प्रतिदिन लूटमार से बचने के लिये उन पर मासिक एवं वार्षिक कर (Tax) लगा उन्हें अपनी अधीनता में ले लिया एवं उस नगर को स्वाधीन कर अपने लुटेरे वर्ग को बढ़ा पश्चात् आस पास के ग्रामों में भी लूटमार कर कर उन्हें भी स्वाधीन बनाया। लूटमार करने वाले दस्यु राजा अभी भी सीमा प्रदेश में पाये जाते हैं। पुनः दस्यु-राजाओं की वह लूटमार की प्रवृत्ति उनके देश में जब पूरी हो चुकी तो आर्यावर्त देश में लूट-मार करने का दौर दौरा आरम्भ हुआ और इस पर आक्रमण कर लूटा, सो आज तक बाहिरी दस्यु राजा इसे लूट रहे हैं, स्वाधीन रख रहे हैं। ऋषि दयानन्द की यह हार्दिक इच्छा थी कि आर्यावर्त देश को इन दस्यु राजाओं से छुड़ाया जाय और आर्य राजाओं के अन्दर भी इन दस्यु राजाओं के सम्पर्क से आई हुई दस्युता को मिटाया जाए अतएव वे रजवाड़ों में गए और वहां उन्होंने राजाओं को संगठित होने, उनके द्वारा आर्यावर्त की उन्नति करने तथा आर्य राजधर्म का उपदेश दे सच्चे आर्य राजा बनाना आरम्भ कर दिया था* यह कार्य उनके जीवनका

---

* ऋषि दयानन्द के एक पत्र से भी यह आशय स्पष्ट है जो कि श्री राव राजा तेजसिंह के नाम उन्होंने लिखा था कि "श्रीमान् महाशय महोदय जोधपुराधीशों श्रीमान् महाराजे श्री प्रतापसिंह जी तथा आप को अनेक धन्यवाद देता हूँ कि जिन आप लोगों ने मेरे वहां जोधपुर में आने के लिये प्रीति प्रकाश की। अब मुझको दृढ़ निश्चय इस बात से हुआ कि अब आर्यावर्त की उन्नति होने का समय आया है।""सर्व-शक्तिमान् जगदीश्वर से मैं प्रार्थना करता हूँ— स्वदेशोन्नति में आप सब लोगों को दृढ़ोत्साही करके आप लोगों के द्वारा सब आर्यावर्त देश की बढ़ती कराके इस महा पुण्य कीर्ति के भागी आप लोगों को करे" (ऋषि दयानन्द के पत्र विज्ञापन। पत्र सं० ३५५। पं० भगवद्दत्त कृत)

अन्तिम था पर खेद है कि उसका देहान्त हो जानेसे यह कार्य रह ही गया। आज यद्यपि वर्तमान के दस्यु राजा (अंग्रेजी राज) से आर्यावर्त देश की मुक्ति हो रही है किन्तु मुक्ति के उपरान्त अनेक अवाञ्छनीय विपत्तियों के आने की सम्भावना है। इस लिये अब आर्य राजाओं को विशेषरूप से संगठित होने की आवश्यकता है संगठित होकर अपने कार्यक्रम पर विचार करना दस्यु राजाओं के संसर्ग से आई दस्युता को अपने अन्दर से हटाना और अपने को विशुद्ध आर्य राजा बनाना फिर से वैदिक राष्ट्रियता को लाना है ऋषि दयानन्द ने आर्यावर्त देश में दस्यु-राज्य को देख कितने अत्यन्त दुःख के साथ लिखा है—"सृष्टि से लेकर महाभारत पर्यन्त चक्रवर्ती सार्वभौम राजा आर्यकुल में हुए थे अब इनके सन्तानों का अभाग्योदय होने से राजभ्रष्ट होकर विदेशियों के पादाक्रान्त हो रहे हैं। जब रघुगण राजा थे तब रावण भी यहां के आधीन था। महाराजा युधिष्ठिर जी के राजसूय यज्ञ और महाभारत पर्यन्त यहां के राज्याधीन सब राज्य थे। ऐसे शिरोमणि देश को महाभारत के युद्ध ने ऐसा धक्का दिया कि अब तक भी अपनी पूर्व दशा में नहीं आया क्योंकि जब भाई को भाई मारने लगे तो नाश होने में क्या सन्देह" (सत्यार्थप्रकाश, एकादश समुल्लास) "अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य प्रमाद परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की तो कथा ही क्या कहनी किन्तु आर्यावर्त में भी आर्यों का अखण्ड स्वतन्त्र स्वाधीन निर्भय राज्य इस समय नहीं है जो कुछ है सो भी विदेशियों के पादाक्रान्त हो रहा है कुछ थोड़े राजा स्वतन्त्र हैं दुर्दिन जब आता है तब देशवासियों को अनेक प्रकार के दुःख भोगना पड़ता है कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राजा होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है अथवा मतमतान्तर के आग्रह से रहित अपने और पराए का पक्षपात शून्य प्रजा पर पिता माता के समान कृपा न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुख दायक नहीं है" (सत्यार्थ प्रकाश। अष्टम समुल्लास) "विदेशियों के आर्यावर्त में राज्य होने का कारण आपस की फूट मत भेद है जब आपस में भाई भाई लड़ते हैं तभी तीसरा विदेशी आकर पंच बन बैठता है। क्या तुम लोग महा भारत की बातें जो पांच सहस्र वर्ष पूर्व हुई थीं उनको भी भूल गए। आपस की फूट से कौरव पाण्डव और यादवों का सत्यानाश होगया सो तो हो गया परन्तु अब तक भी वही रोग पीछे लगा है न जाने यह भयङ्कर राक्षस कभी छूटेगा वा आर्यों को सब सुखों से छुड़ाकर दुःख सागर में डुबा मारेगा! उसी दुष्ट दुर्योधन गोत्र हत्यारे स्वदेश विनाशक नीच के 'फूट' दुष्ट मार्ग में आर्य लोग अब तक भी चलकर दुःख बढ़ा रहे हैं परमेश्वर कृपा करे कि यह राज रोग हम आर्यों में से नष्ट हो जाये" (सत्यार्थ प्रकाश। दशम समुल्लास) यह है दयानन्द का करुण क्रन्दन, यह है उसका आर्तविलाप, यह है उसका दुःखभरा रोना। महा भारत काल की फूट से आर्यों के हाथ से सार्वभौम सत्ता चली गई और मध्यकालीन आर्य राजाओं की फूट से आर्यावर्त देश की स्वतन्त्रता नष्ट हुई। अस्तु। इतने दीर्घकालीन क्रूर रोग के

दुष्परिणाम को भोग कर अब तो आर्यावर्त के आर्य राजाओं को सगठित हो जाना चाहिए ● और राष्ट्रोदय की ओर पूर्ण शक्ति लगानी चाहिये। यह प्रश्न केवल आर्य राजाओं का ही नहीं किन्तु आर्यजन साधारण के सम्मुख भी है और जबकि आज भयङ्कर काण्डों के दृश्य सामने आ चुके है तब तो इस पर गम्भीर विचार करने की आवश्यकता है। अत एव आज आर्य समाज मे यह प्रश्न प्रबलरूप से उठ रहा है कि राजार्य सभा बनानी चाहिये। ऋषि दयानन्द ने तो पहिले ही धर्मार्य सभा, विद्यार्य सभा और राजार्य सभा नाम से तीन सभाओ के बनाने का आदेश दिया था परन्तु आर्य समाजी तो दयानन्द के बतलाए हुए आर्य समाज क्षेत्र को छोडकर अन्यक्षेत्रों मे भटकने लगे। दयानन्द ने तो दूरदर्शिता से महत्त्व पूर्ण उक्त आदेश दे दिया था, यह ही नहीं किन्तु दयानन्द ने ऐसे ही अनेक राष्ट्रिय आदेश दिए हैं जिन्हे लोग अब नहीं तो भविष्य मे समझ सकेंगे जैसा कि ऋषि दयानन्द ने लिखा है "एक को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार न देना चाहिए किन्तु राजा जो सभापति तदाधीन सभा, सभाधीन राजा और सभा प्रजा के आधीन और प्रजा राजसभा के आधीन रहे जो प्रजा से स्वतन्त्र स्वाधीन राजवर्ग रहे तो राज्य मे प्रवेश करके प्रजा का नाश किया करे" (सत्यार्थ प्रकाश। षष्ठ समुल्लास) क्या इस से बढकर राजा, राजसभा और प्रजा के सम्बन्ध मे कोई व्यवस्था हो सकती है ? यहाँ राजा को सभापति कहा गया है, इतना ही नहीं किन्तु सभापति राजा कौन हो इसके लिये भी लिखा है कि 'जो सब मे सर्वोत्तम गुण कर्म स्वभाव युक्त महान् पुरुष हो उसको राज-सभा का पति रूप मे मान के सब प्रकार से उन्नति करें' (सत्यार्थप्रकाश। षष्ठ समुल्लास) आज राष्ट्र के नेता इस सिद्धान्त तक पहु च रहे है राजा और प्रजा दोनों की सम्मति से राज्य के काम होने का आदेश ऋषि दयानन्द ने श्रीयुत महाराणा उदयपुर को भी दिया था "राज्य का कार्य एक पर निर्भर न रक्खें किंतु राज पुरुष और प्रजा पुरुष की अनुमति के अनुकूल प्रच-लित करें" (ऋषि दयानन्द के पत्र विज्ञापन)। ऋषि दयानन्द की राजनीति तो बहुत उदात्त है उन्होंने यहा तक लिखा है "(प्रश्न) जो राजा वा रानी अथवा न्यायाधीश वा उसकी स्त्री व्यभिचार आदि कुकर्म करे तो उसको कौन दण्ड देवे (उत्तर) सभा अर्थात उनको तो प्रजा पुरुषो मे भी अधिक दण्ड देना चाहिए (प्रश्न) राजादि उनस दण्ड क्यो ग्रहण करेंगे (उत्तर) राजा भी एक पुण्यात्मा भाग्यशाली मनुष्य है जब उसी को दण्ड न दिया जावे और वह दण्ड न ग्रहण करे तो दूसरे मनुष्य दण्ड क्यों मानेंगे ? और जब सब प्रजा और प्रधान राज्याधिकारी धार्मिकता से दण्ड देना चाहे तो अकेला क्या कर सकता है जो ऐसी व्यवस्था न हो राजा प्रधान और सब समर्थ पुरुष अन्याय मे डूब कर न्याय धर्म को डुबा कर के सब प्रजा का नाश कर आप भी नष्ट हो जावे" (सत्यार्थप्रकाश। षष्ठ समुल्लास) नि सन्देह ऋषि दयानन्द यदि आज होते तो राजनीति मे बहुत विकास हो जाता। आर्यराजाओं को सगठित कर देते और आर्यावर्त देश के भाग्य का उदय भी कभी का

● सब को केन्द्रीय विधान परिषद् मे भी आना चाहिये।

हो जाता। और कहीं आर्यसमाजी भी ऋषि दयानन्द की बतलाई हुई उक्त तीनों विद्यार्यसभा, धर्मार्यसभा और राजार्यसभा को प्रथम से बना लेते तो आर्यजाति का महान् कल्याण हो जाता और राष्ट्रीय क्षेत्र मे आर्यसमाज का अग्रस्थान होता। अब आर्यसमाज मे राजार्यसभा बनाने का प्रश्न उठा है। यदि वास्तव मे आर्यसमाज राजार्यसभा या आर्यराजासभा नाम से कोई सभा बनाना चाहता है तो इसको विद्यार्यसभा और धर्मार्यसभा को यथावत् एक सूत्र का रूप देना होगा अर्थात् संस्कृत और अंग्रेजी के योग्य आर्यविद्वानों की विद्यार्यसभा बना कर समस्त अपने गुरुकुल और कालिज उक्त सभा के सुपुर्द कर देने होंगे और उच्च धार्मिक विद्वानों, योग्य धर्मोपदेशको की धर्मार्यसभा बना कर समस्त धर्मतत्त्वों के निर्णय और प्रचार के काम को इस सभा के अधीन कर देना चाहिए, पुनः प्राचीन और अर्वाचीन-नय-नीति के तत्त्वज्ञ श्रेष्ठ विद्वानों को प्रमुख एवं अग्रसर बना कर आर्यराजसभा का निर्माण हितकर होगा। उक्त सभा का काम वेद एव आर्यसमाज के राजनैतिक दृष्टिकोण का प्रचार और केन्द्रीय विधान परिषद् मे (भाग ले) उसका व्यवहार कराना तथा उसके आधीन आर्य सेना का बनाना जिसमें प्रत्येक आर्य व्यक्ति बाल युवा वृद्ध छोटे-बड़े धनी निर्धन को भाग लेना अनिवार्य हो। उन्हें सैनिक व्यूह व्यायाम सिखा कर सन्नद्ध (ट्रेण्ड) तैयार किया जावे, सेनानायको के आदेश को सर्वमुख्य समझना आवश्यक हो। स्त्रियो मे भी सैनिकता लाने का प्रबन्ध करे। अस्तु। शेष राष्ट्रोदय के वैदिक साधन 'वैदिक राष्ट्रियता' पुस्तक मे देखे जोकि सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा देहली की ओर से अभी छपी है। इति।

———

अध्यात्म सुधा

आध्यात्मिक उन्नति के साधन

(लेखक—वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर निवासी एक वीतराग महात्मा)

(१) केवल वस्तुओं का त्याग ही सच्चा स्वार्थ त्याग नहीं कहला सकता, किन्तु वस्तुओं की इच्छाओं का त्याग करना ही वास्तविक त्याग है ॥

(२) मानसिक शान्ति को नष्ट करनेवाला बाह्य पदार्थ नहीं है। अपने हृदय में उन पदार्थों के प्रति जो इच्छा पैदा होती है वही सुख और शान्ति की चुराने वाली है। ज्यों २ इच्छाओं को विधिपूर्वक दमन किया जाता है त्यों २ आत्म-त्याग सुख का कारण होता जाता है। इस रहस्य को समझे बिना ही पश्चिम के जड़वादी दार्शनिकों ने त्याग मार्ग की निन्दा की है ॥

(३) जब मन की सभी वासनाओं पर विजय प्राप्त करली जाती है तब किसी बात का त्याग करना बाकी नहीं रह जाता, जब आत्मा की सभी शक्तियों का पूर्ण विकाश हो चुकता है तब मन में किसी बात की चिन्ता नहीं रह जाती, उस समय आत्मा में अपने और पराये का भाव बिल्कुल नहीं रहता, उसमें यदि बाकी है तो केवल एक बात है कि दीर्घ काल के प्रयत्न द्वारा प्राप्त किये हुए इस अनुपम सुख को स्वयं भोगते हुये भी भूले भटके प्राणियों को उपदेश द्वारा सच्चा मार्ग बताना, उस समय उन्नत महात्माओं का यही एक कर्त्तव्य बाकी रह जाता है इस कार्य में स्वार्थमय इच्छा न रहते हुये भी वे स्वतः प्रवृत्त होंगे ॥

(४) अपने अपराध को स्वीकार करना उन्नति पथ के ऊपर मानो कई क़दम आगे बढ़ना है। स्वर्ण की परीक्षा करने के लिये काली कसौटी की जरूरत पड़ती है इसी प्रकार मनुष्यों के हृदय की परीक्षा करने के वास्ते ही पाप वासनाएं संसार में मौजूद हैं यदि पाप न होवे, तो संसार में महात्मा और दुष्टों की पहचान कैसे होती।

(५) संसार में फंसे हुए साधारण मनुष्यों की योग्यता भक्ति उपासना, योगादि मार्गों के अवलम्बन करने की नहीं है। ये मार्ग केवल उन्नत महात्माओं के लिये उपयोगी हो सकते हैं इसी लिये जन साधारण को ये रुचिकर प्रतीत नहीं होते। इन्द्रियों की लम्पटता को बुद्धिपूर्वक सह लेने का नाम ही तप है। इच्छाओं की तप्त अग्नि को वीरता पूर्वक सहलेने से विवेक की कान्ति बढ़ती है ॥

(६) धर्म और सम्प्रदाय चाहे वह किसी प्रकार का क्यों न हो, आपस के द्वेष को कभी ठीक नहीं कह सकता, यदि वास्तव में उन्होंने कलह और झगड़े का उपदेश दिया है तो वह धर्म नहीं है ॥

(७) मनुष्य की बुद्धि का पता उसकी दूरदर्शिता से लगता है। अज्ञानी और मूर्ख लोगों के नेत्र सदैव वर्तमान पर ही लगे रहते हैं जो

मनुष्य जितना दूरदर्शी है वह उतना ही बुद्धिमान् समझा जाता है ॥

(८) दुःख का विषय है कि प्रायः यहाँ के सुख आराम के लिये इतने प्रयास करने वाले मनुष्य अपने भविष्य के विषय मे तनिक भी दूरदर्शी बनने का प्रयत्न नहीं करते । धन सम्पत्ति को जोड़ना, बड़े २ रिश्तेदारों से सम्बन्ध जोड़ना, बड़े २ मकान बनवाना, इत्यादि सम्पूर्ण व्योपारों को मनुष्य जितना दूसरों के आराम के लिये करता है उतना अपने लिये नहीं अधिक से अधिक इन सबका उपयोग वह अपने जीवन के अन्त समय तक कर सकता है जीवन को आध घंटे बढ़ा सकने का उसे अधिकार ही नहीं है इसकी सारी बुद्धिमानी और प्रयास के फलों का आस्वादन दूसरे लोग भले ही करें, परन्तु यह बेचारा मरने के साथ ही इन सब सांसारिक आनन्दों से बिल्कुल वंचित हो जाता है।

(६) ऊपर जो कुछ लिखा गया है वह प्रत्येक व्यक्ति का प्रतिदिन का अनुभव है। लोग देखते हैं कि मनुष्य की सारी लीलाओं का अन्त मृत्यु एक क्षण में कर देती है यह सब देखते हुये भी लोगों की दृष्टि अपने भविष्य के विषय में इतनी संकुचित रहती है कि वे अपने जीवन के परे कुछ देख ही नहीं सकते । दिन रात के चौबीस घंटों में एक निमेषमात्र को भी अपने दीर्घ भविष्य सम्बन्धी विचारो मे खर्च करने की उन्हे फुर्सत नहीं मिलती; बन्जारों के शक्कर लदे हुये बैलों से भी उन लोगों की दशा खराब है मनुष्य की सारी क्रियाओं का सार भार दूसरों के लिये, और निःसार भाग अपने लिये रहता है। मृत्यु के परे क्या है इस प्रश्न की ओर तो मनुष्य का ध्यान जाता ही नहीं, और यदि कभी श्मशानभूमि में शव संस्कार के लिये जाने पर उस ओर चित्त चला भी जाये, तो श्मशान से बाहर आते ही वह फिर झट लौट पड़ता है। प्रश्न के महत्व का विचार करके सच्चे दिल से इस विषय में अनुसन्धान तो लाखों मनुष्यों में केवल दो चार ही करते होंगे, निदान इस प्रयत्न में सफलता प्राप्त कर लेना तो कठिन ही है जो मनुष्य इस विषय में विचार करते हैं उन्हें मानो अपने कर्त्तव्य से च्युत करने के लिये पहिले तो मनुष्य जाति ही जी जान से कोशिश करती है कोई कहते हैं कि यह मनुष्य पागल है, कोई इसको निखट्टू और आलसी बताते हैं और कोई दम्भी, यदि मनुष्य के इन निराशापूर्ण और हृदयवेधी शब्दों से किसी दृढ़प्रतिज्ञ महात्मा ने छुटकारा पाया तो अपनी ही चित्त की वृत्ति इस मार्ग में नाना प्रकार की बाधाओं को उपस्थित कर देती है। शंका और अविश्वास का सारा झुंड इकट्ठा होकर मनुष्य को व्याकुल कर देता है ऐसे समय में यह विदित होता है कि किसी अमूल्य खजाने पर अधिकार प्राप्त करने के लिये मनुष्य पर उस भंडार के रक्षक रुद्र रूप धारण कर सशस्त्र टूट पड़े हों । सचमुच बात भी यही है। मनुष्य जब मृत्यु के परे देख सकने की शक्ति को प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। तो उस समय उसको बद्धावस्था में रखने वाली सारी मानसिक वृत्तियां घेरकर उसके मार्ग मे बाधा डालना चाहती है धैर्य की पराकाष्ठा की परीक्षा का समय वही है।

१० ध्यान से सुनो, यदि तुम दृढ़प्रतिज्ञ होकर अपने आन्तरिक जीवन को उन्नत बना लोगे तो तुम्हारी बाह्य अवस्था में भी तुम्हारी इच्छानुसार अवश्य उन्नति हो जावेगी। मै अच्छी प्रकार जानता हूं कि पहले पहल यह मार्ग तुम्हें कंकरीला और बन्जर प्रतीत होगा, क्योंकि सचाई सदा ऐसी ही दिखलाई देती है यह तो केवल मोह माया ही है जो चमकीली और भड़कीली होती है।

११ तुम उसी समय तक दूसरों के दास हो, जब तक तुम स्वयम् अपने दास बने हुये हो। तुम अपनी इन्द्रियों को अपने वश में करलो, फिर तुम्हारी सारी बुरी अवस्थायें जाती रहेंगी, और तुम्हारी प्रत्येक कठिनाई दूर हो जावेगी।

१२ निर्धनता मुक्तजीवो के लिये गौरव की वस्तु है। जो मनुष्य दृढ़ता के साथ आत्मत्याग और इन्द्रिय-निग्रह के मार्ग पर कदम रखता है और विश्वाश रूपी लाठी के सहारे चलता है उसे निश्चय से विजय और सफलता होगी और स्थायी और अपरिमित रत्न की प्राप्ति होगी।

॥ इति शुभम् ॥

ऋषि दयानन्द जी कृत वेदभाष्यानुशीलन

[लेखक—अनुसन्धान विद्वान् श्री शिवपूजनसिंह जी साहित्यालङ्कार, सिद्धान्तभास्कर, साहित्यरत्न, साहित्य शिरोमणि, कानपुर]

[जून अङ्क से आगे]

सायणाचार्य के भाष्यानुसार वेद हजारों देवी देवताओं की पूजा और यज्ञ यागादि (जिनमें पशुयज्ञ भी शामिल है) से भरे हुए हैं यहां तक कि गोमांस भोजन का भी प्रतिपादन करते हैं। ॐ

इसके विपरीत ऋषि दयानन्द जी वेदों में मनुष्यमात्र की सर्वतोमुखी उन्नति के द्योतक अत्यन्त उदात्त तत्त्वों का अपने वेद भाष्य में स्पष्ट प्रतिपादन करते हैं। उनके सम्पूर्ण वेद भाष्य में कहीं भी अपने मन्तव्यों का विरोध नहीं पाया जाता।

ऋग्वेद १। १२६ में निम्न लिखित २ मन्त्र आते हैं जिनका श्री सायणाचार्य ने बड़ा ही अश्लील और असङ्गत अर्थ किया है जिसे किसी सभ्य समाज के सामने कहना भी लज्जा-जनक है तथापि ऋषि दयानन्द जी के साथ उसकी तुलना अप्रासङ्गिक न होगी।

मन्त्र—

"आगधिता परिगधिता या कशीकेव जङ्गहे। ददाति मह्यं यादुरी याशूनां भोज्या शता।"मं०६।

सायण-भाष्यः—सम्भोगाय प्रार्थितो भावयव्यः स्वभार्यां रोमशाम् अप्रौढेति बुद्ध्या परिहसन्नाह—भोज्या भोगयोग्या एषा, आगधिता आसमन्ताद् गृहीता स्वीकृता, तथा परिगधिता परितो गृहीता आदरातिशयाय पुनर्वचनम् गध्यं गृह्णातेरिति यास्कः। यद्वा। आगधिता आसमन्तात् मिश्रयन्ती- आन्तरं प्रजननेन बाह्यं भुजादिभिरित्यर्थः। गध्यतिर्मिश्रीभावकर्मेति यास्कः। पूर्वस्मिन् पक्षे पुरुषस्य प्राधान्यम्। उत्तरस्मिंस्तु योषित इति भेदः। कीदृशी सा। या जंगहे अत्यर्थं गृह्णाति कदापि न मुञ्चति। अत्यागे दृष्टान्तः। कशीकेव कशीका नाम सुतवत्सा नकुली सा यथा पत्या सह चिरकालं कीडति न कदाचिदपि मुंचति तथैषा अपि। किञ्च भोज्यैषा यादुरी यादुरित्युदकनाम रेतोलक्षणमुदकं प्रभूतं राति ददातीति यादुरी बहुरेतोयुक्तेत्यर्थः। तादृशी सती (याशूनाम्) संभोगानां यश इति प्रजननाम तत्सम्बन्धीनि कर्माणि याशूनि भोगाः। तेषां शता शतान्यसंख्यातानि मह्यं ददाति"। *

ॐ देखो-मासिकपत्र "वैदिकधर्म" औंध, वर्ष २६, अगस्त सन् १६४५ ई. अङ्क ८ पृष्ठ २२५ में मेरा 'आर्यों पर गोमांस भक्षण का दोषारोपण' शीर्षक लेख।

* अति अश्लील शृङ्गारपरक होने के कारण हिन्दी अनुवाद नहीं दिया गया है।

भावार्थ संक्षेप से देना पर्याप्त है कि भावयव्य ऋषि से उसकी पत्नी रोमशा ने संभोग के लिये प्रार्थना की तब भावयव्य ने उसे अप्रौढ़ा (जो रजस्वला न हुई हो) मान कर उसकी मजाक करते हुए कहा कि यह संभोग के समय मुझे अत्यधिक आनन्द देने वाली है यह हर समय मेरे साथ संभोग करती है कभी भी नहीं छोड़ती इत्यादि——लेखक।

यहाँ सम्भोगार्थ रोमशाकी प्रार्थना, अप्रौढ़ा समझ कर उसका परिहास आदि सूचक एक शब्द भी मूलमन्त्र में नहीं है।

ऋषि दयानन्द जी ने इस मन्त्र की नीति-परक व्याख्या की है,

श्री दयानन्द भाष्यम्ः—(आगधिता) समन्ताद् गृहीता ● (परिगधिता) परितः सर्वतो गधिता शुभैर्गुणैर्युक्ता नीतिः * (या) (कशीकेव) यथा ताडनार्था कशीका (जङ्गहे) अत्यन्तं ग्रहीतव्ये (ददाति) (मह्यम्) (यादुरी) प्रयत्नशीला ! अत्र यत धातो र्बाहुलकादौणादिक उरी प्रत्ययः तस्य दः (याशूनाम्) प्रयतमानानाम् । अत्र यसु प्रयत्ने धातो र्बाहुलकादुण् प्रत्ययः सस्य शश्च (भोज्या) भोक्तुं योग्यानि (शता) शतानि असंख्यातानि वस्तूनि ।।" *

भावार्थः— अत्रोपमालङ्कार ० ययया नीत्या ऽसंख्यातानि सुखानि स्युः सा सर्वैः संपादनीया ॥

भाष्यानुवादः— (या) जो (आगधिता) अच्छे प्रकार ग्रहण की हुई (परिगधिता) सब ओर से उत्तम २ गुणों से युक्त (जङ्गहे) अत्यन्त ग्रहण करने योग्य व्यवहार में (कशीकेव) पशुओं के ताड़ना देने के लिये जो कौंगी होती है उसके समान (याशूनाम्) अच्छा यत्न करने वालों की (यादुरी) उत्तम यत्न वाली नीति (भोज्या) भोगने योग्य (शता) सैकड़ों वस्तु (मह्यम्) मुझे (ददाति) देती है वह सब को स्वीकार करने योग्य है।

भावार्थः—इस मन्त्र में उपमालङ्कार है— जिस नीति अर्थात् धर्म की चाल से अगणित सुख हों वह सबको सिद्ध करनी चाहिये।

इस सूक्त का दूसरा मन्त्र इस प्रकार है:—

"उपोप मे परामृश मा मे दभ्राणि मन्यथाः। सर्वाहमस्मि रोमशा गन्धारीणामिवाविका"। मं.७

सायण भाष्यम्ः—रोमशानाम बृहस्पतेः पुत्री ब्रह्मवादिनी परिहसन्तं स्वपतिं प्रत्याह:—

'भोः पते (मे) मा द्वितीयार्थे चतुर्थी (उपोप) उपेत्य (परामृश) सम्यक् स्पृश भोगयोग्यामवगच्छेत्यर्थः यद्वा (मे) मम गोपनीयमङ्गम् (उपोप परामृश) अत्यन्तमान्तरं स्पृश। परामर्शाभावशङ्कां निवारयति (मे) मदङ्गानि रोमाणि (दभ्राणि) अल्पानि मा बुध्यस्व । अहं (रोमशा) बहुरोमयुक्तास्मि यतोऽहमीदृशी अतः (सर्वा) सम्पूर्णावयवास्मि रोमशत्वे दृष्टान्तः-गान्धारदेशीयमेषा इव यद्वा (गन्धारीणां) गर्भधारिणीनां स्त्रीणाम्) । (अविका) अत्यर्थं तर्पयन्ती योनिरिव यतोऽहमीदृशी अतो मामप्रौढां माऽवबुध्यस्वेति"।

भाष्यानुवादः—बृहस्पति की पुत्री रोमशा अपने पति से हंसती हुई कहती है:—
हे स्वामिन ! मुझे स्पर्श करो अर्थात भोग्य केयोग्य मुझे समझिये। मेरे अङ्ग के बालों को छोटा मत मानो अर्थात् मेरे अङ्ग के बाल बड़े २ हैं। कैसे जैसे गन्धार देश की भेड़ों के शरीर पर बड़े २ बाल होते हैं अर्थात् मैं भोग योग्य प्रौढ़ा हूँ मुझे अप्रौढ़ा मत समझो।

● "गध्ये गृह्णातेः" निरुक्त ५। १५

* "गध्यतिर्मिश्री भावकर्मा" निरुक्त ५। १५

* "ऋग्वेद भाष्यम्" पृष्ठ ८४—८५ (तृतीयभागात्मकम् संवत १९६९ वैदिक यन्त्रालय अजमेर में मुद्रित, द्वितीय संस्करण).

श्री दयानन्द-भाष्यम्:— (उपोप) अति समीपत्वे (मे) मम (परा) (मृश) विचारय (मा) निषेधे (मे) मम (दभ्राणि) अल्पानि कर्माणि (मन्यथाः) जानीयाः (सर्वा) (अहम्) (अस्मि) (रोमशा) प्रशस्तलोमा गन्धारीणामिव यथा पृथिवीराज्यधर्त्रीणां मध्ये (अविका) रक्षिका।

भावार्थः—राज्ञी राजानं प्रति ब्रूयादहं भवतो न्यूना नास्मि यथा भवान् पुरुषाणां न्यायाधीशो ऽस्ति तथाऽहं स्त्रीणां न्यायकारिणी भवामि यथा पूर्वा राजपत्न्यः प्रजास्थानां स्त्रीणां न्यायकारिण्योऽभूवन् तथाहमपि स्याम्। ❀

भाष्यानुवाद—हे पति राजन्! जो (अहम्) मैं (गन्धारीणाम् इव) पृथ्वी के राज्य धारण करने वालियों में जैसे (अविका) रक्षा करने वाली होती वैसे (रोमशा) प्रशंसित रोमों वाली (सर्वा) सब प्रकार की (अस्मि) हूं उस (मे) मेरे गुणों को (परा,मृश) विचारो (मे) मेरे (दभ्राणि) कामों को छोटे (मा, उपोप) अपने पास में मत (मन्यथाः) मानो।

भावार्थः—रानी राजा के प्रति कहे कि मैं आपसे न्यून नहीं हूँ जैसे आप पुरुषों के न्याधा-धीश हो वैसे मैं स्त्रियों का न्याय करने वाली होती हूँ और जैसे पहिले राजा महाराजों की स्त्री प्रजास्थ स्त्रियों की न्याय करने वाली हुईं वैसी मैं भी होऊँ।

विद्वान् पाठकवृन्द स्वयं निश्चय करें, कि दोनों अर्थों में से किस अर्थ में अधिक गम्भीरता है और वेद के स्वरूप की दृष्टि से कौनसा अधिक संगत है। सायण के अश्लील उपाख्यान में कोई शिक्षाप्रद बातें नहीं हैं।

इसीलिये सायण के प्रति ऋषि दयानन्द जी की सम्मति है कि:-

"यत् सायणाचार्येण वेदानां परममर्थम-विज्ञाय सर्वे वेदाः क्रियाकाण्डतत्पराः सन्तीत्युक्तं, तदन्यथास्ति। *

सायणाचार्य ने वेदों के श्रेष्ठ अर्थों को नहीं जानकर कहा है कि सब वेद क्रियाकाण्ड का ही प्रतिपादन करते हैं। यह उनकी बात मिथ्या है।

आचार्य सत्यव्रत सामश्रमी कहते हैं:-"वस्तुतो ध्वान्ताच्छन्नविज्ञानकालिकानामशेष शेमुषीनामपि तेषां सायणमहीधरादीनामपि देवतार्थ-तोऽपि मंत्राभिप्रेतं प्रकृतिविज्ञानं नैव स्फुरितं सम्यगिति तच्छोच्यमेवाभवत्"*

अर्थात- अन्धकार से आच्छन्न समय में होने के कारण परम विद्वान् होते हुए भी सायण महीधरादि वैदिक विज्ञान न जान सके यह शोक है।

भाषा विज्ञान में विशेष जानकारी प्राप्त करने के लिये संस्कृत भाषा में साधारणतः और वेद विषय में अधिकांश लगने वाले पाश्चात्य पण्डितों को अन्य वेदार्थ उपलब्ध न होने से सायण का ही अनुगामी बनना पड़ा और जो २ सायण भाष्य में प्राचीन मिथ्या बातों, उपाख्यानों वा मिथ्या धारणाओं पर

❀ वही, पृष्ट ८५-८६

* "ऋग्वेदादिभास्य भूमिका" भाष्यकरण शङ्कासमाधानादि विषयः।

*"ऐतरेयालोचन" पृष्ठ १८६

प्रामाणिकता की मुहर लग चुकी थी, उसी के पीछे इन पाश्चात्यों का समूह चला। इतिहास का सारा वर्णन औपचारिक रूप में तथा त्रिविध प्रक्रिया से न वर्णन करने से विदेशीय विद्वान् हमारी सारी संस्कृति, सभ्यता और साहित्य को उलटे रूप में सब के सामने रखते हैं जिसको पढ़कर हमें लज्जा से नतमस्तक होना पड़ता है।

पाश्चात्यों को वेद विषय में सायण भाष्य ही एक मात्र आश्रय मिला। वह उनके अनुकूल निकला, क्योंकि वे तो चाहते थे कि भारतीयों को अपनी प्राचीन संस्कृति, सभ्यता और साहित्य के प्रति जितनी अश्रद्धा उत्पन्न करने में हम सफलता प्राप्त करेंगे उतना ही हमारा राज्य भारत में स्थायी होता जायगा। उन्होंने वेद के जो अनुवाद अंग्रेजी में किये वे सब के सब सायण की छाया से ही किए।

इन पाश्चात्य पण्डितों ने वैदिक साहित्य के अन्वेषण में जो कुछ भी परिश्रम तथा व्यय किये उसके लिये हम आर्यावर्तीय उनके आभारी हैं, परन्तु यह सब होते हुए भी उनकी भावना अच्छी नहीं थी।

मोनियर विलियम अपने कोष की भूमिका में लिखते हैं:—"That the special object of his munificent bequest was to promote the translation of the scriptures into Sanskrit, so as to enable his countrymen to proceed in the conversion of the natives of India to the Christian religion"

इसका भाव यह है कि यह संस्कृत अंग्रेजी डिक्शनरी या संस्कृत ग्रन्थों के अनुवाद का कार्य जो मि० बाडन के ट्रस्ट द्वारा हो रहा है, वह सब भारतीयों को ईसाई बनाने में अपने देश (इङ्गलैण्ड) वासियों को सहायता पहुंचाने के लिए है।

इतने ही से विद्वान् पाठक समझ सकते हैं कि पाश्चात्यों ने किस ध्येय को लक्ष्य में रख कर हमारे वैदिक साहित्य तथा अन्यान्य संस्कृत साहित्य में इतना घोर परिश्रम किया। इन विदेशीय विद्वानों के विषय में वेदों के प्रौढ़ विद्वान् परलोकवासी पं० शिवशङ्कर शर्मा काव्य-तीर्थ लिखते हैं:—"श्रीमान् मैक्समूलर, राथ और गोल्डस्टकर ने संस्कृत साहित्य पर खूब आन्दोलन किया है। वेदों पर तो ऐसा तीक्ष्ण प्रहार किया है कि योरोप में कई शताब्दी तक वेद भगवान् अपने वास्तविक स्वरूप प्रकट करने में असमर्थ रहेंगे। पंडित मैक्समूलर जी ने वेदों की हड्डी २ जैसी उखाड़ी है ऐसा किसी ने नहीं किया है। ये अनेक स्थलों में वक्ष्यमाण भाव दिखला गए हैं।" इसी प्रकार विलसन, म्यूर, मेकडोनल्ड, वेबर, ग्रिफिथ आदि शतशः योरोपीय विद्वानों ने वेदों की तोपों से खूब खबर ली है *।

स्वयं ऋषि दयानन्द जी इन पाश्चात्य विद्वानों की योग्यता के विषय में लिखते हैं:—

अब तक जितना प्रचार संस्कृत विद्या का आर्यावर्त्त देश में है, उतना किसी अन्य देश में नहीं। जो लोग कहते हैं कि जर्मनी देश में

* "वैदिक इतिहासार्थ निर्णय"

संस्कृत विद्या का बहुत प्रचार है। और जितनी संस्कृत मोक्षमूलर साहब पढ़े हैं, उतनी कोई नहीं पढ़ा, यह बात कहने मात्र है। क्योंकि "निरस्तपादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते" अर्थात् जिस देश में कोई वृक्ष नहीं होता, उस देश में अरण्ड को ही बड़ा वृक्ष मान लेते हैं, वैसे ही यूरोप देश मे संस्कृत विद्या का प्रचार न होने से जर्मन लोगों और मोक्षमूलर साहब ने थोड़ा सा पढ़ा, वही उस देश के लिये अधिक है, परन्तु (यदि) आर्यावर्त्त देश की ओर देखें, तो उनकी बहुत न्यून गणना है; क्योंकि मैंने जर्मनी देश निवासी एक प्रिन्सिपल के पत्र से जाना कि जर्मनी देश में संस्कृत चिट्ठी का अर्थ करने वाले भी बहुत कम हैं। और मोक्षमूलर साहब के संस्कृत साहित्य और थोड़ी सी वेदव्याख्या देख कर मुझको विदित होता है कि मोक्षमूलर साहब ने इधर उधर आर्यावर्त्तीय लोगों की की हुई टीका देखकर कुछ २ यथा तथा लिखा है:—इतने से जान लीजिये कि जर्मनी देश, और मोक्षमूलर साहब मे संस्कृत विद्या का कितना पाण्डित्य है।" *

"डाक्टर एम० (हाग) साहब, वा सी०एच० टानी साहब, वा आर० ग्रिफिथ आदि कुछ ईश्वर नहीं कि जो कुछ वे लिख चुके, वह विना परीक्षा वा विचार के मान लेने योग्य ठहरे। क्या डाक्टर एम० हाग साहब हमारे आर्य्य ऋषि मुनियों से बढ़ कर हैं कि जिनको हम सर्वोपरि मान कर निश्चय कर लें और प्राचीन सत्य ग्रन्थों को छोड़ देवें, जैसा कि पण्डित जी (अर्थात् पं० महेशचन्द्र जी न्याय रत्न, सम्पादक) ने किया है। जो उन्होंने ऐसा किया, तो किया करो, मेरी दृष्टि में तो वे जो कुछ हैं, सो ही हैं *।

* "सत्यार्थ प्रकाश" एकादश समुल्लास

ऋषि दयानन्द-भाष्य पर आक्षेप और उसका निराकरण:—

(क) श्री सायणाचार्य के पक्षपाती विद्वानों ने ऋषि दयानन्द-भाष्य पर जो आपत्तियां कीं, उनमे सबसे बड़ी आपत्ति यह थी—"मन्त्रभाष्य के प्रथम संस्कृत खण्ड मे (अग्निमीडे पुरोहितम्) इसके भाष्य मे स्वामी जी ने अग्नि शब्द से ईश्वर का ग्रहण किया है जब कि प्रसिद्ध अर्थ अग्नि शब्द का सिवाय आग के दूसरे कोई नहीं ले सकता। तथा सायणाचार्य वेद के भाष्यकार की इसी विषय मे साक्षी वर्तमान है।"*

समीक्षा—इस आक्षेप का उत्तर ऋषि दयानन्द जी ने अपने जीवन काल ही मे 'भ्रान्ति-निवारण' नामक ट्रैक्ट में दे दिया था।

वेदभाष्य की त्रिविध और यौगिक प्रक्रिया को न समझने के कारण ही लोग भ्रम मे पड़ जाते है। त्रिविध प्रक्रिया मे आध्यात्मिक अर्थ के ब्रह्मपरक होने के कारण उसकी प्रधानता कही जा सकती है। क्योंकि अग्नि, इन्द्र, मित्र, वरुण, जातवेदा प्रभृति शब्द प्रधानतया परमात्मावाचक हैं जैसे कि—'इंद्रं मित्रं वरुण मग्नि माहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान्। एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वान माहुः" (ऋ० १।१६४।४७)

* "भ्रान्ति निवारण" पृष्ठ १०

* देखो. "भ्रान्ति निवारण" पृष्ठ ६ कलकत्ता ओरियण्टल विभाग के प्रिन्सिपल पं० महेशचन्द्र न्यायरत्न का उठाया हुआ पूर्व पक्ष-सं०

"तदेवाग्निस्तदादित्य स्तद् वायु स्तदु चन्द्रमाः। तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ता आपः स प्रजापतिः" (यजु० ३२। १) इत्यादि मन्त्रों से स्पष्ट है।

ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के प्रथम सूक्त की व्याख्या करते हुए जिसका देवता अग्नि है ऋषि दयानन्द जी ने स्पष्ट लिख दिया है कि-"अत्राग्निशब्देन परमार्थ व्यवहारविद्यासिद्धये परमेश्वरभौतिकौ द्वावर्थौ गृह्येते।"

अग्नि सूक्त वाले प्रायः सारे सूक्तों की व्याख्या में ऋषि ने आध्यात्मिक, आधिदैविक अर्थ का निर्देश किया है। वस्तुतः मन्त्रों में इस बात के स्पष्ट चिन्ह पाये जाते हैं कि ये सब मन्त्र जिनका अग्नि देवता है भौतिक अचेतन अग्निपरक नहीं हो सकते।*

उदाहरणार्थ-"ईडे अग्निं विपश्चितं गिरा यज्ञस्य साधनम्। श्रुष्टीवानं धितावानम्।

(ऋ० ३। २७। २)

"अग्निं होतारं प्रवृणे मियेधे गृत्सं कविं विश्वविदममूरम् (ऋ० ३।१९।१।)

"अग्निनाग्निः समिध्यते कविर्गृहपतिर्युवा। सार्कहि शुचिना शुचिः प्रशास्ता क्रतुना जनि। विद्वां अस्य व्रता ध्रुवा वया इवानुरोहते॥ (ऋ० २।५।४)

"होता पावकः प्रदिवः सुमेधा देवो देवान् यजत्वग्निरर्हन्" (ऋ० २।३।१) इत्यादि मन्त्रों में अग्निके लिए विपश्चित, गृत्स (मेधावी), विश्ववित्(सर्वज्ञ),अमर अर्थात् विद्वान्, सुमेधा अथवा बुद्धिमान् इन विशेषणों का प्रयोग पाया जाता है। इससे स्पष्ट प्रकट होता है कि अग्नि शब्द का प्रयोग भौतिक अग्नि के अतिरिक्त वेद में ईश्वर, जीव, विद्वान्, नेता विशेषतः ब्राह्मण आदि के लिए भी होता है। ऋषि दयानन्द जी ने 'अग्नि' के इसी प्रकार के अनेक अर्थ अपने भाष्य में दिये हैं। अन्यान्यभाष्यकारों ने भी 'अग्नि' शब्द के भिन्न २ अर्थ किये हैं। यथाः-

अग्नि "एष परमात्मा अग्निः (सायण अथर्व भा० २।१।४)

"विद्युत् (दुर्गा० पृष्ठ ३६३)

"वेदः, सर्वज्ञः(सन्ध्याभाष्य,पृष्ठ १४,५५,६०)

"परमेश्वरः (श्रीकण्ठ श्रीःसूक्त भाष्य पृष्ठ ३)

"विष्णुः (राघवेन्द्र यति' पृष्ठ ८,२३)

ब्राह्मण ग्रन्थों में 'अग्नि' शब्द के बहुत से अर्थ दिये हैं जिनमें से मुख्य ये हैं।

"अग्निर्वै सर्वा देवताः" (ऐतरेय ब्रा० १। पं० १, अ० १, खं० १)

इससे परमेश्वर और सांसारिक अग्नि का ग्रहण होता है।

"आत्मैवाग्निः" (शत० ६।७।१।२०)

"अग्निर्वै देवानां मृदुहृदयतमः "(शत० १।६ ६।२०

---

* 'अग्निमीळे पुरोहितं...ऋ० १।१।१ की व्याख्या में श्री आनन्दतीर्थ [श्री मध्वाचार्य] ने लिखा है:—

"यथैवाग्न्यादयः शब्दाः प्रवर्तन्ते जनार्दने।
तथा निरुक्तिं वक्ष्यामो ज्ञानिनां ज्ञानसिद्धये॥
इति तेनाग्नि शब्दो ऽयमग्र एवाभिपूज्यताम्।
अग्रयत्यमग्रनेतृत्वमसिमङ्गाङ्गनेतृताम्॥

इस प्रकार की निरुक्ति देकर इसे प्रधानतया ईश्वरवाचक तथा गौणतया भौतिकाग्निवाचक बताया है।

"अग्निर्वै रेतोधा" (तै० २।१।२।११)
"इयं पृथिवी अग्निः" (शत० ६।१।१।१४)
"वागेवाग्निः" (शत० ३।२।२।१३)
"अग्निर्वै पाप्मनोऽपहन्ता" (शत० २।३।३।१३)
"पुरुषोऽग्निः" (शतपथ० १४।४।१।६)
"योषा वाग्निः (शत० १४।६।१।१६)
"मन एवाग्निः" (शत० १०।१।२।३)
"प्राणो वाग्निः" (शत० ६।४।१।६८)
"वीर्यं वाग्निः" (तै० १।७।८।२)
"ब्रह्माग्निः" (शत० १।३।३।१६)
"अग्ने महाँ असि ब्राह्मण भारत" (कौ० ३।२) (शतपथ० १।४।२।१२)
"एष वा अग्निर्वैश्वानरो यद् ब्राह्मणः" (तै० २।१४।५)

इस प्रकार और भी अग्नि शब्द के अनेकों अर्थ हैं जिनसे ऋषि दयानन्द जी के भाष्य की पुष्टि होती है।

ऋषि दयानन्द जी सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में लिखते हैं:—

"अग्न्यादि नामों के मुख्य अर्थ से परमेश्वर का ही ग्रहण होता है··· । अग्नि आदि नामों से परमेश्वर के ग्रहण में प्रकरण और विशेषण नियमकारक हैं। इससे···सिद्ध हुआ कि जहां २ स्तुति, प्रार्थना, उपासना, सर्वज्ञ व्यापक, शुद्ध, सनातन और सृष्टिकर्त्ता आदि विशेषण लिखे हैं वहीं २ इन नामों से परमेश्वर का ग्रहण होता है···

जहाँ २ उत्पत्ति, स्थिति प्रलय, अल्पज्ञ, जड़ दृश्य आदि विशेषण भी लिखे हों वहां २ परमेश्वर का ग्रहण नहीं होता।"

वर्त्तमान काल का विचार भी ऋषि की इस उक्ति का पोषण करता है।

बङ्गाल के प्रसिद्ध विद्वान् द्विजदासदत्त एम० ए०, अग्नि आदि नामों द्वारा की गई परमात्मा की वैदिक पूजा के सम्बन्ध में लिखते हैं,,—

"What is Agni, that," says Kakṣ " is lighted for worship in every house, "गृहं गृहं उपतिष्ठते अग्निः" ?Was the Vedic Rishi a fool that he should blindly pray to the dead visible fire or agni, visible to all, that he had himself lighted by the friction of two sticks —that he should pray to the fire that can neither hear nor see, saying, "पितेव सूनवेऽग्ने. सूपायनो भव। सचस्वा नः स्वस्तये।" ऋ० १-६ 'Be thou readily accessible to us like a father to his son, be thou always with us that we may always attain what is good for us. Was it not God that he prayed to, God identified with the dead visible fire as the living spirit symbolised, is identified with its dead symbol, by the law of association of ideas.' *

अर्थात् अग्नि क्या है इसके सम्बन्ध में कक्षीवान कहता है कि "अग्नि गृह २ में पूजा के निमित्त प्रदीप्त की जाती है" गृहं गृहं उपतिष्ठते अग्निः। वेद का ऋषि क्या मूर्ख था कि वह निर्जीव- प्रत्यक्ष- अग्नि की स्तुति प्रार्थना करता। अग्नि जो कि सब को प्रत्यक्ष है जिसे कि उसने स्वयं दो अरणियों की रगड़ से उत्पन्न किया

* "Rigveda unveiled" P. 102

है, जो कि न सुन सकती है, न देख सकती है, उसकी पूजा वह यह कह कर करता है कि "हे अग्नि ! तू हमें इस प्रकार प्राप्त हो जैसे कि पिता पुत्र को, और तू सदा हमारे साथ रह, ताकि हम सदा कल्याण को प्राप्त कर सकें।" क्या वह परमात्मा नहीं, जिसकी पूजा ऋषि ने इन शब्दों में की है ? ऋषि ने केवल परमात्मा को निर्जीव प्रत्यक्ष अग्नि में देखा है। इसमें उसका भान किया है। जैसे कि लोग प्रायः जीव का अनन्य भाव देह में देखते हैं। इस प्रकार का देखना विचार साहचर्य का परिणाम हुआ करता है। * (क्रमशः)

*विद्वान् लेखक का भाव इन शब्दों में अत्यन्त स्पष्ट है। वह मानता प्रतीत होता है कि वेद में अग्नि आदि नामों द्वारा निर्जीव अग्नि आदि की पूजा नहीं है, अपितु इन नामों द्वारा उसी की पूजा की है जो कि इन निर्जीव अग्नि आदि की आत्मा है, सर्वात्मा है—लेखक

साहित्यिक कार्य की ओर

(लेखक–श्री प्रो० महेशप्रसाद जी मौलवी आलिम फाज़िल हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस

—: * :—

श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज ने अपने सार्वजनिक जीवन मे लगभग पहिले ग्यारह वर्षों में अधिकांश मौखिक कार्य ही किया है। तत्पश्चात बाकी लगभग ६ वर्षों मे लिखित कार्य ही किया । उनकी लिखित सामग्री पहिले भिन्न-भिन्न प्रेसों मे छपी । कठिनाइया हुई तो उन्ह अपना प्रेस (वैदिक यन्त्रालय) खोला जो अब अजमेर मे है । इसका मुख्य उद्देश्य उन्होंने यह रखा था कि यह उन्हीं के ग्रन्थों अथवा ऐसे ग्रन्थों को प्रकाशित किया करे जिनसे वैदिक सिद्धान्तों की पुष्टि हो।

श्री स्वामी जी ने अपने १६ वर्षों अथात लगभग साढ़े आठ हजार दिनो मे यदि केवल आठ सौ ही व्याख्यान दिये तो उनमे स कितने सुरक्षित हैं ? पूना के पन्द्रह व्याख्यानों का संग्रह उपदेश मंजरी नामक हिन्दी मे मिल जाये—यह बात यदि असम्भव नहीं तो कठिन जरूर है। बाकी व्याख्यानों का थोड़ा बहुत अंश उनके जीवन चरित्रों में मिलता है। कहने की आवश्यकता विशेष रूप स नही कि यदि वह लिखित रूप में सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेद भाष्य भूमिका व संस्कारविधि आदि न छोड़े होते तो आज हम पक्के दिवालिये होते। क्या श्री स्वामी जी महाराज के ग्रंथों की ही छाप नहीं जिसके कारण आर्य समाज कोई चीज है ?

परोपकारिणी सभा अजमेर पर श्री स्वामी जी के ग्रन्थों के प्रकाशन करने की जिम्मेवारी विशेष रूपसे रही है किन्तु वहा स ग्रन्थ जिस रूप मे प्रकाशित हुये है वह स्पष्ट ही है। श्री गोविन्द-राम हासानन्द व आर्य साहित्य मण्डल, अजमेर ने सत्यार्थप्रकाश को अधिक उपयोगी ढंग पर और अधिक सस्ता निकाला । रामलाल कपूर ट्रस्ट लाहौर ने आर्याभिविनय, आर्योद्देश्य रत्नमाला, व्यवहारभानु आदि को जितने उपयोगी व सुन्दर ढग से निकाला है वह स्पष्ट ही है और वैदिक यन्त्रालय (परोपकारिणी सभा) अजमेर के संस्करणो के मुकाबिले मे इनकी जितनी खपत व माग है उस पर प्रकाश डालने की विशेष आवश्यकता नही । निदान अति आवश्यक बात यह है कि श्री स्वामी जी की पुस्तकों को अधिक उपयोगी ढंग पर प्रकाशित करने का यत्न पहिले करे।

श्री स्वामी जी की पुस्तकों के कापी राइट की सत्ता अब केवल परोपकारिणी के हाथ मे नहीं रही । ऐसी अवस्था में उनको कोई दूसरी सभा या संस्था क्यो न अधिक उपयोगी ढंग पर छापने का प्रबन्ध करे। उदाहरणार्थ जानना चाहिये कि सत्यार्थ प्रकाश टीका-टिप्पणियों के साथ निकाला जाय, उसकी छपाई अच्छे कागज पर हो। इत्यादि।

दूसरी बात यह है कि कुछ ऐसे ग्रन्थों को अच्छे ढंग पर प्रकाशित किया जाय जिन से हमारी बुनियाद मजबूत हो । उदाहरणार्थ

ज्ञात हो कि आर्य समाज के दस नियमों की व्याख्या बहुत अच्छे ढग पर निकले। इत्यादि

जो लोग भारत के निवासी नहीं अर्थात भारत मे नहीं रहते है उन पर आर्यसमाज का रग चढ़ाने के लिये कुछ लोग समझते है कि उनको सबसे पहिले सत्यार्थ प्रकाश देना काफी नहीं। वास्तव मे आवश्यकता है कि उनको पहिले ऐसी पुस्तक या पुस्तकें दी जायें जिनसे आर्य समाज की बातों को जानने मे सुगमता हो अथवा उनकी रुचि आर्यसमाज की ओर हो श्री पण्डित गगाप्रसाद उपाध्याय जी की रचना 'दी लैण्ड मार्क्स आफ स्वामी दयानन्द (The Landmarks of Swami Dayanand) अग्रेजी मे ऐसी रचना है जो पहिले पहिल किसी विदेशी के हाथ म दी जाय तो उसका ज्ञान कुछ बढगा और उसकी रुचि बढेगी, वह सत्यार्थप्रकाश के समझने मे सहायक होगी। निदान इस प्रकार का ऐसा सेट केवल अग्रेजी मे ही नही बल्कि अनेक भाषाओ मे तैयार होना चाहिये। ऐसी अवस्था मे ही अधिक उपकारी कार्य हो सकता है और जिन लोगों के पास हमारा उपदेशक नहीं पहुचेगा वहा हमारा साहित्य ही पहुच कर अपूर्व चमत्कार दिखावेगा।

सार्वदेशिक की ओर स योजना है कि दस लाख की कम्पनी बने, आर्य प्रातिनिधि सभा यू पी. की योजना है कि पाच लाख की कम्पनी बने। परोपकारिणी सभा अजमेर का विचार है कि उच्चकोटि की एक मासिक पत्रिका निकले। इस प्रकार जो लोग समाज की शिथिलता को दूर करना चाहते हैं और प्रचार कार्य को आगे बढाना चाहते है वे लोग मेरे शब्दों (निवेदन) पर विचार करेंगे।

ऊपर के शब्दोसे कदापि यह न समझा जाय कि मै आर्यसमाज के निमित्त पत्र-पत्रिकाओं का विरोधी हूँ पत्र पत्रिका निकलें, अच्छी निकलें, समय पर निकलें, ईश्वर करे कि दैनिक ही नहीं बल्कि दिन मे दो बार कोई पत्र निकाला जाय। किन्तु इनको ही पूर्णरूप से आर्यसमाज के प्रचार का साधन न समझा जाय यदि मै गलती नहीं करता तो साफ बात यह है कि अच्छे स अच्छे पत्र अथवा पत्रिका म चाहे कितना ही सुन्दर लेख निकले किन्तु कुछ ही दिनों के पश्चात् उस का प्राप्त करना अथवा प्रचार करना एक कठिन काम है। मेरे विचार मे इस समय केवल एक साप्ताहिक पत्र हिन्दी मे अच्छे ढग पर चलाना काफी होगा और शक्ति को ग्रन्थों के प्रकाशन में विशेषरूप म लगाना अधिक उपयोगी होगा।

हा अन्त मे यह कहे बिना भी नहीं रह सकता कि प्रोपेगण्डा के लिए केवल अखबार ही आवश्यक वस्तु नही। हैण्डबिल द्वारा भी बहुत काम हो सकता है। क्या यह बात सत्य नहीं कि ईसाई लोग जो प्रचार के कार्य मे आगे हैं वह हैण्डबिल से बहुत काम ले रहे है। जो लोग ईसाई नहीं है उनके पास अपने अखबार पहुँचाने की कोशिश नहीं करते बल्कि अपने हैण्डबिल व पुस्तको को ही उनके पास पहुँचाने का विशेष उद्योग करते हैं। फलत. अपने कार्य को बहुत विचार कर करना चाहिए और जो लोग सफल हो रहे है उनके ढग से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

महेश प्रसाद

आर्य जगत्

लाहौर हिन्दुस्तान में रहे

सार्वदेशिक सभा की अपील

आर्य समाज सदा ही भारत के विभाजन का विरोध करता रहा है। आर्य समाज की शिरोमणि संस्था सार्वदेशिक सभा इस विषय अन्त तक जागरूक रही और २ जून को होने वाले नेता सम्मेलन के अवसर पर भी उसने वायसराय और भारतीय नेताओं के सामने आर्य समाज का दृष्टि कोण रक्खा। परन्तु ३ जून को जो योजना अन्तिम रूप से स्वीकार की गई उसके अन्तर्गत हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के रूप में देश का विभाजन अवश्यम्भावी होगया है। इतना ही नहीं, पंजाब के बटवारे के फल स्वरूप लाहौर केभी पाकिस्तानमे सम्मिलित किये जाने की सम्भावना है। जहां तक देश के विभाजन और लाहौर के पाकिस्तान मे सम्मिलित होने का सम्बन्ध है, आर्य समाज इस योजना का स्वागत नहीं कर सकता। भारत भर में आर्य समाज का सबसे अधिक प्रभाव पंजाब में है। और लाहौर इसका केन्द्र है। लाहौर में आर्य प्रतिनिधि और आर्य प्रादेशिक सभाओं के प्रधान कार्यालय हैं। केवल लाहौर नगर में ही आर्य समाज की कई करोड़ रुपये की सम्पत्ति है ऐसे स्थान मे आर्य समाज ऐसे लोगों का शासन कैसे सहन कर सकता है जिनको वह अपनी तर्कशक्ति के कारण सदा ही खटकता रहा है। सच तो यह है कि लाहौर का नाम आर्य समाज के इतिहास और परम्परा से इस प्रकार जुड़ गया है कि आर्यसमाज का ध्यान आते ही लाहौर भी याद आजाता है इसलिए आर्य-समाज वायसराय महोदय और भारतीय नेताओं से अनुरोध करता है कि वे पंजाब का विभाजन करते हुए इस बात का पूरा पूरा ध्यान रक्खें कि लाहौर पाकिस्तान मे न जाकर हिन्दुस्तान में ही रहे और इस निमित्त चिनाव नदी को ही विभाजन की सीमा स्वीकार करे।

मै देश और विदेश की आर्यसमाजों से अपील करता हूँ कि वे इस विषय मे सतर्क रहें और उपयुक्त आशय का प्रस्ताव पास करके सार्वदेशिक सभा, वायसराय और पं० जवाहर लाल नेहरू आदि नेताओं को तत्काल भेज देवें।

. लक्ष्मीदत्त दीक्षित
उप मन्त्री सार्वदेशिक सभा, देहल ।

श्री म० नारायण स्वामी जी का स्वास्थ्य

श्री स्वामी जी महाराज की अस्वस्थता के समाचार लगभग तीन मास से सुन रहा था। तभी से प्रबल इच्छा थी कि जाकर दर्शन करूं। इसी निमित्त रामगढ़ पहुंचा और दर्शन किये। मुझे इस बात की प्रसन्नता हुई कि समाचारो को सुनकर जो अनुमान होता था श्री स्वामी जी का स्वास्थ्य उससे अच्छा पाया। इसका एकमात्र कारण यही प्रतीत होता है कि श्री स्वामीजी का संयम पूर्ण जीवन रोग का पूरी तरह मुकाबला कर रहा है। इस समय श्री स्वामी जी को दो कष्ट हैं-एक तो पेशाब का और दूसरे ज्वर का। पेशाब के लिये लाहौर के डाक्टरों ने एक कृत्रिम मार्ग बना दिया था, उसी से पेशाब होता है,

स्वाभाविक मार्ग से नहीं। इससे असुविधा होना अनिवार्य है। दूसरे गत १५-२० दिन से श्री स्वामी जी को कुछ टैम्प्रेचर हो जाता है। इससे भूख पर भी असर हो रहा है और शरीर के सामान्य स्वास्थ्य पर भी। सामान्य उपचार चल रहा है। विशेष उपचार के लिये परामर्श हो रहा है। अभी गर्मी में श्री स्वामी जी नीचे नहीं आना चाहते।

कई मित्रों से कई बार यह कहते हुए सुना कि समझमें नहीं आता कि श्री स्वामी जी जैसे संयमी, सदाचारी व्यक्ति को इस प्रकार का कष्ट क्यों होना चाहिये। कुछ ने तो यह भी कहा कि ईश्वर महा अन्यायी है जो इस प्रकारके व्यक्तियों को भी कष्ट देता है। पर मैं इन मित्रों के विचार से सहमत नहीं। मेरी समझ में प्राणिशास्त्र अथवा शरीर-सम्बन्धी नियमों का अच्छा या बुरा प्रभाव प्रत्येक अच्छे या बुरे व्यक्ति पर पड़ता है। यदि डाक्टरोंका कीटाणुओंका सिद्धान्त ठीक है तो ज्ञान अथवा अज्ञान से लगे हुए कीटाणु अच्छे से अच्छे व्यक्ति पर भी प्रहार करेंगे और वह उनका शिकार होगा। इसके अतिरिक्त रोग अथवा कष्ट का होना बहुत से कारणों पर निर्भर है, जिनका पूरा २ ज्ञान होना असम्भव सा है। इस लिये, मेरी सम्मति में किसी व्यक्ति के संयमी, सदाचारी होने का भाव यह नहीं कि उसे रोग होता है या नहीं अपितु यह है कि वह रोग का मुकाबला किस प्रकार करता है। संसार के इतिहास में अनेक बड़े २ महात्मा रोगों के शिकार होकर मृत्यु के ग्रास हुए हैं-पर अन्तर उनका रोग से मुकाबला करने में होता है। वे हंसते हुए, साहस के साथ प्रसन्नता से रोग से युद्ध करते हैं। श्री स्वामीजी महाराज के बारे में भी यही बात है। उनका आत्मबल और संयम अब भी उनका साथ दे रहा है और इसी में उनकी महत्ता है।

श्री स्वामीजी के निर्देश से दो सूचनायें दी जाती हैं। आशा है इनका पालन किया जावेगा।

(१)

अनेक सज्जन श्री स्वामीजी के दर्शन अथवा परिचर्य्या के लिये रामगढ़ आ रहे हैं, इससे श्री स्वामीजी को बहुत असुविधा होती है। यहाँ पर न तो इतने लोगों के रहने का स्थान है न भोजन आदि का। ऐसी दशामें उनके आने से सहायता मिलने के स्थान पर असुविधा ही होती है। इस लिये भविष्य में किसी भी सज्जन को पहिले से अनुमति प्राप्त किये बिना यहाँ न आना चाहिये।

(२)

कुछ दिन हुए किन्हीं सज्जन ने समाचारपत्रों में यह प्रकाशित कर दिया था कि श्री स्वामीजी की सेवा के लिये कुछ सज्जनों की आवश्यकता है। श्री स्वामीजी को यह अच्छा नहीं लगा। वे चाहते हैं कि भविष्य में इस प्रकार की कोई सूचना न निकाली जावे।

श्री स्वामी जी के पास दो तीन भक्त हैं औरों की आवश्यकता नहीं।

—महेन्द्रप्रताप शास्त्री
(लखनऊ)

सार्वदेशिक सभा की अंतरंग सभा का अधिवेशन

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा का साधारण अधिवेशन ३–८–४७ को देहली मे होगा।

गंगाप्रसाद उपाध्याय
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, श्रद्धानन्द बाजार, देहली।

आवश्यक सूचना।

पंजाब के दंगे फिसादों को आरम्भ हुए चार मासके लगभग होगये है परन्तु उनमे किसी प्रकार की कमी नहीं हुई। और पीड़ितों की संख्या दिन प्रति दिन बढ़ती चली जा रही है। कई स्थानो पर हमारी भिन्न२ संस्थाओ की ओर से शरणागतों को सहयोग देने का कार्य किया जा रहा है, परन्तु जितना अधिक कार्य करते हैं उतना ही वह अधिक अपर्याप्त सिद्ध होता है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में गुड़गावों आदि कई स्थानों पर कार्य हो रहा है। अब देहली मे आर्य समाज रिलीफ सोसाइटी स्थापित की गई है। लोधीरोड, आर्य समाज बाजार सीता राम,, आर्य समाज करौल बाग, कैलाश नगर व दीवान हाल मे लगभग ६२१ शरणार्थी आ चुके हैं। आज कल ५०० के लगभग लोगों को प्रति दिन सहायता दी जा रही है। यह कार्य उस धन स किया जा रहा है जो पजाब की सहायतार्थ हमको प्राप्त हुआ है। दिन प्रति दिन रुपये की आवश्यकता अनुभव की जा रही है। दानो महानुभावो स निवेदन है कि शीघ्र स शीघ्र धन की सहायता करे जिससे कार्य में रुकावट न हो।

नारायणदत्त (गगाप्रसाद उपाध्याय एम. ए)
कोषाध्यक्ष मन्त्री

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
श्रद्धानन्द बाजार, देहली।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का

उन्तालीसवां वार्षिक विवरण

(१३—२—४६ से १२—२—४७ तक)

[गताङ्क से आगे]

काशी विश्वविद्यालय की वेद मध्यमा श्रेणीमें एक कन्या का प्रवेश

जैसा कि गत वर्ष की रिपोर्ट में उल्लेख किया गया है श्री० प्रो० महेश प्रसाद जी मौलवी आलिम फाजिल की सुपुत्री कल्याणी देवी के विश्वविद्यालय काशीकी वेद मध्यमा श्रेणीमें प्रवेश की अनुमति के लिये बनारस जाने,विश्वविद्यालय के अधिकारियों से मिलने और अपनी रिपोर्ट सभा में प्रस्तुत करने का कार्य्य श्री प्रो० महेन्द्र-प्रताप जी शास्त्री के सुपुर्द हुआ था। वे बनारस गए और उन्होंने सभा में अपनी विस्तृत रिपोर्ट भेजी जिस पर ३०-६-४६ की अन्तारङ्गमें विचार होकर निम्न निश्चय हुआः—

(१) स्त्रियों को वेदाध्ययन और कर्म कांड करने का अधिकार है इसके समर्थन में ट्रैक्ट छपवा कर विद्वानों में वितीर्ण किया जाय तथा वह काशी विश्व विद्यालय के अधिकारियों को भी भेजा जाय। यह भी निश्चय हुआ कि ट्रैक्ट में निम्न विषय होने चाहिएः—

(१) स्त्रियों के वेदाध्ययन के सम्बन्ध में प्रमाण तथा उदाहरण

(२)स्त्रियों के पौरोहित्य कर्म करने के प्रमाण तथा उदाहरण।

इस ट्रैक्ट के लिखने के लिये निम्न विद्वानों से प्रार्थना की जायः—

(१) श्री० पं० शिव शर्मा जी आर्योपदेशक।

(२) जे० पी० चौधरी काशी।

मन्त्री सभा श्री० पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति को भी ट्रैक्ट के लिखने की प्रेरणा करें।

(२) हिन्दू विश्वविद्यालय काशी को लिखा जाय कि कुमारी कल्याणी के धर्मविज्ञान विद्यालय की मध्यमा श्रेणीमें प्रवेश की अनुमति देने के प्रश्न पर विचार के लिए विश्वविद्यालय ने जो उपसमिति नियुक्त की है उसमें आर्य्य-समाज का एक सदस्य लिया जाय अथवा जब उपसमिति इस विषय पर विचार करने के लिए बैठे तब २ आर्यसमाजी विद्वानों को अपना मन्तव्य समिति के सम्मुख उपस्थित करने का अवसर दिया जाय।

यह भी निश्चय हुआ कि विश्वविद्यालय से स्वीकृति आने पर श्रीप्रधान जी समिति के लिए सदस्य अथवा २ विद्वानो की नियुक्ति करदेवें।"

सभा-कार्य्यालय से ५-७-४६ को एक विशेष पत्रके साथ अन्तरंग सभा का उपयुक्त निर्णय हिन्दू विश्वविद्यालय के वाइस चान्सलर महोदय की सेवा में भेजा गया जिसके उत्तरमें सर्वपल्ली सर राधा कृष्णन् वाइस चान्सलरने अपने १०-७-४६ के उत्तर में लिखा-

"You may be sure that the uni. versity authorities are fully aware of the Arya Samaj Point of view and whatever is possible will be done"

अर्थात् निश्चित रहें कि विश्वविद्यालय के अधिकारी आर्य्यसमाज के दृष्टिकोण से पूर्ण परिचित हैं। १४-६-४६ को सभाकार्य्यालय में हिन्दू विश्वविद्यालय की उपसमिति का निश्चय प्राप्त हुआ और इस निश्चय के अनुसार कुमारी कल्याणी को वेद मध्यमा क्लासमें प्रवेश की अनुमति मिलकर यह विषय समाप्त हुआ।

The Committee appointed by the Senate to consider the question of admission to the College of Theology with Pandit Madan Mohan Malviayji as chairman, the Vice chancellor, the Principals of the Colleges of Oriental Learning and Theology and several other members, has now submitted its report, which is as follows. :—

(1) The existing Colleges of oriental Learning and Theology shall be amalgamated into Sanskrit Mahavidyalaya under the Faculty of oriental Learning. This College will teach the different branches of Sanskrit Learning, including the Vedas upto the Acharya stage and shall be open to all irrespective of caste creed or sex.

(2) The Faculty of Theology will arrange for the religious instruction of the Hindu Students and training in Paurohitya and Karam Kand (Hindu Rituals and Ceremonies) instruction in Paurohitya and Karma Kand shall be in Conformity with the tenets and principles of traditional Hinduism as based on Sruti, Purana, Itihas and Sadachara.

(3) Permission for admission to the Madhyama Veda class of Sanskrit Mahavidyalaya may be granted to Miss Kalyani Devi.

यह सभा श्री० प्रो० महेन्द्र प्रताप जी शास्त्री को उनके यत्न और परिश्रम के लिए धन्यवाद देती है।

अंग्रेजी दैनिक

श्री पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय मन्त्री सभा के प्रस्ताव पर सभा की अन्तरंग सभा ने अपनी ६। २। ४७ की बैठक में निम्न निश्चय द्वारा अंग्रेजी का दैनिक निकालने का निश्चय किया है:-

"वर्तमान परिस्थिति को देखते हुये यह सभा आवश्यक समझती है कि अंग्रेजी का एक दैनिक पत्र निकाला जाय और उसके प्रबंध के लिये १० लाख रुपये की इस सभा के तत्वावधान में एक लिमिटेड कम्पनी बनाई जाय और जब ४ लाख रुपया एकत्र हो जाय तब फिर सभा के सामने रिपोर्ट प्रस्तुत की जाय। यह भी

निश्चय हुआ है कि इस प्रार्थमिक आन्दोलन के लिये निम्न सज्जनों की उपसमिति बनाई जाय।

(१) श्री प० गंगाप्रसादजी उपाध्याय मन्त्री सभा। (संयोजक)

(२) ,, ला० नारायणदत्त ,,

(३) ,, चौ० देशराज ,,

(४) ,, ला० हरशरणदास ,,

(५) ,, मिहिर चन्द्र धीमान ,,

लिमिटेड कम्पनी का मेमोरडम आफ् एसोसियेशन तयार कर लिया गया है तथा Article of Association तैयार हो रहा है। ये दोनों सभा की अन्तरङ्ग मे स्वीकृति के लिये प्रस्तुत होने वाले हैं।

प्रसन्नता है कि सभाके इस निश्चयका व्यापक स्वागत हो रहा है। ४४-४५ तक १०-१०) के २६८५ के हिस्सों की माँग अंकित की जा चुकी है। सभा की इच्छा और यत्न है कि हिस्से अधिकांश रूप मे आर्य समाजे, प्रान्तीय सभायें और आय संस्थाए ही क्रय कर। फार्मा आदि के स्वीकृत तथा प्रकाशित हो जान पर नियमित रूप से कार्य आरम्भ हो जायगा।

सिरोही स्टेट में आर्यसमाज, सोसाइटीज रजिस्ट्रेशन ऐक्ट से मुक्त

इस वष सिरोही राज्य की ओर स आय समाज सिरोही को राज्य के सोसाइटीज ऐक्ट के अनुसार रजिस्ट्री कराए जाने की आज्ञा हुई थी। आर्यसमाज के निषेध व विरोध के होते हुए भी राज्याधिकारी अपनी आज्ञा पर डटे हुए थे। इस सभा की ओर से इस विषयक अबतक की नीति आर्यसमाज सिरोही पर स्पष्ट कर दी गई थी। इस समाज के उपप्रधान तथा राजस्थान सभा के प्रधान श्री० कुंवर चाद करण जी शारदा ने १४-८-४७ को सिरोही जाकर वहा के राज्याधिकारियों से भेंट की और इस सम्बन्ध में उनको आर्यसमाज के दृष्टिकोण से अवगत किया। प्रसन्नता है सिरोही स्टेट ने आर्यसमाजके उपयुक्त दृष्टिकोणका आदर करते हुए,आर्यसमाजको रजिस्ट्रेशनसे मुक्तकर दिया।

उपसमितियाँ

१६ ४ ४६ की अन्तरङ्ग सभा द्वारा इस वषका कार्यविभाजन करते समय निम्न उपसमितियां निर्मित हुई थी।

आर्य्यवीरदल उपसमिति

(१) प्रधान सार्वदेशिक सभा

(२) मन्त्री ,, ,,

(३) कोषाध्यक्ष ,, ,,

(४) श्री. चौ देशराज जी

(५) ,, ला हरशरण दास ,,

(६) ,, कु वर चान्दकरण शारदा जी

इस समिति के संयोजक तथा प्रधान सेनापति के स्थान की पूर्तिका अधिकार मन्त्री सभा को दिया गया था। इस वर्ष मन्त्री सभा द्वारा ही इस समिति के कार्यों का संचालन हुआ।

३०-६-४६ की अन्तरङ्ग सभा ने अपने निश्चय स २० के द्वारा आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब और संयुक्तप्रान्त को आर्यवीरदल के उद्देश्य से प्रान्तीय समितियाँ स्वीकार किया और अन्य प्रान्तीय सभाओं को भी जहां वीरदल का काम हो रहा है वा आगे होवे प्रान्तीय समितिया स्वीकार करने का मन्त्री सभा को अधिकार दिया।

इसी निश्चय के द्वारा अन्तरङ्ग सभा ने प्रान्तीय सभाओं द्वारा संचालित आर्यवीरदलों और उनके कार्यकर्त्ताओं को नियमित स्वीकृत किया।

आर्यवीरदल सम्बन्धी वर्ष भर के कार्य की रिपोर्ट पृथक् है। दलके संगठन और संचालन का कार्य इस वर्ष भी श्री ओम्प्रकाशजी स. प्रधान सेनापति के सुपुर्द रहा।

गाजियाबाद भूमि

(१) श्री लाला नारायणदत्त जी
(२) „ चौ० देशराज जी (संयोजक)
(३) „ ला० हरशरणदास „

इस उप समिति की एक बैठक १२.१.४७ को हुई। उप समिति की इस बैठक की रिपोर्ट पर ६.२.४७ की अन्तरङ्ग सभा की बैठक मे विचार होकर निम्न निश्चय हुआः-

"इस भूमि के मेरठ से देहली जाने वाली सड़क के पास वाले बड़े भाग के 'आर्य नगर' को बसाने के लिये प्लाट्स बनाए जांय और यह विषय पुनः उपसमिति को भेजा जाय कि वह प्लाटस का प्लैन बनाकर आगामी बैठक मे प्रस्तुत करे।

इस समय यह विषय इस समिति के सुपुर्द है।

धन विनियोग उपसमिति

(१) श्री ला० नारायणदत्त जी (संयोजक)
(२) " " ज्ञानचन्द्र „
(३) " पं० इन्द्र „

आर्य समाज ऐक्ट विषयक

(१) श्री माननीय घनश्याम सिंह जी
(२) „ पं० रामदत्त शुक्ल „
(३) „ सेठ मदन मोहन जी (संयोजक)
(४) „ पं० गंगाप्रसाद जी चीफ़ जज
(५) „ दीवान बद्रीदास जी „
(६) „ बा० ब्रजनाथ जी मित्तल

इस उपसमिति की रिपोर्ट पर कि सभा को सर्व प्रथम आर्यसमाज के उपनियमों की सभासद बनने विषयक धारा मे आवश्यक परिवर्तन करना चाहिए अन्तरंग सभा ने अपनी ३०-६-४६ की बैठक मे परिवर्तन का निश्चय करके परिवर्तनो का ड्राफ्ट बनाने का कार्य श्री० सेठ जी के सुपर्द किया था। इस ड्राफ्ट की प्रतीक्षा की जा रही है।

आर्य पौरोहित्य परीक्षा पटल

आर्य जगत् मे प्रामाणिक आर्य पुरोहित तय्यार करने के उद्देश्य से आर्य पौरोहित्य परीक्षाओं की योजना की गई है और २७-८-४४ की अन्तरंग के नि० सं० ११ के अनुसार निम्न परीक्षा पटल बनाया गया हैः—

अध्यक्ष—श्री० महात्मा नारायण स्वामी जी
प्रस्तोता– „ पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय
सदस्य– " पं० प्रियव्रत जी विद्यावाचस्पति
„ „ धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति
„ „ रामदत्त जी शुक्ल

पटल ने श्रावणी के अवसर पर प्रति वर्ष इस परीक्षा के करने का निश्चय किया है। और सम्प्रति गुरुकुल वृन्दावन, गुरुकुल कांगड़ी, बलिदान भवन, दयानन्द वेद विद्यालय देहली, परीक्षा केन्द्र नियत किए है। आगामी वर्ष ३१ अगस्त वा १२-९-४७ को परीक्षा होगी।

स्थिर पुस्तकालय

इस वर्ष इस पुस्तकालय में २७० पुस्तकों की

की वृद्धि हुई जिनमें से २२१पुस्तकें ८३७|=)की क्रय की गईं और ४४ धनियों द्वारा प्राप्त हुईं। इस समय पुस्तकालय में विविध धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक सामाजिक और संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, उर्दू, बंगाली, मराठी, कर्णाटक, तिलगु, तामिल, जर्मन आदि विषयों की विविध भाषाओं की लगभग ४००० पुस्तकें हैं।

सार्वदेशिक सभा पुस्तकालयार्थ

उपहार स्वरूप प्राप्त पुस्तकें

श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी एम० ए० रिटायर्ड चीफ़ जज द्वारा प्रदत्त	४
गाजियाबाद आर्यसमाज के एक सदस्य द्वारा	४
श्री ज्योतिः स्वरूप जी इटावावासी आजीवन सदस्य सार्वदेशिक सभा द्वारा	१४
श्री हर विलास शारदा जी द्वारा	१
श्री भोपले हीरेखेड़ (अकोला) द्वारा	१
आर्यसमाज हैदराबाद दक्षिण द्वारा	२
आर्यसमाज देवरिया द्वारा	१
स्वाध्याय मण्डल औंध द्वारा	१२
पंजाब प्रतिनिधि सभा द्वारा	१
डा० गोयल द्वारा	१
डा० लाल चन्द जी द्वारा	३

सभा की ओरसे इन सब महानुभावोंको धन्यवाद।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की जायदाद व सम्पत्ति

सार्वदेशिक तथा बलिदान भवन

सभा के पास देहली में २ भवन, सार्वदेशिक और बलिदान भवन हैं। सार्वदेशिक भवन ११०) और बलिदान भवन का सब से नीचे का भाग अर्थात् दो दूकानें ७०) मासिक किराये पर चढ़ी हुई हैं। ५०) मासिक सभा कार्यालय से किराया लिया जाता है। सार्वदेशिक भवन के किराये से १३२०) और बलिदान भवन के किराये से १४४०) की आय हुई। बलिदान भवन के म्यूनिसिपल टेक्सों पर ५७०) व्यय हुआ।

गाजियाबाद भूमि

देहली से मेरठ और गाजियाबाद से मेरठ जाने वाली सड़कों के बीच में यह भूमि स्थित है। यह ४३ बीघे १८ बिस्वे है और १०००) में क्रय की गई थी।

श्रद्धानंद नगरी भवन

श्रद्धानन्द नगरी देहली में इस सभा के अधीन श्रद्धानन्द दलितोद्धार सभा द्वारा निर्मित २ भवन हैं। १. आर्य समाज मन्दिर। २. पाठशाला भवन। इन दोनों की लागत ६३६१) है।

समयपुर पाठशाला

देहली के निकट ग्राम समयपुर में इस सभा के तत्वावधान में एक दलितोद्धार पाठशाला चल रही है। पाठशाला का व्यय देहली डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की २०) मासिक की सहायता और पाठशाला की अपनी भूमि की आय से चलता है। पाठशाला के नाम ६० बीघे कच्ची जमीन तथा १३००) की लागत के अपने भवन हैं। एक कुंआ पाठशाला में और एक भूमि में बना हुआ है।

वैदिक आश्रम ऋषिकेश

इस आश्रम की भूमि तथा उस पर के मकानों का मूल्य १४००) है यह सभा की सम्पत्ति है। यह आश्रम प्रबन्ध के लिये वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर के अधीन किया हुआ है।

शोलापुर समाज मंदिर

शोलापुर में सभा के मूल्य पर लगभग १०० वर्ग गज भूमि समाज मन्दिर के लिये ८६२२) में क्रय की गई है।

जोधपुर की सम्पत्ति

जोधपुर में निम्न सम्पत्ति सभा के नाम में दर्ज है:–

(१) ३५६५ गज भूमि सर प्रताप हाई स्कूल के सामने श्री रणछोड़दास के मन्दिर के पास।

(२) आर्य श्मशान २७१२ गज भूमि।

(३) गुरुकुल मारवाड़ मंडौर ७ मकान २५३३६ वर्गगज कुल भूमि।

(४) गौशाला मारवाड़ मंडौर। १ कोठरी चारा डालने का ४ कोठरी व २ बरांडे। भूमि ३०००० गज।

सार्वदेशिक पत्र (हिन्दी मासिक)

इस पत्र का सम्पादन इस वर्ष भी श्री पं० धर्म देव जी विद्यावाचस्पति करते रहे। इस वर्ष चन्दे व विज्ञापन से ४२०७॥≡)॥ की आय व ६३३१) का व्यय हुआ। घाटा २१२३–) रहा। सम्पादक तथा लेखक के वेतन इस वर्ष इस मद में डालने से घाटे की राशि बढ़ गई। इस समय पत्र का वार्षिक मूल्य ५) है। ग्राहक संख्या ७३४ है पत्र की आर्थिक स्थिति को सुधारने और ग्राहक संख्या को बढ़ाने का यत्न किया जारहा है जिसमें आर्य जनता के पूर्ण सहयोग की आवश्यकता है। तथा यदि प्रत्येक ग्राहक कम से कम २ और मित्रों को ग्राहक बनाना अपना कर्त्तव्य समझे तो इस पत्र की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी हो सकती है।

इस वर्ष सार्वदेशिक के निम्न लिखित २ विशेषांक प्रकाशित किये गये:–

१. ऋण्यंक नवम्बर १६४६

२. श्री श्रद्धानन्द बलिदानाँक दिसम्बर १६४६

जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ की संक्षिप्त रिपोर्ट

[श्री० आचार्य भद्रसेन जी संचालक संघ द्वारा प्रेषित] .

यह संघ वर्तमान जाति भेद को दूर करने, आर्य जाति में परस्पर गुण कर्मानुसार विवाह सम्बन्ध करने तथा सहयोग और सहानुभूति द्वारा आर्यों में परस्पर भ्रातृ-भाव उत्पन्न करने के लिए "आर्य सार्वदेशिक सभा" के संरक्षण में लगभग एक वर्ष से स्थापित है। इस एक वर्ष के स्वल्प काल मे भी संघ के पास अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अतिन्यून साधन होते हुए भी संघ ने प्रशंसनीय कार्य किया है।

देहली, कानपुर, लुधियाना मे संघ की शाखाएं खुल चुकी है। देहली शाखा के अध्यक्ष श्रीमान् पं० धर्मदेवजी विद्यावाचस्पति तथा संचालक श्रीमान् म० गोविंदराम हासानन्द जी है। कानपुर शाखा के अध्यक्ष श्रीमान् बाबू अम्बा प्रसाद जी एडवोकेट तथा संचालक आचार्य मेधार्थी जी है। लुधियाना शाखा के अध्यक्ष बा० प्यारेलालजी इंजीनियर तथा संचालक म० किशोरीलालजी भूतपूर्व मन्त्री आर्यसमाज और उपसंचालक पं० सोमकीर्तिजी वेदालङ्कार पुरोहित, आर्यसमाज है। सी० पी० बिहार आदि प्रान्तों में भी संघ की शाखा खोलने के बारे मे पत्र-व्यवहार हो रहा है। आशा है कि वहाँ भी शीघ्र ही संघ की ५ शाखाएं खुल जायेंगी।

अब तक संघ के २५० सदस्य तथा २५ सहायक सदस्य बन चुके हैं। इस समय संघ के सदस्यों के ५० लड़के, ३० कन्यायें और १० विधुर विवाह योग्य हैं। संघ उनके सम्बन्ध का भरसक प्रयत्न कर रहा है। किन्तु सदस्यों की संख्या पर्याप्त न होने के कारण संघ इस कार्य मे पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं कर सका। सदस्यों की संख्या जितनी भी अधिक बढ़ती जायेगी उतनी ही विवाह की समस्या हल होती जायगी। इतनी स्वल्प संख्या होते हुए भी संघ द्वारा जो सम्बन्ध निश्चित हुए है वह केवल अन्तर्जातीय ही नहीं अपितु अन्त: प्रान्तीय भी हैं, उनमे से एक विवाह संस्कार १६ नवम्बर को फिरोजाबाद जिला आगरा मे हुआ है। कन्या के पिता श्रीमान डाक्टर प्यारेलाल जी फिरोजाबाद के प्रसिद्ध आर्य कर्त्ता जन्म से गहलौत राजपूत है तथा वर सी० पी० के उत्साही युवक जन्म से श्रीवास्तव कायस्थ है। इस अन्तर्जातीय विवाह का युवकों पर इतना प्रभाव पड़ा कि विवाह संस्कार के समाप्त होते ही उसी समय पांच युवक संघके सदस्य बन गए और एक युवक ने तो जो आगरा कालेज मे पढ़ता है, यहां तक कहा कि हालांकि मेरा विवाह सम्बन्ध (वाग्दान) मेरी बिरादरीमें हो चुका है, किन्तु मै इस सम्बन्ध को तोड़कर भी अन्तर्जातीय विवाह करूंगा। दूसरा विवाह ५ दिसम्बर को सोजत, जोधपुर स्टेट में हुआ है। कन्या के पिता श्रीमान् म० पन्नालालजी नेत्र-वैद्य जोधपुर स्टेट निवासी हैं और अब कई वर्षों से हिंगोली दक्षिण हैदराबाद में नेत्रों की चिकित्सा तथा वैदिक धर्म प्रचार में पूर्ण उत्साह से भाग ले रहे हैं तथा जन्म से भटनागर हैं

कायस्थ है। और वर महोदय श्रीमान् पण्डित मेधातिथिजी उपदेशक आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब जन्म से मेड़ क्षत्रिय हैं। कन्या के पिता ने विवाह अवसर पर लगातार तीन दिन तक श्री० पण्डित धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति, श्रीमान् पण्डित सुरेन्द्रजी काव्यतीर्थ, श्रीमान् पण्डित भगवानस्वरूप जी न्यायभूषण आदि प्रसिद्ध विद्वानों तथा मुझे बुलाकर वैदिक धर्म तथा संघ का प्रचार भी कराया जिसका बड़ा उत्तम प्रभाव पड़ा। इस अवसर पर वधू पक्ष से ८७) रु० और वर पक्ष से ११) रु० दान रूप में संघ को प्राप्त हुए, दोनों पक्षों ने अन्य आर्य संस्थाओं को भी पर्याप्त दान दिया। इसी प्रकार और भी कइ सम्बन्धों के होने की सम्भावना है।

यदि संघ को एक योग्य उपदेशक मिल जाय और उसके द्वारा संघ के उद्देश्यों का प्रचार और संघ के सदस्यों की संख्या अधिक हो जाय तो इस प्रकार के अन्तर्जातीय विवाह पर्याप्त मात्रा में होने लग पड़ें। इन विवाहों द्वारा जहाँ जन्म गत जात-पात का नाश, संघ के उद्देश्यों का प्रचार तथा सदस्यों की वृद्धि होगी वहां संघ की सहायता द्वारा आर्थिक सहयोग भी मिल जायगा जिसके अभाव के कारण संघ के कई महत्व पूर्ण कार्य रुके पड़े हैं। अतः मै दानी महानुभावों से प्रार्थना करूंगा कि वे संघ को पर्याप्त सहायता प्रदान करने की कृपा करें। जिससे कि संघ एक योग्य विद्वान् को रख कर संघ के उद्देश्यों का प्रचार तथा संघ के अधिक से अधिक सदस्य बनाने में अग्रसर हो सके।

प्रसन्नता की बात है कि एक कुरेशी खानदान की देवी जो कि बड़ी दबंग तथा सच्ची वीराङ्गना है वैदिकधर्म को स्वीकार कर संघकी सदस्य बनी है। संघ के पास जि० आगरा के एक स्थान से सूचना आई है कि एक नव मुसलिम परिवार जिसमें ६ सदस्य हैं वैदिक धर्म में प्रविष्ट होने को तय्यार हैं बशर्ते कि उसकी योग्य कन्याओं के विवाह का संघ प्रबन्ध करदे। संघ की ओर से इन्हें लिख दिया गया है कि आप उस परिवार को शीघ्र ही शुद्ध करलें। संघ उस परिवार की दोनों कन्याओं का सम्बन्ध अपने सदस्यों के योग्य लड़कों से अवश्य कर देगा। आप यह पढ़कर प्रसन्न होंगे कि संघ के एक सदस्य महोदय ने जो कि जन्म से ब्राह्मण हैं मेरी प्रार्थना पर दोनों कन्याओं का सम्बन्ध अपने दोनों लड़कों के साथ करना स्वीकार कर लिया है। इसी प्रकार एक मराठा राजपूत भी सम्बन्ध करने को तय्यार होगये हैं। अतः उनके पास लड़कों की नामावली भी भेज दी गई है। यू० पी० के एक और स्थान से पत्र मिला है कि एक वेश्या जो कि एक ब्राह्मण के घर रह जाने के कारण उस ब्राह्मण से उसकी ६ सन्तानें हैं, संघ यदि उनके लड़के लड़कियों के विवाह का प्रबन्ध करदे तो वह शुद्ध होने को तैयार है। नीमच से एक संघ के उत्साही कार्यकर्त्ता ने लिखा है कि एक हिन्दू स्त्री को यवनों ने अपने घर में डाल लिया है। संघ उसके विवाह का प्रबन्ध करदे तो हम उसे निकालने का यत्न करेंगे। इन सब को भी लिख दिया है कि संघ विवाह सम्बन्ध कराने के लिये सर्वथा तैयार है। अतः आप अपने कर्तव्य का शीघ्र पालन करें।

यदि आर्य जनता ने संघ को अपना पूर्ण सहयोग दिया तो यह संघ शुद्धि की जटिल समस्या को भी जिसके कारण कि अन्य धर्मा-

सम्बन्धी वैदिक धर्ममे प्रविष्ट नहीं हो रहे भली प्रकार हल कर देगा। संघ ने श्रीमान् शरतचन्द्र बोस, बंगाल प्रान्तीय हिन्दू महासभा, आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल तथा मन्त्री आर्य समाज कलकत्ता को पत्र दिये हैं कि यवनों द्वारा बलात् धर्मभ्रष्ट यदि किन्हीं विवाह योग्य कन्याओं को उनके माता पिता वापिस लेने को तैयार न हों संघ उन कन्याओं के विवाह का प्रबन्ध अपने संघ के सदस्यों के साथ सहर्ष करने को तैयार है। उत्तर में बगाल प्रान्तीय हिन्दू महासभा का पत्र भी आगया है जिसमे सभा के मन्त्री महोदय ने लिखा है कि आपका पत्र मिला एतदर्थ धन्य वाद। आपकी सूचना को हमने अपने रजिस्टर में अंकित कर लिया है।

ता० ३१ जनवरी को आर्यसमाज दीवान हाल देहली के उत्सव के अवसर पर जाति भेद निवारक आर्य परिवार सम्मेलन श्रीमान् पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति के सभापतित्व में बड़े उत्साह से हुवा। पं० मदनमोहन जी वेदालंकार व पं० देवव्रत जी धर्मेन्दु आदि विद्वानों तथा मेरे भाषण हुए। और कई उपयोगी प्रस्ताव भी पास हुये। सम्मेलन का जनता पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। उसी समय संघ की शाखा भी देहली में स्थापित होगई।

उड़ीसा प्रचार

इस वर्ष उड़ीसामे निम्नाकित तीन उपदेशक प्रचार कार्य करते रहे हैं: (१) श्री स्वामी धर्मानन्दजी (२) श्री बलरामजी (३) श्रीरुद्रदेवजी शास्त्री।

इस वर्ष निम्न जिलों मे प्रचार किया गया:-

गंजाम, संबलपुर, कटक, पुरी, नयागरस्टेट, पटना स्टेट, रांगपुरा सम्बर, शारंगगढ़ स्टेट और सोनिपुर स्टेट।

अब तक इस प्रान्त में निम्न प्रकार समाजें स्थापित हो चुकी हैं। बलागिर, पटनागढ़, देवली, पागिमुरा, तेलिया, केन्दुमुन्डि, पलसोषा, गौतमा, पुलसरा, गोरखाश्रम ईगिलावि, लेमेई तथा लखना।

शुद्धि कार्य

इस प्रान्त मे २ मुसलमानों तथा ३६ ईसाइयों को शुद्ध किया गया और आर्य समाज में मिलाया गया। इन में स १ जन्म से मुसलमान था।

दलितोद्धार कार्य

इस वर्ष बालेगिर मे दलितों के तालाब में स्नान करने पर हिन्दुओंने दलितों पर आक्रमण किया उसमे सहायता देकर तथा मुकद्दमेकी पैरवी करके सहायता पहुचाई गई। पुलसरा तथा मधुबनी मे अछूतों को मन्दिर प्रवेश करवाया। तीन स्थानों मे मौखिक प्रचार भी किया गया। कई स्थानों पर जलपान तथा स्नान की सुविधा भी कराई गई।

आर्य वीर दल कार्य

सम्प्रति पुलसरा तथा देवली में आर्य वीर दल की शाखायें चल रही हैं।

साहित्य प्रचार

'आर्यसमाज क्या है?' पुस्तक का चतुर्थांश उत्कलभाषा में अनुवाद किया जा चुका है और वैदिक सन्ध्या को प्रकाशित कराके वितरित किया जा चुका है।

संस्कार विधि और हवन संन्ध्या, अन्यान्य ८ ट्रैक्ट और सत्यार्थप्रकाश चतुर्थ समुल्लास तक भी उत्कल भाषा में अनूदित हो चुके हैं।

संगठन कार्य

इस वर्ष उड़ीसा प्रान्त की दो समाजों ने सार्वदेशिक सभा से अपना सम्बन्ध कराने के लिये प्रार्थना पत्र दिये हैं।

धन संग्रह

इस वर्ष वेद प्रचारार्थ सामवेद यज्ञ से ११३) एकत्र करके सभा को भेजा गया। इसके अतिरिक्त विभिन्न स्थानों से ३७८) और एकत्रित किये गये।

वैदिक सँस्कार

यज्ञोपवीत, नामकरण, मुण्डन, मृतक, प्रवेश, बाल्य विधवा विवाह आदि सब मिला कर लगभग ४० संस्कार कराये गये।

विशेष साहित्य प्रचार।

अतिरिक्त विविध स्थानों पर बहुत सा साहित्य मूल्य पर वितरित किया गया। प्रचारार्थ मूल्य पर दी गई पुस्तकों में हिन्दी सत्यार्थ प्रकाश, पंचमहा यज्ञ विधि, सन्ध्या, संगीतावली, वैदिक धर्म, उड़िया भाषा का सत्यार्थ प्रकाश, सूक्ति संग्रह, आर्योद्देश्य रत्नमाला, इत्यादि लगभग ५०० की संख्या में पुस्तकें हैं।

यद्यपि उड़ीसा प्रान्त में आर्य समाज का प्रचार प्रारम्भिक अवस्था में है तथापि इस वर्ष गौतमा का सामवेद यज्ञ और पुलसरा मन्दिर निर्माण की तैयारी की दृष्टि से ठोस कार्य हुआ है।

आन्ध्र प्रदेश में प्रचार कार्य

इस वर्ष इस प्रचार का केन्द्र स्थान तेनाली (गुन्टूर) रहा और पंडित मदन मोहन विद्या-सागर इसके अध्यक्ष रहे।

सम्प्रति इस क्षेत्र में निम्न प्रकार आर्य-समाज बन चुकी हैं:—

(१) विशाख पट्टनम् (२) राजमहेन्द्री (३) गुंटूर (४) नेताली (५) नेल्लूर (६) गुडूर (७) कडपा (८) मदन पल्ली (९) कूचिपूडि (१०) हिन्दूपुर (११) पेपूपर्स (१२) आलपाडु (१३) वेयूर (१४) जम्पनी (१५) पोदिली (१६) कुचेनपालेम (१७) कृष्णापुरम् (१८) चिन्तगुंटा (१९) वेंकटापुरम् (२०) कोनकलमल्ला (२१) पोते कल्लु (२२) प्रासं-गलपाडु (२३) पट्टी पाडु (२४) पोतवरम् (२५) भीमवरम् (गुंटूर) (२६) ताडिपर्ति (२७) कटि-वरम् (२८) पेडता (२९) भीमवरम् (३०) प्रह्लाव-रम् (३१) बंगालपल्ली (३२) आलगड्डा (३३) गोविन्दपल्ली (३४) प्रोकटूर (३५) बल्लारी (३६) ताडीपर्ति (३७) मेलावरम् (३८) तिरुमोलु।

निम्न स्थानों पर व्याख्यानादि द्वारा प्रचार किया गयाः—

तेनाली, कूचीपूडि, कांटवरम्, जम्पनी, वेमरू, मोदुगुरू, वेजवाडा, बंगानपल्ली, बेल्लारी, तिरुमोलु, पेदपूडि, नेल्लूर, तापिर्ति, गंगवरम्, भीमवरम्, चेजली, नरसारावपेट, नन्थ्याल, गोविन्दपल्लो, आल्लगड्डा, भूतपल्ली, तिरु-मिल्ला, बोडपाडु, पेबर्स, मोबर्स, मद्रास, बेल्लारी, चेजली।

(१) इनके अतिरिक्त प्रचार क्षेत्र के अति-रिक्त भी अन्य स्थानों पर प्रचार हुआः— टीटा-गढ़, जमशेदपुर, बड़ी बड़ी समाजें हैं। वहां पर

तेलगू भाई बहुत से हैं । उनमें प्रचार किया ।

(२) हैदराबाद रियासत में निम्न स्थानों पर प्रचारार्थ पंडित जी गये । रायचूर, गुलबर्गा, हैदराबाद, सिकन्दराबाद, वरंगल ।

(३) ट्रावनकोर में मंडेकाड नामक एक स्थान है वहां पर मार्च मास के द्वितीय सप्ताह में प्रति वर्ष एक बड़ा भारी मेला लगता है । वहां जाकर आर्य समाज का प्रचार किया । नागरकोल में भी व्याख्यान दिये ।

वैदिक संस्कार

इस, क्षेत्र में इस वर्ष निम्न प्रकार वैदिक संस्कार कराये गयेः- नामकरण ४, यज्ञोपवीत १०, विवाह संस्कार ६ ।

साहित्य प्रकाशन

इस वर्ष कागज की कमी व मंहगाई के कारण विशेष तौर पर साहित्य प्रकाशन का कार्य न हो सका । वैशेषिक दर्शन तेलगू मे प्रकाशित किया गया है । आस्तिकवाद प्रेस में है । संस्कारों पर पुस्तकें तैयार हैं ।

ट्रावनकोर राज्य में श्री शिवचन्द्र जी द्वारा प्रचार कार्य

ट्रावनकोर राज्य में Haindava SevaSangh नामक एक संस्था है । यह संस्था वहां प्रतिवर्ष मंडाकाड नामक एक स्थान पर एक मेले के अवसर पर Hindu Religious Convention बुलाया करती है । इस संस्था ने सार्व-सभा से इस अवसर पर अपना प्रतिनिधि भेजने की प्रार्थना की थी । सभा ने अपने प्रतिनिधि रूप श्रीयुत शिवचन्द्र जी को वहां भेजा था । अखिल भारतीय आर्य धर्म सेवा संघ ने भी श्रीयुत शिवचन्द्र जी को वहां अपना प्रतिनिधि रूप में भेजा था । Haindava Seva Sangh के प्रधान ने सभा को तथा आर्य धर्म सेवा संघ को लिखा कि श्री शिवचन्द्रजी के व्याख्यान बड़े inspring होते थे । Hindu Religious Convention के अतिरिक्त श्री शिवचन्द्र जी ने तमाम ट्रावनकोर राज्य में घूम-घूम कर भी प्रचार किया जिसका उल्लेख वहां के समाचार पत्रों में निरन्तर होता रहा । वहां के दैनिक मुख्य अंग्रेजी का समाचार पत्र "Indian Thinker" में जो समाचार प्रकाशित हुआ वह उदाहरणार्थ निम्न प्रकार हैः—

Shri S. Chandra's tour in Travancore State.

Trivandrum 10. 4. 46.

Shriyut S Chandra of Delhi who arrived here a month back as the representative of the All-India Arya Dharma Seva Sangh and the International Aryan League took part in the Mandakad Hindu Religious Convention and visited the various centres in the State run by the above two organisations.

Shriyut Chandra also addressed a number of public meetings at important centres in the State, stressing the need for organisation among Hidus, and the part Arya Dharma could play in solving many of India's problems. He had also an interview with the Dewan and had discussions with the Leaders of various Hindu organisations in the

State. Prior to his departure, he addressed a public meeting at Sri Chitra Hindu Religious Library Hall when he paid a tribute to the Ruler of the State who is a devout and pious Hindu and his Dewan, Sir C. P. Ramaswami Aiyar, who is an administrator of the highest order. He placed before the gathering the advice of Swami Deyananda Saraswati namely to give up man made religions, if they wanted a united India, and practise Vedic Dharma which is based on universal and eternal truths.

"Renaissance of India" was the subject dealt with by Shri S. Chandra during his public lecture this evening. Vidyasastranipuna V. Gaveshanatilak Dr. L. A. Ravi Varma presided.

Shriyut Chandra dealt with the golden age of Aryan culture and the vicissitudes through which Vedic Dharma had passed, down to its present state of degradation and decay. Of all the Acharyas who had contributed to the greatness of our ancient Dharma, he said, Swami Dayananda Saraswati was unique in stressing that Gyana, Bhakti and Karma were ecessary in equal measure and th should go hand in hand and o parallel lines. According to the speaker, the degradation of Arya Dharma started about a thousand years before the Mahabharta. Citing historical facts, the speaker pointed out how Aryavarta was in its days of glory the leader of thought and culture to the whole world. The University of Texila had 30,000 residential students from all parts of the world and the same was true of the other great Universities of Nalanda, Pathputra and Kashi. The Yagnas of Arya emperors and the great Swayamvaras were attended by princes and rulers from all parts of the world and it is recorded that ihere were matrimonial alliances before, during and after the Mahabharata age between Indian princes and spouces from America and Kandhar (Afghanistan). The memoirs of Fahien, Megasthenes and Hienntsang sang the glories of Aryavarta, while a galaxy of rulers, like Chandragupta Maurya, Asoka and Harsha reigned as ideal rulers.

Concluding Shriyut Chandra deplored the deadening state of Arya

(Hindu) culture and civilization at the present day and urged the gathering to work for a galvanisation of Arya Dharma and for raising it to its pristine purity. He said it was a matter for great rejoicing that there in Travancore they have a ruler who answered to the ideal conception of a king as laid down by Manu—a ruler pious and devoted to the service of God and his subjects, assisted by Sir C. P. Rama Swami Aiyar, a brilliant administrator,of both of whom every subject of the State should be proud. He urged the people to be loyal and faithful to the state administration and thus help it not only to further the cause of Travancore but also to contribute to the advancement of the entire country.

इसके अतिरिक्त श्री शिवचन्द्रजी ने आर्य-समाज के दो केन्द्रों का टावुरई तथा चेंगान्नूर तथा इन केन्द्रों के अधीनस्थ आर्य समाजों का निरीक्षण किया। इन सब स्थानों पर भी सार्वजनिक सभाओं में "आर्य धर्म" "आर्य समाज" तथा "महर्षि दयानन्द" विषयों पर व्याख्यान दिये। इन समाजों के कार्यकर्ताओं की group meetings को address किया, तथा उनकी शंकाओं का समाधान किया।

श्री शिवचन्द्रजी ने इस अवसर पर आर्य सभा, केरल की स्थापना कराई जो निरन्तर अपना कार्य कर रही है और जिसका विवरण पृथक् दिया जावेगा।

श्री शिवचन्द्रजी ने ट्रावनकोर राज्य के दीवान सर सी. पी. रामास्वामी अय्यर महाराजा ट्रावनकोर के निकट सम्बन्धियों तथा महाराजा ट्रावनकोर के प्राईवेट सेक्रेटरी से भेंट की तथा उन सब को आर्य समाज का साहित्य भेंट किया। आर्य समाज की ओर से राज्य में जो कार्य हो रहा है वह भी उन सब को बताया गया। महाराजा ट्रावनकोर की सेवा में भी आर्य समाज का साहित्य भेजा गया।

श्री शिवचन्द्रजी ने देहली लौटने पर सर सी. पी. रामास्वामी अय्यर को सभा की ओर से एक पत्र लिखा कि चेंगान्नूर में आर्य समाज निर्माणार्थ १० ०००) तथा आर्य समाज के प्रचारार्थ भी एक अच्छी राशि राज्य की ओर से स्वीकार की जावे ! फल स्वरूप सर सी. पी. रामास्वामी अय्यर ने आर्य समाज मन्दिर निर्माणार्थ १०,०००) तथा ७५) मासिक प्रचारार्थ स्वीकार कर दिया। इन राशियों को प्राप्त करने के लिये पत्र व्यवहार हो रहा है।

The Case of Satyarth-Prakash in Sind नामक पुस्तक का लिखना।

श्री शिवचन्द्र जी ने The case of Satyarth Prakash in Sind नामक अंग्रेजी में पुस्तक तैयार की। परन्तु चूंकि पुस्तक प्रकाशित होते होते सिन्ध में सत्याग्रह समाप्त हो गया। अतः उसमें सत्याग्रह का

अध्याय भी बाद में सम्मलित कर दिया गया। परिणाम स्वरूप अब वह पुस्तक सिन्ध में सत्यार्थप्रकाश आन्दोलन सम्बन्धी एक पूर्ण इतिहास का रूप बन गई है।

Inter-Asian Conference के अवसर पर प्रचार।

सभा का विचार था कि Asian Conference में आये हुये समस्त प्रतिनिधियों को किसी दिन आमन्त्रित किया जावे और उन्हें आर्य समाज के कार्य से परिचित कराया जावे। परन्तु समयाभाव के कारण ऐसा नहीं हो सका। परन्तु फिर भी श्री शिवचन्द्र जी तीने दिन तक निरन्तर Asian Conference के लगभग ५० प्रतिनिधियों से मिले और उन्हें आर्य समाज के सांस्कृतिक, सामाजिक तथा शिक्षा सम्बन्धी कार्यों से परिचित कराया तथा तत्सम्बन्धी विषयों पर उन्हें साहित्य भेंट किया।

केरल प्रान्त

मद्रास प्रान्त के इस भाग में सभा की ओर से श्री पं० इन्द्रदेव जी प्रचार करते हैं।

समाज स्थापना

पेनूकारा, पेरिंगला, अलिपूर, ऐडियारमुला मुलाकुला में इस वर्ष ५ समाजों की स्थापना हुई। उपदेशक महोदय का चैंगनूर (ट्रावनकोर स्टेट) में हेड क्वाटर है।

संस्कार

इस वर्ष ४१ वैदिक संस्कार हुए। २३४ ईसाइयों की शुद्धि हुई। १ बृहत् यज्ञ हुआ।

लायब्रेरी व रीडिंग रूम

२ स्थानों पर छोटे २ पुस्तकालय व रीडिंग रूम खोले गए। किसी अच्छे केन्द्र में एक बृहत् पुस्तकालय के खोलने का प्रयत्न हो रहा है। ट्रावनकोर राज्य के 'धर्म' विभाग से भी सहायता की आशा की जा रही है।

सभाएँ

इस वर्ष विभिन्न स्थानों पर १८ सार्वजनिक सभाएं करके उनमे वैदिक धर्म विषयक प्रचार तथा व्याख्यान कराए गए तथा १९ स्थानों पर प्रचारक महोदय ने प्रचार किया।

हिंदी क्लास

अक्तूबर ४६ से चैंगनूर और उसके आस पास के ग्रामों में नियमित रूप से हिन्दी श्रेणियां लग रही हैं। जिनमें लग भग १०० विद्यार्थी हिन्दी तथा धार्मिक साहित्य पढ़ते हैं।

वार्षिक विवरण (चित्र)

अ० भा० आर्य वीर दल

सन् १९४६ ई०

क्रम संख्या	प्रान्त	दल अधिष्ठाता	दलपति	सन० १९४५ ई० शाखा संख्या	सैनिक संख्या	शिविर संख्या	सन् १९४६ ई० शाखा संख्या	सैनिक संख्या	शिविर संख्या	वृद्धि शाखा संख्या	सैनिक संख्या	शिविर संख्या	अन्य विवरण
१	पंजाब	श्री स्वा० स्वतंत्रानन्द जी महाराज	श्री मा० श्रवण कुमार जी	१०६	२५००	१	१६६	५६३८	५	८७	३१३८	३	
२	संयुक्त प्रान्त	श्री बा० उमाशंकर जी, श्री ला० हरि शरण जी	श्री रुद्रमित्र जी शास्त्री	३५	७००	२	२१५	७२८०	४	१८०	६५८०	२	
३	बिहार	...	श्री शिवमित्र जी शास्त्री		....	....	३२	१००३	४	३२	१००३	४	
४	सिन्ध	श्री डा० हीरानंदजी	श्री धर्मप्रकाशजी	...	....	.	३०	१२६०	२	३०	१२६०	२	भरती किये गये वीर २५००० है परन्तु १००० की दैनिकउपस्थिति है। ज्यों ज्यों शिक्षकों का प्रबन्ध होता जायगा उप-स्थिति तथा शाखायें बढ़ती जायगी।
५	राज स्थान	श्री दिवाकर जी हंस	श्री वीर भद्र जी	....	...		२६	२११२	१	२६	२११२	१	
६	बंगाल	श्री दीपक जी एडवोकेट	श्री काशीनाथ जी चौबे	...	....	...	२८	२५००	५	२८	२५००	५	
७	हैदराबाद स्टेट	....	...	...	...	...	२०	१०००	...	२०	१०००	....	
	कुल	योग		१४४	३२००	४	५५०	२०७६३	२१	४०६	१७५६३	१७	

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

शेष-पत्र (बैलैन्स शीट) १२-२-१९४७

निधियां तथा दातव्य

स्थिर निधियां

देशदेशान्तर प्रचार	५००००)	
वेद प्रचार	५००००)	
भारतीय स्टेट	५००००)	
रक्षा	२५०००)	
सार्वदेशिक भवन	२४५००)	
वैदिक आश्रम ऋषिकेश	१४०००)	
आर्य साहित्य प्रकाशन	११७५०)	
शहीद परिवार सहायता	१००००)	
चन्द्रभानु वेदमित्र स्मारक	५०००)	
सत्याग्रही परिवार सहायता	५०००)	
गंगाप्रसाद गढ़वाल प्रचार	२०००)	
शिवलाल वेद प्रचार	६५०)	
ढोढाराम चूड़ामणि वेद प्रचार	५०१)	
डोमा महतो सुन्दर देवी वेद प्रचार	१००)	२४८५०१)

विशेष निधियां

दलितोद्धार	३०००)	
सूद	२८९—)६	३२८९—)६
श्रद्धानन्द नगरी		६६६३)
दयानन्द आश्रम	२२५०)	
सूद „	३१॥—)१	२२८१॥—)१
सूद शहीद परिवार सहायता निधि	२५४॥≡)	
सूद गंगाप्रसाद गढ़वाल प्रचार फंड	७२।≡)	१२५६१॥≡)१०

सम्पत्ति तथा प्राप्तव्य

भूमि और भवन

सार्वदेशिक भवन		२४५००)
बलिदान भवन		२१२००)
गाजियाबाद भूमि		१०७३।—)
श्रद्धानन्द नगरी		
समाज मन्दिर	३९१६)	
„ पाठशाला	२७४७)	६६६३)
शोलापुर समाज भूमि		८९२३।≈)
वैदिक आश्रम ऋषिकेश		१४०००)
केशवार्य हाई स्कूल हैदराबाद	२५०००)	१०६३५८॥≈)

फर्नीचर

गत बैलैन्स शीट के अनुसार	२९७१।≡)	
घिसाई	३४०)	२६३१।≡)

स्थिर पुस्तकालय

गत बैलैंस शीट के अनुसार	३०२९॥।)	
इस वर्ष की वृद्धि	८५८॥।—)६	३८८४॥।—)६
स्टाक कागज		४४०—)

बिक्री की पुस्तकें

पुराना स्टाक	७१०)	
स्टाक चंद्रभानु वेदमित्र स्मारक प्रकाशन निधि	३२४०)	
अधिक व्यय श्री नारायण स्वामी पुस्तक प्रकाशन निधि	७९॥≡)१	
स्टाक „	३००१)	३०८८॥≡)३

दक्षिण भारत प्रचार निधियां

केशवार्य हाई स्कूल २५०००)
हैदराबाद मन्दिर निर्माण ५०५४।=)६
शोलापुर आर्य समाज मन्दिर १५०००)
तिन्नवली(मद्रास)प्रचार ५९३९।।।)८ ५०९९४≡)२

विदेश प्रचार निधियां

अमेरिका ४४२९)
सूद „ २९४)९ ४७२३)६

बिरला फण्ड १३०००)
सूद „ ११७०) १४१७०)

बगदाद फण्ड १२७२) २०११५)९

धार्मिक पुस्तक निधियां

श्री नारायण स्वामी पुस्तक
प्रकाशन स्टाक ३००९)
बचत चंद्र भानु वेद मित्र स्मारक पुस्तक
प्रकाशन निधि २४३३।।।≡)६
" स्टाक ३२४०) ५६७३।।।≡)६
स्टाक आर्य साहित्य
प्रकाशन निधि का ३५९०)
स्टाक पुरानी पुस्तकों का ७३०)
बचत श्री ओंकारदत्त १४८।–)३
स्टाक " ४००) ५४८।–)३ १३५५१।)९

विविध निधियां

दयानन्द समैपुर पाठशाला ४४५=)
टङ्कारा १५३–)
गृह विहीन जाति रक्षा ६९।)३

स्टाक आर्य साहित्य प्रकाशन निधि ३५९०)
स्टाक पं० ओंकारदत्त पुस्तक
प्रकाशन ४००)
स्टाक सिंधी सत्यार्थप्रकाश ११५०५) २२६२३।।।≡)३

प्राप्तव्य

मकानों का किराया ९९०)
सूद ५६४९।।)
आर्य प्रतिनिधि सभा
संयुक्त प्रान्त ३५२।।।≡)३
सार्वदेशिक) के विज्ञापनों का ११६≡)
आर्य धर्म सेवासंघ से ८००) ७९०८।।=)३

पेशगियां

डिपोजिट बिजली कम्पनी ४८)
आर्य प्रतिनिधि सभा सिन्ध २८०६।।)
ट्रीनीडाड के बच्चों का व्यय ३२७८)२
आर्य समाज रि० सोसा०
कलकत्ता ३५४९३।)
आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार १०००)
थोमस कुक एण्ड सन्स ४०)
लोहारू समाज मन्दिर २०००)
श्री शिवचन्द्र जी २८७)
विविध ३२०।।≡) ४५२७३।।≡)२

सुरक्षित ऋण और इन्वेस्टमेंट्स

पाटौदी हाउस ३४७७५)
विविध ४६९००) ८१६७५)
मोहिनी मिल्स डिबैंचर्स ३०००)
प्रताप बैंक दिल्ली १४००००)
एक शेयर आर्य साहित्य
मण्डल अजमेर १०)
ओरियन्टल बीमा कम्पनी १४२५–)
पीपल बैंक १८६७०)२ २२७९७०।–)

बङ्गाल रिलीफ फंड			इन्स्ट्रु स्ट		
(कैश)	७१२०६।=)		श्री घनश्यामसिंह जी	२३८)९	
आर्य समाज रिलीफ सोसाइटी कलकत्ता तथा बिहार सभा			कार्यालय	८५०)	१०८८)९
को सहायतार्थ	३६४९३।)	१०७६९९॥=)	बैंकों में		
सत्यार्थप्रकाश रक्षा			प्रताप बैंक देहली (चालू)	११००॥)११	
(कैश)	२४४०९।=)९		सेन्ट्रल बैंक ,, ,,	९३।≡)४	
सत्यार्थप्रकाश रक्षा पुस्तकें	११५७५)	३५९८४।=)९	पंजाब नेशनल बैंक देहली	८१५३५≡)४	
स्थिर पुस्तकालय		३७३७।)६	पंजाब ,, होम ,, सेविंग	६२९२।–)९	८९०२१॥–)४
जनरल	२६१७।≡)	१५०९०६≡)६			
स्टाफ प्रोवीडेण्ट		१२९२।–)९	आय व्यय खाता		
धरोहर			गत बैलेंस शीट के अनुसार	१५९०)२	
सम्पत्त	३४६७।–)		इस वर्ष की अधिक आय	९७॥=)९	१४९२–)५
कर्मचारीगण	१०)१०				
विविध	१२४८=)१	५७२२॥)४			
सर्व योग—		५०८६९४।=)१	सर्व योग		५०८६९४।=)१

आडीटर का नोट—

हमने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के हिसाब की जांच की। हम प्रमाणित करते हैं कि उपर्युक्त बैलेंस शीट (शेष-पत्र) और आय-व्यय का संयोजित विवरण हिसाब के रजिस्टरों और अन्य कागजों के अनुसार जो हमें दिखाये गए, ठीक है। हमारी आज की तिथि की रिपोर्ट पृथक है।

वास्ते जगदीशप्रसाद एण्ड कम्पनी—

(ह०) जगदीश प्रसाद,

बी० ए० बी० कौम (बम्बई)

जी० डी० ए० आर० ए०,

रजिस्टर्ड एकाउन्टेन्टस, आडीटर

चांदनी चौक देहली

३–४–१९४०

रघुनाथप्रसाद पाठक	गंगाप्रसाद उपाध्याय (एम. ए.,)	नारायणदत्त	नारायणस्वामी,
एकाउन्टेन्ट	मन्त्री	कोषाध्यक्ष	प्रधान

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

आय व्यय चित्र वर्ष १३-२-१९४६ से १३-२-१९४७ तक

आय

वर्ष ४६-४७

दान स्थापना दिवस	७९३|||≡)	
विविध दान	१८२०|||–)	२६१४|||)
पंचमांश	२५९९–)४	
दशांश	५०५|)	३१०४|–)४
सूद व मकानों का किराया	८११७||≡)२	
सूद रक्षा निधि	१०००)	
सूद देश देशान्तर	१५००)	१०६१७||≡)२
सहायता दक्षिण प्रचारार्थ		
बिड़ला जी से	४८००)	
अन्य दान	१०९७|||–)३	५८९७|||–)३
		२२२३४|||–)९

व्यय

वर्ष ४६-४७

सार्वदेशिक पत्र		
कागज छपाई पोस्टेज आदि	३९९७)	
वेतन सम्पादक	१७३४)	
वेतन लेखक	६००)	
	६३३१)	
आय चन्दा व विज्ञापन	४२०७||≡)	२१२३–)
कार्यालय		
लेखकों आदि का वेतन		
तथा अन्य व्यय	५३६९=)३	
प्रोवीडेन्ट फण्ड	४९२||)	
मार्ग व्यय अन्तरङ्ग सदस्य	१५४=)	
स्थिर पुस्तकालय को	५००)	
लोहारू मन्दिर निर्माण सहायतार्थ	१०००)	७५१५|||)३
टैक्स व मरम्मत इत्यादि		
बलिदान भवन	५७७||)६	
सार्वदेशिक भवन	+	५७७||)६
घिसाई		
फर्नीचर	१००)	
टाइपराइटर	४०)	१४०)

आर्य वीर दल संगठन

संगठन आर्य वीर दल		
वेतन स० सेनापति		
तथा संगठन व्यय	१६१२)	
वेतन लेखक	६००)	
	२५१२)	
विविध आय	१७४॥।–)	
बंगाल रिलीफ फण्ड से	४६३।) ६६८–)	१८४४≡)
प्रचार व्यय		
दक्षिण प्रचार	४८५३–)	
सहायता आर्य प्रतिनिधि सभा हैदराबाद	२४००)	
उड़ीसा प्रचार	२७५८।≡)	
पुस्तकें	२२४॥।=)३	६७३६।=)३
अधिक आय		६७॥।= ६
		२१२३४॥–)६

वास्ते जगदीश प्रसाद एण्ड कम्पनी

(ह) जगदीशप्रसाद

चांदनी चौक देहली — बी० ए० बी० कौम (बम्बई)

३–४–१६४७ — जी० डी० ए० आर० ए०

रजिस्टर्ड एकाउन्टेन्ट आडीटर

रघुनाथप्रसाद पाठक	गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०	नारायणदत्त	नारायणस्वामी
एकाउन्टेन्ट	मन्त्री	कोषाध्यक्ष	प्रधान

सत्यार्थप्रकाश की रक्षा और प्रचार कैसे हो ?

[ले०—श्री ऐजाज अहमद गौरी सिद्धान्त शास्त्री, लाहौर]

पहली बात तो यह है कि हिन्दी का प्रचार किया जाय, जितने हिन्दू हैं वे तो सब हिन्दी पढ़ें और दूसरों को पढ़ावें। अन्य मतावलम्बियों को जैसे कैसे प्रेम पूर्वक पढ़ावें उनको यह न कहें कि यह हमारी आर्य्यों की भाषा है बल्कि यह कहें कि यह भी एक हिन्दुस्तान की भाषा है। इसका पढ़ना भी हमारा कर्तव्य है। जैसे हम लोग कट्टरपना छोड़ कर उर्दू फारसी आदि पढ़ते हैं वैसे ही वे लोग भी पढ़ें। हिन्दी प्रचार हो जाने से हमारा बहुत सा मतलब हल हो जाता है। फिर हमको चाहिये कि हम सत्यार्थप्रकाश की कथा हर आर्य्यसमाज मन्दिर में प्रतिदिन करवायें और बाहिर के लोगों को भी बताया करें ताकि वे भी सुन कर लाभ उठावें। सत्यार्थप्रकाश की कापियों का अधिक से अधिक प्रकाशन करें और सस्ते से सस्ते दामों पर बेचें। गरीबों को मुफ्त देवें। सब आर्य्य लोग अपने घरों में बच्चों को नित्य प्रति सत्यार्थ प्रकाश की कथा सुनाया करें।

सत्यार्थप्रकाश की कथा के साथ महर्षि दयानन्द के जीवन चरित्र का प्रचार भी करें ताकि लोगों को यह पता चल जाय कि इस ग्रन्थ का कर्त्ता कितना निडर तथा साहसी था, उसमें ब्रह्मचर्य्य का कितना बल, तेज तथा ओज था तो उसका ग्रन्थ कैसा अच्छा हो सकता है।

सत्यार्थप्रकाश हिन्दुओं का वह धार्मिक ग्रंथ है जिसमें हिन्दू धर्म के सम्पूर्ण असूल उपासना कर्म तथा ज्ञान एवं विज्ञान का संकेत मिलता है। इस ग्रंथ से संकेत लेकर वह मनुष्य लौकिक अलौकिक दोनों विद्याओं में उन्नति कर सकता है।

इस सत्यार्थप्रकाश का सब भाषाओं में सुन्दर सुन्दर अनुवाद किया जाय और सब देशों को बाहिर भेजा जाय, बाहिर के लोग भारतवासियों की अपेक्षा अधिक प्रेम से ऐसे ग्रन्थों को देखते हैं।

इस समय और भी बहुत सी धार्मिक पुस्तकें उपलब्ध हैं मगर यही एक ऐसी पुस्तक है कि जिसको जब पढ़ा जाय कोई न कोई नई बात ही बतलाती है। पता नहीं स्वामी जी ने इसमें क्या अमृत भर दिया है। और पुस्तकें हैं वे एक बार पढ़ ली जायं तो दोबारा पढ़ने को जी नहीं चाहता मगर गुरुदत्त जैसे और भी कई विद्वानों का कथन है कि हमने इस पवित्र सत्यार्थप्रकाश का कई बार स्वाध्याय किया मगर तृप्ति नहीं हुई क्योंकि हर बार कोई न कोई नई बात ही मिलती थी इसी कारण इसे पुनः पढ़ने को दिल चाहता है।

इस ग्रंथ में स्वामी जी ने कहीं भी कोई ऐसा शब्द प्रयुक्त नहीं किया कि जिसको पढ़ कर किसी के हृदय में तीर लगे किन्तु ऐसे शब्द लिखे हैं कि जिनको पढ़ कर हृदय फौरन ग्रहण कर लेवे। यही कारण है कि आर्य समाजी जो पहले अंगुलियों पर गिने जा सकते थे अब कागजों पर भी उनकी गिनती नहीं लिखी जा सकती। अन्य मत-मतान्तर भी जो हिंदू धर्म के अंदर हैं अर्थात् सनातनी, जैनी, बौद्ध, रैदासी

आदि सब अब पुरानी पौराणिक बातों को छोड़ रहे हैं। यह सब सत्यार्थप्रकाश की ही कृपा है।

इसी सत्यार्थप्रकाश की बदौलत आज दलित जातियां भी उठ सकी हैं, जिनको कूप बावड़ी आदि से जल लेने तक की मनाही थी, आज वे जातियां प्रसन्नतापूर्वक संसार मे उन्नति कर रही हैं और धन धान्य से समृद्धि को प्राप्त हो रही हैं। कई शूद्र वर्ण तथा अछूतों को शुद्ध [कर संस्कृत पढ़ा कर जनेऊ पहनाया गया और पण्डित तक बना दिया गया। यह सब कैसे हुआ, श्री स्वामी जी के सत्यार्थ प्रकाश के हृदय में प्रकाशित होने से।

वह स्त्री जाति जिसके लिये कहते थे कि स्त्रीशूद्रौ नाधीयातामिति श्रुते.

अर्थात् स्त्री और शूद्र वेद न पढें इसी सत्यार्थ प्रकाश ने वैदिक प्रमाणों द्वारा सिद्ध कर दिया कि स्त्री शूद्र तो एक ओर रहे वे भी वेद पाठ के हकदार हैं जो अत्यन्त शूद्र हैं। यही कारण है कि आज शकों देवी तथा विजयलक्ष्मी पण्डित आदि सब हिन्दी भाषा मे लैकचर दे सकती और तथा उपनिषदों की कथा कर सकती हैं। इसी प्रकार इस सत्यार्थ प्रकाश के गुणों का वर्णन किया जाय यह सत्यार्थ प्रकाश सम्पूर्ण सत्यता का कारण है।

मैं स्वयं अपना विचार बतलाऊ मैं ने बहुत से धार्मिक ग्रन्थ कुरान बाइबल श्री गुरु ग्रन्थ साहिब इत्यादि पढे मगर सब को एक ही बार पढ़ा। यह सत्यार्थप्रकाश पढ़ते आज मुझे छः वर्ष के करीब हो गये। मैं नित्य प्रति इस पवित्र ग्रन्थ को गवेषणा पूर्वक पढ़ता हूँ। यदि कभी स्वास्थ्य ठीक न हो तो केवल दर्शन ही कर लेता हूँ। पता नहीं स्वामी जी की वाणी मे क्या आकर्षण है।

अन्य मतो यथा मुसलमानों मे इन लोगों की स्त्रियां ही इतनी हुशियार हैं कि वे जहाँ कहीं जाती हैं वहीं पर कुरान, अल्लाह रसूल की बात प्रारम्भ कर देती हैं। मगर हमारी आर्य्य मातायें या बहनें ऐसी चेष्टा करती बहुत कम देखी गई हैं यह हमारे मे बहुत कमी है। इसको दूर करना चाहिये।

सिन्ध सरकार ने सत्यार्थ प्रकाश पर पीछे प्रतिबन्ध लगा दिया था कि यह Defence of India Rules के मातहत बद अमनी फैलाता है अतः इसे प्रतिबन्ध मे रखना चाहिये। इस पर एक कवि के कुछ वाक्य लिखते हैं।

सत्यार्थ प्रकाश का सिन्ध मे प्रकाश लखि
चौंक पड़े लोग दिल लीगियों का धमका।
बोले मत पथ की इस कारी अंध्यारी माहीं
अजब प्रकाश का यह पुंज कैसे चमका॥ १॥
चका चौंध चारों ओर ज्योति जाकी फैल रही
रहा न ठिकाना मतवादी अन्धतम का।
पाखण्ड के ढोल की अब खुल गई सारी पोल
दीखा खाली खोखा भगा भूत सारा भ्रमका ॥२॥
जब्त करो जब्त करो चीखे पन्थाई जन
छाया आसमान पर बादल सा गम का।
धन्य दयानन्द तेरी लेखनी को धन्य धन्य
सत्यार्थ हुआ न हुआ मानों गोला बम का॥ ३॥

आज से कुछ दिन मास पूर्व श्री नारायण स्वामी जी के नेतृत्व मे सिन्ध मे आर्य समाज की तरफ से सत्याग्रह हुआ था जिसमे वहा पर सत्यार्थ प्रकाश से प्रतिबन्ध उठाया दिया गया है। यदि इसी प्रकार आर्य्य समाज कमर बान्धे

रही तो सत्यार्थ प्रकाश कभी जब्त नहीं होगा। अन्त में इस ग्रन्थ के लेखक श्री स्वामी दयानन्द जी का भी धन्यवाद करना चाहिये।

महामति मन्द मदमस्त मायावी मलीन
मिथ्या तनवादियों केमद मान मारे हैं।
सुन्दर सत्यार्थ प्रकाश कों प्रकाश कर
मन के सकल सूल संशय निवारे हैं।
बन रखवारे दुःखियों के दुःख टारे सारे
केते ही कुचालन के जीवन सुधारे हैं।
पाप ताप वारिधि से देव दयानन्द तूने
रोते जन तारे जेते नभ में न तारे हैं॥

पाकिस्तान के आर्यों का प्रश्न

पाकिस्तान बन गया। इस रोने को अब रोने की आवश्यकता नहीं। आवश्यकता भी हो तो बेकार! अब तो यह सोचना चाहिए कि वहां के आर्यों को क्या करना चाहिए।

इस विषय पर आर्य नेताओं के लेख आने चाहिएँ जो अत्यन्त संक्षिप्त, सुसंगत और परामर्श रूप में हों जिनका ध्येय विद्वता या लेखन शक्ति का प्रदर्शन न हो। कार्य की वह रूप रेखा हो जो आज ही व्यवहार में लाई जा सके। रोगी शय्या पर पड़ा है। छोटे से नुस्खे की जरूरत है।

गंगाप्रसाद उपाध्याय
मन्त्री सार्वदेशिक सभा,

आर्य वीर दलों को आवश्यक सूचना

अभाव की पूर्ति

केन्द्रीय वस्तु भण्डार की स्थापना

प्रारम्भ से ही यह अनुभव किया जारहा था कि आर्य वीर दलों को चमड़े की पेटियां, पीतल के बैज तथा टोपियां व अन्य दल सम्बन्धी वस्तुएँ अधिक परिश्रम करने पर भी सुन्दर और मजबूत अथवा एक ही प्रकार की नहीं मिलती थीं। इस अभाव को दृष्टि में रखकर श्री पूज्य ओमप्रकाश जी त्यागी स० प्र० सेनापति, अ० भा० आर्य वीर दल के आदेशानुसार तथा केन्द्रीय आर्य वीर दल को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से केन्द्रीय वस्तु भण्डार की स्थापना की गई है। यहां से दल सम्बन्धी हर प्रकार का साहित्य भी जो प्रकाशित हो चुका है अथवा होने वाला है मिल सकेगा।

पेटी चमड़ा १।।) प्रति (बढ़िया चमड़े की)
बैज पीतल ≡) „
टोपी १।।) „

प्रान्तीय दलपतियों, तथा अन्य दल अधिकारियों से प्रार्थना है कि वे अपने यहां के दलों को आदेश दें कि दल सम्बन्धी समस्त वस्तुएँ अन्य किसी स्थान से न मंगा कर हमारे यहां से ही लें।

१०) रु० से कम की वस्तु पर डाक व्यय पृथक होगा।

हरिशंकर
व्यवस्थापक,
केन्द्रीय वस्तु भण्डार,
आर्य वीर दल, दीवान हाल, देहली।

आर्य कुमार जगत्

भारत वर्षीय आर्य कुमार परिषत् की धार्मिक परीक्षाओं की नवीन पाठ विधि ।

❋ सिद्धान्त सरोज परीक्षा ❋

धर्म

प्रथम प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १०० समय ३ घण्टे

(१) धार्मिक शिक्षा भाग १, २, (आर्य साहित्य मंडल) ५०

(२) धार्मिक शिक्षा भाग ३, [„ „] ५०

साधारण ज्ञान

द्वितीय प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १०० समय ३ घण्टे

[१] आर्यसमाज के उज्ज्वल रत्न [आ० सा० मण्डल] या आर्यजगत् के उज्ज्वल रत्न [प्रेमी प्रेस, मेरठ] अङ्क ४०

[२] बाल दयानन्द चरित्र-[शारदा मन्दिर लि०] अङ्क ४०

[३] वैदिक शिष्टाचार-[पं हरिश्चन्द्र जी] अङ्क २०

❋ सिद्धान्त रत्न परीक्षा ❋

धर्म

प्रथम प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १०० समय ३ घण्टे

[१] पंचमहायज्ञविधि [ऋषि दयानन्द जी कृत] अङ्क २०

[२] आर्योद्देश्य-रत्नमाला ऋषि दयानन्द जी कृत] अङ्क २०

[३] व्यवहार-भानु [ऋषि दयानन्द जी कृत] अङ्क ४०

[४] सत्यार्थ प्रकाश का दसवां समुल्लास अङ्क २०

सिद्धान्त

द्वितीय प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १०० समय ३ घण्टे

[१] वैदिक धर्म प्रश्नोत्तरी [पं० धर्मदेवजी कृत] अङ्क ३०

[२] स्वामी श्रद्धानन्द [किसी भी आर्य लेखक का] अङ्क ३०

[३] गोकरुणानिधि [ऋषि दयानन्दजी] अङ्क २०

[४] बालवेदामृत [प्रो० किशोरीलालजी एम० ए०] अङ्क २०

❋ सिद्धान्त भास्कर परीक्षा ❋

धर्म

प्रथम प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १०० समय ३ घण्टे

[१] सत्यार्थ प्रकाश पूर्वार्ध [ऋषि दयानन्दजी] अङ्क ७०

[२] वैदिक वीर गर्जना [पं० रामनाथ वेदालंकार] अङ्क ३०

साधारण ज्ञान

द्वितीय प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १०० समय ३ घण्टे

[१] जीवन ज्योति- [प्रिंसिपल दीवानचन्द्र एम० ए०] अङ्क ४०

[२] आर्यसमाज क्या है ? [महा० नारायण स्वामी] अङ्क ६०

सिद्धान्त

तृतीय प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १०० समय ३ घण्टे

[१] वैदिक सिद्धान्त [सार्वदेशिक सभा] अङ्क ४०

[२] धार्मिक शिक्षा भाग ६, १० [आर्य सा० मंडल] अङ्क ६०

निबन्ध व इतिहास

चतुर्थ प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १०० समय ३ घण्टे

[१] किसी धार्मिक विषय पर निबन्ध अङ्क ३०

[२] ऋषि दयानन्द जीवन चरित्र [मौलवी महेशप्रसाद कृत] अङ्क ३५

[३] आर्यसमाज का इतिहास [पं० हरिश्चन्द्रजी] अङ्क ३५

❁ सिद्धान्त शास्त्री परीक्षा ❁

धर्म

प्रथम प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १०० समय ३ घण्टे

[१] ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका [ऋषि दयानन्दजी] अङ्क ५०

[२] आर्य पर्व पद्धति [सार्वदेशिक सभा] अङ्क २०

[३] संस्कारविधि [ऋषि दयानन्दजी] अङ्क ३०

सिद्धान्त

द्वितीय प्रश्न पत्र पूर्णाक १०० समय ३ घण्टे

[१] सत्यार्थप्रकाश [पूर्वार्द्ध] अङ्क ४०

[२] दर्शनानंद ग्रंथ संग्रह पूर्वार्द्ध [गोविंदराम हासानन्द] अङ्क ३०

[३] भारतीय समाजशास्त्र [पं० धर्मदेवजी कृत] अङ्क ३०

दर्शन व उपनिषद्

तृतीय प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १०० समय ३ घण्टे

[१] उपनिषदें ४ [ईश, केन, कठ, प्रश्न] अङ्क ३०

[२] षट् दर्शन समन्वय [स्वा०ओमानन्दजी] अङ्क ३०

[३] आस्तिकवाद [पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय] अङ्क ४०

तुलनात्मक ज्ञान व निबन्ध

चतुर्थ प्रश्न पत्र पूर्णाङ्क १०० समय ३ घण्टे

[१] सत्यार्थ प्रकाश [उत्तरार्द्ध] अङ्क ३०

[२] धर्म का आदिस्रोत [पं० गंगाप्रसाद जी एम० ए०] अङ्क ३०

[३] निबन्ध किसी धार्मिक, सामाजिक या राजनीतिक विषय पर। अङ्क ४०

[इसके लिये "सार्वदेशिक" आदि आर्य पत्रों का पढ़ना लाभप्रद होगा।]

आर्य समाजों और आर्य कुमार सभाओं के मन्त्रि-महोदयों से

श्रीमान् जी,

सप्रेम नमस्ते।

सेवा में परिषद् की ओर से होने वाली धार्मिक परीक्षाओं की पाठविधि और नियमादि भेजे जा रहे हैं। इनको अपने नगर की समाज, कुमार सभा, स्कूल, कन्या-पाठशालादि संस्थाओं में प्रचारित करने की कृपा करें और साथ ही स्थानीय आर्य स्त्री-पुरुषों, बालक-बालिकाओं से प्रेरणा करें कि वे भारी से भारी संख्या में इनमें सम्मिलित हों, जिससे देश के कोने २ में वैदिक ग्रन्थों का प्रचार हो सके।

आप हमें यथासम्भव शीघ्र सूचना देने की कृपा करें कि आपके नगर से कितने २ परीक्षार्थी

किस-किस परीक्षा में भाग लेंगे जिससे हम उस २ परीक्षा के उतने उतने आवेदन पत्र तथा अन्य परीक्षा विषयक सूचनाएं आपको भेजते रहें।

इन परीक्षाओं में ४ मुख्य विशेषतायें हैं:—

१—धार्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय हो जाता है।

२—किसी भी परीक्षा में कोई भी बैठ सकता है।

३—प्रत्येक परीक्षा में उत्तीर्णता का प्रमाण-पत्र मिलता है।

४—प्रत्येक परीक्षा में उपाधि दी जाती है।

आशा है कि आप धार्मिक शिक्षा के इस प्रचार-यज्ञ में अपना बहुमूल्य सहयोग देकर कृतार्थ करेंगे। आपका आर्य बन्धु,

सूर्यदेव शर्मा एम० ए०, डी० लिट्,
परीक्षा मन्त्री, अजमेर।

[हमारा भी समस्त आर्य कुमार और कुमारियों तथा आर्य नर नारियों से अनुरोध है कि वे इन धार्मिक परीक्षाओं की स्वाध्यायादि की दृष्टि से उपयोगिता को अनुभव करते हुए इनमें सम्मिलित होकर लाभ उठाएं। परिषद् ने गत अधिवेशन में निश्चय किया है कि कम-से-कम १० हजार परीक्षार्थियों को बैठाने का इस वर्ष विशेष यत्न किया जाय।]

धर्मदेव विद्यावाचस्पति,
प्रधान—
आर्यकुमार परिषद्, सम्पादक सा० दे०,

श्री मन्त्री परोपकारिणी सभा के नाम पत्र

श्रीमान्, जी नमस्ते!

अगस्त ४६ में मैंने संस्कार विधि की असली और प्रेस कापी के विषय में दो भूलों की ओर परोपकारिणी सभा का ध्यान आकर्षित किया था। यह पत्र सार्वदेशिक में भी छप चुका है। चारों वेदो के भाष्यकार पं० जयदेव जी ने मेरी धारणाओं का बड़े प्रबल शब्दों में खण्डन किया है। उनका पत्र बहुत लम्बा है और उसमें का प्रमाण भाग भी बहुत बड़ा है शब्द प्राबल्य युक्ति प्राबल्य का कहां तक समानार्थक है यह कहना कठिन है। मेरी बुद्धि का यह दुर्भाग्य है कि पं० जी की युक्तियां मेरी समझ मे नहीं आई। एक स्थल पर पं० जी लिखते हैं कि मैं वेद मन्त्र को अश्लील कहता हूँ यह मेरी अश्लीलता है। मैंने वेद मन्त्र को अश्लील नहीं बताया अपितु वेद मन्त्र के उच्चारण को भरी सभा में संस्कार के समय अश्लील बतलाया इन दोनों का भेद श्री पं० जी की पाण्डित्य पूर्ण दृष्टि मे क्यों नहीं आया इसकी विवेचना मेरे लिये अनुचित है। यदि अन्य पण्डित भी श्री पं० जयदेव जी से सहमत हैं तो मैं कर ही क्या सकता हूँ? परन्तु मैं परोपकारिणी सभा से एक प्रार्थना करता हूँ कि असली कापी व प्रेस कापी सामान्य जनता को प्राप्त नहीं है और कालान्तर में यह नष्ट भी हो जायगी इससे सभा को चाहिए कि जिन दो स्थलों की ओर मैंने संकेत किया है उनका फोटो भी पं० जयदेव जी के उत्तर सहित छपवा देवे। सम्भव है कि अन्वेषण कर्ताओं को निष्पक्ष भाव से अपना मत निर्धारण करने में सहायता मिले। प्रश्न यह नहीं है कि भिन्न २ गृह्य-सूत्रों श्रौत-सूत्रों या ब्राह्मणों या भाष्यकारों का क्या मत है। बात तो सीधी है कि प्रेस कापी बनाते समय असली कापी की लिपि का कहां तक पालन हुआ है। यह देखना चाहिए। मेरे पत्र में Forgery का नाम तक नहीं है परन्तु भूलों के होने में Forgery ही तो एक कारण नहीं है।

गङ्गाप्रसाद उपाध्याय

साहित्य समीक्षा

प्रगतिशील आर्य—लेखक श्री विश्वम्भर सहाय जी 'प्रेमी' प्रेमी प्रेस, मेरठ मूल्य १)

यह एक अनुपम पुस्तक है जिसमें सुयोग्य लेखक ने जो कई वर्ष भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषत् के प्रधान मन्त्री रहे हैं 'धर्म और राजनीति', 'आर्य समाज और युवक', मुस्लिम मनोवृत्ति, आर्य समाज और हिन्दू संगठन, वैदिक साहित्य, आर्य समाज का भावी कार्य-क्रम, सैनिक शिक्षण इत्यादि विषयों पर बड़ी ओजस्विनी भाषा में विचार प्रकट किये हैं और आर्य समाज को अधिक उन्नति और लोक प्रिय बनाने के लिये अनेक विधानात्मक निर्देश दिये हैं। 'धर्म और राजनीति' पर लेखक महोदय ने जो कुछ लिखा है उससे कई महानु-भावों का मतभेद सम्भव है पर हम उनके विचारों से सहमत हैं।

"अन्य देशों में राज्य करने की तो कथा ही क्या कहना, परन्तु आर्यावर्त में भी आर्यों का अखण्ड, स्वतन्त्र, स्वाधीन निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है सो भी विदेशियों के पादाक्रान्त हो रहा है।"

इन महर्षि दयानन्द के शब्दों को सत्यार्थ प्रकाश से उद्धृत करते हुये वे लिखते हैं:—

"इस प्रकार ऋषि दयानन्द भारत में स्वतन्त्र राज्य स्थापन की चिन्ता रखते थे। वे भारत को एक निर्भय राज्य बनाना चाहते थे। ऋषि चाहते थे भारत वासी अपनी भाषा, अपनी वेष भूषा का सम्मान करें। अपने देश की बनी वस्तुओं पर निर्भर हों। उनके ग्रन्थों में अनेक स्थानों पर स्वदेशी की भावना मिलती है। ये सब बातें ऐसी हैं जिनसे आर्य समाज का राजनीति से गहरा सम्बन्ध पाया जाता है।" .. .... इस प्रकार स्वामी दयानन्द जी राजनैतिक दृष्टि कोण से प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश की स्थिति सुधारने की प्रेरणा करते थे। गुलामी और दासता के स्थान पर वे स्वतन्त्र भारत चाहते थे।" (पृ० ११)

इस प्रथम अध्याय की समाप्ति पर वे लिखते हैं कि "इन सब बातों को ध्यान मे रखकर कोई व्यक्ति यह नहीं कह सकता कि आर्य समाज का राजनीति से कोई विशेष सम्बन्ध न था। हम तो यह मानते हैं कि राजनीति से बाहर कोई भी व्यक्ति जा ही नहीं सकता। धार्मिक पुरुष भी आज राजनीति से ओत प्रोत हैं। आर्य समाज धर्म और राजनीति दोनों को सामूहिक रूप में अपनाकर आगे बढ़ता तो आज संसार भर में उसकी दूसरी स्थिति होती।" [पृ० १४]

'आर्य समाज के सगठन को दृढ़ करने की आवश्यकता है। इस समय उन व्यक्तियों को आर्य समाज मे सम्मिलित करने का यत्न करना चाहिये जो राजनैतिक कारणों से दूसरे क्षेत्रों में काम करने लगे हैं। उन व्यक्तियों को भी साथ लेना चाहिये जो आर्य समाज में धर्म और राजनीति दोनों का समावेश मानते हैं। आर्य समाज के संगठन में भी जो बातें सम्मिलित हैं उनमें से सभी को सामने रख कर कार्य करना चाहिये। तभी समय आर्य समाज प्रगतिशील बन सकेगा।" (पृ० ४०)

'आर्य समाज तथा युवक वर्ग' इस शीर्षक के महत्वपूर्ण पञ्चम अध्याय में लेखक महोदय ने

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् के प्रधान मन्त्री के रूप में प्राप्त अनुभव के आधार पर लिखा है कि "आर्य समाज को यदि आर्यों की संख्या बढ़ानी है, यदि उसे आर्य समाज को उत्तेजना देनी है तो उसे नवयुवकों का दृढ़ संगठन करना चाहिये। कई बार यह प्रश्न उठा है कि नवयुवकों का संगठन किस प्रकार किया जाय ! इसके सम्बन्ध मे हम अपने ३० वर्षों के अनुभव के आधार पर यह कह सकते हैं कि प्रत्येक आर्य समाज अपने संरक्षण में आर्य कुमार सभा चलाने का यत्न करे। समाज के सदस्यों मे से किसी एक अनुभवी आर्य को उनके साप्ताहिक सत्संगों में सम्मिलित होना चाहिये। उन्हें कार्य सम्बन्धी बातों में अपना आदेश देना चाहिये और उनकी त्रुटियों को दूर करने का यत्न करना चाहिये। आर्य कुमार सभाओं पर व्यय का भार न पड़े किन्तु आर्य समाज उनको समस्त सुविधाएं दे। आर्य समाज के पुस्तकालयों को विस्तार दिया जाय जिससे आर्य युवक काफी साहित्य प्राप्त कर सकें। साथ ही आर्य कुमार सभाओं के संचालकों को इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिये कि वे कोई ऐसा कार्य न कर बैठें जो आर्य समाज की प्रतिष्ठा के विरुद्ध पड़ता हो या जिसके कार्य करने के लिये उनकी सामर्थ्य न हो।...आर्य समाज की गति को तीव्र करने के लिये आर्य युवकों का संगठन होना अत्यन्त आवश्यक है। इस समय तक जो उपेक्षा नवयुवकों की हुई, वह हो चुकी, परन्तु भविष्य में आर्य समाजों तथा आर्य नेताओं को उपेक्षा नहीं करनी चाहिये।"...प्रगतिशील आर्य भाइयो ! आप अपने समाज के बहुमूल्य अंग युवकों को आर्य धर्म की ओर प्रेरित कीजिये। यदि आपको विश्व में आर्यत्व फैलाना है तो युवकों को अपनाइये। कालिज और स्कूलों के दूषित वायुमण्डल को यदि शुद्ध बनाना है तो युवकों में ऋषि दयानन्द के विचारों को प्रविष्ट कराइये।" (पृ० ५३)

भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् के प्रधान के रूप में हम अपने मित्र प्रेमी जी के इन विचारों का हार्दिक समर्थन अपने अनुभव के आधार पर करते हैं और समस्त आर्य समाजों के अधिकारियों तथा आर्य नेताओं का ध्यान आर्य कुमार सभाओं के प्रबल संगठन की ओर आकर्षित करना अपना कर्तव्य समझते हैं।

"मुस्लिम मनोवृत्ति" शीर्षक वाले सप्तम अध्याय के अन्त मे उपसंहार के रूप में सुयोग्य लेखक ने लिखा है कि "आर्य समाज को पहले से भी अधिक सावधान होकर मुसलमानों की विषैली मनोवृत्ति से लोहा लेना है। आर्य समाज यदि सचेत होकर हिन्दुओं की रक्षा करता रहा तो मुसलमानों की मांग बढ़ नहीं सकेगी। यदि इस घोर संकट के अवसर पर आर्य समाज चुप रहा तो सारी हिन्दू जाति को महान् क्षति उठानी पड़ेगी। अतः आर्य समाज को अपनी शक्ति बढ़ाने का पूरा यत्न करना ही चाहिये।" (पृष्ठ ८२)

ये शब्द गत वर्ष लिखे गये थे। अब भारत विभाजन के साथ तो पाकिस्तानी प्रदेशों में आर्य समाज को पर्याप्त संघर्ष में से गुजरना पड़ेगा ऐसा प्रतीत होता है। उसके लिये अपनी शक्ति को सब उचित उपायों से बढ़ाना उसके लिए अत्यन्त आवश्यक है। पाकिस्तानी प्रदेशों में आर्यों के धार्मिक सांस्कृतिक अधिकारों को कुचला न जाए इस बात का ध्यान रखना

भारत सङ्गठनान्तर्गत आर्यों का भी कर्तव्य होगा।

"आर्य समाज और हिन्दू संगठन" शीर्षक अष्टम अध्याय में श्री प्रेमी जी ने एक बड़ी महत्वपूर्ण बात लिखी है जिसकी ओर हम सार्वदेशिक के पाठकों का ध्यान सदा आकर्षित करते रहे हैं कि "आर्य समाज में प्रविष्ट होने वालों को पूरा यत्न करके अपने परिवार को आर्य बनाना चाहिये था। जिन अन्ध विश्वासों को स्वामी दयानन्द भारतवर्ष से दूर करना चाहते थे वे अन्धविश्वास की बातें प्रत्येक परिवार से भी तो हट जानी आवश्यक थीं। उनके न हटने से परिणाम यह हुआ कि आर्य-समाज में प्रविष्ट होने वाले व्यक्ति अपनी एक विशाल आर्य बिरादरी न बना सके। यदि ऐसा हो जाता तो भारतवर्ष में हिन्दू जाति एक परिमार्जित स्वरूप में आर्य बिरादरी के नाम से संगठित हो जाती।" (पृष्ठ ९२)

वैदिक साहित्य के निर्माण और स्वाध्याय पर बल देते हुए श्री प्रेमी जी ने ठीक ही लिखा है कि 'जिस समय तक वैदिक साहित्य का अध्ययन न किया जाएगा उस समय तक आर्य समाज में प्रगति नहीं आ सकती।"

आर्य समाज के भावी कार्यक्रम विषयक निर्देश देते हुए श्री प्रेमी जी ने पीड़ित जन-सहायता, ग्रामों में शिक्षा, मद्यपान निषेधादि विषयक विशेष प्रचार, ग्राम पंचायतों का सुधार, हिन्दी प्रचार, कुमार कुमारियों तथा युवक युवतियों में विशेष प्रचार, मजदूरों मे प्रचार के साथ साथ उनकी कठिनाइयों को सुलझाने में सहायता देना, धूम्रपान (बीड़ी सीग्रेट आदि) की बढ़ती हुई दुष्प्रवृत्ति के विरुद्ध प्रबल आन्दोलन, परिवारों को आर्य बनाने का विशेष प्रयत्न तदर्थ पारिवारिक सत्सङ्गादि का आयोजन, गोपालन की विशेष योजना इत्यादि की चर्चा करते हुए लिखा है कि 'हमारा विश्वास है कि जब तक जन साधारण के हित के कार्यों को आर्यसमाज न अपनाएगा तब तक आर्यसमाज में जीवन न आएगा। अतः प्रत्येक आर्य भाई को आर्यसमाज में लाने के लिए उनके कार्यक्रम में योग देने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिये।"

[पृष्ठ ११०]

ऊपर भावी कार्यक्रम विषयक जो निर्देश श्री प्रेमी जी ने दिये हैं हम उन से पूर्णतया सहमत हैं किन्तु उनके साथ २ जाति भेद निवारण विषयक प्रबल क्रियात्मक आन्दोलन को भी सम्मिलित करना हम आवश्यक समझते हैं। श्री प्रेमी जी ने "हिन्दू चेतना शक्ति संगठन" विषयक २य खण्ड के प्रथम अध्याय में इस विषय पर कुछ प्रकाश डालते हुए लिखा है कि "जाति बिरादरी की सभाओं के मन्त्री व प्रधान बनकर ब्राह्मण, वैश्य, क्षत्री आदि जातियों का सुधार करने वाले आर्य समाज का क्या भला करेंगे? ऐसे व्यक्तियों ने स्वामी दयानन्द महाराज के उद्देश्य को नहीं समझा। जिन व्यक्तियों का विश्वास अपनी अपनी बिरादरियों को उन्नत करना है उनको आर्य समाज के पदों को स्वीकार नहीं करना चाहिये। इस भयङ्कर रोग से हिन्दू जाति का बड़ा विनाश हुआ है।" इत्यादि तथापि हम इतने लेख को पर्याप्त नहीं समझते। जाति भेद की भयङ्कर बुराइयों पर विशेष रूप से प्रकाश डालते हुए उसके कारण शुद्धि, संगठन, दलितोद्धारादि आन्दोलनों में जो बाधा पड़ रही है उसका निर्देश करते हुए आर्य समाज के भावी कार्य क्रम में जाति भेद

निवारण विषयक प्रबल क्रियात्मक आन्दोलन को प्रमुख स्थान देना चाहिये था। जाति भेद निवारक आर्यपरिवार संघ इसी विशेष कर्त्तव्य की ओर आर्य जनता का ध्यान निरन्तर आकर्षित कर रहा है जिससे पूर्ण क्रियात्मक सहयोग करना प्रत्येक प्रगति शील आर्य का कर्त्तव्य है।

सैनिक शिक्षा विषयक अन्तिम अध्याय में लेखक ने उत्तम व्यायामशालाओं की स्थापना द्वारा क्षात्र धर्म को जागृत करने के लिये विशेष उद्योग की ओर जनता का ध्यान आकर्षित किया है जिसमें किसी का मतभेद नहीं हो सकता। आर्य वीर दल को इस पवित्र उद्देश्य की पूर्त्यर्थ प्रयत्न करना चाहिय। उसके आन्दोलन को प्रबल बनाने में सब आर्यों को पूर्ण सहयोग देना चाहिये।

इस प्रकार पाठकों ने देखा होगा कि यह पुस्तक वर्तमान समय मे आर्य समाज के आन्दोलन को प्रबल बनाने के लिये कितनी उपयोगी है। हम अपने मित्र और सहयोगी श्री प्रेमी जी को इतनी उपयोगी पुस्तक लिखने पर हार्दिक बधाई देते हैं और चाहते हैं कि आर्यों मे इसका अधिक से अधिक प्रचार हो। प्रत्येक आर्य समाज के पुस्तकालय में इसकी १ प्रति अवश्य होनी चाहिये ताकि सब सदस्य इस में प्रकाशित विचारों और निर्देशों से लाभ उठा सकें।

विश्ववाणी—एशिया सम्मेलन विशेषाङ्क

प्रयाग से निकलने वाली मासिक पत्रिका विश्व वाणी का अप्रैल मई का सम्मिलिताङ्क एशिया सम्मेलन तथा संस्कृति विशेषाङ्क के रूप में प्रकाशित हुआ है जिस में देहली में हुए एशिया सम्मेलन के विस्तृत वृतान्त के अतिरिक्त एशिया के अन्तर्गत भिन्न-भिन्न देशों की संस्कृति और उनके परस्पर सम्बन्धादि विषयक प्रसिद्ध विद्वानों के लेखों का बड़ा उत्तम संग्रह किया गया है। इस विशेषाङ्क के निकलने मे सम्पादक महोदय ने जो परिश्रम किया है वह अत्यन्त प्रशंसनीय है। इसके पढ़ने से पाठकों को एशिया की संस्कृति विषयक बहुत सी नवीन बातों का ज्ञान होगा।

प्रतिनिधि—पूर्वीय अफ्रीका आर्य प्रतिनिधि सभा नैरोबी का मासिक मुख पत्र—

सम्पादक श्री पं० धर्मेन्द्र नाथ जी वेदालङ्कार शास्त्री बी० ए०। यह प्रसन्नता की बात है कि गत लगभग २ वर्षों से प्रतिनिधि नाम का मासिक पत्र अफ्रीका से हमारे सुयोग्य शिष्य पं० धर्मेन्द्रनाथ जी वेदालङ्कार के सम्पादकत्व मे निकल रहा है। इस में आर्य भाषा, अंग्रेजी तथा गुजराती में वैदिक धर्म और आर्य समाज विषयक उत्तम लेख रहते हैं। हम इस सहयोगी का हार्दिक अभिनन्दन करते हैं और आशा करते हैं कि अफ्रीका वासी आर्य भाइयों के सहयोग से इसे और भी अधिक उन्नत करने का यत्न किया जाएगा।

आर्य कन्या विद्यालयों के लिये प्रारम्भिक प्रार्थना—

लेखक श्री फूलचन्द्र जी शर्मा 'निडर' भिवानी मूल्य –)

इस छोटी सी पुस्तक में आर्य कन्या विद्यालयों के लिये गायत्री मन्त्र और 'विश्वानि देव' इस मन्त्र के आधार पर प्रार्थना तथा एक सुन्दर भजन जो बालिकाओं के लिये विशेष उपयोगी है प्रकाशित किया गया है। इस प्रार्थना को सब आर्य कन्या विद्यालयों में प्रचलित किया जा सकता है।

ध० दे०

महात्मा गांधी और अल्लोपनिषत्

(लेखक- पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति अध्यक्ष अनुसन्धान विभाग सार्वदेशिक सभा देहली)

मई मास के 'सार्वदेशिक' मे हमने इस विषयक एक सम्पादकीय टिप्पणी देते हुये लिखा था कि "इस अल्लोपनिषत् की रचना से जिसमें अरबी संस्कृत का महा असंगत सा मिश्रण है यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि किसी ने मुसलमानी मत को भी वेद और उपनिषद् के अनुकूल दिखा कर आर्य हिन्दू जनता को फँसाने के लिये इस कृत्रिम ग्रन्थ की उपनिषद् के नाम पर रचना कर डाली। महात्मा गांधी जी का उसे प्रामाणिक उपनिषद् जैसा मानकर प्रवचन मे उल्लेख कर देना सर्वथा भ्रम जनक है।"

'सार्वदेशिक' का यह अङ्क अन्य अङ्कों की तरह महात्मा जी की सेवा में भेजा गया। इसके पश्चात् महात्मा जी ने अपने एक प्रवचन मे कहा कि "कई लोगों ने अल्लोपनिषद् विषयक मेरे वक्तव्य पर आक्षेप किया है और उसे अप्रामाणिक बताया है। मैंने जब इस विषय में कहा था तो स्मृति से (जबानी) कहा था। मैंने एक विद्वान् मित्र को लिखकर पूछा। उन्होंने मुझे बताया है कि यह उपनिषद् आथर्वण संग्रह में है। प्रो० जयचन्द्र जी विद्यालङ्कार ने मुझे पत्र में लिखा है कि राणा कुम्भ का जो विजय स्तम्भ चित्तौड़ में बना हुआ है वहां ब्रह्मा, विष्णु, महेश की त्रिमूर्ति के साथ अरबी में अल्ला भी खुदा हुआ है इत्यादि। इन बातों से श्रोताओं और "हरिजन" "हरिजन सेवक" इत्यादि के पाठकों पर यह प्रभाव पड़ा है कि महात्मा गान्धी जी इस अल्लोपनिषत् की प्रामाणिकता का समर्थन कर रहे हैं। जून के 'सार्वदेशिक' में हमने जानबूझकर इस विषय में कोई टिप्पणी इस कारण न दी थी क्योंकि हम १०८ उपनिषदों का संग्रह तथा अल्लोपनिषद् को (जो देहली के पुस्तकालयों में हमें उपलब्ध न हो सके थे) देखकर प्रामाणिक रूप से इस पर प्रकाश डालना उचित समझते थे। इस मास के प्रारम्भ मे हमे हरिद्वार आने पर गुरुकुल विश्व विद्यालय कांगड़ी के विशाल पुस्तकालय मे इस विषयक अनुसन्धान का उत्तम अवसर प्राप्त हुआ जिसके परिणाम को हम पूज्य महात्मा जी और जनता के सन्मुख रखना अपना कर्त्तव्य समझते हैं।

(१) सबसे पहली बात जो १०८ उपनिषदों के संग्रह को (निर्णय सागर प्रेस बम्बई में सन् १९१३ में 'ईशाद्यष्टोत्तरशतोपनिषदः' इस नाम से प्रकाशित) ध्यान पूर्वक देखने पर हम निश्चय से कह सकते हैं यह है कि इस में अल्लोनिषत् सम्मिलित नहीं है। इसलिये ११ मई सन् १९४७ के अंग्रेजी 'हरिजन' में प्रकाशित महात्मा गान्धी जी का कथन कि Those who had studied the Hindu Scriptures knew that among the 108 Upanishads there was one called the Allopanishad" अर्थात् जिन्होंने हिन्दू धर्म ग्रन्थों का अध्ययन किया है उनको ज्ञात है कि १०८ उपनिषदों में एक अल्लोपनिषत् भी है असत्यार्थ सिद्ध होता है।

(२) १०८ उपनिषदों के अन्तर्गत न होने पर भी 'अल्लोपनिषत्' के नाम से एक बहुत छोटा सा ग्रन्थ पं० श्री कृष्ण मोहन जी शर्मा कार्तान्तिक पुस्तकालय मांडवी बम्बई द्वारा सन् १६०४ में प्रकाशित हुआ था। यह निश्चित प्रतीत होता है कि ऋषि दयानन्द के जीवित काल में भी यह ग्रन्थ किसी न किसी रूप में छपा हुआ था जिसके उद्धरण उन्होंने सत्यार्थ-प्रकाश के चतुर्दश समुल्लास में दिये हैं। हमने मास की सम्पादकीय टिप्पणी को लिखते हुए इसी में से उद्धरण लिये थे। गुरुकुल काङ्गड़ी के पुस्तकालय में पं० श्री कृष्ण मोहन जी शर्मा द्वारा प्रकाशित 'अल्लोपनिषत्" में और सत्यार्थ प्रकाश' में उद्धृत ग्रन्थ में बहुत कम अन्तर है तथापि पाठकों की सूचनार्थ हम इसे अविकल रूप मे पुनः उद्धृत कर देते हैं ताकि विद्वान् महानुभाव उसके विषय में अपनी ठीक २ सम्मति बना सकें।

अल्लोपनिषत्

श्री गणेशाय नमः। हरिः ओ३म् वरुणनु दिव्यानुदात्त इल्लल्ले मित्रा ह्रीं अस्मल्लां इल्लल्ले मित्रावरुणा दिव्यानि धत्ते इल्लल्ले वरुणो राजा पुनर्ददुः। ह्रयामि मित्रो इल्लां इल्लल्ले इल्लां वरुणो मित्रोतेज कामः॥ १॥ हूं होतारमिन्द्रो होता इन्द्रो रामामाह्वासुरिन्द्राः। अल्लो ज्येष्ठं श्रेष्टं परपूर्णं ब्रह्मण अल्लाम्॥ २॥ द्रां अल्लो रसुल महंमदरकबरस्य अल्लो अल्लां आदल्लाबुकमेककं अल्लाबुकं निखातकम्॥ ३॥ अल्लो यज्ञेन हुत्वः अल्ला सूर्यचन्द्रसर्वनक्षत्राः। अल्लो ऋषीणां सर्वाधव्या इंद्राय पूर्वं माया परमं अन्तरीक्षाः॥ ४॥

अल्लो पृथिव्या निषत्ते ईल्लल्ले वरुणो राजा पुनर्ददुः। इल्लल्ले कबर इल्लां इल्लल्लेति-इल्लल्ले॥५॥ हरि ॐ अस्य इल्लां इल्लल्ले मित्रा-वरुणो राजा पूर्णं दध्युः ह्रयामि मित्रो इल्लां कबर इल्लां रसूल महंमदरकबरस्य अल्ले अल्लो पूर्णं दध्युः॥ ६॥

हरि ॐ अल्ला इल्लल्ला अनादिस्वरूपाय अथर्वणी शाखां ह्रीं जनानां पशु सिद्धान् जल चरान अदृष्टं कुरु कुरु फट्। असुरसंहारिणी हूँ अल्लो रसुल महमदरकबरस्मल्ले अल्लो इल्ल ल्लेति ल्लाल्लाः॥ ७॥

इति आथर्वणशाखायां लक्ष्म्युपनिषद् सम्पूर्णम्

इस प्रकार यह लघुग्रन्थ समाप्त होता है जिसका नाम ऊपर अल्लोपनिषत् और अन्त में लक्ष्मी उपनिषत् लिखा है। इसकी रचना सर्वथा कृत्रिम और शब्द जाल के अतिरिक्त कुछ भी भाव पूर्ण नहीं है। हमारा निश्चित विचार है कि यह किसी ऐसे चालाक आदमी की भोले भाले आर्य हिन्दुओं को इस्लाम के जाल में फँसाने के लिये की गई रचना है जो संस्कृत और अरबी से परिचय रखता था। आथर्वण शाखा का नाम देकर उसने अपने कपोल कल्पित सर्वथा कृत्रिम ग्रन्थ को वैदिक साहित्य का अङ्ग दिखाने का अत्यन्त निन्दनीय कार्य किया है। महर्षि दयानन्द का यह महान् उपकार है कि उन्होंने विवेक शक्ति से कार्य लेकर इस लघुग्रन्थ की कृत्रिमता का स्पष्ट प्रतिपादन किया है जबकि वाचस्पत्य बृहदभिधान नामक सुप्रसिद्ध संस्कृत कोष के सम्पादक पं तारानाथ तर्क वाचस्पति और 'शब्दकल्पद्रुम' नामक शब्द कोष के निर्माता

राजा राधाकान्त देव मुसलमानों के इस जाल मे फंस कर 'अल्लोपनिषत्' के नाम से संकलित इन ऊपर उद्धृत वचनों को अथर्ववेद के नाम से लिखने की अक्षन्तव्य भूल कर बैठे हैं। उदाहरणार्थ वाचस्पत्य बृहदभिधान के प्रथम खण्ड मे पृ० ४१५ पर 'अल्ला शब्द पर निम्न व्याख्या दी है।

अल्ला स्त्री अल्यत इति अल् क्विप् अले भूषायै लाति सर्वान् अत्ति गृह्णाति १ मातरि अलतीति अल् पर्याप्तः सन् लाति सर्वान् अत्ति गृह्णाति जानाति वा ॥

२ सर्वाज्ञायां सर्वभक्षिकायां परमात्मदेवतायाम् साच अथर्व वेदे अल्लोल्लेत्यादि सूक्ते प्रसिद्धा ॥ यहां पं० तारा नाथ तर्क वाचस्पति ने संस्कृत के अल्ला शब्द के माता और परमात्मा ये दो अर्थ देते हुए अथर्ववेद के अल्लांल्ला इत्यादि सूक्त मे परमात्मा का अल्ला नाम आया है ऐसा माना है। उनका तात्पर्य इसी अल्लोपनिषत् के नाम से प्रसिद्ध कृत्रिम ग्रन्थ से है यह स्पष्ट है इसे अथर्ववेद का बताना बड़ी भूल है। यह पाठक स्वयं समझ सकते हैं।

ऐसी ही भयङ्कर भूल 'शब्दकल्पद्रुम' नामक विस्तृत शब्द कोष के सम्पादक राजा राधाकान्त देव ने की है इस कोष के प्रथम खण्ड पृ० १२१ में "अल्ला" शब्द की व्याख्या मे उन्होंने लिखा है:—अल्ला-परमेश्वर :

एतन्नाम्ना यवना उपासन्ते । अर्थात अल्ला का अर्थ परमेश्वर है इस नाम से (मुसलमान) उसकी उपासना करते हैं। यह कहकर उन्होंने "अल्लोपनिषत्" में से 'इल्लाल्लां' इल्ले मित्रावरुणानि धत्ते' इत्यादि को (जो ऊपर उद्धृत किये जा चुके हैं) उद्धृत करके इत्याथर्वण सूक्तम् यह लिख मारा है जिसका अर्थ है कि यह अथर्ववेद का सूक्त है। इसके पश्चात् वहां लिखा है:—

"अल्ला"-अल्यते इत्यल् क्विप् अले भूषायै लाति गृह्णाति नाट्योक्तौ माता इति बोप देवः। अथर्ववेदे अल्लाल्लेत्यादि ख्यातो यवनोपास्यः परमेश्वरः।" (शब्द कल्पद्रुम-राजा राधाकान्त देव संकलित प्रथम खण्डपृ०१२१

अर्थात् अल्ला का अर्थ माता और अथर्ववेद मे अल्लाल्ला इत्यादि करके प्रसिद्ध यवनों (मुसलमानों) द्वारा उपास्य परमेश्वर है। यहाँ भी इस कल्पित अल्लोपनिषत् को अथर्ववेद के नाम से लिखा गया है जो सर्वथा अशुद्ध है।

कुछ पौराणिक पण्डितों के एक कल्पित ग्रन्थ को उपनिषद् या वेद के नाम से कह देने से वह प्रामाणिक नहीं बन जाता। महात्मा-गान्धी जी का 'अल्लोपनिषत्' को एक प्रामाणिक उपनिषत् मान लेना भ्रमजनक और अशुद्ध है। यदि किसी पौराणिक पण्डित ने उन्हे यह बता दिया है कि अल्लोपनिषत आथर्वणसंग्रह मे पाई जाती है तो उसने वही भयङ्कर भूल की है जो पं० तारानाथ तर्क वाचस्पति और राजा राधाकृष्ण देव आदि ने की थी।

३ अल्ला शब्द का यदि महाराना कुम्भा के विजयस्तम्भ में उल्लेख हुआ तो इससे कुछ सिद्ध नहीं होता। अल्ला शब्द का प्रयोग माता के अर्थ में संस्कृत मे होता है जैसे कि उपयुक्त तथा अन्य शब्द कोषों मे बताया गया है। "अम्बार्थ नद्योर्ह्रस्वः" इस अष्टाध्यायी के सूत्र पर सब भाष्य तथा टीकाकारों ने अम्बा अक्का अल्ला ये मातृवाचक शब्द माने हैं। जगन्माता (परमेश्वर) के लिये अल्ला शब्द का प्रयोग संस्कृत की दृष्टि से ठीक हो है किन्तु इससे अल्लोपनिषद् जैसे कृत्रिम, शब्दाडम्बर पूर्ण ग्रन्थ की प्रामाणिकता सिद्ध नहीं होती। आशा है पूज्य महात्मा गान्धीजी इस लेख में वर्णित बातों पर गम्भीरता विचार करेंगे और ऐसी भ्रम जनक बातें कहने का साहस न करेंगे जो यथार्थता के विपरीत हों। उन्होंने जो सत्य के सार्वभौम महाव्रत को धारण किया हुआ है अतः उन्हें तो कोई भी वक्तव्य देते हुए अत्यधिक सावधानी से काम लेना चाहिये।

सम्पादकीय

स्वतन्त्र 'भारत' में आर्य समाज का उत्तरदायित्वः—

भारतीय स्वतन्त्रता का जो बिल इस समय पार्लियामेन्ट में प्रस्तुत है और जिसके १८ जुलाई तक कानून का रूप धारण कर लेने की पूर्ण सम्भावना है उससे १५ अगस्त को भारत स्वतन्त्र हो जाएगा। हम भारत विभाजन योजना को अत्यन्त अनुचित और हानिकारक समझते हैं और इस विषयक अपने विचार 'सार्वदेशिक' के गत अङ्क में प्रकट कर चुके हैं किन्तु इतनी बात तो अवश्य प्रसन्नता की है कि अनेक प्रान्तों में प्रभुत्व जनता के अपने प्रतिनिधियों का हो जाएगा और विदेशीय सत्ता से मुक्ति मिलेगी। देश की इस स्वतन्त्र दशा में आर्य समाज का उत्तरदायित्व बहुत अधिक बढ़ जायगा। विदेशियों के इस देश के शासन भार को भारतीयों के हस्तान्तरित कर चले जाने पर भी यदि हमारे देशवासियों में पाश्चात्य संस्कृति, पाश्चात्य भाषा तथा पाश्चात्य रीति-नीति का मोह बना रहा तो उसे सच्ची स्वतन्त्रता कहना अशुद्ध होगा। हमारा तो निश्चित विचार है कि इस देश का गौण नाम भारत भले ही रहे किन्तु मुख्य नाम 'आर्यावर्त' यही होना चाहिये और इस विषयक आन्दोलन करके इसे ही प्रचार में लाना चाहिये। यह नाम प्राचीन होने के अतिरिक्त अत्यन्त स्फूर्तिदायक है। यदि मुसलमान अपने अन्तर्गत प्रदेश को पाकिस्तान का नाम देते हैं जिसका अर्थ पवित्र स्थान है तो यह वस्तुतः मुस्लिमेतरों को अपवित्र मानने और उनके प्रदेश को अपवित्र स्थान घोषित करने के समान है जो घोर अपमान जनक है। अधिकतर विदेशियों द्वारा प्रचालित 'हिन्दुस्तान' शब्द का प्रयोग भी हमारी आत्म सम्मान भावना के अनुकूल नहीं परन्तु अत्यन्त प्राचीन 'आर्य' तथा 'आर्यावर्त' इन शब्दों का प्रयोग न केवल हमारे लिये स्फूर्ति दायक है किन्तु 'पाकिस्तान' का यथार्थ उत्तर रूप भी है। 'आर्यावर्त' शब्द का प्रयोग अपने देश के लिये करते हुये हम यह घोषणा करते हैं कि यह देश श्रेष्ठ धर्मात्मा, सदाचारी, शान्त चित्त, उदार, न्याय मार्गावलम्बी, कर्त्तव्य परायण नर नारियों का पवित्र देश है। इसी दृष्टि से महर्षि दयानन्द जी ने अपने ग्रन्थों में सर्वत्र 'आर्यावर्त' शब्द का ही प्रयोग किया था 'हिन्दुस्तान' वा भारतवर्ष का नहीं। किन्तु केवल 'आर्यावर्त' इस नाम को प्रचलित करने से काम न चलेगा आर्य धर्म, आर्य संस्कृति, आर्य भाषा के प्रचार तथा इनकी रक्षा में हमें अपना तन, मन, धन समर्पित करना होगा। अधिकतर शिक्षित समुदाय में आर्य धर्म, आर्य संस्कृति तथा आर्य भाषा के प्रति प्रेम नहीं पाया जाता

है। ऐसे अनेक व्यक्ति हैं जो स्वतन्त्रता के प्रेमी होते हुये भी विदेशी सभ्यता के अनुयायी बने हुए हैं, अपनी भाषा से अनभिज्ञ हैं तथा धर्म से सर्वथा विमुख हैं। उनमें इस प्रेम को जागृत करने का आर्य समाज को विशेष प्रयत्न करना होगा। 'हिन्दुस्तानी' के नाम से जो खिचड़ी भाषा कई भारतीय नेताओं द्वारा हम पर लादी जा रही है तथा उसकी आड़ में उर्दू भाषा और लिपि का जो प्रचार किया जा रहा है उसका प्रबल विरोध करके राष्ट्र भाषा के रूप मे संस्कृत निष्ठ आर्य भाषा को ही (जिसे साधारणतया हिन्दी के नाम से कहा जाता है) अपनाना होगा। गोवध निषेध विषयक प्रबल आन्दोलन करके आयावर्त से इस अत्यन्त हानिकारक कार्य को कानून का आश्रय लेकर भी बन्द कराना होगा। शिक्षा के प्राचीन आदर्श को रखते हुये विद्यालयों की स्थापना करनी होगी ताकि ब्रह्मचर्य, सदाचार आदि की जो घोर उपेक्षा हमारे विद्यार्थियों के घोर नैतिक पतन का कारण बन रही है वह न रहने पाये। क्षात्रधर्म की जागृति तथा देश की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये आर्य वीर दलों का प्रबल संगठन करना होगा। जातिभेद और अस्पृश्यता के घोर अभिशाप का समूल उन्मूलन करके राष्ट्रीय संगठन को प्रबल बनाना होगा। यह सब उत्तर-दायित्व है जो स्वतन्त्र आर्यावर्त में आर्य समाज को अपने ऊपर लेने को उद्यत रहना चाहिये। हम प्रत्येक आर्य नर नारी से अनुरोध करते हैं कि वह अपने कर्त्तव्य और उत्तरदायित्व को पूर्ण करने के लिये सदा तत्पर रहे।

डा० राधाकृष्णन् का यथार्थ कथन:—

जगद्विख्यात भारतीय दार्शनिक डा० राधा-कृष्णन ने गत १ जुलाई को मद्रास में बीसेन्ट होस्टेल का उद्घाटन करते हुये कहा है कि:—
'Institutions like caste and untouchability which contradict the first principles of true religion, require to be scrapped. If Hindu society is to become vital and progressive, it must regenerate itself." (Hindustan Times dated 3- 7- 47) अर्थात् जाति भेद और अस्पृश्यता जैसी प्रथाओं को जिनका सच्चे धर्म के मौलिक सिद्धान्तों से ही विरोध है तुरन्त नष्ट करने की आवश्यकता है। यदि हिन्दू समाज को शक्तिशाली और उन्नत बनना है तो इसे अपने को सुधार कर पुनर्जीवित करना होगा।

हम सर राधा कृष्णन् जी के इस कथन को सर्वथा यथार्थ समझते और इसका प्रबल समर्थन करते हैं। जन्म सिद्ध जाति भेद की प्रथा का ही स्वाभाविक परिणाम अस्पृश्यता की भावना है। इसके कारण हमारी जाति की उन्नति में जो बाधा पड़ी है, संगठन में जो न्यूनता आई है, पारस्परिक, प्रेम, सहयोग और सच्ची बन्धुभावना में जो रुकावट पैदा हुई है उसका शब्दों में वर्णन करना असम्भव है। अतः अब जब हम में जागृति आरही है और हम स्वतन्त्रता की ओर त्वरित गति से कदम आगे बढ़ा रहे हैं हमारा प्रधान कर्तव्य है कि हम जाति भेद और अस्पृश्यता का समूल नाश करदें तथा

बन्धुभावना को दृढ़ करते हुए सामाजिक और राष्ट्रीय उन्नति के कार्य करने में निरन्तर तत्पर रहें। यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि जिन्हें नीच जाति का कहकर हम अपमानित व पद दलित कर रहे हैं उन्हें ही विधर्मी गले लगा-कर अपनी संख्या में दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करते रहे हैं। इसी के परिणाम स्वरूप यह पाकिस्तान का भूत मूर्त रूप लेकर अब हमारे सामने खड़ा हो गया है। क्या हम अब भी न चेतेंगे?

बड़ौदा राज्य का अनुकरणीय आदेशः—

अस्पृश्यता निवारण और दलितोद्धार के विषय मे बड़ौदा रियासत स्व० मास्टर आत्मा-राम जी आदि आर्य महानुभावों के नेतृत्व में अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य करती रही है। ३ जून के हिन्दुस्तान टाइम्स आदि पत्रो से यह जान कर हमे अत्यन्त हर्ष हुआ कि उसने अस्पृश्यता का सर्वथा अन्त करने के लिये अब इस प्रकार के आदेश जारी किये है कि जिन विद्यालयो में दलितवर्ग के छात्र नहीं लिये जाते उन्हे सरकारी सहायता बन्द करदी जाए तथा दलितवर्ग के (जिन्हे महात्मा गान्धी जी हरिजन के नाम से पुकारते हैं) पृथक् विद्यालयों व छात्रावासों को भी बन्द कर दिया जाए।

हम इस प्रकार के आदेश को अत्यन्त आवश्यक तथा अनुकरणीय समझते हैं। हमारा निश्चित विश्वास है कि दलितवर्ग के विद्यालयों के लिये अलग विद्यालय, कूप, छात्रावास तथा मन्दिर आदि खोलने से अस्पृश्यता का अन्त नहीं होता किन्तु वस्तुतः उसमें वृद्धि होती है। यही विचार अखिल भारतीय हरिजन सेवक सङ्घ के श्री ठक्कर बापाजी आदि मान्य अधिकारियों के सामने हम बंगलोर आदि में प्रकट कर चुके हैं। संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्तादि में इसी प्रकार के आदेश जारी करके अधिकारियों को अस्पृश्यता के कलङ्क का समूल नाश करने में सहायता देनी चाहिये।

यज्ञोपवीत का प्रयोजनः—

श्री गिरीशचन्द्र नामक एक सज्जन ऐलादपुर (जिला आगरा) से लिखते हैं—"सेवा में निवेदन है कि मेरे हृदय में बहुत दिनों से एक भावना घर कर गई है कि हमारे पुरुषाओं ने जितने भी संस्कार बनाये व धार्मिक बन्धन लगाये हैं वे किसी न किसी कारण व रहस्य से बनाये व लगाये हैं। उनसे शरीर को बहुत से फ़ायदे होते हैं। इसी प्रकार यज्ञोपवीत संस्कार व उसके धारण करने से फायदे होंगे ही लेकिन हम उनके न मानने से अंधकार में पड़े हुए हैं और इसी लिये आज कल के मुझ जैसे नौजवान यज्ञोपवीत को कुछ नहीं समझते। कृपा करके यज्ञोपवीत संस्कार व यज्ञोपवीत धारण करने के फ़ायदे व रहस्य आप 'सार्वदेशिक' में सरल हिन्दी मे प्रकाशित करवा दें जिससे मेरे जैसे भूले हुए अन्य भाई भी सम्भल जाएं। बड़ी कृपा होगी।"

इस सज्जन ने जिस सरलता से अपने भाव को प्रकट किया है वह प्रशंसनीय है। उसका यह कथन ठीक ही है कि हमारे पूर्वजों ने जिन संस्कारों का विधान किया है वे न केवल शरीर के लिये ही उपयोगी हैं किन्तु मन और आत्मा के विकाश में भी वे सहायक हैं। यज्ञोपवीत संस्कार उन १६ वैदिक संस्कारों में से एक है जो विशेष महत्वपूर्ण है। यज्ञोपवीत एक पवित्र धार्मिक चिन्ह है जो हमें अपने कर्तव्यों का

स्मरण करवाता है। इसके ३ सूत्र (वेदादि शास्त्रों में 'त्रिवृत्' आदि शब्दों द्वारा तीन ही तागों के यज्ञोपवीत का विधान है) शारीरिक, वाचिक और मानसिक इस तीन प्रकार की पवित्रता, शारीरिक, मानसिक, आत्मिक तीनों शक्तियों का सम विकास, ज्ञान, कर्म, उपासना का समन्वय, ज्ञान, कर्म, उपासना व भक्ति के प्रतिपादक वेदों का अध्ययन, दम (इन्द्रियों तथा मन को वश करना) दान, दया, देव ऋण (परमेश्वर का ऋण व महान् उपकार) पितृ ऋण, ऋषिऋण इन तीन ऋणों को याद करा कर सन्ध्या, स्वाध्याय, माता पिता आदि की सेवा तथा सुसन्तानोत्पादनादि द्वारा उन ऋणो से मुक्त होना, इन सब कर्तव्यों का स्मरण कराते हैं। यदि सब यज्ञोपवीतधारी इन कर्तव्यों के पालन की ओर सदा ध्यान देते रहें तो निस्सन्देह उनकी आश्चर्यजनक उन्नति हो सकती है। हम समस्त आर्य नर-नारियों से अनुरोध करते हैं कि वे यज्ञोपवीत के इस प्रयोजन को समझ कर कर्तव्यपालन में उससे स्फूर्ति ग्रहण करें। आर्यों को अपने पुत्रों के समान पुत्रियों को भी यज्ञोपवीत संस्कार विधिपूर्वक करा कर संध्या स्वाध्यायादि में उन को प्रवृत्त करना चाहिये।

दक्षिणभारत में आर्य भाषा का प्रचार तथा परीक्षाएं—

आर्य भाषा का (जिसे साधारणतया हिंदी के नाम से पुकारा जाता है) प्रचार आर्यसमाज के प्रचार विषयक कार्यक्रम का देश-विदेश में एक आवश्यक अंग रहा है। दक्षिणभारत में सार्वदेशिक सभा की ओर से श्री पं० सत्यव्रत जी, पं० देवेश्वर जी,मुझे तथा पं० केशवदेव जी, पं० मदनमोहन जी आदि जिन महानुभावों को सामाजिक कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ उन सब ने धर्मप्रचार तथा दलितोद्धार, शुद्धि आदि कार्य के साथ २ आर्य भाषा (संस्कृत-निष्ठ हिन्दी) के प्रचार का विशेष ध्यान रक्खा। जब दक्षिणभारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना हुई तो उसके साथ भी सहयोग की भावना आर्यप्रचारकों ने रक्खी किन्तु धीरे २ उक्त सभा की उर्दू शब्दों का प्रयोग अनुचित रूप से पुस्तकों व भाषणों मे करने की प्रवृत्ति को देख कर हम लोगों को उसका विरोध करना पड़ा और इस विषयक मतभेद बढ़ता गया। दो वर्ष हुए उस सभा का नाम ही महात्मा गान्धी जी के आदेशानुसार हिन्दुस्तानी प्रचार सभा रख दिया गया और देवनागरी लिपि के अतिरिक्त उर्दू लिपि और भाषा का ज्ञान प्रचारकों और विद्यार्थियों के लिये आवश्यक ठहरा दिया गया जिससे हिन्दी प्रेमियों में अत्यन्त असन्तोष फैल गया। ऐसी अवस्था मे यह प्रसन्नता की बात है कि सार्वदेशिक सभा के केरल मे उत्साही प्रचारक श्री पं० इन्द्रदेव जी ने आर्य भाषा (हिन्दी) की परीक्षाएं जारी करा दी हैं जिनमें परीक्षार्थियों की संख्या में उत्तरोत्तर उन्नति होती जायगी ऐसा हमारा विश्वास है। इस वर्ष के परीक्षा परिणाम को हम आगामी अङ्क में प्रकाशित करने का यत्न करेंगे।

स्वतन्त्र भारत की राष्ट्र भाषा—

अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थायी समिति के अधिवेशन मे जो १२ जुलाई को प्रयाग में हुआ यह निश्चय किया गया कि "देश की परिवर्तित राजनैतिक परि-

स्थितियों तथा राष्ट्र के अधिक उपयुक्त संगठन को दृष्टि में रखते हुए यह आवश्यक है कि सब क्षेत्रों में हिन्दी को प्रमुखता दी जाए। अतः विधान निर्मात्री परिषत् को हिन्दी को राष्ट्र भाषा और देव नागरी राष्ट्रीय लिपि घोषित कर देनी चाहिये। यह भी निश्चय किया गया कि केन्द्रीय सरकार के सब विभागों और कार्य क्षेत्रों में तथा अन्तः प्रान्तीय विषयों में जहां अब तक अंग्रेजी अथवा अन्य कोई भाषा तथा रोमन व फ़ारसी लिपि प्रचलित है हिन्दी को भाषा के रूप में और देव नागरी को लिपि के तौर पर स्वीकार किया जाए। हिन्दी भाषी सब प्रान्तो में शिक्षा का माध्यम अनिवार्य रूप से हिन्दी को कर दिया जाए तथा अंग्रेजी और उर्दू का अनिवार्य शिक्षण तत्काल बन्द कर दिया जाए। हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि को हिन्दी भाषी प्रान्तीय सरकारों व रियासतों के सब विभागों में अनिवार्य कर दिया जाए। अन्य प्रान्तों व रियासतों में वहां की प्रादेशिक भाषाएं न्यायालयों (अदालतों) की भाषाएं रहें। समिति ने उक्त प्रस्ताव को दृष्टि में रख कर निम्न सिफ़ारिशें की हैं:—

(१) केन्द्रीय व प्रान्तीय सरकारों के सहयोग से हिन्दुस्तानी के निर्माण व प्रचार के वर्तमान प्रयत्नों को तत्काल बन्द कर दिया जाय।

(२) सेनाओं को रोमन लिपि में हिन्दुस्तानी व उर्दू भाषा पढ़ाना तत्काल बन्द करके उसकी जगह देव नागरी लिपि व हिन्दी भाषा को प्रचलित किया जाए।

(३) अखिल भारतीय रेडियो द्वारा समस्त भारत के लिये ब्रॉडकास्ट किये जाने वाले कार्य क्रम हिन्दी में किये जाएं।

(४) हिन्दी भाषी प्रान्तों व रियासतों में सर्वत्र हिन्दी के माध्यम से शिक्षा दी जाए।

(५) उक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिये १ अगस्त को हिन्दी दिवस मनाया जाए।

हम सम्पादक 'सार्व देशिक' तथा प्रधान केन्द्रीय हिन्दी रक्षा समिति के रूप में इन प्रस्तावों का हार्दिक समर्थन करते हैं। हम 'सार्वदेशिक' के सम्पादकीय स्तम्भों में सदा इस बात पर बल देते रहे हैं कि हमारी राष्ट्र भाषा संस्कृत निष्ठ हिन्दी ही है और उस को समस्त व्यवहार में अपनाना प्रत्येक सच्चे देश भक्त का कर्तव्य है। मुसलमानों की अल्प संख्या को प्रसन्न करने के लिये हिन्दी को अनावश्यक उर्दू फ़ारसी के शब्दों से लादने की जो प्रवृत्ति 'हिन्दुस्तानी' प्रचार के नाम पर महात्मा गांधी जी आदि कुछ नेताओं ने चलाई उसका हम लेखों तथा महात्मा जी से भेंट इत्यादि के द्वारा सदा प्रतिवाद करते रहे हैं। 'सार्व देशिक' के गत जून मास के अङ्क में भी 'हरिजन सवक' का दुराग्रह" इस शीर्षक से हम एक टिप्पणी इसी सम्बन्ध में लिख चुके हैं। यदि 'हिन्दुस्तानी' नामक इस खिचड़ी भाषा के प्रचलित करने का उद्देश्य उर्दू प्रेमी मुसलमान भाइयों को प्रसन्न करना तथा उन्हें अपने साथ मिलाना था तो इसमें सर्वथा असफलता मिली है। इलाहाबाद से 'नया हिन्द' नामक एक 'हिन्दुस्तानी' का प्रबल पक्षपाती मासिक पत्र निकलता है उसमें प्रयुक्त 'हिन्दुस्तानी' के विषय में अंजुमने तरक्किय उर्दू' के पत्र 'हमारी जबान' ने निम्न आशय की सम्मति प्रकाशित की है:—

'नई हिन्दी के प्रचारक सम्भवतः इसे पसन्द न करेंगे। उर्दू के पक्षपाती तो निश्चय से यही

कहेंगे कि यह एक बनी बनाई जबान को बिगाड़ने की कोशिश मालूम होती है। हिन्दुस्तान म यह नई बोली ' के आविष्कार का आन्दोलन वास्तव मे गान्धी जी ने प्रारम्भ किया था जिस व सारे हिन्दुस्तान के लिये अम्र आ क स्थ न पर एक मिली जुली भाषा का काम दे सक । इस 'रिसाले' के सस्थापकों की सेवा म कुछ निवेदन करना चाहते है सौ डेढ सौ वर्ष स उदू एक स्थायी साहित्यिक भाषा बन गइ है। इसमे हजारो किताबें लिखी जा चुकी हैं। सैकडों अखबार छप रहे है। इस हालत मे उदू वाले किसी परिवतन को स्वीकार न करेंगे। सम्भव है कि नई हिन्दी वाले भी यही आपत्ति उठायें। ऐसी हालत मे दोनों मे तोड फोड करके एक नई बोली प्रचलित करने मे कसे सफलता मिल सकती है ?"

आशा है इससे उन लोगों और हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, नई तालीम सङ्घ इत्यादि सस्थाओ की आखें खुल जाए गी जिन्होंने मुसलमानों की अल्प सख्या को प्रसन्न करने के लिये हमारी सच्ची राष्ट्र भाषा- सस्कृत निष्ठ हिन्दी के स्थान पर (जिसको समझने तथा व्यवहार करने वालों की सख्या बहुत अधिक है) एक कृत्रिम भाषा को घडा और उसे 'हिन्दुस्तानी' के नाम से चलाने का दुस्साहस किया। अब तो जब पाकिस्तान की पृथक् राज्य के रूप मे स्थापना हो रही है इस घातक प्रवृत्ति का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिये तथा जैसे कि सम्मेलन ने प्रस्ताव किया है सब सरकारी विभागों और विद्यालयों में राष्ट्र भाषा हिन्दी तथा देवनागरी लिपि को ही प्रमुख स्थान देना चाहिये। आर्य नर नारियों तथा आर्य सस्थाओं को इस विषय में सब का पथ प्रदर्शन करना चाहिये क्योंकि महर्षि दयानन्द ही इस आन्दोलन के सबसे प्रथम प्रवर्तक थे।

पाकिस्तान के गवनर जनरल का आश्वासन—

पाकिस्तान के स्वयम्भू गवर्नर जनरल मि० जिन्ना ने १३ जुलाई को नई देहली में एक प्रेस कान्फ्रेंस ने भाषण करते हुए पाकिस्तान के अल्प-सख्यक लोगों को विश्वास दिलाया कि उनको अपने धम, सस्कृति, जीवन तथा सम्पत्ति विषयक सब प्रकार की पूण स्वतन्त्रता रहेगी। बिना भेद-भाव के उन्हे पाकिस्तान का नागरिक माना जाएगा। इसके साथ ही उन्हें राज्य क प्रति सच्ची स्वामिभक्ति का प्रदशन करना होगा। ऐसा ही आश्वासन मि० गजनफर अली खा तथा पजाब प्रान्तीय मुस्लिमलीग के प्रधान ममदोत क खान ने भी पिछले दिनो दिये है किन्तु जैस कि महात्मा गाधी जी ने कहा है उन सूखे आश्वासनो से कोई लाभ नहीं हो सकता जब तक उन्हे क्रियात्मक रूप मे सच्चा सिद्ध न किया जाए। मि० जिन्ना ने १३ ता० के भाषण मे कहा कि मै हमेशा इसी बात को सच्चाइ के साथ कहता रहा हूँ। यदि मि० जिन्ना की यह बात सत्य है और उसके अनुयायियों ने कलकत्ता, नोआखाली, तिप्पुरा, पजाब, सीमा प्रात सिन्ध इत्यादि मे अल्प सख्यकों पर अमानुषिक अत्याचार करके अपने प्रमुख नेता के आदेश का पालन किया है तो इसका यही अथ निकलता है कि मि० जिन्ना का अपने अनुयायियों पर कोई प्रभाव नहीं। पाकिस्तान की घोषणा के पश्चात् भी लीगियों की ओर से ये बर्बरतापूर्ण अमानुषिक अत्याचार जारी हैं इस लिये मि० जिन्ना के इन

मौखिक आश्वासनों पर अल्पसंख्यक कैसे विश्वास कर सकते हैं ? हां, हमारे लिये यह सचमुच प्रसन्नता की बात होगी यदि पाकिस्तान के गवर्नर जनरल मि० जिन्न सब से प्रथम सिन्ध सरकार की ओर से लगाये सत्यार्थप्रकाश विषयक प्रतिबन्ध को (जो उनके प्रधानत्व मे स्वीकृत मुस्लिम लीग के प्रस्ताव के परिणाम स्वरूप लगाया गया था–उठवा कर आर्यों को धार्मिक स्वतन्त्रता देंगे तथा अन्य सब अल्प संख्यक लोगों के साथ भी सर्वथा न्यायपूर्ण व्यवहार कर उनके हृदयों को जीत लेंगे। इन कोरे आश्वासनो से कोई लाभ नहीं हो सकता। उनके आश्वासनो की सत्यता की बहुत शीघ्र परीक्षा होने वाली है। क्या हम आशा करें कि वे इसमे उत्तीर्ण होंगे ?

भारतीय स्वतन्त्रता बिल और रियासतें:—

४ जौलाई को पार्लयामेन्ट मे जिस भारतीय स्वतन्त्रता बिल को प्रस्तुत किया गया और जिस के १८ जुलाई तक कानून बन जाने की पूर्ण आशा है उस के भारत विभाजन सम्बन्धी अंश को यद्यपि हम अत्यन्त हानिकारक समझते है तथापि १५ अगस्त तक शासन सत्ता को भारतीयों के हस्तान्तरित करने विषयक अंश से कुछ सन्तोष हो सकता है। हमें तो सेनादि विषयक विभाजन से देश क। भविष्य कुछ उज्ज्वल प्रतीत नहीं होता। जैसे कि पूज्य महात्मा गांधी जी ने कहा है ऐसा प्रतीत होता है कि सेना विभाजनादि द्वारा दो परस्पर विरुद्ध सेनाएं भावी संघर्ष के लिये तैयार की जा रही हैं। देश की अखण्डता की पुनः स्थापना के लिये प्रयत्न निरन्तर जारी रहना ही चाहिये। रियासतों के भविष्य के विषय मे प्रस्तुत बिल मे पर्याप्त स्पष्टता नहीं है। सर्वोच्चसत्ता वा paramountcy की समाप्तिकी घोषणा है जिस से लाभ उठाकर हैदराबाद (दक्षिण) त्रावन्कोर आदि कुछ रियासतें अपनी पूर्ण स्वतन्त्रता की घोषणा कर चुकी है और भूपाल इन्दौर आदि भी वैसाही घोषणा का विचार कर रही है। इस प्रकार की घोषणा देश की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये अत्यन्त हानिकारक सिद्ध होगी। रियासतो को प्रजा, समस्त देश और अपना हित समझकर विधान परिषदों मे अवश्य ही सम्मिलित हो जाना चाहिये। ब्रिटिश सरकार इस बिल मे यदि यह सर्वथा स्पष्ट कर देती कि रियासतों को किसी न किसी विधान परिषत् मे अवश्य सम्मिलित होना पड़ेगा और उन की सर्वथा स्वतन्त्र सत्ता को स्वाकार न किया जायगा तो हैदराबाद, इत्यादि को ऐसी घोषणा करने का साहस न होता। राजाओं को अपनी प्रजा क हितका विचार करते हुए उचित सुधारों की घोषणा करनी चाहिये तथा विधान परिषत् मे सम्मिलित होकर देश के भविष्य के निर्माण में पूर्ण सहयोग देना चाहिये जैसे कि बहुत सी रियासतो के नरेशो ने अपने प्रतिनिधि भेजकर किया है। सरदार पटेल के इस विषयक आश्वासन के पश्चात् तो किसी भी नरेश को सकोच का कोई कारण ही नहीं रह जाता। कांग्रेस के नेताओं की अनुमति से अभी लार्ड मौटबैटन का भारत के लिये गवर्नर जनरल बने रहना और पाकिस्तान के लिये मि० जिन्ना का गवर्नर जनरल पद पर स्वयम् आसीन होना स्वतन्त्रता की दृष्टि से कांग्रेस को जनता की आंखो मेऊंचा उठाने वाली चीज नहीं है यद्यपि महात्मा गाधी जी ने बताया है कि मुसलिम लीग के नेताओ ने भी लार्ड माउन्ट बटन को दोनो प्रदेशो का गवर्नर जनरल बनाने की अनुमति देकर मि०

जिन्ना के कहने पर उस वचन से मुंह मोड़ा है जो अनुचित है। १५ अगस्त के पश्चात् तो यही उचित होगा कि किसी सुयोग्य भारतीय को ही गवर्नर जनरल नियुक्त किया जाए अन्यथा जनता पर यही प्रभाव होगा कि भारतीयों मे उस उत्तरदायित्वपूर्ण पद के योग्य कोई नहीं

स्वतन्त्र 'भारत' में राष्ट्रीय ध्वजा, भाषा और वेष का प्रश्न.—

स्वतन्त्र आर्यावर्त मे हमारी राष्ट्रीय ध्वजा, भाषा और वेष का क्या स्वरूप होना चाहिये ये विषय भारतीय विधान परिषत् के विचाराधीन हैं। राष्ट्रीयध्वजा के स्वरूप मे हम इसी अङ्क मे सार्वदेशिक सभा के कार्यकर्त्ता प्रधान श्री मदनमोहन जी एम० ए० एल० एल० बी० रि० चीफ जस्टिस का लेख प्रकाशित कर रहे है जिससे हम पूर्णतया सहमत है अतः इस विषय मे हमे अधिक लिखने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। राष्ट्र भाषा के प्रश्न पर हम सम्पादकीय टिप्पणी मे प्रकाश डाल ही चुके हैं। हमे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि भारतीय विधान परिषत् के अधिकतर सदस्य हिन्दी को ही राष्ट्र भाषा और देवनागरी लिपि घोषित करने के पक्ष में है यद्यपि पं० नेहरू जी, आचार्य कृपलानी आदि कुछ नेता म० गान्धी जी के प्रभाव मे हिन्दुस्तानी के पक्षपाती हैं। हमारी तो निश्चित सम्मति है कि संस्कृत निष्ठ हिन्दी ही राष्ट्र भाषा और देवनागरी लिपि (जो अत्यन्त वैज्ञानिक तथा सर्वथा पूर्ण है) राष्ट्रीय लिपि है इस बात की भारतीय विधान परिषद् को तुरन्त घोषणा कर देनी चाहिये। राष्ट्रीय वेष के विषय मे ज्ञात हुआ है कि कुछ लोग अचकन, पाजामा और गांधी टोपी का प्रस्ताव रख रहे है यद्यपि कई इसके विरोधी हैं। हम शुद्ध भारतीयवेष के ही पक्षपाती हैं अतः अचकन, पाजामा आदि का समर्थन नहीं कर सकते। हां खादी की टोपी में कोई आक्षेप नहीं। धोती सादा कुर्ता और खादी की टोपी यह सीधा सादा राष्ट्रीय वेष है जिसको धनी निर्धन प्रायः सब सुगमता से अपना सकते हैं। राष्ट्रीय गीत के रूप मे:—"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः"

> ये ग्रामा यदरण्ये याः सभा अधि भूम्याम्।
> ये संग्रामाः समितयस्तेषु चारु वदेम ते॥
> उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्य सन्तु
> पृथिवि प्रसूताः। दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना वय तुभ्यं बलिहृतः स्याम॥"

इत्यादि अथर्व वेद के पृथिवी सूक्त (१२-१) के मन्त्रों के अतिरिक्त जिनमे मातृभूमि के प्रति आदर और अतिशय प्रेम सूचित करते हुये उसके लिये आवश्यकतानुसार सर्वस्व त्याग की भावना प्रकट की गई है श्री बङ्किमचन्द्र चट्टोपाध्याय के ' वन्दे मातरम्" शीर्षक सुप्रसिद्ध गीत को ही अपनाया जा सकता है।

१७-७-४७ ध० दे०

खेद प्रकाशन

हमे बड़ा खेद है कि कागज की दुर्लभता तथा प्रेस की कुछ अनिवार्य कठिनाइयों के कारण गत कुछ मासों मे सार्वदेशिक पाठकों के पास नियत समय मे नहीं पहुंच सका। इन कठिनाइयों को दूर करने का प्रयत्न किया जा रहा है। पाठक अपनी स्नेह-दृष्टि पूर्ववत बनाए रक्खें। —व्यवस्थापक 'सार्वदेशिक'

लाहौर दिवस

सार्वदेशिक सभा के आदेशानुसार १३ जुलाई (रविवार) को भारत मे सर्वत्र लाहौर दिवस बड़े उत्साह और जोश के साथ मनाया गया जिस मे लाहौर को पाकिस्तानी क्षेत्र मे सम्मिलित किये जाने के प्रस्ताव का घोर विरोध करते हुए सीमा कमीशन से अनुरोध किया गया कि लाहौर जिस के साथ श्री रामचन्द्र जी के समय से भारत का प्राचीनतम इतिहास, संस्कृति और परम्परा जुड़ी हुई है और जो पिछले ७० वर्ष से अधिक समय से आर्य समाज की धार्मिक, सामाजिक और शिक्षा सम्बन्धी प्रगतियों का केन्द्र रहा है भारत में ही रहे।

भारतीय राष्ट्रध्वज का स्वरूप

(लेखक—श्री मदन मोहन जी सेठ एम० ए० एल् एल् बी० कार्यकर्ता प्रधान सार्वदेशिक सभा देहली)

प्रत्येक राष्ट्र का ध्वज उसके आदर्श और संस्कृति का प्रतीक माना जाता है। इस दृष्टि से राष्ट्र ध्वज के आकार, प्रकार, वर्ण और रूप में उनका संकेत से परिचय देने का प्रयत्न किया जाता है। राष्ट्र ध्वज की कल्पना में समस्त उत्कृष्ट किन्तु सम्बन्धित राष्ट्रीय भावनाओं का संकेत-रूप से प्रदर्शन आवश्यक है कि जिन पर राष्ट्र का उदय, उत्थान और उत्कर्ष सिद्धान्ततः निर्भर होते हैं। अतः राष्ट्रीय ध्वज का ऐसा ही रूप होना उचित है कि जिसमें उपयु क्त लक्षणों का निदर्शन हो सके। और राष्ट्र ध्वज को देखकर विश्व कल्याण की भावना ओतप्रोततया व्याप्त है, इस प्रकार की प्रतीति होना सम्भव हो।

सौभाग्य से भारतीय राष्ट्र का उदय काल समुपस्थित है और इसके तेजस्वी नेतागण अपनी अलौकिक प्रतिभा एवं अदम्य उत्साह से नवराष्ट्र विधान के आयोजन करने में संलग्न हैं अन्य अनेक महत्वपूर्ण प्रश्नों के साथ राष्ट्रध्वज निर्माणार्थ भी एक उपसमिति बनाई गई है उसके समक्ष भारतीय राष्ट्रध्वज के एक स्वरूप को प्रस्तुत किया जाता है कि जिसकी कल्पना में उन परिचायक लक्षणों को अधिक से अधिक स्थान देने का प्रयत्न किया गया है जो भारतीय राष्ट्र के प्रतिमान हो सकते हैं।

वर्ण—भारतीय राष्ट्रध्वजका वर्ण अरुण अर्थात् गाढ़ा केशरिया रंग का होना चाहिये क्योंकि यह रङ्ग "तेन त्यक्तेन भुंजीथाः मा गृधः कस्यस्विद्धनम्" इस विश्वजनीन आदर्श का द्योतक है इसी रंग में उषाकालीन सूर्य सर्व प्रथम "सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च" और "प्राणः प्रजानाम् उदयत्येष सूर्यः" वसुन्धरा के चराचर प्राणी एवं पदार्थमात्र को अद्भुत प्रकार से अनुप्राणित करता है। उदयाचल से समुदित होते हुए मरीचिमाली भगवान् भास्कर का सौरमंडल के अखिल निवासी कौतुक के साथ अभिनन्दन करते हैं। भगवती आथर्वण श्रुति ने भी मानव जाति को अपने राष्ट्र-ध्वज को कल्पित करने के लिये "अरुणाः सन्तु केतवः' ! अथर्व ११। १०। ७ में स्पष्ट अनुशासन दिया है। इस उदयकालीन अरुणिमा के अलौकिक सौंदर्य का जहा विश्व के महान् कवियों ने अपने २ अमर काव्यों में सर्व प्रथम स्थान दिया वहा विश्ववन्द्य महर्षिजनों ने इसी काल में अपनी योगसाधना द्वारा विश्वकल्याण के लिये परमपुरुषार्थ का सफलता के साथ अनुष्ठान किया है। यह महर्षि परम्परा ही भारतीय संस्कृति का मेरुदण्ड है। इसी वर्ण का रूपान्तर उत्तरकालीन भगवा भण्डा है।

विशेष चिन्हः—भारतीय राष्ट्रध्वज के ओंकार (अव रक्षणे) विश्वरक्षक को केन्द्र मानकर सूर्य को भासमान रूप में प्रतिष्ठित किया जाना चाहिये क्योंकि जिस प्रकार समस्त सौर-मंडल के ग्रह और उपग्रह सूर्य के भासमान होने पर अनुभासित होते हैं एवं चराचर जगत अपने २ व्यवहार में प्रवृत्त होते हैं। सूर्य की भाँति राष्ट्रपति भी अपनी प्रजा को अपने उदाहरण से कल्याणमार्ग पर प्रेरित करता रहता है और मर्यादित रखता है। भारतीय यशस्वी चक्रवर्ती सूर्यवंशी भगवान् मनु प्रभृति विश्ववन्द्य सम्राटों ने सूर्य को प्रतीक मानकर अपने शासनतन्त्र को सूर्य के तुल्य ही संचालित किया महाकवि कालिदास के अमर शब्दों में, "सहस्रगुणमुत्स्रष्टुमादत्ते हि रसं रविः" रघु० १। १८ अर्थात् सूर्यवंशी सम्राट् दिलीप सूर्य की भांति अपनी प्रजा

से इस प्रकार सहस्र गुणों अधिक रूप मे प्रदान करने के लिये कर प्राप्त करते थे कि जैसे सूर्य जिस रस को पृथ्वी से प्राप्त करता है उसको सहस्रों गुण बढ़ा कर वृष्टिरूप मे पृथ्वी को ही दे देता है। केन्द्र मे ओंकार रखने का प्रयोजन यह है कि जिस प्रकार प्रणव ओंकार अपने अन्दर समस्त ज्ञान विज्ञान धारण करता है उसी प्रकार भारतीय राष्ट्र की आत्मा समस्त ज्ञान-विज्ञान को विश्वकल्याण के लिए धारण करती है। महाकवि कालिदास के शब्दों मे "प्रणवश्छन्दसामिव" रघु० १।११।

भारतीय राष्ट्र की ध्वज चौकोर होनी चाहिये क्योंकि चार कोण धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चार पुरुषार्थों के परिचायक हैं और चार भुजायें चातुर्वर्ण्य एवं आश्रम चतुष्टय के बोधक है। जिस वर्णाश्रम व्यवस्था का निरूपण किया गया है मानव समाज के समन्वित संगठन की यह व्यवस्था एक अनुपम प्रतिमान है। भारतीय होते हुये भी इसको उपयोगिता और उपादेयता सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक महत्त्व रखती है।

पृथ्वी माता:—भारतीय संस्कृति मे पृथ्वी को माता माना जाता है। भ पा को भी माता कहा जाता है गौ को माता कहा गया है और जननी को भी माता कहते है। आथर्वण श्रुति मे "माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः" १२।१।१२ भूमि हमारी माता है और हम पृथ्वी के पुत्र है। पृथ्वी और सूर्य का परस्पर अभिन्न सम्बन्ध है। इसी प्रकार एक राष्ट्र मे प्रजा और राजा का अभिन्न सम्बन्ध होता है। भूमि या प्रजा माता के तुल्य है और सूर्य या राजा पिता रक्षक के समान है। इसलिये मध्य मे प्रणव को केन्द्र मानकर सूर्य दिया गया है और सूर्य के नीचे गोरूप पृथ्वी की प्रतिष्ठा भी गई है। महा कवि कालिदास ने चक्रवर्ती महाराज दिलीप का वर्णन करते हुये लिखा है कि "जुगोप गोरूप धरामिवोर्वीम्" रघुः २।३ महाराज दिलोप गोरूप धारिणी पृथ्वी की भाति वशिष्ठ की गौ नन्दिनी की रक्षा करने लगे। वैदिक साहित्य मे गोः, ग्मा, ज्मा, क्ष्मा, क्षा, क्षोणी, क्षितिः, अवनिः उर्वीः, पृथ्वी, मही, रिपः, अदिति, इडा निऋतिः भूः, भूमिः, पूषा, गातुः, गोत्रा यह २१ पृथ्वी के नाम है। निघ० १।१ इसलिये अनेक परिपालक शक्तियों के बोधक गौ शब्द का प्रयोग किया गया है। इसमें भी सनातन कालिक विश्वकल्याण की उत्कृष्ट भावना का निदर्शन होता है।

भारतीय राष्ट्र के इस ध्वज का ध्येय प्रकट करने के लिये याजुषी श्रुति का यह वाक्य दिया गया है। 'शं द्विपदे शं चतुष्पदे' द्विपाद और चतुष्पाद सभी का समान रूप से कल्याण हो इस विशाल भावना के साथ भारतीय राष्ट्रध्वज का व्यापक विस्तार हो। आथर्वण श्रुति के अनुसार 'पृथ्वी नः प्रथतां राध्यता नः' अथर्व० १२।१२ हमारी हमारी पृथ्वी या प्रजा बढ़े और हमको समृद्ध करे। इस प्रकार प्रस्तुत भारतीय राष्ट्रध्वज का निर्माण करते हुये विश्व कल्याण की भावना, ध्वज के अरुण वर्ण से त्यागपूर्वक भोग भावना, सूर्य प्रतीक प्रतिष्ठा का प्रयोजन, केन्द्र में प्रणव ओंकार का आधान और चौकोर ध्वज में गौरूप पृथ्वी को प्रतिष्ठित करने का प्रयोजन प्रदर्शित किया गया है। सनातन काल से विश्व-कल्याण और विश्वरक्षा का द्योतक चिन्ह होने के कारण स्वस्तिक को अङ्कित किया गया है। इस ध्वज मे किसी प्रकार के साम्प्रदायिक, संकुचित, सामाजिक या राजनीतिक एकदेशीयता का लेश भी न आने दिया गया है। सर्वथा व्यापक, विस्तृत, समानता, सनातनता विश्वजनीनता का समन्वय मात्र अभिप्रेत है।

बलिदान भवन, देहली
तिथि १४ जौलाई १९४७।

मदनमोहन सेठ, एम० ए०, एल० एल० बी०,
प्रधान—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा।

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा
चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार, देहली में मुद्रित

Regd. NO. L 212

सार्वदेशिकसभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

नाम पुस्तक	लेखक व प्रकाशक	मूल्य
(१) वैदिक सिद्धान्त स०	(सार्व० सभा)	१)
(२) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर	,,	१।)
(३) आर्य सिद्धान्त विमर्श	,,	१॥)
(४) सार्वदेशिक सभा का इतिहास	,, अ०	२)
(५) आर्य डायरेक्टरी	,, अ०	१।)
(६) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या	,,	।)
(७) आर्य पर्व पद्धति प० भवानीप्रसाद जी		१।)
(८) आर्यवीर दल शिक्षण 'शिविर आमप्रकाशजी'		)
(९) आर्य वीर दल बौद्धिक शिक्षण (प० इन्द्रजी)		।=)
(१०) यम पितृ परिचय प० प्रियरत्न आ		२)
(११) अथर्ववेद य चिकित्सा शास्त्र	,,	२)
(१२) वैदिक सूर्य विज्ञान	,,	=)
(१३) वेद म अ्रासत शब्द		-।
(१४) ऋग्वेद में देवृकामा	,,	-)
(१५) वेद मे दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तिया	,,	१)
(१६) विमान शास्त्र	,,	।=)॥
(१७) नया ससार श्री प० रघुनाथ प्रसाद पाठक		≈)
(१८) मातृत्व की ओर ,,	,, अ	१।)
(१९) कथा माला	,,	॥।)
(२०) आर्य जीवन गृहस्थ धर्म		॥=)
(२१) आर्य शब्द का महत्व	,,	-)
(२२) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी		२।)
(२३) श्री नारायण स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ		५)
(२४) योग रहस्य श्री महात्मा नारायण स्वामी जी		१)
(२५) विद्यार्थी जीवन रहस्य	,,	॥)
(२६) प्राणायाम विधि		≈)
(२७) उपनिषद् ईश ।≈) केन ॥) कठ ॥) प्रश्न ।=) मुण्डक ।≈) माण्डूक्य ≈) ऐतरेय ।) तैत्तिरीय ॥।)		
(२८) श्री नारायण स्वामी जी का सक्षिप्त जीवनी		-)
(२९) नारायण-सुधा सजिल्द		१॥)
(३०) शहीदी पत्रिका		।=)
(३१) आर्यसमाज मन्दिर चित्र		।)
(३२) इजहारे हकीकत श्री ला० ज्ञानचन्द्रजी आर्य		॥।=)
(३३) बहिनों का बातें (प० सिद्धगोपाल जी कविरत्न)		१)
(३४) दयानन्द जन्म स्थान निर्णय (प० विजयशङ्कर मूलशङ्कर जी)		॥।)
(३५) भूमिका प्रकाश (श्री द्विजेन्द्रनाथ जी)		१॥)
(३६) वेद और गोमेध श्री बा० श्यामसुन्दरलाल जी		≈)
(३७) सत्यार्थ प्रकाश आन्दोलन का इतिहास		।-) नट
(३८) सत्यार्थ प्रकाश गान (प० सत्यभूषणजी योगी)		।=)
(३९) हमारे घर (श्री निरञ्जनलाल जी गौतम)		॥=)
(४०) भारतवर्ष मे जाति भेद	,,	।)
(४१) हमारी राष्ट्र भाषा (प० धर्मदेव जी)		≈)
(४२) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता		-)
(४३) सत्यार्थप्रकाश और उसकी रक्षा		-)
(४४) आर्य समाज के साप्ताहिक सत्सङ्ग का कार्य क्रम		-)
(४५) सरल सन्ध्योपासना		।)
(४६) एशिया का वेनिस (स्व० स्वामी सदानन्द जी)		॥।)
(४७) आर्यसमाज के नियमोपनियम		-)॥
(४८) वैदिक वीर गर्जना (श्री रामनाथ वेदालङ्कार)		॥≈)
(४९) धर्मार्य सभा की घोषणानुसार दैनिक सन्ध्या हवन की विधि		-)
(५०) वीरमाता का उपदेश (प्रो० विश्वनाथ विद्यालङ्कार)		।)
(५१) महाराणा सागा श्री हरविलास शारदा		१)
(५२) सिन्धी सत्यार्थ प्रकाश		५)
(५३) वैदिक राष्ट्रीयता (स्वामी ब्रह्म मुनि)		



अगस्त १९४७ ई०
श्रावण
द्वितीय २००४ सं०

राष्ट्र निर्माणाङ्क
सम्पादक श्री पं० [illegible] जी सिद्धान्तालङ्कार
विद्यावाचस्पति [illegible] भूषण

वार्षिक मूल्य स्वदेश ५)
विदेश १० शि०
१ प्रति का ॥)

विषय-सूची

|| ओ३म् ||

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली का मासिक मुख पत्र *

वर्ष २६ | अगस्त १९४७ ई० | श्रावण २००४ | दयानन्दाब्द १२२ | अङ्क ६

वैदिक प्रार्थना

ओ३म् इडा सरस्वती मही तिस्रो देवीर्मयोभुवः। बर्हिः सीदन्त्वस्रिधः ॥ ऋग्वेद

अर्थ.—(इडा) उत्तमवाणी और गौ (सरस्वती) विद्या तथा संस्कृति (मही) मातृभूमि ये (तिस्रः) तीन (मयोभुवः) सुख देने वाली (देवी) देवियां (अस्रिधः) प्रमाद रहित होकर हमारे (बर्हिः सीदन्तु) हृदयासन पर विराजमान हों ॥

विनय—हे परमात्मन्! आप ज्ञान और शक्ति के भण्डार हैं। आप हमें ऐसी शक्ति दें कि हमारे हृदय में सदा शुभ भावनायें बनी रहें। हमारी उत्तम वाणी हो, तथा गोमाता के हित का विचार हमारे अन्दर सदा विद्यमान रहे। उत्तम वेद विद्या को प्राप्त करने और वैदिक संस्कृति को क्रियात्मक जीवन में लाने तथा उस के प्रचार का विचार हमारे मन में नित्य रहे। मातृभूमि के हित की वृद्धि का विचार हमारे मन से कभी दूर न हो। हम जहाँ कहीं भी रहें, जिस भी अवस्था में हों अपनी मातृ भूमि की सेवा करने में हम प्रमाद रहित होकर सदा तत्पर हों ॥

वेदोपदेश

वेद में गौ की स्थिति

(ले० श्री पं० कैलाश चन्द्र जी गुरुकुल कांगड़ी)

आज समस्त प्राचीन और नवीन वैज्ञानिकों का मत है कि गाय संसार में एक अत्यन्त उपयोगी प्राणी है। पाश्चात्य लोग भी गौ की उपयोगिता को जानते हैं तथा गोपालन करते हैं। भारतीय आदि साहित्य वेद से लेकर आज तक गौ को एक महान् धन माना गया है। महाकवि कालिदास ने अपने रघुवंश महाकाव्य में प्रारम्भ में आदर्श समाज का चित्र खींचा है। सर्व प्रथम आदर्श समाज तथा मनुष्य की प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिये आर्यावर्त के चक्रवर्ती सम्राट् दिलीप द्वारा गौ का पालन कराया है। सिंहासन पर बैठने वाला वह सम्राट् गौ के पीछे-पीछे छाया के समान घूमा। रघुवंश मे आता है कि—

प्रस्थितायां प्रतिष्ठेथाः स्थितायां स्थितिमाचरेः
निषण्णायां निषीदास्या पीताम्भसि पिबेरपः॥
रघुः १। ८। ८९॥

कालिदास ने वेदों के सन्देश को सुना था वह जानता था कि मनुष्य के निर्माण में गाय के दूध का कितना स्थान है। उपनिषद् में भी आता है कि जिस समय सत्यकाम, जाबाल ऋषि के पास पढ़ने आया उस समय आचार्य ने गौओं की सेवा का तथा उनका दुग्ध पान करने का आदेश दिया। उसके बाद उसकी बुद्धि इतनी निर्मल होगई कि प्रकृति को पढ़कर उसने स्वयमेव कई तत्वों को जान लिया। कृष्ण ने भी गौ का घी, दूध, मक्खन खाकर ही वह बल पाया था जिससे गीता जैसे ग्रन्थ को कह सुनाया, जिसने मृतप्राय अर्जुन में भी पुनः साहस का संचार किया। वेद भगवान् भी इसका प्रतिपादन करता है:—

यूयं गावो मेदयथा कृशं
चिदश्रीरं चित्कृणुथा सुप्रतीकम्।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो
बृहद्वो वय उच्यते सभासु॥ ऋग् ६.२८.६

अर्थात्–हे गौओं से पैदा होने वाले दुग्धादि पदार्थों! तुम कृश मनुष्य को भी पुष्ट बना देते हो। वह अत्यन्त बलशाली हो जाता है। इसी कारण गाय दूसरी धाय के समान मानी जाती है। प्रसिद्ध डाक्टर प्रो० एम० जे० रोसेनो का कथन है कि "दूध ही एक मात्र पदार्थ है जो सब पौष्टिक द्रव्यों से परिपूर्ण है, जिसे हम पूर्ण भोजन कह सकते हैं। बढ़ते हुए बच्चों के लिये उत्तमता में इस से बढ़कर और कोई वस्तु नहीं।" यह शरीर में स्फूर्ति पैदा करता है अतः हमें किसी उत्तेजक पेय (stimulant) की आवश्यकता नहीं। उष्ण वायु से ज्ञानतन्तु शीघ्र थक जाते हैं! फिर उत्तेजक पदार्थों द्वारा और थकावट पैदा क्यों करें? जो शान्ति प्रद (soothing) वही हमारा पेय हो सकता है। और वह भी अमृत के समान दुग्ध हमारा भोजन है–अमृतं क्षीरभोजनम्। बहुत लोग शराब पीते हैं परन्तु यह मोद नहीं देता, वह तो मद, माद, उन्माद, या प्रमाद देता

है। वह पित्त को बढ़ाता नहीं घटाता है। दूध कान्ति हीन मनुष्य को सौन्दर्य तथा कान्ति से युक्त करता है। आज के विद्वानों का भी विचार है कि Cow, milk and Honey are the cause of beauty अर्थात् गाय, दूध तथा मधु सौन्दर्य के कारण हैं।

"महीनां पयो ऽसि वर्चोधा असि वर्चो मे देहि" यजुः

तू गौओं का दूध है, शरीर में कान्ति को देने वाला है मेरे शरीर को भी कान्ति प्रदान कर। इतना ही नहीं, गौएँ अपने मंगलमय शब्द से हमारे घरो को मंगल मय बना देती हैं। इसी से सभाओं में इनके महान् यश का गान किया जाता है।

परन्तु आज संसार के अन्दर बड़े जोरों से गोवध प्रचलित है। भारत में अन्य देशों की अपेक्षा गौएँ ज्यादा मात्रा में काटी जाती हैं। इसका क्या कारण है? जिस भारत में गौ को कभी न काटने का आदेश दिया, उसे माता के समान पूजा, और अब भी पूजते चले आते हैं जहां प्रतिवर्ष याद दिलाने के लिए एक गोवर्धन नामक पर्व भी मनाया जाता है; वहाँ ही प्रतिदिन गौओं का नाश! इसीलिए आज भारत-समाज सर्वथा क्षीण हो चुका है। वह बल और वह कान्ति नहीं रही।

पहले राज्य की ओर से व्यवस्था करने का आदेश वेद देता है—

न ता अर्वा रेणु ककाटो अश्नुते न
संस्कृतत्रमुपयन्ति ता अभि।
उरुगायमभयम् तस्य ता अनु गावो
मर्तस्य विचरन्ति यज्वनः॥ ऋग ६-२८-४

काट काट कर टुकड़े कर देने वाला मनुष्यगण गौओं को नहीं प्राप्त कर सकता और न वे गौएँ (संस्कृतत्रम्) कसाई खाने की ओर जाने पाती हैं। किन्तु यज्ञशील उस मनुष्य की गौएँ विस्तृत चरागाहों में विचरें। राजा का कर्तव्य है कि वह घोषणा करवा दे कि—

माता रुद्राणाम् दुहिता वसूनां स्वसाऽदित्याना-
ममृतस्य नाभिः। प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय
मागामनागामदितिं वधिष्ट। ऋग ८-१०१-१५

यह गाय शत्रुओं को रुलाने वाले वीर मरुतों (सैनिकों) की माता है, वसुओं की कन्या, अदिति के पुत्रों की बहिन अर्थात् आदित्य ब्रह्मचारियों की बहिन है अतः प्रत्येक विचार शील पुरुष को समझाकर कहा है कि निरपराध और अवध्य गौ का वध न करे क्योंकि—

गोस्तु मात्रा न विद्यते। यजु० २३-४८

संसार में गौ के समान कोई वस्तु नहीं है, वे गौएँ मनुष्य जाति की परम ऐश्वर्य स्वरूपिणी हैं। वेद में अनेक विध ऐश्वर्यों में गौ एक प्रमुख ऐश्वर्य माना गया है।

गावो भगो गाव इन्द्रो म इच्छात्
गाव सोमस्य प्रथमस्य भक्षः
इमा या गावः स जनास इन्द्र
इच्छामि हृदा मनसा चिदिन्द्रम्॥
अथर्व० ४-२१-५

गौएँ हमारा मुख्य धन हों; इन्द्र गोपालक हमें गोधन प्रदान करे क्योंकि यह धन सम्पूर्ण विश्व का पालक है, यह ही सारे विश्व का जीवन है।

वशां देवा उपजीवन्ति वशां मनुष्या उत।
वशेदं सर्वमभवत् यावत् सूर्यो विपश्यति॥
अथर्व० १०।१०।३४।

इन्द्र आदि देवगण गो द्वारा प्राप्त गव्य-हव्य से अनुप्राणित होते हैं और मनुष्य भी गाय के दुग्धादि से जीवन प्राप्त करते हैं। जहां तक सूर्य देखता है अथवा प्रकाश करता है वहाँ तक गौ द्वारा ही यह समस्त ब्रह्माण्ड बना हुआ है। जिसके पास ये गौएं है वह तो एक प्रकार से इन्द्र ही है अर्थात गौओं का दूध पीने से मनुष्य परमैश्वर्यवान् हो जाता है। गौ के साथ ही हमारा सौभाग्य है

सूयवसाद् भगवती हि भूया अथावयं भगवन्त स्याम अद्धि तृणमघ्न्ये विश्वदानीं पिब शुद्ध मुदकमाचरन्ती ॥ ऋग १, १६४ ४०

हे गौ! तू उत्तम दाना चारा खाती हुई सौभाग्य शालिनी हो तेरे द्वारा हम भी सौभाग्य शाली बनें। हे न मारने योग्य गाय तू चरागाहों मे विचरती हुई घास चरा कर और सदा शुद्ध पानी पिया कर। गोपालन का उपदेश करते हुए कहा है कि गौओं का चारा तथा पानी शुद्ध होना चाहिए। अस्वच्छ भोजन आदि को खाकर उसका दूध भी अच्छा नहीं होता उसके पीने से मनुष्य बीमार आदि हो जाता है। देखा गया है कि क्षय रोग गौओं से प्राय फैलता है। अत: शुद्ध दूध से ही मनुष्य का सौभाग्य है। आगे कहते हैं कि गोपालक को गो को प्रेम से रखना चाहिए—

मया गावो गोपतिना सचध्व
मयवो गोष्ठ इह पोषयिष्णु।
रायस्पोषेण बहुला भवन्ती
र्जीवा जीवन्तीरुप व सदेम ॥
अथर्व-३ १४ ६

हे गौओ! तुम मुझ गोपालक के साथ प्रेम से रहो। यह तुम्हारे लिए गोशाला बनी हुई है। यहाँ सब पोषक सामग्री उपस्थित है। अर्थात्, गौओं को पोषक सामग्री खिलानी चाहिए इस प्रकार पोषक धान्य आदि से बहुत सख्या मे होती हुई और दीर्घ काल तक सुख से जीती हुई गौओं को हम (जीवा) जीते हुए, (उपसदेम) प्राप्त हो करते। इतना लाभ कारी होने से गौएँ न मारने योग्य होती हैं। मनुष्य मात्र की ओर से उन्हें अभय दान दिया जाना चाहिए—

अनमीवा अयक्ष्मा अस्मिन गोष्ठे करीषिणी.।
बिभ्रति सोम्य मध्वनमीवा उपेतन।
अथर्व० ३. १४, ३.

हे गाओ तुम निर्भय होकर एक साथ विचरता हुई इस गोशाला मे रहकर गोबर मूत्र आदि करती हुई मधुर सात्विक दूध को धारण करती हुई रोग रहित होकर हमारे पास आकर रहो। इस प्रकार आगे आता है—

प्रजावती सूयवस रिशन्तीः
शुद्धा अप. सुप्रपाणे पिबन्तीः।
मा व स्तेन ईशत माघशंसः।
परिवो हेता रुद्रस्य वृज्या ॥ ऋग् ६. २८, ७.

हे गौओ तुम बछड़े बछड़ियो से युक्त हो, उत्तम चारा खाया करो, स्वच्छ नौदों मे शुद्ध पानी पिया करो। आज भारतीय गोपालन बहुत अशुद्ध है। वेदों मे जो गोपालन का प्रकार बताया है उसे आज के वैज्ञानिक ढूंढ २ कर निकाल रहे हैं। यह अनुभव सिद्ध बात है कि गौका स्वभाव बहुत नाजुक होता है। अपने खान पान मे न्यूनतम होने त्रुटि पर भी गाय लात मार देती है, अथवा निरन्तर त्रुटि होने पर दूध मे

न्यूनता हो जाती है। अतः यह वैदिक राज्य-व्यवस्था का आदेश है कि राज्य की ओर से यह प्रबन्ध हो।

इसी प्रकार गौओं के आराम के लिए आर्यावर्त्त का प्राचीन मानव वेदोक्त स्तुति करता है—

महान्तम कोशमुदचानि षिच स्यन्दन्तां।
कुल्याः विषिताः पुरस्तात्।
घृतेन द्यावापृथिवी व्युन्धि,
सुप्रपाणं भवत्वघ्न्याभ्यः॥ ऋग् ५. ८३. ८.

बड़े भारी जल-भण्डार को ऊपर उठाकर नीचे उंडेल दो, हमारे सामने जल से भरी हुई छोटी २ नदियाँ बहने लगें। आकाश और भूलोक को जल के द्वारा विशेष रूप से आर्द्र करदो, जिससे गौओं के लिए सुन्दर पीने की जगह बन जाय। किन्तु दुःख है कि इस प्रकार गौ के माहात्म्य को समझ कर उसकी इतनी चिन्ता करने वाले देश में मांस भक्षण के लिए गौएं काटी जा रही हैं। वेद में तो गौ को लात मारने वाले के लिए भी दण्ड विधान है,

यश्च गां पदा स्फुरति प्रत्यङ् सूर्यं च— मेहति।
तस्य वृश्चामि ते मूलं न च्छायां,
करवोपरम्॥ अथर्व १३. १. ५६

जो गाय को पैर से ठुकराता है तथा सूर्य के सम्मुख मूत्रोत्सर्ग करता है उस पुरुष को मैं जड़ मूल से काट गिराता हूँ। अर्थात् गौ का जरा सा भी अपमान वेद को सह्य नहीं है। इतिहास में भी अनेक जगह ऐसे उदाहरण आते हैं कि भारतीय महान् आत्मा अपनी आंखों के सामने गो माता का वध न देख सके। शिवाजीने औरंगजेब की क्रूर सल्तनत के अन्दर मुगलों के गढ़ में एक कसाई का वध कर डाला था। वेद भी यही आदेश देता है—

यदि नो गां हंसि यद्यश्वं यदि पूरुषम्।
तं त्वा सीसेन विध्यामो यथा नोऽसो अवीरहा॥
अथर्व १.१६.४

यदि तू हमारी गौओं को मारता है तथा घोड़े वा पुरुष की हत्या करता है तो हम सीसे की गोली से तुझे बींध देंगे, जिससे तू हमारे वीरों का वध न कर सके। अर्थात वेद उस मनुष्य के लिये वह दण्ड विधान करता है जो आज किसी सैनिक आज्ञा को न मानने वाले को दिया जाता है, गो हत्यारा एक दम गोली से शूट कर दिया जाये। यहां तक कि गौ के मारने वाले से जो भिक्षा मांगता है वह भी नीच हो जाता है।

क्षुधे, यो गां विकृन्तेम् भिक्षमाण उपतिष्ठति तम्

जो गाय काटने वाले के पास भीख मांगने के लिये उपस्थित होता है उसे भूख के अर्पण करो अर्थात् भूखों मरने दो। दूसरे शब्दों में गोवध करने वाले से जो भीख मांगता है वह भूखों मरे। भीख मांगने वाला भी गोघाती के घर भीख मांगने न जाय, भले ही भूखों मर जाय, गोवध कर्त्ता के ऊपर वेद में इतना कड़ा सामाजिक दण्ड रक्खा गया है। स्मृतिकार भी गाय को चुराने वाले के लिये ऐसा ही कड़ा दण्ड विधान करता है। ब्राह्मण की गौ चुराने वाले, बांझ गायें को हल में जोतने के लिये नाथने वाले और पशुओं का हरण करने वाले के लिये राजा को चाहिये कि उसका आधा पैर कटवा दे। इस प्रकार का कठोर दण्ड सामान्य वस्तु के नाश पर निर्भर नहीं हो सकता। गाय का तो

बड़ा महत्त्व है। सारे मानव सभ्य समाज की उन्नति गोरक्षा पर निर्भर है। गाय ही सभ्य मानव समाज की धाय है। जहाँ गोवंश उन्नत न हो वहां किसी जाति का गुजर नहीं हो सकता। क्योंकि गाय ही सुख समृद्धि की जननी है। कोई भी जाति या देश गाय के बिना उच्च सभ्यता नहीं प्राप्त कर सका है। पृथ्वी पर सबसे अच्छा पोषण गाय पैदा करती है। घास पात खाकर आरोग्य शक्ति और पोषण देने वाले दुग्धान्न देती है। यथा वेद में कहा है कि

अनुसूर्यमुदयतां हृद्द्योतो हरिमा च ते।
गो रोहितस्य वर्णेन तेन त्वा परिदध्मसि।

सूर्योदय के होते ही तेरा हृदय दाही रोग और पाण्डु रोग दूर हो जाय। लाल वर्ण की गौ से हम तुझे घेरे रखते हैं। अर्थात् इस मन्त्र में बताया गया कि लाल रंग की गाय के घी, दूध, दही और मक्खन क सेवन से हृदय के रोग और पाण्डु रोग दूर हो जाते हैं। यह तो आजकल के वैद्यों द्वारा भी परीक्षित है। इसके अतिरिक्त गाय अपने बच्चों और अपने स्वामी के घर के खाने भर के लिये ही अन्न नहीं देती परन्तु इतना दूध देती है कि वे स्वयं खाकर बेच भी सकें। गाय के बिना खेती स्थिर और समृद्ध नहीं हो सकती और न लोग स्वस्थ तथा सुखी ही हो सकते हैं। अतः वेद में गोमाता की सेवा करने को अन्य देवताओं (सत्यनिष्ठ विद्वानों) के समान कहा है।

इन्द्र मित्र वरुणमग्नि मूतये मारुत शर्धो अदिति हवामहे। रथं न दुर्गाद् वसव सुदानवो विश्वस्मान्नो अंहसो निष्पिपर्तन।

अन्त में परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं और कामना करते हैं।

इन्द्रो विश्वस्य राजति। शन्नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे॥

परमेश्वर सारे संसार का राजा है। वह हमारे पशुओं और मनुष्यों के लिये शान्तिदायक हो॥

—※—

जाति भेद निवारणादि विषयक कुछ शङ्का

[लेखक—इन्द्रदत्त जी आंमल जिला मुरादाबाद]

१. बाल ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द के आदेशानुसार आर्य समाज को वर्ण-व्यवस्थापक सभा की स्थापना करनी चाहिये ॥

२. उसमें उच्च कोटि के पक्षपात रहित कर्मनिष्ठ, धर्मनिष्ठ विद्वानों की सम्मति से गुण कर्मानुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादि वर्णों की व्यवस्था कर जो जिस योग्य हो उसको उसी वर्ण का प्रमाण पत्र दिया जाय जिससे आर्य जाति के सभी नर नारी उसको मान्य समझे ।

३. प्रथम वर्णों के सुधार की परमावश्यकता है। आर्य समाज की प्रगति कर्मकाण्ड को ठीक रीति पर प्रचार न करने से रुकी हुई है और जब तक कर्मकाण्ड की ओर ध्यान नहीं दिया जायगा तब तक वर्ण व्यवस्था नहीं हो सकती क्योंकि वर्णव्यवस्था का आधार ही कर्म काण्ड है।

४. प्रथम आर्य सज्जनों को विचारना चाहिये कि आर्य समाज में कितने ब्राह्मण कितने क्षत्रिय कितने वैश्य व कितनी संख्या में शूद्र हैं और वे अपने कर्मों पर आरूढ़ भी हैं, या नहीं।

५. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, गुण कर्म स्वभावानुसार होते हैं परन्तु यदि वे अपने अपने कर्मों का ठीक २ पालन करें और यदि वे पूरे कर्मकाण्डी हों तो अधिक से अधिक उन्नति हो सकती है। आज तो अनेक आर्य सभासद् दोनों समय संध्या भी नहीं करते। कई आर्य समाज के अधिकारी बने हुए हैं संध्या हवन का पता नहीं। जिस वैदिक धर्म की स्थापना का आधार ही कर्मकाण्ड है उसका अभाव देखते हुये आर्यसमाज की उन्नति तथा वर्ण व्यवस्था की स्थापना असम्भव है क्योंकि बिना कर्म काण्ड के अध्यात्म शुद्धि नहीं हो सकती। जब आत्म शुद्धि नहीं तो गुण कर्मों पर कैसे आरूढ़ रहेंगे ?

६. मनु भगवान की आज्ञा है जिन ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों के यहां उपनयनादि संस्कार ठीक२ समय पर न होते हों उनके यहां आपत्ति काल मे भी विवाह इत्यादि संबन्ध न करें क्योंकि जो कर्मकाण्ड का ठीक २ पालन नहीं करते वे अनार्य है।

७. ब्राह्मणो को ६ कर्मों का तथा क्षत्रियो को तीन कर्मों का, वैश्यो को भी ३ कर्मो का पालन आवश्यक है तथा दूसरे भी ३ कर्म करने योग्य हैं। इस प्रकार वर्ण व्यवस्था का आधार कर्म है। आजकल मनुष्य वैदिक कर्मों से हीन हैं ऐसी दशा में कोई भी अपने वर्ण धर्मों का पालन यथावत् नहीं कर रहा फिर वर्ण व्यवस्था कैसी ।

८. यदि आर्य समाज वर्ण भेद निवारक समिति की स्थापना दूसरे वर्णों मे विवाह करने की इच्छा से करना चाहता है तो मनु भगवान की आज्ञानुसार अनुलोम विवाह करने मे कोई हानि नहीं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों मे क्षत्रिय वैश्यों में, वैश्य शूद्रों में सम्बन्ध कर सकता है परन्तु प्रतिलोम विवाह ठीक नहीं ॥

९. विद्या, तप, योनि ये तीनों ब्राह्मण होने मे कारण हैं। अगर आर्य समाज ऊंचे दर्जे के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रों को और अन्म देगा

तो अक्षय कीर्ति का भागी होगा। ऋषि दयानन्द वर्णों का उत्तम सुधार चाहते थे इसलिये वर्ण भेद निवारक समिति को ऐसे कार्यों में सहयोग देना चाहिये जो आर्ष प्रणाली के विपरीत न हों।

१०. यदि वर्ण भेद निवारक समिति शास्त्रानुकूल कार्य करने मे संलग्न होगी तो उसकी अधिक से अधिक प्रतिष्ठा होगी। (जाति भेद निवारक संघ नाम भी ठीक नहीं।)

११. वैसे तो आजकल ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य स्वयं ही अपने२ वर्गोंका विस्तार करने में संलग्न हैं और वर्ण भेद को दूर कर सैकड़ों विवाह प्रतिदिन हो रहे हैं तथा आश्रमों स इस कार्य की पूर्ति हो रही है और भविष्य मे होती रहेगी, परन्तु आर्य समाज का कार्य मर्यादा पूर्वक होना चाहिये ॥

१२. जो कन्यायें व युवक दोनों समय संध्या हवन करते हों तथा उत्तम सदाचारी हों तथा ब्राह्मण बनने की इच्छा रखते हों उनकी परीक्षा कर वैसा प्रमाण पत्र दिया जाय तथा इसी प्रकार क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादि की भी परीक्षा कर जो जिस वर्ण के योग्य हो उसमें उसका प्रवेश कराया जाय। मेरी राय में प्रथम जो जिस वर्ण का है उसी की परीक्षा कर उसको प्रमाण पत्र देने की प्रथा हो जाय और प्रथम वर्ण सुधारक समिति की स्थापना हो तो जनता की विशेष रुचि होगी और फिर इस प्रकार वर्णों की संख्या में वृद्धि भी होगी और पर्याप्त ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य आर्य हो जावेंगे।

यदि संकुचित मनो वृत्ति से कार्य होगा तो यह एक नया सम्प्रदाय हो जायगा और प्राचीन पद्धति का अनुकरण करने वाले दूर हट जायेंगे। लाभ के बदले हानि होगी इसलिये ऐसी पद्धति अवलम्बन करनी चाहिये जिससे प्राचीन पद्धति को हानि न होते हुये कार्य सुचारु रूप से चलता रहे।

—✕—

उपरोक्त लेख का उत्तर

स्वर्गीय प० भूमित्र जी के पुत्र (जो युक्तप्रान्त मे आर्य समाज के उपदेशक रहे) प० इन्द्रदत्त जी शर्मा ने एक लेख जाति भेद निवारक संघ के विषय मे संचालक जी के पास इस अभिप्राय से भेजा कि इस लेख को इसके उत्तर सहित किसी पत्र मे छपवा देवें।

आशा है सम्पादक महोदय इसको मेरे उत्तर सहित जो नीचे लिखा जाता है 'सार्वदेशिक' में प्रकाशित कर देंगे।

(१) जिस भाव से इस लेख के विचार लिखे गये वे बहुधा उन लोगो में पाये गये हैं जिनकी इच्छा यह होती है कि जन्मगत जाति दूर न हो और जो वर्ण व्यवस्था का सहारा लेकर उसको जीवित रखना चाहते हैं।

यदि किसी पुराने खण्डहर मे कोई नया भवन बनाना हो तो यह आवश्यक है कि पहले पुरानी जीर्ण दीवारों को ढाकर और झाड़-झंखार काट कर भूमि साफ की जाय, तब ही नये भवन की चिनाई उसमें हो सकती है। जन्मगत जाति भेद की दशा भी इसी प्रकार की है। जब तक उसको जड़ मूल से दूर न किया जाय तब तक सच्ची वर्ण व्यवस्था प्रचारित नहीं हो सकती।

(३) लेखक ने लिखा है—'उच्च कोटि के पक्षपात रहित कर्म निष्ठ धर्मनिष्ठ विद्वानों की सम्मति से गुण कर्मानुसार ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रादि की व्यवस्था कर जो जिस योग्य हो उसको उसी वर्ण का प्रमाण पत्र दिया जाय।' ऐसी वर्ण व्यवस्थापक सभाओं की योजनाएं कभी सफल नहीं हुई, और न हो सकती है। हिन्दुओं की संख्या भारत मे लगभग ३० करोड है, आर्यों की संख्या भी करीब ४० लाख है। इतने मनुष्यों की परीक्षा ली जा कर प्रत्येक मनुष्य को प्रमाण पत्र दिया जाय कि वह किस वर्ण मे माना जाय—यह काम सवथा असंभव ही है; किन्तु ऐसी योजना केवल उपहासजनक है। गुरुकुलो द्वारा वहां से निकले हुए स्नातकों के वर्ण निर्णीत करने का विचार भी अभी तक कहीं सफल नहीं हुआ।

(४) जन्मगत जाति भेद दूर होने पर गुण-कर्मानुसार वर्ण होने का मार्ग सुगम हो जाता है। चार वर्णों के अनुरूप विभाग सब सभ्य देशों में भी सुगमता से बन सकते है क्योकि एक प्रकार से वे ऐसे ही स्वाभाविक है जैसे कि मनुष्य के शरीर मे शिर, बाहु, मध्य भाग और पांव हैं। जो लोग विद्या पढ़ाते है, पुरोहित है वा धार्मिक कृत्य कर के निर्वाह करते है; जो न्यायाधीश वा जज हैं वा वकील हैं, जो चिकित्सा का काम करते है, डाक्टर वा वैद्य है, जो उच्च श्रेणी के कलाकार है, और जो अन्य प्रकार से समाज के प्रमुख नेता वा अग्रणी हैं, उनका वर्ण ब्राह्मण समझा जाना चाहिये। जो लोग सेना विभाग वा पुलिस विभाग मे रह कर समाज की सेवा वा रक्षा का कार्य्य करते है, उनका वर्ण क्षत्रिय है। जो विद्याहीन होने के से वा अन्य कारणों से दूसरे वर्णों की केवल साधारण सेवा (जैसे घर की नौकरी) करते हैं, वा छोटे दर्जे की मजदूरी आदि करते है वे शूद्र है। जो लोग इन तीनों वर्णों मे नहीं वे सब वैश्य हैं, जो एक व्यापक Comprehensive वर्ण है। वैश्य शब्द विश् से बना है जिसके अर्थ प्रजा के है। विश्व शब्द भी इसी धातु से निकला है। वेद मंत्र में सुप्रसिद्ध अलंकार मे वैश्य की तुलना शरीर के मध्य अर्थात मध्य भाग से की गई है जिसमे शिर के इन्द्रिय आदि अंगो को छोड़ कर शरीर के सब अङ्ग स्थित है, अर्थात फेफड़ा, दिल, गुर्दा, जिगर, मेदा, आते, जननेन्द्रिय आदि। इसी प्रकार वैश्य वर्ण मे केवल किसान, जमीदार, व्यापारी साहूकार, व पशु पालक नहीं किन्तु सब प्रकार के शिल्प, व्यवसाय और धन्धे शामिल है। सुनार, लुहार, बढ़ई, राज, चमार, जुलाहे, दर्जी, रंगरेज, धोबी आदि सब पेशे वाले वास्तव मे 'वैश्य' वर्ण मे गिने जाने चाहियें शूद्रों मे नहीं जैसा कि वर्तमान जाति भेद व्यवस्था म अन्याय स उनको गिना जाता है।

(५) लेखक महाशय लिखते है कि मनु भगवान की आज्ञानुसार 'अनुलोम विवाह' करने मे कोई हानि नहीं, परन्तु 'प्रतिलोम विवाह' ठीक नहीं। इसकी जड़ मे भी वही विचार है कि वतमान 'जन्मगत जातिभेद' को रखते हुए उच्च वर्ण के पुरुष नीचे वर्ण की स्त्रियो से विवाह कर सकें परन्तु इस के विपरीत नहीं। इससे 'जन्म गत जाति भेद' दूर नहीं होगा

जिससे देश की इतनी महान् हानि हुई है। और यदि वह दूर हो जाय तो अनुलोम विवाहों की आवश्यकता ही नहीं रहेगी।

(६) लेखक महोदय ने इस बात पर जोर दिया है कि आर्य्य समाज की प्रगति कर्म काण्ड को ठीक रीति से प्रचार न करने से रुकी हुई है, "आर्य समाज को प्रथम यह विचारना चाहिये कि आ० स० में कितने ब्राह्मण, कितने क्षत्रिय, कितने वैश्य व शूद्र हैं और ये अपने कर्मों पर आरूढ़ भी है या नहीं।" इस की तह में भी यह विचार मालूम होता है कि वर्तमान जाति भेद को रख कर जो ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि हैं वे अपने २ कर्मों का ठीक २ पालन करें तो अधिक से अधिक उन्नति हो सकती है। इस में कोई आपत्ति नहीं और इस से सुधार ही होगा। परन्तु असली प्रश्न तो यह है कि जो लोग जन्म से शूद्र माने जाते हैं, (और उन की संख्या कुल द्विजों की संख्या से कहीं अधिक है)—वे वा उनमें से जो कोई यदि द्विज बनना चाहें तो उनको द्विजों के समान शिक्षा, और द्विजों के व्यवसाय आदि करने का अवसर क्यों न दिया जाय? ऐसा न करना तो महान् अन्याय है जिसके कारण करोड़ों शूद्र मुसलमान हो गये, करोड़ों दलित वा अछूत हो गये, इसी के लिये जातिभेद निवारक संघ यत्न करता है। यदि लेखक महोदय इस को स्वीकार कर लेवें तो फिर कोई भेद या विरोध नहीं रहता।

(७) अपने पैरा ६ में लेखक महोदय लिखते हैं—"विद्या तप 'योनि' ये तीनों ब्राह्मण होने में कारण हैं।" यहां "योनि" शब्द से जन्म को भी ब्राह्मण बनने के लिये आवश्यक बतलाया गया। यह वैदिक आदर्श से नितान्त विरुद्ध है। उपनिषदों, महाभारत आदि ग्रन्थों में से ऐसे अनेक उदाहरण पाये जाते हैं कि शूद्र योनि से उत्पन्न होकर केवल ब्राह्मण ही नहीं किन्तु ऋषि बन गये, मैं महाभारत के केवल दो श्लोक प्रमाण देता हूं। अन्य प्रमाण व उदाहरणों के लिये वाचक वृन्द मेरी लिखी Caste System का अध्याय १ देखें। पुस्तक का हिन्दी अनुवाद जाति भेद इस समय नहीं मिलता, छपने वाला है।)

जातो व्यासस्तुकैवर्त्यांःश्वपाक्यांश्चपराशरः।
बहवो ऽन्येऽपि विप्रत्वं, प्राप्ता ये पूर्वमद्विजाः
तपसा गणिका गर्भ संभूतो वशिष्ठश्च महामुनिः॥
ब्राह्मणो जातः संस्कार स्त कारणम्।

(अर्थ) व्यास जी मल्लाह की लड़की (सत्यवती) से पैदा हुये थे, और पराशर मुनि चांडाली से हुये। और भी बहुत से शूद्र जन्म वाले ब्राह्मणत्व को प्राप्त हो गये। वशिष्ठ महामुनि गणिका (वेश्या) के गर्भ से उत्पन्न हुये थे परन्तु अपने तप से ब्राह्मण हो गये संस्कार वा सुधार ही वहां कारण था।

(८) पैरा ११ में लिखा है "वैसे तो आज कल··· वर्ण भेद को दूर कर सैकड़ों विवाह प्रति दिन हो रहे हैं ········ परन्तु आर्य समाज का कार्य मर्यादा पूर्वक होना चाहिए। इससे शायद यह संकेत है कि अन्तर्जातीय विवाह मर्यादा में रखने के लिये ही आर्य समाज ने "आर्य समाज विवाह विधान" द्वारा सभा से स्वीकृत और प्रचरित कराया। उस विधान से केवल आर्य समाजी ही लाभ उठा सकते हैं।

खुशी की बात है कि श्री श्रीप्रकाश M. L.A. ने केन्द्रीय धारा सभा में हिन्दू मात्र पर लागू होने के अभिप्राय से एक हिन्दू अन्तर्जातीय बिल पेश किया है। यदि वह प्रचरित हो जायगा तो सब हिन्दू लोग उससे लाभ उठा सकेंगे।

(६) यह भी बड़ी खुशी की बात है कि युक्त प्रान्त की सरकार ने ऐसी आज्ञा देने का निश्चय कर लिया कि "Caste" या जाति बाचक शब्द सब सरकारी फ..... निकाल दिया जाया इसके अनुसार किसी व्यक्ति की जन्मगत जाति अब सरकारी कागजों में नहीं लिखी जायगी। आर्य समाज और जाति भेद निवारक संघ के सिद्धान्तों की यह भारी विजय है।

गंगाप्रसाद एम० ए०
अध्यक्ष जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ।

—:*:—

आर्य वीर दलों को आवश्यक सूचना

अभाव की पूर्ति

केन्द्रीय वस्तु भण्डार की स्थापना

प्रारम्भ से ही यह अनुभव किया जारहा था कि आर्य वीर दलों को चमड़े की पेटियां, पीतल के बैज तथा टोपियां व अन्य दल सम्बन्धी वस्तुएँ अधिक परिश्रम करने पर भी सुन्दर और मजबूत अथवा एक ही प्रकार की नहीं मिलती थीं। इस अभाव को दृष्टि में रखकर श्री पूज्य ओमप्रकाश जी त्यागी स० प्र० सेनापति, अ० भा० आर्य वीर दल के आदेशानुसार तथा केन्द्रीय आर्य वीर दल को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से केन्द्रीय वस्तु भण्डार की स्थापना की गई है। यहां से दल सम्बन्धी हर प्रकार का साहित्य भी जो प्रकाशित हो चुका है अथवा होने वाला है मिल सकेगा।

पेटी चमड़ा	१।।।) प्रति	(बढ़िया चमड़े की)
बैज पीतल	≡) ”	
टोपी	।।।) ”	

प्रान्तीय दलपतियों, तथा अन्य दल अधिकारियों से प्रार्थना है कि वे अपने यहां के दलों को आदेश दें कि दल सम्बन्धी समस्त वस्तुएँ अन्य किसी स्थान से न मंगा कर हमारे यहां से ही लें।

१०) रु० से कम की वस्तु पर डाक व्यय पृथक होगा।

हरिशंकर
व्यवस्थापक,
केन्द्रीय वस्तु भण्डार,
आर्य वीर दल, दीवान हाल, देहली।

भारतीय स्वतन्त्रता और हम

[ले०—डा० सूर्यदेव शर्मा सि० शास्त्री साहित्यलङ्कार एम. ए. एल. टी!. डी. लिट्, अजमेर]

भारत को औपनिवेशिक स्वराज्य मिल गया है और शीघ्र ही पूर्ण स्वाधीनता को भी उपलब्ध कर लेगा। लगभग २०० वर्ष से दासता की बेड़ियों में जकड़े हुये, साम्राज्यवाद की लिप्सा का शिकार बन हुये और शोषणकर्त्ता, अत्याचारी शासकों के लौह—पंजे से दबे हुये भारत का इस प्रकार स्वतन्त्र होना संसार के इतिहास का एक महान् आश्चर्य है। साथ ही एक और महान् आश्चर्य यह है कि स्वतन्त्रता के लिये सबसे अधिक त्याग और बलिदान कांग्रेस के कार्यकर्त्ताओं ने और नेताओं ने किया। जेल वे गये, फांसी के तख्ते पर वे झूले, गोलियां उन्होंने खायीं, सारे कष्ट उन्होंने उठाये। किस लिये? भारत की स्वतन्त्रता के लिये। लेकिन जब स्वतन्त्रता मिली तो आधे की मालिक बन बैठी मुस्लिम लीग जिसके नेता न कभी जेलों में गये और जिन्होंने न कभी उसके लिये कष्ट उठाये। किन्तु उल्टे, जो स्वतन्त्रता के मार्ग में बाधक ही बनते रहे। यह तो अंग्रेजी की वही कहावत चरितार्थ हुई, "Fools make feasts and wise men eat them" अर्थात् कांग्रेस और उनके अन्तर्गत हिन्दू तो स्वतन्त्रता की तयारी में बलिदान करते रहे और आधा लाभ उठा ले गई मुस्लिम लीग।

लेकिन इनसे भी बढ़कर एक तीसरा महान् आश्चर्य और भी है कि जिन हिन्दुओं ने कांग्रेस में रहकर अनेक बलिदान किये और जिन हिन्दू वोटरों के वोटों से कांग्रेस के मंत्रीमंडल बने और सत्ता प्राप्त करने को अवसर मिला, उन्हीं के अधिकारों को आज ठुकराया जा रहा है। इसमें सन्देह नहीं कि इस राजनीतिक परिवर्तन काल में कांग्रेस को कमजोर न किया जाय, उसको तोड़ा न जाये क्योंकि उसको पंगु करके कोई दूसरी राजनैतिक संस्था भारत में इस समय इतनी सुदृढ़ और संगठित नहीं है जो कांग्रेस का स्थान ले सके, लेकिन इसका यह अर्थ भी नहीं कि हिन्दू अपने उचित अधिकारों को भी छोड़ बैठे और कांग्रेसी नेताओं के सामने अपनी उचित मांगों को भी न रक्खें। जब भारत के टुकड़े हो ही गये और पाकिस्तान बन ही गया तो अब कांग्रेस की नीति मुस्लिम परस्त क्यों रहनी चाहिये? उसे अपनी नीति में समय के अनुसार परिवर्तन क्यों नहीं करना चाहिये?

इसी उद्देश्य को सामने रखकर गत ता० ३० जुलाई को अजमेर के समस्त हिन्दू नागरिकों की एक विराट् सभा हुई थी। जिसमें कॉंग्रेस की नीति में परिवर्तन सम्बन्धी प्रस्ताव उपस्थित करते हुये मैंने जनता का दृष्टि कोण बतलाते हुये जो पांच बातें कहीं थीं उनसे न केवल अजमेर की किन्तु समस्त भारत की हिन्दू जनता सहमत होगी, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है, और न केवल हिन्दू जनता ही किन्तु कांग्रेस के

अधिकाँश सज्जन भी उससे सहमत हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण उस दिन मिला था जब विधान परिषद् की काँग्रेस पार्टी की एक बैठक में हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाने के पक्ष में ६३ वोट आये और हिन्दुस्तानी के पक्ष में जिसका समर्थन पं० जवाहरलाल नेहरू और आचार्य कृपलानी जैसे नेता कर रहे थे केवल ३२ वोट आये। इससे भी बढ़कर देवनागरी लिपि को राष्ट्र लिपि बनाने के पक्ष में ७७ वोट प्राप्त हुये और उसके विरोध में केवल १८। इससे स्पष्ट हो जाता है कि हवा का रुख किधर है? हिन्दू जनता और उसके साथ काँग्रेसी जनता इस समय क्या चाहती है?

आज भारत की हिन्दू और अधिकांश काँग्रेसी जनता यह जानने का अधिकार रखती है कि:—

(१) पाकिस्तान के बन जाने के बाद हमारे देश का नाम "इन्डियन यूनियन" क्यों रखा जा रहा है? अंग्रेजों की गुलामी छूट जाने के बाद भी, अंग्रेजी भाषा और उसके शब्दों की गुलामी अभी तक क्यों नहीं छूट सकी? हमारे देश के प्राचीन नाम "आर्यावर्त" और "भारत-वर्ष" में क्या दोष था और यदि यह नाम भी न सही तो "हिन्दुस्तान" नाम रहने देने में कौनसी मुसीबत आई जाती थी? भला जिस देश का नाम भी विदेशी भाषा का हो उस देश की स्वदेश प्रियता के सम्बन्ध में अन्य देश के लोगों का क्या विचार बनेगा? और भारत के बच्चों में अपने देश के प्रति क्या प्रेम होगा?

(२) जब कांग्रेस ने अगस्त सन् ४२ में "अंग्रेजो भारत छोड़ो" प्रस्ताव पास किया था और अंग्रेजों को भारत से निकालना ही था तो अब जब अंग्रेज स्वयं ही जा रहे हैं, लार्ड मांउटबैटन को इंडियन यूनियन का गवर्नर-जनरल बनाये रखने में कौनसी विशेष नीति है? मुस्लिम लीग ने पाकिस्तान का गवर्नर-जनरल तो मि० जिन्ना को चुना तो कांग्रेस को माउन्टबैट ही क्यों मिले? क्या हमारे नेताओं में जो विश्व विख्यात हैं, कोई इस पद को नहीं सम्भाल सकता था जो भारतीय स्वतंत्रता की प्रभात बेला में एक अंग्रेज को हमारे प्रथम गवर्नर जनरल के रूप में हमारे सिर पर बैठा दिया गया है?

(३) जब मुसलमानों ने पाकिस्तान अलग बना लिया और वह उनका एक मुस्लिम राष्ट्र बन गया तो क्या शेष भारत हिन्दुओं का राष्ट्र अब भी नहीं हुआ? क्या हिन्दू यहूदियों की तरह किसी एक देश को भी अपना राष्ट्र कहने के अधिकारी नहीं? दुनिया में यहूदियों को छोड़ कर कोई जाति नहीं, जिसका अपना राष्ट्र न हो। क्या हिन्दू जाति भी उसी श्रेणी में आने वाली है? और तो और पूज्य महात्मा गांधी तक अपने प्रार्थना-प्रवचन में यह कह बैठे कि पाकिस्तान तो मुसलमानों का हो सकता है लेकिन हिन्दुस्तान हिन्दुओं का देश नहीं कहा जा सकता। अब बताइये, अभागे हिन्दू कहां जायें और किस देश को अपना देश कहें?

(४) अब तक कांग्रेस की नीति मुसलमानों को प्रसन्न करने की रही, इस आशा से कि मुसलमान भी स्वतन्त्रता प्राप्त करने में हमारे सहायक बनें लेकिन फल उल्टा हुआ। मुस्लिम लीग ने सदा अड़ंगे लगाकर अपना पाकिस्तान

अलग बनवा लिया अब हम मुसलमानों को विशेष रियायतें क्यों दें ? जब वे पाकिस्तानी प्रान्तों में अल्पमत के साथ कोई रियायत करना नहीं चाहते तो हम क्यों करें ? युक्त प्रान्त में १४ प्रतिशतक मुस्लिम आबादी को ७० प्रतिशतक तक नौकरियां पुलिस में क्यों दी जायें ? हिन्दुओं के अधिकारों को क्यों कुचला जाये ? जिस २ प्रान्त में मुसलमानों की जितनी आबादी है, उतनी ही नौकरियां उनको मिलें। हिन्दुओं की यह मांग बिलकुल न्यायसंगत है।

(५) जब पाकिस्तान में राष्ट्र-भाषा उर्दू कर दी गई और वहां हिन्दी को कोई स्थान न मिला तो हिन्दुस्तान की राष्ट्र-भाषा हिन्दी और राष्ट्र लिपि देव नागरी क्यों न रहे ? हमारी भाषा में विदेशी भाषा, फारसी की लिपि और अरबी फारसी शब्दों से भरी हुई उर्दू क्यों टांग अड़ाये ? उर्दू हिन्दी की खिचड़ी हिन्दुस्तानी क्यों बनायी जाये ?

इस समय ये कुछ बातें हैं जिनका समुचित समाधान न होने से हिन्दू जनता में क्षोभ है। क्या हमारे माननीय नेता इनका समुचित समाधान करेंगे ?

—:०:—

हमारी राष्ट्रीय प्रार्थना

(यजुर्वेद २२—२२)

ओ३म् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी·········

(दिक्पाल छन्दः)

ब्रह्मन् ! स्वराष्ट्र में हों, द्विज ब्रह्मतेजधारी ।
क्षत्री महारथी हों, अरिदल विनाशकारी ॥
होवें दुधार गायें, पशु अश्व आशुवाही ।
आधार राष्ट्र की हों, नारी सुभग सदा ही ॥
बलवान सभ्य योद्धा, यजमान पुत्र होवें ।
इच्छानुसार बरसें, पर्जन्य ताप धोवें ॥
फल फूल से लदी हों, औषधि अमोघ सारी ।
हो योगक्षेमकारी, स्वाधीनता हमारी ॥

—डा० सूर्यदेव शर्मा एम० ए०, डी० लिट्,
अजमेर।

शंका समाधान

शंकाकार—श्री रामनाथ जी ट्रायम्फ ईस्ट कोस्ट डेमरारा ब्रिटिश गयाना—द० अमरीका

१. साप्ताहिक सम्मेलन वा किसी विशेष संस्कार के समय "विश्वानिदेव से लेकर"अग्ने नय सुपथा" तक जिन२ मन्त्रों से प्रार्थना की जाती है, इस प्रार्थना से पूर्व आचमन और अंग स्पर्श करना चाहिये वा नहीं ? अथवा इस प्रार्थना के बाद हवन के आरम्भ मे आचमन और अंग स्पर्श करना चाहिये ?

२. यहा पर एक प्रथा यह है कि घृताहुति छोड़ने पर एक बूंद घृत स्रुवा मे बचा लिया जाता है और हवन के अन्त मे यह सब छोड़ा हुआ घृत स्रुवा से निकाल कर "ओं वसोः पवित्र मसि" इस मन्त्र से कुण्ड मे छोड़ दिया जाता है, क्या इस कर्म का विधान श्री स्वामी दयानन्द जी ने किया है ? क्या संस्कार विधि वा स्वामी जी कृत अन्य ग्रन्थों मे इस कर्म का पता है ?

३. श्मशान मे और वहा से लौटने पर घर पर जो हवन किया जाता है इन हवनों में, अर्थात् हवन के आरम्भ मे आचमन, अंगस्पर्श अग्न्याधान के मन्त्र और समिधाधान यह क्रम होना चाहिए वा इसे छोड़ देना चाहिये ?

४. विवाह संस्कार मे वर कन्या के मुख से "दयानन्द गोत्र उत्पन्ने" यह शब्द उच्चारण करवाना वेदानुकूल है विपरीत ?

५. प्रातः और सायंकाल के हवन में जो—सूर्य्यो ज्योतिः और अग्निर्ज्योतिः ये दो काल के भिन्न २ मन्त्र और आहुति हैं सो कितने बजे से कितने बजे तक लागू होता है ?

६. आर्य समाजियों ने जिस मकान को मन्दिर कर के मान लिया और वहां प्रार्थना और हवन बराबर होता है उस स्थान पर जूता पहिर कर वेद बांचना आर्य संस्कृति के अनुकूल है वा प्रतिकूल ?

उत्तर

१. मेरी समझ में आचमन और अंगस्पर्श शुद्धि के लिये है। अतः इनको करके ही प्रार्थना आदि करनी चाहिये।

२. यह विधान सूत्रादि के आधार पर है।

३. मेरी समझ में यह सामान्य क्रिया है जो सब यज्ञों में समान है, अतः करनी चाहिये।

४. यहां 'गोत्र' का अर्थ कुल है। दयानन्द हमारे गुरु हैं न कि कुल के पितामह। समान गोत्रों में विवाह वर्जित है।

५. प्रातः और सायं स्पष्ट शब्द हैं और सूर्य चढ़े तक और सूर्य ढलने पर।

६. जूता पहन कर प्रार्थना वा उपासना करना आर्य संस्कृति के तो विरुद्ध ही समझा जाता है। परम्परा यही है।

गङ्गाप्रसाद उपाध्याय
(मन्त्री सार्वदेशिक सभा)

"जातिभेद निवारक आर्य परिवार संघ"

भारत की समस्त आर्य समाजों तथा आर्य पुरुषों से निवेदन

आर्यबन्धुवर्ग ! आप यह भली प्रकार जानते हैं कि आर्यसमाज की उन्नति के रुक जाने के जहाँ अन्य कारण हैं वहां एक मुख्य कारण आर्यसमाज का वर्त्तमान जन्मगत जातपात से मुक्त न होना भी है। कितने आश्चर्य तथा दुःख की बात है कि जिस आर्यसमाज का उद्देश्य दूसरों को वर्त्तमान जातपात से छुड़वाकर वैदिक वर्णव्यवस्था का प्रचार करना था वहाँ उसके भी अधिकांश सभासद् जन्म की जातपात मे ही फंसे हुए हैं। आज हमारे शादी व्यवहार बहुधा अपनी जन्मगत पौराणिक बिरादरियों में ही होने के कारण न तो हमारी सन्तान ही आर्य बन रही है, और न ही अन्य मतावलम्बी वैदिक धर्म में प्रविष्ट होने का साहस कर रहे हैं। ऐसी अवस्था में आर्यसमाज कैसे उन्नत हो सकता है, और प्राणी मात्र को वैदिक धर्म रूपी अमृत का पान करा सकता है ? अतः आर्यसमाज की शिथिलता के मुख्य कारण वर्त्तमान जन्मगत जातपात को दूर करने, और गुणकर्मानुसार विवाह आदि सम्बन्ध करने के लिये आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेताओं और विद्वानों ने आर्य्य सार्वदेशिक सभा के अन्तर्गत "जातिभेद निवारक संघ" की स्थापना की है जिसके निम्न उद्देश्य हैं:—

१. गुणकर्मस्वभावानुसार वैदिक वर्ण-व्यवस्था की स्थापना के लिये साधन प्रस्तुत करना।

२. जन्मगत जातपात का विचार छोड़कर आर्यों में गुणकर्म स्वभावानुसार विवाह सम्बन्ध कराना और विशेषकर युवक युवतियों से व्रत कराना कि वे जातपात का विचार छोड़कर गुण-कर्म स्वभावानुसार ही अपना विवाह करेंगे।

३. सहयोग तथा सहानुभूति द्वारा आर्यों मे परस्पर प्रेम तथा भ्रातृभाव उत्पन्न करना।

४. आर्य्य पुरुषों के परिवारों को सच्चा आर्य परिवार बनाना।

इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संघ का एक मुख्य कार्यालय लगभग डेढ़ वर्ष से ऋषि की निर्वाण भूमि अजमेर मे स्थापित है। उस कार्यालय में संघ के सदस्यों, सहायकों, विवाह योग्य लड़कों, कन्याओं, विधवाओं, तथा विधुरों के रजिस्टर रखे जाते हैं। जो आर्य्य युवक तथा युवतियां यह व्रत लें कि हम अन्तर्जातीय विवाह ही करेंगी उनके भी रजिस्टर हैं। संघ अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये स्थान स्थान पर अपनी शाखाएं खोलेगा और ऐसे विद्वान् उप-देष्टा भी रखेगा जो स्थान स्थान पर जाकर संघ के उद्देश्यों का प्रचार तथा संघ के सदस्य बनायेंगे। संघ अपना एक मासिक या साप्ताहिक पत्र भी निकालेगा। जिसमे वैदिक सिद्धान्तों तथा अन्य जीवनोपयोगी लेखों के अतिरिक्त विवाह योग्य कन्याओं, युवकों विधुरों तथा विध-वाओं की सूची भी निकला करेगी। संघ वैदिक वर्ण-व्यवस्था के समर्थन तथा वर्तमान जन्म गत जातपात की अनुपयोगिता सम्बन्धी साहित्य भी प्रकाशित करेगा। इन सब उद्देश्यों की पूर्ति

संघ तभी कर सकता है, जबकि उसके कोष में पर्याप्त धन हो। बिना धन के उपयुक्त उद्देश्यों का पूर्ण होना असम्भव है। अतः आर्यावर्त तथा अन्य प्रदेशों की समस्त आर्य्यसमाजों और उत्साही तथा दानी आर्य्य पुरुषों से हमारा सानुरोध निवेदन है कि वे संघ को पर्याप्त धन दें तथा अन्यों से दिलवाकर संघ की उद्देश्य पूर्ति में हमें पूर्ण सहयोग प्रदान करें। जिससे कि संघ शीघ्र ही अपने उद्देश्यों को पूर्ण करता हुआ आर्य्यसमाज तथा वैदिक धर्म की सच्ची सेवा करने में अग्रसर हो सके। सहायता का सब धन आचार्य भद्रसेन जी संचालक जातिभेद निवारक आर्य्य परिवार संघ अजमेर अथवा कोषाध्यक्ष जातिभेद निवारक आर्य्य परिवार संघ अजमेर भेजना चाहिये। कम से कम ५ हजार रु० की तुरन्त आवश्यकता है जिससे सब योग्य प्रचारकों की नियुक्ति आदि करके अपने उद्देश्यों की पूर्ति में अग्रसर हो सके। इस अपील को सार्वदेशिक सभा का पूर्ण समर्थन प्राप्त है।

निवेदक

गंगाप्रसाद एम० ए० रिटायर्ड चीफ जज अध्यक्ष

आचार्य भद्रसेन अजमेर संचालक

धर्मदेव विद्यावाचस्पति उपाध्याय (देहली)

गाय और कुरान

[लेखक—श्री प्रो० महेशप्रसाद जी मौलवी आलिम फ़ाज़िल हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस]

कुरान शरीफ में गौ की कुरबानी क्या आवश्यक बतलाई गई है ? खुदा को प्रसन्न करने के लिये (मुसलमानों के यहां) क्या यही मार्ग है कि वे लोग गाय अवश्य मारा करें ? क्या गो-मांस की प्रशंसा कुरान शरीफ में की गई है अथवा गो-मांस को स्वास्थ्य के निमित्त बहुत अच्छा बताया है जिसके कारण बहुतेरे मुसलमान लोग गाय मारा करते हैं ? इस प्रकार के प्रश्न बहुधा लोग मुझ से पूछा करते हैं। इस लिये मैंने उचित समझा कि कुरान शरीफ में गाय के विषय में जो कुछ चर्चा हो, उसको यदि एक साथ एकत्र कर दिया जाय और सब के सम्मुख रख दिया जाय तो लोग स्वयं यह नतीजा निकाल लगे कि उक्त प्रकार के प्रश्नों का उत्तर कुरान से (जो कि समस्त मुसलमानों की दृष्टि मे सर्वमान्य है) क्या मिलता है।

कुरान के बाद जिन ग्रन्थों का आदर मुस्लिम जगत् में है वे 'हदीस' के नाम से विख्यात हैं किन्तु मैं कुरान के सिवा हदीस या किसी ग्रन्थ के आधार पर कुछ नहीं लिखना चाहता क्योंकि (कुरान के सिवा) अन्य सारे ग्रन्थों को समस्त मुसलमान पूर्ण रूप से ठीक नहीं मानते । उनके विषय में परस्पर बड़ा मतभेद है। परन्तु यह भी ज्ञात रहे कि कुरान मे अनेक स्थान ऐसे भी हैं जहा इतिहास की शरण लिये बिना काम ही नहीं चल सकता क्योंकि केवल कुरान के ही शब्दों से पूरा अर्थ नहीं निकलता। ऐसी अवस्था में मुझे भी इतिहास की शरण लेनी पड़ी है । इसके सिवा यह भी जान लेना चाहिए कि गाय सूचक शब्द कुरान की जिस आयत (वाक्य) मे आया है मैंने उसके केवल थोड़े से ही भाग को देने मे सन्तोष नहीं किया बल्कि उस स्थान से सम्बन्ध रखने वाले आगे पाछे के पूरे वाक्य या वाक्यों को मैंने लिख दिया है ताकि लोग भली भांति जान सकें कि कुरान मे गाय के विषय मे चर्चा क्या है ।

अरबी भाषा मे प्रायः 'बकरतुन' अर्थात् 'बकरः' शब्द गाय और 'बक्रुन, अर्थात् 'बकर' शब्द बैल के लिए आता है । सबसे पहली बात यह है कि कुरान की ११४ सूरतों (अध्यायो) में से दूसरी सूरत (अध्याय) मे समस्त कुरान का बारहवाँ भाग है। उस भाग का नाम ही 'सूरतुल् बकरः' या 'सूरः बकर' अर्थात् गाय विषयक सूरत (अध्याय) है क्योंकि उस अध्याय मे गाय का वर्णन विशेष रूप से है। अस्तु, सब से पहले कुरान के उसी अध्याय मे गाय के विषय मे यह आया है—

(वइज् क़ाला मूसा.....लअल्लाकुम ताक़लूना)

भावार्थ—और जब मूसा* ने अपनी जाति

---

* लगभग ६ हजार वर्ष बीते कि हजरत मूसा साहब एक बड़े पैगम्बर हो चुके हैं। इनको न केवल मुसलमान ही बल्कि ईसाई व यहूदी लोग भी अपनाते हैं । इनका हाल 'किससुल अंबिया' नामी उर्दू किताब मे विशेष रूप से है।
—लेखक

वालों से कहा कि निस्सन्देह अल्लाह तुमको आज्ञा देता है कि तुम एक गाय मारो। उन्होंने कहा कि क्या तुम हमसे हँसी करते हो? मूसा ने कहा, मैं अल्लाह की शरण चाहता हूँ कि मैं अज्ञानी बनूँ।

उन्होंने कहा कि तू अपने पालनहार से हमारे निमित्त पूछ कि वह गाय कौन सी है। इस बात को वह स्पष्ट रूप से हमें बतला दे। मूसा ने कहा कि निस्सन्देह अल्ला कहता है कि वह गाय ऐसी है कि न तो अभी बूढ़ी है और न अभी बछिया ही है। इन दोनों के बीच की आयु वाली है। अतः जो कुछ तुम्हें आज्ञा हुई है उसे पूरा करो।

उन्होंने कहा कि तू अपने पालनहार से हमारे निमित्त पूछ कि वह गाय किस रंग की है। मूसा ने कहा कि निस्संदेह अल्लाह कहता है कि वह गाय पीली है और ख़ूब पीली है यहां तक कि देखने वालों को उसका रङ्ग बहुत सुन्दर मालूम होता है।

उन्होंने कहा कि तू अपने पालनहार से हमारे निमित्त पूछ कि वह कौन सी है। इस बात को वह स्पष्ट रूप से बतला दे। क्योंकि हमको एक ही रङ्ग की कई गायें प्रतीत होती हैं। और यदि अल्लाह ने चाहा तो हम निस्सन्देह ठीक मार्ग पर होंगे।

मूसा ने कहा कि निस्संदेह अल्लाह कहता है कि वह एक गाय है न ऐसी सधी हुई है कि ज़मीन को जोतती है और न उससे खेती ही सींची जाती है। वह पूर्ण रूप से ठीक है। कोई धब्बा नहीं है। उन्होंने कहा कि ऐ मूसा! तूने अब हमें ठीक ठीक बताया है। इस पर उन्होंने उसको वध किया यद्यपि ऐसा करने के लिये वे तैयार न थे।

और जब तुमने एक व्यक्ति को मार डाला और उस व्यक्ति के लिए तुमने झगड़ा किया क्योंकि उसके घातक का ठीक पता तुम्हें नहीं था किन्तु अल्लाह उस बात को प्रकट करने वाला है जिसको कि तुम छिपाते थे।

किन्तु हमने कहा कि उस मृतक को गाय के किसी टुकड़े से मारो। (ऐसा करने पर वह मृतक जी उठा।) इसी प्रकार अल्लाह मृतकों को जिलाता है अथवा जिलायेगा। और अपनी शक्ति के चिन्हों को दिखाता है ताकि (सब कुछ) तुम्हारी समझ में आवे॥—सूरः बकर, आयत ६१–७२।

गाय क्यों वध कराई गई थी? इस बात की बाबत अनेक मुसलमान लेखक ही लिखते हैं कि एक यहूदी ने अपने एक सम्बन्धी को मार डाला था। कोई व्यक्ति कुछ पता न चला सका, इस कारण लाश को दूर रख आया। मृतक के मित्रों ने हज़रत मूसा साहब के समीप कुछ अन्य लोगों को दोषी ठहराया। उन लोगों ने इन्कार किया। अपराधी का पता चलाने के लिए अल्लाह ने आज्ञा दी कि एक गाय मारी जाय। अतः गाय मारी गई। फिर उस गाय के एक अंग से मृतक को मारा। वह जी उठा और अपने घातक का पता देकर फिर मर गया।

द्वितीय स्थल

क़ुरान में दूसरा स्थान (जहां गाय का वर्णन है) सूरतुल् अन्आम या सूरः अन्आम अर्थात

पशु-विषयक अध्याय है। यह कुरान मे छठा सूरः (अनआम) है। इसमें आया है—

(व मिनल अनआमे ... क़ौमयूष्ठ लिमीन)

भावार्थ—और पशु दो प्रकार के हैं, एक वह जो लादने में समर्थ हैं और दूसरे जो छोटे छोटे हैं। हे लोगो! जो कुछ अल्लाह ने तुम्हें दिया है उसे खाओ। और शैतान का अनुकरण न करो क्योंकि वह निसन्देह खुले खजाना तुम्हारा वैरी है।

आठ जोड़े अल्लाह ने पैदा किये हैं। भेड़ में से (एक भेड़ा व एक भेड़ी) दो, और बकरी में से (एक बकरा व एक बकरी) जो दो हैं। कह (हे मुहम्मद)* कि अल्लाह ने (तुम्हारे लिये) भेड़ा और बकरा को हराम किया है या भेड़ी और बकरी को या उस (बच्चा) को जो बकरी या भेड़ी के पेट में हो। यदि (लोगो!) तुम्हारी बात ठीक है तो उसे बताओ।

ऊट में से (एक ऊट व एक ऊटनी) दो, और गौ मे से (एक गाय व एक बैल) जो दो हैं। कह (हे मुहम्मद!) कि अल्लाह ने ऊट व बैल को हराम किया है या ऊटनी व गाय को या उस (बच्चा) को जो गाय या ऊटनी के पेट में हो। क्या तुम साक्षी थे जब अल्लाह ने ऐसा किया था? अतः उससे बढ़कर अत्याचारी और कौन है जो झूठी बात को अल्लाह के सिर मढ़ता है ताकि लोग बिना सोचे विचारे भटकें। सच तो यह है कि अल्लाह अत्याचारियों को ठीक मार्ग पर नहीं लाया करता —सूर. अनआम, आयत १४३— ४५

मुसल्मानी मत के जन्म से पहले अरब में नाना प्रकार के टोटके प्रचलित थे। अत अरब लोग भेड़, बकरी, ऊट और गाय मे से किसी अवस्था मे किसी के नर को व किसी समय किसी की मादा को और किसी दशा मे (उक्त पशुओं में से) किसी पशु के बच्चे को हलाल या हराम समझते थे। उनका ऐसा समझना उचित नहीं था। इस कारण उनके उक्त रीत व रिवाज का ऊपर सर्वथा खण्डन है और उनके विचारों की निन्दा की गई है।

तृतीय स्थल

गत अध्याय मे जहाँ गाय की चर्चा है उसके निकट ही फिर गाय का वर्णन इन शब्दो म है—

(व अलल्लज़ीना हादू ... व इन्ना ल सादिक़ून)

भावार्थ—और जो लोग यहूदी हैं उन पर हमने (अल्लाह ने) प्रत्येक नाखूनवाले पशु को हराम किया है। और गाय व बकरी दोनो की चरबी हमने हराम की है किन्तु वह चरबी जो उनकी पीठ पर लगी हो अथवा अंतड़ियों पर या हड्डी से मिली हो, हमने उसको उनके लिये हराम नहीं किया। यह सजा हमने उन्हे उनके द्रोह के कारण दी है और निस्सन्देह हम सच्चे हैं।—सूर. अनआम, आयत १४६।

यहूदी लोग मिस्र मे दास थे। हजरत मूसा साहब के उद्योग से छूटे। किन्तु उन्होंने

* कुरान हजरत मुहम्मद साहब के द्वारा लोगों को मिला है। अत कुरान के अनेक स्थानों में यह बात पाई जाती है कि जहाँ अल्लाह ने हजरत मुहम्मद साहब से कहा है कि तुम अमुक बात लोगों से पूछो या अमुक बात लोगों से कह दो—लेखक

हजरत मूसा की आज्ञा का पालन न किया। इस पर खुदा ने आज्ञा दी कि वह सब एक काफी समय तक अपना जीवन जंगल में व्यतीत करें। ऐसी अवस्था मे दूध दही ऐसे भोजन के हेतु और एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के निमित्त पशु उनके लिए बड़े उपयोगी और आवश्यक थे। इस कारण अल्लाह ने पशु हराम कर दिये थे ताकि उपयोगी पशुओं के मारे जाने की नौबत ही न आवे।

कुरान शरीफ़ मे बारहवा सूरः यूसुफ़ है जिसमे अन्तिम बार गोविषयक बातें हैं और इसमे सन्देह नहीं कि गाय के विषय मे अब जो कुछ आवेगा वह गाय के मारने या खाने की बाबत नहीं है किन्तु मैं चाहता हूँ कि कुरान मे गाय के विषय मे चाहे किसी प्रकार का वर्णन हो, वह सब का सब लोगों के सम्मुख रख दिया जावे। इस कारण निम्नलिखित बातों को लिख रहा हूँ:—

(व क़ालल् मलिको सब्अल्लहुम् याखमून)

भावार्थ—मिस्र देश के बादशाह ने कहा कि मैंने स्वप्न मे देखा कि सात मोटी गायें सात दुबली गायों को खाती हैं और सात हरीबालें सात सूखी बालें को भी। हे दरबारवालो! मेरे स्वप्न पर विचार कर सकते हो।

दरबारवालों ने उत्तर दिया कि यह खिन्न विचार हैं और हम स्वप्न के विचारने में समर्थ नहीं।

बादशाह का एक नौकर जो हजरत यूसुफ साहब के साथ बन्दीखाना में था, जिसका स्वप्न हजरत यूसुफ ने ठीक-ठीक विचारा था, वह बादशाह के पास था। उसे हजरत यूसुफ साहब चिरकाल के बाद याद आये। उसने बादशाह से कहा कि आपको मैं स्वप्न का ठीक अर्थ बता सकता हूँ। अतः आप मुझे बन्दीखाना में हजरत यूसुफ के पास जाने दीजिये। जिन्होंने कि मेरा स्वप्न ठीक से विचारा था।

हे यूसुफ! तुम स्वप्न के विचारने में अच्छे हो। अपना मत इस स्वप्न के लिए प्रकट कीजिए कि सात मोटी गायें सात दुबली गायों को खाती हैं और सात हरी बालें सात सूखी बालों को भी इसका ठीक अभिप्राय बताइए कि लोग समझ सकें। —सूर. यूसुफ, आयत ४३ ४६।

हजरत यूसुफ साहब का काल हजरत मूसा से भी कुछ पहले का है। यह भी एक पैग़म्बर थे। यह बड़े सुन्दर थे। इनके भाइयों ने इन्हें जगल के कुएं मे डाला, पर इनको सौदागर कुएं से निकाल कर मिस्र मे ले गया। वहाँ वह बादशाह के सचिव के दास बने। सचिव की स्त्री ने इन पर झूठा कलंक लगाया। वह जेल मे डाले गये। वहा बादशाह के दो कैदी नौकरों का स्वप्न आपने बहुत ही ठीक विचारा। उनमे एक बादशाह का फिर नौकर बना।

बादशाह ने उक्त स्वप्न देखा। कोई विचार न सका। नौकर जो कैद से छूटकर आया था उसने हजरत यूसुफ की बाबत और अपने स्वप्न की बाबत बादशाह को बताया। इस पर बादशाह ने नौकर को हजरत यूसुफ साहब के पास भेजा। उन्होंने स्वप्न का ठीक ठीक अभिप्राय बताया। बादशाह बड़ा प्रसन्न हुआ और अन्त

में एक दिन यह नौबत पहुंची कि वह स्वयं बादशाह हुए। इनका भी हाल उर्दू के "किस्सुल अम्बिया" में विस्तार पूर्वक हैं।

चेतावनी

जानना चाहिए :—

(१) बकर शब्द का अर्थ है—बैल। बकर शब्द का समस्त कु़रान में तीन बार प्रयोग हुआ है। (क) दूसरी सूरत बकर की आयत ७० में, (ख) छठी सूरत अनआम की आयत १४५ और १४७ में एक एक बार।

(२) बकरः या बकरत ( ) का अर्थ है—गाय (अथवा बैल)। बकरः शब्द समस्त कु़रान में चार बार आया है। दूसरी सूरत बकर की आयत ६७,६८,६९ और ७१ में से प्रत्येक में एक बार।

(३) बकरात ( ) शब्द बकरः का बहुवचन है। अर्थ है-गायें। बारहवीं सूरत यूसफ की आयत ४३ व ४६ में एक-एक बार अर्थात् समस्त कुरान में बकरात शब्द दो बार आया है।

कु़रान में गाय के विषय में क्या लिखा है इस बात का ज्ञान उक्त शब्दों के सहारे अग्र जी अनुवादों द्वारा भी सुगमता के साथ जाना जा सकता है।

किसी किसी कुरान या उसके अनुवाद में आयतों की संख्या गणना के अनुसार कुछ भिन्न ठहरती है। ऐसी दशा में सम्भव है कि आयतों की जो संख्यायें ऊपर लिखी गई है वह वह एक या दो अधिक या कम हों।

दूसरों की भलाई में अपनी भलाई है

[लेखक श्री लब्भुरामजी आनन्दाश्रम-लुधियाना]

अतः कोई वस्तु नाही बुरी और नाही अच्छा है, यह अधिकतर अपने विचारों पर निर्भर है। मनुष्य यदि अपने को सुखी माने तो अतः कोई दुःख भी उसके समीप नहीं आ सकता, शारीरिक दुःख कोई यथार्थता नहीं रखते अबकि मन की शक्ति बलपूर्वक उनको सहन करने में समर्थ हो।

यदि विचार किया जाय तो शारीरिक क्लेश कुछ समय के लिये होता है और निर्बल आत्मा को उदासीन बना देता है। परन्तु जहां मन स्थिर और अपने नियमों पर दृढ़ है वहाँ सहस्त्रों दुःखों को भी उसकी प्रबल शक्ति पछाड़ देती है।

सुख कहीं लेने नहीं जाना, यह मनुष्य के भीतर ही है। इसकी नींव दया, धर्म, निष्कपटता पर स्थिर है। जिसका मन छल छिद्र से निर्मल है, वही सुखी है।

स्वार्थसिद्धि बुरी बला है जो सुख को समीप तक आने नहीं देती।

दूसरों को लाभ पहुंचाना अपने को लाभ पहुंचाना है। इसी प्रकार अपने इष्ट-मित्रों और अन्य व्यक्तियों को सुख पहुंचाना अपने लिये भी हितकारी है।

महर्षि दयानन्द जी महाराज ने आर्य समाज के नौवे नियम में स्पष्ट लिखा है—

"प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिये किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।"

प्रत्येक मनुष्य मात्र का कर्तव्य है कि मनको वश में करता हुआ जीवन को सफल बनाने के बलवान् बनावे और घरेलू जीवन में अपने चरित्र को पवित्र बनावे वहां प्रत्येक व्यक्ति के साथ नम्रतापूर्वक व्यवहार रक्खे। इस समय अपना देश अत्यन्त कठिन दशा में ग्रस्त है ऐसी नाजुक स्थिति मे हमारा कर्त्तव्य है कि दूसरों की भलाई मे तत्पर रह कर सुख के भागी बनें। इसी मे हम सबका कल्याण है। ओ३म् शम्।

हिन्दुस्तान और पाकिस्तान

[ले०— श्री निरंजनलाल जी गौतम 'विशारद' देहली]

भारत विभाजन का जो आन्दोलन लगभग १० वर्ष पूर्व उठाया गया था वह तीन जून सन् १९४७ को सफल हुआ। अब भारतवर्ष का मान चित्र वह नहीं रहा जो मई १९४७ में था। यद्यपि भारतवर्ष के मानचित्र का लाल रंग फीका पड़ता जा रहा है और सम्भवतः १५ अगस्त ४७ तक वह तिरंगे के प्रभाव से ओझल हो जाये तथापि आज देश के दो कोनों में हरे रंग के राज्य का उदय होने वाला है। भारतवर्ष ने लगभग १००० वर्ष पूर्व उत्तर पश्चिम से होने वाले आक्रमणकारियों के हाथों ही दासता की कड़ियाँ पहनी थीं और इस दासता से मुक्ति पाने के लिये देश के अनेकों नवयुवकों ने अपनी आहुतियाँ दीं परन्तु आज देश के दुर्भाग्य से उत्तर पश्चिम का वह दासता लाने वाला मार्ग सदैव के लिये संकट बन कर खुल गया है। आज यह समस्त भाग पाकिस्तान के नाम से भारतवर्ष की ऐसी विरोधी शक्तियों के हाथ मे जा रहा है जो शताब्दियों से देश के साथ द्रोह करती रही है। जिस समय देश पर तुर्कों के आक्रमण हुये इस देश का कूड़ा कचरा निकम्मा भाग प्राणों का भय खाकर और व्यक्तिगत स्वार्थ के लिये आक्रमणकारियों से मिल गया और उसने उनका मत स्वीकार कर इस देश में विदेशियों के राज्य की जड़ें पुष्ट कीं। देश के इस स्वार्थी भाग ने प्रारम्भ से ही इस देश वासियों से विरोध रक्खा और अपना स्वार्थसाधन ही मुख्य ध्येय बनाया।

जिस समय भारत माता के सपूत अपनी माता की दासता की कड़ियाँ काटने में अपने प्राणों की आहुति दे रहे थे, यह विरोधी शक्ति अंग्रेजों से गठबन्धन करके अपने लिये पाकिस्तान की माँग कर रही थी। भारतवर्ष की एक मात्र राष्ट्रीय संस्था कांग्रेस ने अपने देश के बहुसंख्यकों के हितों की अवहेलना करके, अपने बड़प्पन को तिलांजलि देकर, घुटने टेक कर, गिड़गिड़ा कर विरोधी शक्ति के नेता मि० जिन्ना से अनेकों बार अनुनय विनय की कि वे जो भी चाहें उनसे लेलें परन्तु अंग्रेजों को भारतवर्ष से निकालने के आन्दोलन में अपना योग दें। परन्तु मि० जिन्ना की मांगें शैतान की आंतों की तरह बढ़ने लगीं। कांग्रेस के इस सीमा तक झुक जाने का परिणाम बड़ा भयानक सिद्ध हुआ। मि० जिन्ना जिन्हें सन् १९३५ से पूर्व तक कोई बूझता भी न था अन्धभक्त मुसलमानों के सर्वोपरि नेता बन गये और मुस्लिम जनता पर उनकी इतनी धाक बैठ गई कि वे उन्हें क़ायदे आज़म, पैग़म्बर और मुस्लिम जाति का सब से बड़ा हितैषी मानने लगी कायदे आजम ने एक बार भी कांग्रेस के बड़े से बड़े नेता के आगे बढ़ कर मित्रता का हाथ नहीं मिलाया, सदैव कांग्रेस के निर्माता महात्मा गांधी,

पं० जवाहरलाल मि० जिन्ना के दरवाजे पर हिन्दू मुस्लिम एकता के प्रश्न को लेकर जाते रहे। यह कहना अनुचित न होगा कि कांग्रेस ने जितनी शक्ति कायदे आजम को मनाने में व्यय की उतनी शक्ति मुसलमानों में प्रचार के लिए नहीं लगाई और इसका परिणाम यह हुआ कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के नाम पर लड़े गये गत निर्वाचनों में लीग को बड़ी भारी सफलता मिली और इन निर्वाचनों ने सिद्ध कर दिया कि मुस्लिम जनता पर मुस्लिम लीग का प्रभाव है।

मुस्लिम लीग का कार्य चालू रहा, उसकी पाकिस्तान की मांग को और भी बल मिला और अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये उसने देश में सीधी कार्यवाही आरम्भ की जिसके परिणाम स्वरूप देश मे हजारों व्यक्तियों के प्राण गये और करोड़ों रुपये की सम्पत्ति नष्ट हुई। देश में साम्प्रदायिक दंगों के आर्तनाद से पीड़ित हो भारतवर्ष के सन्त महात्मा गांधी के आदेश से नेहरू सरकार ने देश के विभाजन को स्वीकार किया और कांग्रेस की महासमिति ने १४ जून को अपनी स्वीकृति की मुद्रा अंकित कर दी और यह मान लिया गया कि इस इस निर्णय को देश की सर्वसाधारण जनता को स्वीकृति प्राप्त है।

कांग्रेस ने मुस्लिम लीग को प्रसन्न करने के लिए केन्द्र में शासन भार संभालते समय ७५ प्रतिशतक हिन्दुओं के मुक़ाबले में २५ प्रतिशतक मुसल्मानों के बराबर बराबर के अधिकार स्वीकार किए और मुस्लिम लीग ने शक्ति हाथ में आते ही देश व्यापी मारकाट का आन्दोलन आरम्भ करके कांग्रेस को पाकिस्तान की माँग स्वीकार करने पर बाध्य कर दिया और मुस्लिम लीग ने अपने अनुयायियों से जो भी प्रतिज्ञा की थी उसे बहुत अंशों में पूरी कर दिखाया।

इसके विपरीत कांग्रेस ने अखंड भारत के नारे के साथ गत चुनाव लड़े थे और हिन्दू जनता ने केवल इस भावना से कांग्रेस को अपना मत दान किया था कि कांग्रेस भारतवर्ष की अखंडता की रक्षा करेगी परन्तु ३ जून को कांग्रेस ने भारत विभाजन को स्वीकार करके देश के साथ की गई अपनी प्रतिज्ञा को कहाँ तक निभाया यह पाठक स्वयं विचार सकते हैं। कांग्रेस ने जिन परिस्थितियों मे भारत विभाजन की मांग स्वीकार की है इसमें कांग्रेस के उच्च-कोटि के नेताओं ने कोई भूल की है इसे हम स्वीकार नहीं करते परन्तु इन परिस्थितियों को उत्पन्न करने का उत्तरदायित्व कांग्रेस के उच्च-कोटि के नेताओं पर ही है। कांग्रेस महासमिति ने भारत विभाजन की मांग स्वीकार कर के लार्ड मौण्टबेटन के सम्मुख की गई अपनी प्रतिज्ञा को निभाया है। यह स्वीकृति देश की जनता की स्वीकृति नहीं है सर्वसाधारण जनता के साथ तो विश्वासघात ही हुआ है। गत वर्ष जिस अखंड भारत के नारे के साथ चुनाव लड़े गए थे यदि आज की परिस्थितियों में भी पुनः जनता की राय ली जाती और भारत विभाजन के नारे के साथ पुनः चुनाव लड़े जाते तो जनता का निर्णय कांग्रेस के वर्तमान निर्णय से भिन्न होता।

अस्तु अब देश का विभाजन स्वीकार हो चुका है और शीघ्र ही विभाजन की पूरी रेखायें

भी निश्चय हो जाएंगी जिसके परिणाम स्वरूप देश का एक भाग हिन्दुस्तान होगा जिसमें लगभग २९ करोड़ हिन्दू होंगे और ३ करोड़ मुसलमान तथा दूसरे भाग में पाकिस्तान में लगभग ६ करोड़ मुसलमान तथा २ करोड़ के लगभग हिन्दू रह जायेंगे। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि देश का एक भाग हिन्दू बहुल प्रान्त होगा जिस में अल्प संख्यक मुसलमानों की आबादी हिन्दुओं की आबादी का आठवां भाग होगा और दूसरे भाग में मुसलमानों का प्रभुत्व होगा जिसमें हिन्दू मुसलमानों से एक तिहाई होंगे। यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि पाकिस्तान की स्थापना एक स्वतन्त्र मुस्लिम राज्य बनाने की भावना से की गई है। इसमें अल्पसंख्यक हिन्दुओं के साथ कैसा बर्ताव होगा इसे भविष्य बताएगा। परन्तु अब तक अल्पसंख्यक हिन्दुओं के साथ मुस्लिमलीग का व्यवहार भावी व्यवहार की भूमिका समझिए। दूसरी ओर हिन्दुस्तान में हिन्दुओं का बाहुल्य है। मुस्लिम लीग के निर्णय और देश के विभाजन के बाद हिन्दुस्तान स्वतः ही हिन्दुओं का राष्ट्र रह जाता है परन्तु हिन्दुओं के दुर्भाग्य से देश का विभाजन भी हुआ और अभी हिन्दुओं को शेष हिन्दुस्तान को हिन्दू राष्ट्र कहने का अधिकार नहीं है। देश के सन्त महात्मा गान्धी और पं० जवाहरलाल जी के मत के अनुसार पाकिस्तान के अतिरिक्त शेष भारत एक संघ होगा जिसमें हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, पारसी आदि सभी सम्मिलित रहेंगे और सब के अधिकार समान होंगे उनका मत है कि देश का विभाजन नहीं हुआ है अपितु देश के एक अनिच्छुक भागको जो भारतीय संघ में सम्मिलित नहीं होना चाहता था पृथक् रहने का अधिकार दे दिया गया है। जहां तक म० गान्धी और पं० जवाहरलाल जी के उच्च भावों का सम्बन्ध है वे विश्व इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित किए जाने योग्य हैं परन्तु ये आदर्श वाक्य हैं व्यावहारिक नहीं है। व्यावहारिकता यह है कि मुसलमानों का एक स्वतन्त्र राज्य पाकिस्तान के नाम से बन चुका है। अब शेष भारत पर मुसलमानों का कोई अधिकार शेष नहीं रह जाता। देश मे जिस प्रकार अन्य अल्प मत अपने नागरिकता के अधिकारों का उपयोग करेंगे हिन्दुस्तान में मुसलमानों को भी इस शर्त पर नागरिकता के अधिकार रहेंगे कि वे अपने आपको हिन्दुस्तानी मानें। यदि वे हिन्दुस्तान में रह कर भी अपने आपको पाकिस्तानी ही समझें तो उन्हें नागरिकता के अधिकार पाने का भी कोई अधिकार नहीं। हिन्दुस्तान में हिन्दुओं को अपने ढंग पर हिन्दू संस्कृति के विकास का अवसर मिलना चाहिये और एक शक्तिशाली हिन्दू राष्ट्र के निर्माण का प्रयत्न होना चाहिये जिसमें अल्प संख्यकों को सुरक्षा और न्याय का आश्वासन दिया जा सकता है।

परन्तु हमें वायु का रुख उल्टा दीख रहा है। एक ओर से तो मुस्लिम राष्ट्र पाकिस्तान के नाम से अपना पृथक् अस्तित्व बना रहा है जिसके साथ अपनी विशाल शिक्षित सेना होगी, विदेशी पूंजी होगी और पीठ पर अंग्रेजों का हाथ रहेगा। दूसरी ओर विशाल हिन्दुस्तान होगा जिस में छोटी छोटी रियासतें अपने पैतृक

अधिकारों की रक्षा के नाम पर भारतीय संघ की शक्तियों को क्षीण करती रहेंगी और जिस न गगा जमुनी शासन को निभाने के नाम पर पूर्व-वत् हिन्दुओं के अधिकारों का अनुचित रूप से हनन होगा। यदि सौभाग्य से एक दृढ़ केन्द्र बन भी गया तो हिन्दुओं को अपने देश की रक्षा का वह अवसर न मिल पायेगा जो कि मिलना चाहिये, क्योंकि कांग्रेस हिन्दुस्तान के ४ करोड़ मुसलमानों के साथ भलाई करके उसे विश्व मे प्रदर्शित करने के मोह को संवरण न कर सकेगी। इसका परिणाम यह होगा कि मुस्लिम लीग का 'लेके रहेंगे पाकिस्तान' नारा पूरा होने पर अब 'जैसे लिया है पाकिस्तान वैसे लेंगे हिन्दुस्तान' नारा बल पकड़ेगा और पाकिस्तानी डाकू तथा गुण्डे हिन्दुस्तान की सीमाओं पर सदैव उपद्रव करते रहेंगे और केन्द्रीय संघ अपनी मुसलमानों को ठेस न पहुँचाने की नीति के कारण कोई सक्रिय कार्यवाही न कर सकेगा। देश का दुर्भाग्य यहीं तक सीमित नहीं है, कांग्रेस को अब भी आशा है कि पाकिस्तान एक बार पुनः भारतीय संघ का भाग बन जायेगा और इसी आशा से यह शेष हिन्दुस्तान को हिन्दू राष्ट्र नहीं घोषित करना चाहती। परन्तु यह मृग-मरीचिका है और बालू से तेल निकालने के समान है। जिन विदेशी शक्तियों की कूटनीति के कारण आज भारत का विभाजन हुआ है वही अंग्रेजी कूटनीति पाकिस्तान को भारत से मिलने देगी यह असम्भव है। अंग्रेजों और अमेरिका को भय है कि कहीं स्वतन्त्र भारत एशिया के संगठन के नाम पर रूस से न मिल जाये अतः वे एशिया में अपना प्रभुत्व बनाये रखने और रूस का प्रभाव रोकने के लिए पाकिस्तान को अपना आधार बनाना चाहते हैं। यद्यपि वर्तमान पाकि-स्तान आर्थिक दृष्टि से शक्तिशाली नहीं है तथापि विदेशी पूंजी के सहारे वह अपने देश को आर्थिक संकट से मुक्त कर लेगा और फिर उसे भारतीय प्रचुर आर्थिक साधनों पर निर्भर न रहना होगा। मुस्लिम लीग ने जिस भावना से प्रेरित हो अपने लिये स्वतन्त्र राष्ट्र निर्माण किया है वही भावना पाकिस्तान को हिन्दुस्तान संघ मे मिलने से सदैव ही रोकेगी। फिर संसार के अन्य देशो के उदाहरण भी हमारे सम्मुख हैं। अल्स्टर और आयरलैंड, कनाडा और अमेरिका, नार्वे और स्वीडेन ऐसे देश हैं जो एक सम्मिलित देश थे परन्तु अब उनका विभाजन हो गया तो वे दूसरे से भिन्न ही अपना अपना अस्तित्व बनाये हुये हैं और उनका पारस्परिक सम्बन्ध एक अच्छे पड़ोसियों की भाँति है। संसार के जिन देशों का हमने ऊपर दिग्दर्शन कराया है वे अपने अपने अस्तित्व की रक्षा के लिये एक दूसरे से विभाजित हुये हैं एक दूसरे पर अधि-कार करलें ऐसी भावना उनमें नहीं है परन्तु हमारे देश के दुर्भाग्य से भारतवर्ष का विभाजन इस आधार पर नहीं हुआ अपितु पाकिस्तान की स्थापना इस लिये की गई है कि पाकिस्तान के नाम से एक स्वतन्त्र राष्ट्र का निर्माण किया जाये और अन्य मुस्लिम राज्यों से सम्पर्क स्थापित करके अवसर मिलते ही समूचे भारतवर्ष पर मुस्लिम राज्य का झंडा फहराया जाए, क्योंकि भारतीय मुसलमान सोचते हैं कि उनके पूर्वजों ने ८०० वर्षों तक हिन्दुओं पर राज्य किया है। परन्तु वास्तविकता

यह है कि वर्तमान मुसलमानों के किसी भी पूर्वज ने भारतवर्ष की गद्दी पर बैठकर राज्य नहीं किया। भारतवर्ष में राज्य करने वाले तो गुलाम, खिलजी, तुगलक, सैयद, लोदी और मुगल थे जिनकी तलवारों के भय से और लालच वश यहां के कायर पुरुषों ने अपना धर्म परिवर्तित कर लिया और वे अपने आपको शासकों की जाति का समझने लगे। अंग्रेजों के राज्य की समाप्ति के बाद यदि भारतीय ईसाई यह दावा करने लगें कि उन्होंने १५० वर्षों तक हिन्दुस्तान पर राज्य किया तो उनका यह दावा जितना निस्सार होगा उसी भाँति मुसलमानों का यह विचार भी सारहीन है कि उन्होंने ८०० वर्ष तक हिन्दुओं पर राज्य किया है।

अब भी समय है कि कांग्रेस के कर्णधार झूठी राष्ट्रीयता का चोला उतारकर सच्चे अर्थों में राजदंड अपने हाथ में लें और पिछली भूलों से शिक्षा लेकर मुस्लिम लीग को प्रसन्न करने की नीति का त्याग करके शेष भारत की रक्षा करें। यदि वे राष्ट्र निर्माण के कार्य में अपनी शक्ति न लगा कर केवल हिन्दू मुस्लिम एकता का नारा लगाते रहे तो यह एकता तो न मिली और न मिलेगी ही। पाकिस्तान हिन्दुस्तान संघ में सम्मिलित होगा यह और भी असम्भव है। हिन्दुओं में दो दल अवश्य बन जायेंगे और फिर कांग्रेस की अधिक शक्ति अपने दल को सुरक्षित करने में व्यय होगी न कि प्रजा के हित के कार्यों में। हिन्दुओं की पारस्परिक जिस फूट के कारण आज हम १००० वर्ष तक दास रहे और अभी दासता से मुक्त होने का यत्न कर रहे हैं, कहीं ऐसा न हो कि एक बार फिर हमें पाकिस्तान की शक्ति से लोहा लेना पड़े और देश में भयंकर नागरिक युद्ध फूट पड़े। यदि दुर्भाग्य से ऐसा हुआ तो देश में कांग्रेस का वर्षों का त्याग और उसकी तपस्या व्यर्थ जायगी। ईश्वर ऐसा न करे कि देश की बागडोर कुछ अवसरवादी अयोग्य व्यक्तियों के हाथों में चली जाये। हिन्दुओं ने कांग्रेस की आज्ञा पर अपना सब कुछ बलिदान किया है और आज भी वह कांग्रेस की पिछली भूलों को चाहे वे किन्हीं कारणों से हुई हैं, भूलजाने के लिये तैयार हैं परन्तु कांग्रेस के कर्णधारों को भी हिन्दु बहुमत की भावना को समझकर उनके साथ न्याय करना चाहिये तभी शेष हिन्दुस्तान की रक्षा होगी।

२०–७–४७

—:*:—

गोवध निषेध का वैधानिक महत्त्व

[लेखक—श्री हरदेव सहाय जी मन्त्री गो वंश रक्षा समिति, हिसार]

किसी भी स्वतन्त्र देश के लोगों के लिए वहां की सरकार का उनकी सभ्यता, संस्कृति तथा साम्प्रदायिक धार्मिक सिद्धान्तों और उनके जीवन की आवश्यक चीजों की रक्षा का वचन देना एक सार्वभौम सिद्धान्त माना गया है। रूस जैसे समाजवादी देश में भी जहां भिन्न भिन्न तरह की सभ्यता, भाषा तथा आचार व्यवहार रखने वाले बसते हैं; उनके उचित सिद्धान्तों की रक्षा की जाती है। संसार के प्रायः सब सिद्धान्तों में ऐसी बुनियादी बातों का जिक्र है। हमारे देश के लोगों के जीवन का आधार गोवंश है। अन्य देशों में घोड़ों तथा मशीनों से खेती होती है, यहां पर खेती का मुख्य साधन बैल हैं। बैल न हों तो न अन्न पैदा हो सकता है और न वस्त्र तैयार करने के लिए रुई ही। कुएँ चलाने तथा गांवों में बोझ ढोने और सवारी के लिए भी तो बैल ही चाहिएं। बैलों के इस महत्त्व की दृष्टि से ही यह कहा जाता है कि बैल के सींग पर जमीन टिकी हुई है। गाय के दूध, घी, छाछ आदि पर ही करोड़ों लोगों की शारीरिक शक्ति निर्भर है। भूमि को उर्वरा रखने के लिए गोबर तथा गोमूत्र ही सर्वोत्तम खाद है। दर असल हमारे देश के लोगों से गाय का ऐसा ही सम्बन्ध है, जैसा शरीर का प्राण से। हमारी आर्थिक तथा शारीरिक स्थिति तथा उन्नति का मुख्याधार गाय है।

आर्थिक तथा शारीरिक दृष्टिकोण के साथ साथ गाय का धार्मिक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक महत्व भी है। तीस करोड़ हिन्दू तथा सिक्ख गाय को धार्मिक महत्व देते आए हैं। गाय उनकी संस्कृति की प्रतीक है। भगवान् राम, भगवान् श्रीकृष्ण, महर्षि वशिष्ठ, जमदग्नि, राजा दिलीप, गुरुनानक तथा कितने ही महापुरुषों के जीवन से गाय का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। महात्मा गांधी ने गोरक्षा को हिन्दू धर्म का बड़े से बड़ा बाह्य स्वरूप बतलाया है। (करोड़ों पौराणिक हिन्दू गाय के शरीर में देवताओं का निवास तथा उसे वैतरणी पार करने का साधन मानते हैं) वास्तव में गाय हिन्दुओं की संस्कृति तथा सभ्यता की प्रतीक है। गोवंश के नाश में हमारा विनाश तथा उसकी रक्षा में ही हमारा जीवन है।

इस्लाम में

इस्लाम मत में गोवध निषेध नहीं तो भी मुस्लिम काल में आज की तरह बड़ा हुआ गोवध तो नहीं था। बकरीद तथा अन्य पर्वों के समय जो गोवध होता था, उसे भी देश के लोगों की धार्मिक भावना तथा आवश्यकता को दृष्टि में रखते हुए बाबर, हुमायूं, अकबर, जहांगीर तथा अन्य मुसलमान बादशाहों ने कतई बन्द कर रक्खा था। कितने ही

बादशाहों ने गोवध करने वालों के लिए मृत्यु-दण्ड का नियम रक्खा था। अंग्रेजों ने देश को स्थायी तौर पर पराधीन रखने की जो योजनाएँ बनाई थीं उनमें गोवंश का ह्रास एक मुख्य तजवीज थी अतः अंग्रेजी राज्य ने देश के लोगों को कमजोर तथा कायर बनाने और विदेशों को चमड़ा और हड्डी अधिक भेजने के लिए गोवध को जन्म दिया तथा उसे बढ़ाया भी। जिसके परिणाम स्वरूप दूध घी का तो कहां ठिकाना, पेट भर अच्छा अन्न भी नहीं मिलता। कमजोरी और रोग बढ़ गए, आयु कम और मृत्यु संख्या अधिक होती जा रही है। अंग्रेजों ने जो योजनाएँ देश को कमजोर करने के लिए बनाई, उसमें वे सफल हुए।

अब अंग्रेजी राज्य खत्म हो गया है तथा स्वतन्त्र भारत का विधान बन रहा है। इस विधान के बनाने वाले अंग्रेजों या कसाईखानो और चमड़े के व्यापारियों या उन लोगों के प्रतिनिधि नहीं जिनका लाभ गोवध से है, वरन लोगों के प्रतिनिधि हैं या उनकी शक्ति से बने हैं, जिनका गोरक्षा से आर्थिक तथा शारीरिक लाभ ही नहीं प्रत्युत सांस्कृतिक तथा धार्मिक सम्बन्ध भी है। जो महात्मा गांधी की तरह गोवध और मनुष्य वध को बराबर का दर्जा देते हैं अतः विधान परिषद् के मेम्बरों को पाश्चात्य सभ्यता के पुजारी तथा राष्ट्रवादी कहलाने वाले गैरजिम्मेवार लोगों की परवाह न करते हुये असली मतदाताओं की भावना तथा लाभ को सन्मुख रखते हुये विधान में गोवध निषेध का नियम रखकर उनकी आर्थिक व शारीरिक आवश्यकताओं तथा धार्मिक भावनाओं और सभ्यता की रक्षा की गारंटी देनी चाहिये।

यहाँ पाठकों की जानकारी के लिये भारत सरकार की खास रिपोर्ट के सन् १९४१ के आंकड़े दिये जाते हैं:—

पशु	गाय	भैंस	कुल जोड़
अपनी मौत से	१४७४००००	४३८००००	१९१२००००
वध से मरे	५२७००००	१३३००००	६६०००००
कुल योग	२००१००००	५७१००००	२५७२००००
खालों की पैदावार	२५७२००००	...	...
विदेशों को गई	१०३४४०००	...	...
बाकी रही	१५३७६०००	...	...
विदेशों से आई	२२६००००	...	...
कुल खपत	१७६३६०००	...	...

इन आंकड़ों को देखते हुए प्रतीत होता है कि देश में अपनी मौत मरे पशुओं की १९१२,-0000 खालें तैयार होती है और खपत है

२७५३६००० खालों की इस हिसाब से देश की माग पूरी करके भी १५ लाख से अधिक अपनी मौत से मरे पशुओं की खालें बाहर भेजने या देश मे अधिक खपत करने के लिए बच जाती हैं। प्रसिद्ध विशेषज्ञ श्री सतीशचन्द्रदास गुप्ता ने २४ जुलाई के हरिजन सेवक मे लिखा है कि चमड़े के लिए ही पशुओं का वध होता है। यह स्वतःसिद्ध है कि पशुवध चमड़े के लिए ही होता है, और वह भी विदेश भेजे जाने के लिए। चमड़ा ही नहीं हड्डी, चरबी, खून तथा ऐसी हा अन्य चीजें भी बड़ी तादाद में बाहर भेजी जाती है।

चीन और गोवध

गोवध निषेध की माग कोई नई नहीं है। हमारे पड़ोसी देश चीन में जहा लाखों मुसलमान तथा अन्य धर्मावलम्बी रहते है, वहा भी गोवध निषेध है। पाठकों की जानकारी के लिए हम यहाँ चीनी कौन्सिल द्वारा प्राप्त चीनी जनता के सनापति के उस पत्र की कुछ बातों का उल्लेख करते है जो उन्होंने अ० भा० पशु हित कारिणी सभा करौलबाग देहली को पिछले दिनों भेजा था।

वे लिखते है—चीनी कृषि विभाग और जंगलात के मन्त्री मण्डल की तरफ से आपके प्रश्नों का उत्तर मिल चुका है जो निम्न है :-

१ गाय और दूसरे जरूरी पशुओं का चीनी जनता को मास देने के लिए बध नहीं किया जाता। खेती के काम करने वाले पशुओं के बध पर प्रति बन्ध है।

२- बीमार और पालतू पशुओ जैसे बूढ़े, अन्धे, लंगड़े आदि की भी 'पशु उन्नति विभाग' के आधीन रक्षा की जाती है।

३ पशुओ की नसल सुधार के लिए यजेचू, ह्यूनन, कव्योकू और सेनीप्रान्त में तहकीकाती केन्द्र कायम किए गये हैं। इस बारे में अभी हाल मे कोई विशेष पुस्तकें आदि नहीं मिल सकी।

४. इनके अलावा अच्छे पशुओं का प्रबन्ध और कन्ट्रोल करने के लिए विशेष कानून लागू किये गये हैं।

५. चीन में अभी वेटरनरी के लिए कोई विशेष विभाग नहीं है, लेकिन नसल सुधार और साइंस पशु के कोर्स बहुत सी युनिवर्सिटियों मे पढ़ाये जाते हैं।

६-बहुत सी सोसाइटियां विशेष कर सरकार के आधीन काम करने वाली संस्थाओं की तरफ से पशुओं से सम्बन्ध रखने वाले लेख चीनी भाषा में नियत समय पर प्रकाशित रहने वाले समाचार पत्रों में प्रकाशित किये जाते हैं। आशा है उपरोक्त सूचना आपको लाभदायक होगी।

रियासतें और गोवध

भारत सरकार की २६-७-४४ की आज्ञानुसार बंगाल, सिन्ध, तथा आसाम की उस समय की मुस्लिम लीगी सरकारों ने तथा हैदराबाद जैसी रियासतों ने भी भारत रक्षा कानून के अनुसार १० वर्ष की आयु के बैल गायों तथा सब ग्याभन और दुधारू गायों के बध पर पाबन्दी लगाने से इन्कार नहीं किया। इन पशुओं के बध करने वालों के लिए ३ साल क़ैद का नियम रखा था।

स्वतंत्र भारत के विधान मे गोवध निषेध का नियम रखना आर्थिक शारीरिक सांस्कृतिक तथा धार्मिक दृष्टि से भी उपयुक्त तथा वैधानिक दृष्टि से भी उचित ही है, जो करोड़ों लोगों की सद्भावना का भी प्रतीक है, जिनके बल पर यह विधान बन रहा है। आशा है देश के नेता तथा विधान परिषद् के सदस्य अपने कर्तव्य का पालन करेंगे। यदि उन्होंने अपने मत दाताओं की भावना तथा परम लाभ की परवाह न करके साम्प्रदायिक हठ को न छोड़ा तो देश के लोगों का उन पर से विश्वास हट जायेगा। गोवध बन्द न हुआ तो अंग्रेजी राज्य और स्वराज्य में कोई भेद न होगा। साधारण आदमी की दृष्टि में गोवध का बन्द होना ही स्वराज्य का सबसे बड़ा है प्रमाण है।

गाय और मुसलमान

लेखकः—अनुसंधान विद्वान् पण्डित आत्माराम जी दिल्ली।

आर्यों के जीवन में गो-जातिका स्थान बहुत ही ऊंचा रहा है। और आज भी केवल साम्प्रदायिक-मतान्धों को छोड़ कर भारतके सभी जन समाज में गो जाति के प्रति किसी न किसी रूपमें श्रद्धा है। पर क्या सचमुच हम गौ के प्रति अपने कर्तव्य का पालन कर रहे है ? यह बात आज सोचने विचारने की है। यदि भारतीय गा के प्रति सतर्क रहते तो आज क्या दूध दही और घी आदि के लिए तरस कर उक्त पदार्थों के अभाव में शक्ति से वंचित होना और प्राण खोना पड़ता ? सच्ची बात यह है कि हम पिछले दिनों म इतने निठल्ले और निकम्मे रहे है कि हमने अपने कतव्य की ओर कभी पूरी तरह ध्यान ही नहीं दिया।

कहने को आज हिन्दू बहुत आसाना और और सरलतासे कह देता है कि मुसलमानों ने अपनी तलवार के बल पर भारत की गायों को खत्म कर डाला। इस बात में एक हद तक सचाई हो सकती है, पर पशुओं की खपत के आकडे इस बात को पुकार कर कहते हैं कि जितना गो-धन ब्रिटिश राज्य में छीना गया इतना तो सारे मुसलमानी शासनकालमे कत्ल और खतम नहीं किया गया। अपनी बात की पुष्टि मे मै यहां एक पुराना बादशाही फरमान पेश करता हूँ, जिससे यह बात साफ हो जाती है कि कई मुगल बादशाहों ने तो गौ जाति के प्रति अपनी पूरी सहानुभूति और उसके प्रति अपना प्रेम प्रदर्शित किया था। यहां अंकित फरमान हिन्दुस्थानमें मुगलिया राज्य प्रवर्तक बाबर बादशाह का है। उसने अपने प्रिय बेटे और उत्तराधिकारी शाहजादे नसीरुद्दीन हुमायूं को वसीयत के रूप में लिखा था—

"ऐ! जरबन्द ममलिकते हिन्दुस्तान अज मजाहबे मुख्तलिफा मामूर अस्त आलहम्दो लिल्लाह कि हक तआला बादशाही हमी बातों करामत फरमूद बिबायद कि तअस्सुबाते मजहबी अज लौहे दिल पाक नमूदा मुबाफिके तरीकों हर मिल्लत मआदिलत कुन खुसूसन अज कुरबानीये गाव परहेज कुन कि तस्वीर कुलूब अहले हिन्दोस्तान अस्त अजी रेआयत बा एहसानाते शाही बावस्ता शवद। मनादिर व इबादतगाहे हर कौमे की जेर फर्माने बादशाह अस्त खराब मकुन, चुना अदूलगुस्तारी अख्तियारकुन कि शाह अज रैयत व रैयत अज बादशाह असुदा शवद। तरक्कीये इस्लाम एहसान बहतर! अस्त न अज तेगे जुल्म। अज अहले सुन्नत व शीया चश्मपोशी कुन। वल्लाह आं जोफे इस्लाम मौजूदा अस्त व रैयत मुख्तलिफुन्न कुलूब व हुक्म अर्बा अनासिर कायम कुन कि सयासियात अज अमराजे मुख्तलिफा अमांबाशद व कारनामा हजरत तैमूर साहब कुरानी पेशे नजर बायद दाश्त कि ता उमूरे शाहरयारी पुख्ता शवद। वमा अलैमा अलल बलाग।

(१ जमादीउलअव्वल ६३५ हिजरी तदनुसार ११ फरवरी १५२६)

फरमान मे लिखा है—ऐ मेरे बेटे, हिन्दुस्थान के राज्यमे विभिन्न विश्वासों के लोग रहते हैं। परमात्माने जो उच्चतम है, अपनी अनन्त कृपासे तुझे बादशाही प्रदान की है। इसलिए उचित यही है कि तू अपने हृदय को समस्त धार्मिक पक्षपात से स्वच्छ कर और प्रत्येक पन्थ के सिद्धान्तों के अनुसार न्याय तथा निर्णय करे, विशेषकर गोवध से परहेज करे। क्योंकि तू इस प्रकारसे हिन्दुस्थान के लोगों के दिलों को वशमे कर सकेगा और प्रजा राजकीय कृपाओं के कारण तेरी शुभचिंतक रहेगी। तुझे चाहिए कि मन्दिरों तथा अन्य मतों के पूजा-स्थानो को कदापि नष्ट न करे। प्रत्येक समय न्यायसे काम ले, जिसमे बादशाह प्रजा को ओर, और प्रजा बादशाहकी ओरसे संतुष्ट रहे। उत्तम यह है कि इस्लाम मत की उन्नति उपकार और कृपाकी तलवार से हो न कि अत्याचार और दमनसे। सुन्नी और शीयो के झगड़े पर भी दृष्टि न डाल क्योंकि ये झगड़े इस्लामकी निबलता का कारण हैं। और विभिन्न विश्वास रखने वाली प्रजा को इस प्रकार संघटित करदे जैसे कि मानव शरीर मे चारों महत्तत्व (अग्नि, वायु, जल, मिट्टी) जिसके कारण राष्ट्रीयता नाना प्रकार की बुराइयों और दोषोंसे रहित हो जाये। हजरत तैमूर स्वर्गीयके ज्वलन्त कार्यों को सामने रख, जिसके कारण तू राजकीय कार्यों मे दक्ष हो जाये। हमारा कर्तव्य तुम्हें उपदेश देना है।'

इस फरमान को पढ़कर किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिये कि एक मुसलिम बादशाह भी ऐसी बात कह और कर सकता है। बाबर बादशाह तो एक सच्चा मुसलमान था और उसका यह विश्वास था -

"गाव कुशी अज शआरे इस्लाम नेस्त।"

(फतवाये हुमायूनी)

तात्पर्य है गऊका मारना तो इस्लामी मजहब के नियममे नहीं है। ऐसा विश्वास केवल अकेले हुमायुं का ही नहीं था अपितु अपने अपने समयमें अकबर, जहाँगीर, मुहम्मदशाह, शाहआलम आदि बादशाहों का भी था और उन्होंने भी अपने बयानोंमे गो-बध को निषिद्ध करार दिया था।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम किसी पर दोष लगाने से पहले यह सोचें कि हम गौ की रक्षा के लिए क्या कर रहे हैं और क्या कर सकते हैं ?

[इस सम्बन्ध मे हम पाठकों का ध्यान मुगल सम्राट् शाहआलम के एक फर्मान (आज्ञा) की ओर आकर्षित करना चाहते हैं जिस पर बादशाह की मुहर है और जो ११ जिलहिज्जा हिजरी सन् १२३१ (सन् १८१२) मे जारी किया गया था। यह फर्मान बादशाह ने अपने धर्म गुरु मौलवी कुतुबुद्दीन और मौलवी सभीर बख्श की सहायता से जारी किया था। मि० पिन्काट

(F. Pincott) ने An enquiry into the Truth" नामक अपनी अंग्रेजी पुस्तक में जो अलीगढ़ से सन् १८६३ में प्रकाशित हुई। पृष्ठ ४२, ४३ पर इस फ़र्मान का अंग्रेजी अनुवाद इन शब्दों में दिया था।

"Be it known to all concerned. This mandate is issued at this time when justice is done to every one. Among God's wonderful dumb creatures, cows or oxen are included. From them we take important services and valuable products. The life of man and other creatures depends upon vegetables and corn; and the production of corn and other agricultural produce depends entirely upon cultivation and cultivation is wholly dependent on cattle; therefore the killing of these animals (which are the gift of God) for personal gratification, is not proper. when we should make use of them and take important services from them. Hence it is ordered that cows shall not be killed. If such an evil custom prevails anywhere it must be stopped at once. Any deviation from this order will meet with severe punishment." (M. F. Pincott's rendering of Emperor Shah Alam's order in An inquiry into the Truth' [P. 42-43)

मूल फारसी फ़र्मान श्री मदनमोहन जी सेठ M.A., LL.B. (वर्तमान का० प्रधान सार्वदेशिक सभा) की सन १६१७ में प्रकाशित " Arya Samaj a Political Body" नामक पुस्तक के पृ० ३६-४६ में उद्धृत है जिसका अनुवाद निम्न है।

यह सबको ज्ञात हो। यह फ़र्मान ऐसे समय पर निकाला जा रहा है जब सबके साथ न्याय किया जाता है। ईश्वर की आश्चर्य जनक सृष्टि में गाय बैल भी शामिल हैं। उनसे हम आवश्यक सेवा और पदार्थ लेते । मनुष्य और अन्य प्राणियों का जीवन शाक और धान्य पर निर्भर करता है। धान्य और अन्य खाद्य पदार्थों की उत्पत्ति खेती पर निर्भर है तथा खेती गाय बैल पर अवलम्बित है। इसलिए इन पशुओं की (जो ईश्वर की देन हैं) अपनी वैयक्तिक इच्छा की पूर्ति के लिये हत्या उचित नहीं है जब कि हमें उनसे उचित काम और सेवा लेनी चाहिए। इसलिए यह आज्ञा दी जारही है कि गौओं की हत्या न की जानी चाहिये। यदि यह बुरी प्रथा (गोहत्या की) कहीं प्रचलित है तो उसे तत्काल बन्द कर देना चाहिये। इस आज्ञा के उल्लंघन पर कठोर दण्ड दिया जाएगा।"

बाबर, हुमायूं, अकबर; शाहआलम जैसे मुगल बादशाहों ने भी जिस गोवध को केवल धार्मिक ही नहीं बल्कि आर्थिक और साम्पत्तिक हानि की दृष्टि से जैसे कि शाहआलम के फ़र्मान से स्पष्ट है-बन्द कर दिया क्या यदि स्वतन्त्र भारत में वह भी बन्द न कराई जाए तो यह अत्यन्त अनुचित तथा लज्जाजनक बात होगी अतः उसे बन्द करा देना चाहिए।

—सम्पादक सा० दे०

सार्वदेशिक सभा की आवश्यक विज्ञप्ति

(जो आर्य समाजों को भेजी गई)

सेवा मे

श्री मन्त्री जी,

आर्यसमाज..... .

श्रीमान् जी नमस्ते।

१-सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभाकी अन्तरङ्गसभा ने अपनी ३-८-४७ की बैठक मे निम्न आवश्यक निश्चय किये हैं —

(१) यद्यपि इस सभा की दृष्टि मे भारतवर्ष का इण्डिया और पाकिस्तान नामक दो भागों मे विभाजन देश के लिए सांस्कृतिक और राजनैतिक दोनों प्रकार से अत्यन्त हानिकारक है तथा १५ अगस्त को स्थापित होने वाले विधान मे वैदिक आदर्शों की दृष्टि से कतिपय न्यूनताएं हैं तथापि यह सभा विदेशी शासन से भारतवर्ष के मुक्त होने पर प्रसन्नता प्रकट करती है और भारत के आर्यजनो को आदेश देती है कि वे स्वतन्त्रता- दिवस को हर्ष तथा उत्साह के साथ मनावे ।

(ख) समाज मन्दिर मे यज्ञ किया जाय और ओ३म् की पताका फहराई जाय तथा स्वतन्त्र भारत के लिये शुभ कामना की जाय।

(२) यतः पाकिस्तान का वैधानिक चित्र इस समय अस्पष्ट है अतः यह सभा पाकिस्तान के आर्य जनों को १५ अगस्त का दिन मनाने अथवा न मनाने के सम्बन्ध मे कोई आदेश नहीं देती। सभा इस विषय का निश्चय उस समय करेगी जब पाकिस्तान का वैधानिक स्वरूप निश्चित हो जावगा।

१५-८-४७ को होने वाले'स्वतन्त्रता दिवस' के समारोहों के सम्बन्ध मे आर्य जनों को इन निश्चयों के अनुसार ही अपने कर्त्तव्य का निश्चय और पालन करना चाहिए

(३) वर्तमान राजनैतिक स्थिति मे आर्यसमाज के कर्तव्य और उसको व्यवहार मे लाने के उपायों पर विचार करने के लिए इस सभा के तत्वावधान में प्रान्तीय सभाओं के मन्त्री व प्रधान महोदयों, आर्य नेताओं, धारा सभाओं और विधान परिषद् (Constituent Assembly) के आर्य समाजी सदस्यों की एक विशेष बैठक ३-८-४७ को देहली में हुई। उसमें राजनैतिक विषयों में आर्य्य जनों का मार्ग प्रदर्शन करने के लिए एक स्थायि समिति के निर्माण की सिफारिश की गई थी जिसे सभा की अन्तरंग सभा ने स्वीकार कर लिया है। निश्चय इस प्रकार है:—

(क) 'प्रारम्भ में ही ऋषि दयानन्द की दिखाई पद्धति के अनुसार आर्य्य समाज के सदस्य स्त्री और पुरुष भारत वर्ष की राजनैतिक स्वाधीनता के आन्दोलन में बहुत प्रमुख भाग लेते रहे हैं और आज तक भी ले रहे हैं। देश की स्वाधीनता के लिए आर्य्य नर नारियों ने बहुत सा बलिदान किया है और विशेष बात यह रही है कि आर्य्य जनों ने कभी किन्हीं विशेष अधिकारों की माँग नहीं की। उनका यह प्रयत्न निजी तौर पर विना किसी सामाजिक निर्देश के होता रहा है।

(ख) अब तक यह आन्दोलन देश की स्वाधीनता प्राप्ति के लिए था। इस कारण विशेष मार्ग प्रदर्शन की आवश्यकता नहीं थी परन्तु अब भावी राष्ट्र-व्यवस्था का निर्माण करने का समय आ गया है। इस कारण यह अनुभव किया जा रहा है कि राष्ट्रीय कार्य करने वाले आर्य्य जनों का आर्य्य समाज की ओर से मार्ग प्रदर्शन किया जाय। इस कारण जहां यह सभा अनुभव करती है कि आर्य्य समाज को समष्टि रूप से चालू राजनीति से अलग रहना चाहिए वहां आर्य्य जनों के मार्ग प्रदर्शन के लिए निम्न सज्जनों की एक समिति बनाई जाय जो विधान परिषद् और सारा सभाओं के तथा आर्य्य जनता के मार्ग प्रदर्शन के लिए—

(१) वैदिक धर्म के राजनीति सम्बन्धी सिद्धान्तों को घोषित करे।

(२) समय २ पर उठने वाले भारतीय राजनैतिक प्रश्नों पर आर्य जनों का मार्ग प्रदर्शन करती रहे।

इस समिति के सदस्य

(१) श्री पूर्णचन्द्र जी वकील आगरा
(२) „ पं० धर्म्मपाल जी विद्यालंकार बदायूं
(३) „ पं० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार
(४) „डा० देशबन्धु जी गुप्त
(५) „ पं० रामदत्त जी शुक्ल
(६) „ „ ज्ञानचन्द्र जी बी० ए०
(७) „ „ प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति (गुरुकुल कांगड़ी)
(८) „ प्रो० घीसूलाल जी एम ए० अजमेर
(९) „ „ इन्द्र जी विद्यावाचस्पति
(१०) „ पं० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित
(११) „ „ गंगाप्रसाद जी उपाध्याय
(१२) „ „ शिवदयाल जी मेरठ
(१३) „ „ उमाशंकर जी वकील फतहपुर

यह सभा आशा रखती है कि सब वैदिक धर्मी इस समिति द्वारा निर्दिष्ट वैदिक सिद्धान्तों को राजनैतिक जीवन में अपना मार्ग प्रदर्शक मानेंगे और नागरिक कर्त्तव्यों का पालन करने में इस बात को कभी न भुला देंगे कि वे वैदिक राजधर्म से विचलित न हों।

श्री प्रो० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति इस समिति के प्रधान मन्त्री निर्वाचित हुए हैं। भविष्य में आर्य्य जनों को इस सम्बन्ध में सीधे उन्हीं से बलिदान भवन देहली के पते पर पत्र व्यवहार करना चाहिये। वे शीघ्र ही इस सम्बन्ध में आवश्यक विज्ञप्तियां प्रकाशित करेंगे।

(५) इसी बैठक मे शताब्दी सभा के आर्य्य ध्वज सम्बन्धी निश्चय पर विचार होकर ध्वज का रूप रंग इत्यादि निश्चित किया गया है। ध्वज का रंग अरुण (उदय होते सूर्य के समान) रखा गया है। ध्वज के मध्य की चौड़ाई का ½ भाग घेरते हुये सूर्य होगा । जिसकी किरणें श्वेत रङ्ग की होंगी और उसके बीच में ओ३म् सफेद रंग में होगा। ध्वज की लम्बाई चौड़ाई से १॥ गुनी होगी। समस्त आर्य समाजों में इसी प्रकार के झंडे लगाने चाहियें। इन झंडों में समानता रखने के उद्देश्य से यह सभा इनको स्वयं तैयार कराने की व्यवस्था कर रही है ।

मदन मोहन सेठ M.A,LL.B.
कार्यकर्त्ता प्रधान

गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०
मन्त्री

राजार्य सभा देहली

(सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा संस्थापित)

बलिदान भवन,
श्रद्धानन्द बाजार, देहली।
दिनाङ्क ५-१६४७ ई०

[समस्त समाजों में प्रेषित]

प्रमख पत्रिका सं० १

राजार्य सभा देहली भारत के समस्त आर्य समाजों को आदेश देती है कि वे १७ अगस्त को सार्वजनिक सभाओं का आयोजन कर निम्न लिखित प्रस्ताव स्वीकार करके भारतीय विधान निर्मात्री परिषद् के अध्यक्ष श्री डा० राजेन्द्र प्रसाद जी, भारत के प्रधान मंत्री श्री पण्डित जवाहरलाल जी नेहरू तथा राजार्य सभा के कार्यालय में भेज दें।

१—यह सभा भारतीय विधान निर्मात्री परिषद् से अनुरोध करती है कि वह हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा तथा देवनागरी लिपि को राष्ट्रलिपि के रूप में स्वीकार करे।

२—यह सभा भारतीय विधान परिषद से अनुरोध करती है कि वह देश की आर्थिक उन्नति के निमित्त गोवंश की रक्षा तथा वृद्धि को आवश्यक समझते हुए भारतीय विधान में गोवध का निषेध करने वाली धारा का समावेश करे ।

प्रमाण पत्रिका सं० २

भारत और पाकिस्तान के क्षेत्रों में आर्य समाजें १५-८-४७ को स्वतन्त्रता दिवस मनाएं या नहीं, अगर मनाएं तो किस प्रकार ? इस सम्बन्ध में सार्वदेशिक सभा के कार्यालय से ६-८-४७ की अन्तरंग सभा द्वारा स्वीकृत २ प्रस्तावों की प्रतिलिपि आपकी सेवामें भेजी गई हैं । आर्य समाजों को उन्हीं के अनुसार अपने कर्त्तव्य का निश्चय और पालन करना चाहिये ।

राजार्य सभा ने अपनी ४-८-४७ की बैठक में आर्य समाजों को आदेश दिया है कि १५ अगस्त को आर्य समाज मन्दिरों पर ओ ३ म् के झण्डे के सिवाय अन्य कोई झण्डा न लगाया जाय और आर्य समाज मन्दिरों में कांग्रेस, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ अथवा नेशनल गार्ड तथा इसी प्रकार की अन्य संस्थाओं के कार्यालय न रखे जायें ।

हमें आशा है आर्य समाजें इस आदेश का पूर्णतया पालन करेंगी।

प्रमाण पत्रिका सं० ३

राजार्य सभा की प्रथम बैठक में जो देहली में ४-८-४७ को हुई थी निम्न आवश्यक निश्चय हुए हैं:—

(१) सिंध की वर्तमान परिस्थिति को दृष्टि मे रखकर यह सभा सिंध की आर्य प्रतिनिधि सभा तथा आर्य समाजों को आदेश देती है कि सिंध सरकार तथा अन्य दलों की प्रगतियों और प्रवृत्तियों को देखकर उनके साथ सापेक्ष सहयोग (Responsive Co-operation) का व्यवहार करें ।

(२)पाकिस्तान की सरकार से अनुरोध किया जाय कि वह अल्प संख्यकों का पूर्ण संरक्षण करें और उन्हें धर्म, पूजा, भाषण, सम्मति के प्रकाश, प्रेस और सभा संगठन की पूरी स्वतन्त्रता प्रदान करे ।

नोट—प्रमाण पत्रिका सं० १ व २ भारत के तथा सं० ३ पाकिस्तान क्षेत्र समाजों के लिए हैं ।

इन्द्र विद्यावाचस्पति
प्रधान मन्त्री

लक्ष्मीदत्त दीक्षित
मन्त्री

राज्य का वैदिक आदर्श

(लेखक—श्री पं० चन्द्र मणि जी विद्यालङ्कार देहरादून)

[ऋषि दयानन्द के वेद-भाष्यादि से संकलित]

पहिला वर्ग

राजा प्रजासम्मत हो

(१) प्रजा जनों को यह उचित है कि आपस में सम्मति करके किसी उत्कृष्ट गुणयुक्त सभापति को राजा मान कर राज्य पालन के लिये कर देकर न्याय को प्राप्त हों। यजु० ९.२७

(२) हे विद्वन् राजन्! जिस अधिकार में आपको हम लोग स्थापित करते हैं उस अधिकार को धर्म और पुरुषार्थ से यथावत् सिद्ध कीजिए। यजु० १४.१५

कैसा राजा चुनें

(३) जो इन्द्र, वायु, यम, सूर्य, अग्नि, वरुण, चन्द्र और धनाढ्य (वित्त श=कुबेर) के गुणों से युक्त, विद्वानों का प्रिय, विद्या का प्रचार करने वाला, सब को सुख देवे उस को राजा मानना चाहिए। यजु० ९.३२

(४) प्रजा जनों को उचित है कि सकल शास्त्र का प्रचार होने के लिए सब विद्याओं में कुशल, और अत्यन्त ब्रह्मचर्य के अनुष्ठान करने वाले पुरुष को सभापति करें। और वह सभापति भी परम प्रीति के साथ सकल शास्त्र का प्रचार करता कराता रहे। यजु० ७.२३

(५) प्रजाजनों को योग्य है कि जो सर्वोत्तम, समस्त विद्याओं में निपुण, सकल शुभ गुण युक्त, विद्वान्, शूरवीर हो उसी को सभा के मुख्य काम में स्थापन करें। और वह सभा के सब कर्मों में नियुक्त सभापति सत्य न्याय युक्त धर्म कार्य से प्रजा के बल की उन्नति करे। यजु० ७.३६

(६) सभा-जन और प्रजाजनों को चाहिए कि जिस की पुण्य प्रशंसा, सुन्दर रूप, विद्या, न्याय, विनय, शूरता, तेज, अपक्षपात, मित्रता, सब कामों में उत्साह, आरोग्य बल पराक्रम, धीरज, जितेन्द्रियता, वेदादि शास्त्रों में श्रद्धा, और प्रजा पालन में प्रीति हो उसी को सभा का अधिपति राजा मानें। यजु० ८.४९

(७) ईश्वर की आज्ञा है कि सब मनुष्य रक्षा आदि के लिए ब्रह्मचर्य व्रतादि से विद्यापारग विद्वानों के बीच जिस ने ४८ वर्ष ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया हो ऐसे राजा को स्वीकार करके सच्ची नीतिको बढ़ावें। यजु। ९.२९

(८) मनुष्यों को योग्य है कि ईश्वर प्रेमी, बल पराक्रम पुष्टि युक्त, चतुर,सत्यवादी,जितेन्द्रिय धर्मात्मा, प्रजापालन में समर्थ विद्वान् को अच्छे प्रकार परीक्षा कर सभा का स्वामी बनाने के लिए अभिषेक करके राज्य धर्म की उन्नति भली प्रकार नित्य किया करें। यजु। ९.३०

(९) जो राजा सब का पोषक, समस्त दिशाओं में कीर्ति सम्पन्न, ऐश्वर्य युक्त, सभा के कामों में चतुर, पशुओं का रक्षक, और वेदों का ज्ञाता हो उसी को राजा प्रजा और सेना के सब मनुष्य अपना अधिष्ठाता बना कर उन्नति देवें। यजु०। ९. ३२

(१०) हे मनुष्यो ! तुम लोग जो दरिद्रों को भी धन युक्त, आलसियों को पुरुषार्थी, और श्रवण-रहितों को श्रवण युक्त करे उस पुरुष ही को सभा आदि का अध्यक्ष करो। हे सभापते ! यहां आप हमारी बात को सुनोगे, और हम आपकी बात को सुनेंगे, ऐसी आशा हम करते हैं। ऋ। १ ८४ ६

(११) जो मनुष्य सूर्यादि गुणों से युक्त पिता के समान रक्षा करने हारा हो वह राजा होने के योग्य है। और जो पुत्र के समान वर्तमान हो वह प्रजा होने योग्य है। यजु। १० ३०

(१२) जो सूर्य के समान श्रेष्ठ गुणों से प्रकाशित, सत्पुरुषों का शिक्षा से उत्कृष्ट, बुरे व्यसनों से अलग, सत्य न्याय से प्रकाशित सुन्दर अवयव वाला, सर्वत्र प्रसिद्ध, सब से सत्कार करने योग्य, सब व्यवहारों का ज्ञाता, और दूतों के द्वारा सब मनुष्यों के हार्दिक आशय को जानने वाला शुद्ध न्याय से प्रजाओं में प्रवेश करता है वही पुरुष राजा होने के योग्य होता है। यजु०। १० १३

(१३) सब मनुष्यों को उचित है कि जो सुपात्रों को दान देने वाला, धन का व्यर्थ खर्च न करने वाला, तथा सब को विद्या बुद्धि देने-हारा हो, जिस ने ब्रह्मचर्याश्रम सेवन किया हो अपने इन्द्रिय जिस के वश में हों, जो योग के यम आदि ८ अङ्गों के सेवन से प्रकाशमान सूर्य के समान अच्छे गुण कर्म स्वभाव से सुशोभित हो, और जो पिता के समान अच्छे प्रकार प्रजाओं का पालन करने हारा पुरुष हो उसको राज्य करने के लिए स्थापित करे। यजु०१२ २०

(१४) जैसे माता गर्भ की रक्षा करती है वैसे जो प्रजा का पालने हारा विद्वान पुरुष हो उसको राज्याधिकार देना चाहिए। यजु०१२ २३

(१५) मनुष्यों को चाहिए कि जो सब विद्याओं में गम्भीर बुद्धिवाला, सब मनुष्यों में माननीय, प्रजा की रक्षा आदि राज्य कार्य का स्वीकार कर्त्ता, सब सुखों का दाता, और वेदादि शास्त्रों को जाननेवाला शूरवीर हो उसी को राजा करें। यजु० ३३ १६

(१६) मनुष्यों को चाहिये कि जैसे सूर्य पृथिव्यादिकों से गुण तथा परिमाण में अधिक है वैसे ही उत्तम गुण युक्त सभा आदि के अधिपति राजा को अधिकार देकर सब कार्यों की सिद्धि करें। ऋ० १ ६१. ६

(१७) वही राजा होने योग्य है कि जिसको समस्त प्रजाजन स्वीकार करें। ऋ० २. १ ८.

(१८) जैसे गुण का ग्रहण करनेवाले उत्तम गुणी विद्वान का सेवन करते हैं, वैसे न्याय करने में चतुर राजा का सेवन प्रजाजन करते हैं। इसी से परस्पर की प्रीति से सबकी उन्नति होती है। यजु० ६ ७

(१९ राजजनों और प्रजाजनों को चाहिए कि सबके रक्षण के लिये सबसे उत्तम गुण कर्म स्वभाव वाले राजा का स्वीकार करें। और वह राजा सबकी सम्मति से सत्य न्याय का निरन्तर आचरण करे। ऋ० ६ १६ ११

दूसरा वर्ग।

राजा चुनने का उद्देश्य

(१) प्रजाजनों को चाहिए कि अपने बचाव और दुष्टों के निवारणार्थ, विद्या और धर्म की प्रवृत्ति के लिये, अच्छे स्वभाव वाले, विद्या और धर्म के प्रचार करने हारे, वीर, जितेन्द्रिय,

सत्यवादी, सभा के स्वामी राजा को स्वीकार करें। यजु० ६. ३८

राजा सभा का एक सभासद् है

(२) इस सृष्टि में सब मनुष्यों को चाहिए कि विद्वान् और अन्य सब श्रेष्ठ चतुर पुरुष मिलकर जिस विचार शील, ग्रहण के योग्य वस्तुओं को प्राप्त करानेवाले, शुभ गुणों से भूषित, विद्या सुवर्णादि धनयुक्त, सभाकेयोग्य (सभासद्) पुरुष को राज्य शासन के लिये नियुक्त करें वही पिता के तुल्य पालना करनेवाला राजा होवे। ऋ० १. ३६. १०

(३) यदि मनुष्य अच्छे सुशिक्षित होकर औरों को सुशिक्षित करें, उनमें से उत्तमो को सभासद् और सभासदों मे से अत्युत्तम को सभापति बनाकर राजा तथा प्रजा के प्रधान पुरुषों की एक अनुमति से राजकार्यों को सिद्ध करें तो सब आपस में अनुकूल होकर सब कार्यों को पूर्ण करें। यजु० २६. १६

राजा प्रजा का भृत्य है

(४) जहां विद्वान् सभाध्यक्ष, तथा सेनाध्यक्ष सभा में रहनेवाले सभासद और भृत्य होकर विनय पूर्वक न्याय करते हैं वहां सुख का नाश कभी नहीं होता। ऋ० १. ४१. ५

प्रजा मात्र को स्वदेशी राज्य चाहिए

(५) इस संसार मे किसी मनुष्य को विद्या के प्रकाश का अभ्यास, अपनी स्वतन्त्रता और सब प्रकार से अपने कामो की उन्नति को न छोड़ना चाहिए यजु० ५ ४३

(६) मनुष्यों को चाहिए कि पुरुषार्थ करने से पराधीनता छुड़ाके स्वाधीनता का निरन्तर स्वीकार करें। यजु० १५ ५

(७) कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम है। और मत-मतान्तर के आग्रह रहित, अपने और पराये का पक्षपात शून्य प्रजा पर पिता माता के समान कृपा न्याय और दया के साथ विदेशियो का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है। सत्यार्थ प्रकाश अष्टम समुल्लास पृ० २३७

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

द्वारा

आर्य-सभा केरल चैंगन्नूर (ट्रावनकोर स्टेट)

के तत्वावधान में संचालित

हिंदी परीक्षाओं में उत्तीर्ण छात्रों का परीक्षा फल

हिन्दी सौरभ— रोल नं० ७५

हिन्दी प्रवेशिका:—

द्वितीय श्रेणी— ४, ३९, १४२, १८७, १—

तृतीय श्रेणी— ३, ५, ६, ११—२०, २३, २७—३१, ४०,
४२—४६, ५७, ६२, ६४, ६६, ६९, ७०, ७३, ७४, ७८—८१, ८६,
८९, ९०, ९८, १०१, १०३, ११०, ११२, ११४, ११५, १२१—१२६,
१२८—१३५, १३७, १४०, १४३, १४४, १४७, १४८, १५१, १५९, १६३,
१६४, १६६—१७१, १७३, १७४, १७७, १७९, १८०, १८३, १८५,
१८६, १८८, १८९, १९१—१९४, १९६, १९९—२०२,

सर्व प्रथम— टी० के० शंकु पिल्लै (रोल नं० १४२)

सर्व द्वितीय— के० प्रभाकरन नायर (रोल नं० ४)

सर्व तृतीय— के० वी० परमेश्वर मूसद (रोल नं० ३९)

ये परीक्षायें १२ मई १९५७ ई० को आर्य सभा केरल के प्रधान पं० M. R. माधव जी वार्यर B. A. LL. B. की अध्यक्षता में तीन केन्द्रों से चलाई गई थी, २०३ विद्यार्थियों के प्रवेश पत्र आये थे। १४२ शामिल हुए, १०१ उत्तीर्ण हुए, परीक्षा फल ७५ प्रतिशत रहा।

सब उत्तीर्ण परीक्षार्थियों को बधाई।

प्रधान
आर्य सभा केरल

मन्त्री
सा० सभा देहली।

भारतीय-झण्डा और आदर्श

(लेखक— पं० जयकृष्ण जी विद्यालङ्कार)

वर्षों के भीषण संघर्षों के बाद १५ अगस्त को भारत ने औपनिवेशिक स्वराज्य प्राप्त कर लिया है। २६ जनवरी की प्रतिज्ञायें तो पूर्ण न हो सकेंगी, परन्तु हम उसके अत्यधिक समीप अवश्य पहुंच जायेंगे। स्वतन्त्र नहीं तो लगभग-स्वतन्त्र अवश्य हो जायेंगे। इस औपनिवेशिकता के जुए का उतारना और न उतारना हमारे हाथ में हो जायेगा। अर्थात् हमारे सामने वे सब समस्यायें आयेंगी और आ रही हैं जो एक स्वतन्त्र देश के सामने आती हैं। इन्हीं समस्याओं में सब से प्रमुख समस्या राष्ट्रीय ध्वज की है। प्रत्येक स्वाधीन राष्ट्र का एक प्रतीक हुआ करता है, एक आदर्श हुआ करता है, एक ध्वज (झंडा) हुआ करता है। वह ध्वज जहां जाता है उस राष्ट्र के सम्मान को बढ़ाता और उस राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है। भारत के सामने भी एक झंडे की समस्या आई और झंडा समिति स्थापित की गई। भारत ने आज तक तिरंगे झन्डे के नीचे आकर गाया था 'स्वतन्त्रता हो ध्येय हमारा' वह ध्येय समाप्त हो गया, यह झण्डा समाप्त हो गया। अब नए ध्येय या आदर्श की आवश्यकता थी, नए झण्डे की आवश्यकता थी। इसी कार्य को पूरा करने के लिये झण्डा-समिति की स्थापना हुई थी। अर्थात् झण्डा-समिति को यह कार्य सौंपा गया था कि वह भारतवर्ष का अगला आदर्श निश्चित करे, अगला झण्डा निश्चित करे।

" पुराना झंडा या पुराना आदर्श,,

आज तक का पुराना झण्डा और पुराना आदर्श था स्वतन्त्रता, अहिंसा, हिन्दू-मुस्लिम-एकता, और चर्खा अर्थात् हाथ से काम करना। स्वतन्त्रता प्राप्त हो चुकी है। पाकिस्तान बनने के बाद हिन्दू-मुसलिम-एकता का कोई अर्थ नहीं रहता। भारत में मुसलमान अब विदेशी हो गए हैं। स्वाधीन भारत चर्खे से काम नहीं कर सकता। आज कल के अकाल उसे उद्योग वाद का सन्देश दे रहे हैं। अगर भारत संसार के अन्दर अपनी स्थिति (position) को ऊंचा बनाना चाहता है तो उसे उद्योगवाद को प्रमुख स्थान देना पड़ेगा। अब अहिंसा शेष रह जाती है।

यह कहना कि कांग्रेस अहिंसा पर उसी तरह विश्वास रखती थी जिस तरह महात्मा गांधी, अपने को धोखा देना होगा। यथार्थता तो यह है कि अहिंसा कांग्रेस का आदर्श न कभी रहा है और न कभी किसी संस्था का रह सकता है। अहिंसा तो केवल एक नीति थी कमजोर का हथियार था। व्यक्ति तो अहिंसा को आदर्श बना सकते हैं और कितने ही महान् व्यक्तियों ने बनाया भी जैसे-बुद्ध, ईसा और अशोक आदि। परन्तु कोई राष्ट्र या जाति अहिंसा को आदर्श नहीं बना

सकती। और बनाएगी तो संसार के संघर्ष में पिस जायेगी नष्ट हो जायगी। क्यो कि अहिंसा असि-धारा-व्रत है। बीहड़वनों और दुर्गम पहाड़ियों की संकरी पगदण्डी है। एक व्यक्ति तो जैसे तैसे उसपर चल सकता है। परन्तु कोई जन समुदाय या खेद का खेद इतने ऊंचेस्तर पर नहीं चल सकता और चलेगा तो गिर कर नष्ट हो जायेगा।

महात्मा जी की अहिंसा

कहने का अभिप्राय यह है कि अहिंसा न कांग्रेस का पहले आदर्श था और न अब है। वह एक नीति थी, कमजोर का हथियार था। कोई माने न माने परन्तु सचाई यही है। प्रमाण यह है कि आजकल यू० पी० मे कांग्रेस हिन्दू महासभा के विरोध में वहीं भद्दी नीति अपना रही है जो अंग्रेजों ने कांग्रेस के विरुद्ध अपनाई थी। यदि दबाने स कोइ संस्था नष्ट हो जाती होती तो कांग्रेस कभी की नष्ट हो गई होती। अहिंसा महात्मा जी का आदर्श है और वह उनके रोम रोम में समाया हुआ है। महात्मा जी की अहिंसा इतनी आगे जा चुकी है कि वह पुण्य के क्षेत्र को पार करके पाप के क्षेत्र मे घुस चुकी है। एक कहावत भी है किः—"Avoid exterme and follow the golden mean." "अति सर्वत्र वर्जयेत्" हर चीजकी अत्यधिकता हानि प्रद है। महात्मा जी की अहिंसा अति क्षेत्र में प्रवेश पा चुकी है। वैशेषिक दर्शन में धर्म का लक्षण लिखते हुए कहा है "यतो ऽभ्युदय निःश्रेयससिद्धिः स धर्मः" जिससे इस लोक और परलोक में कल्याण हो वही धर्म है। यही धर्म की यथार्थ पहचान है। महात्मा जी की अहिंसा इस लोक में भी हानिप्रद सिद्ध हुई है परलोक का तो कहना ही क्या। महात्मा जी के अपार बलिदान से भी मिस्टर जिन्ना का हृदय नही बदला। इस कुटिल संसार में ऐसे मनुष्यों की कमी नहीं है जिनका हृदय पत्थर से भी अधिक कठोर है जिसका इलाज केवल घन का कठोर प्रहार है। महात्मा जी की अहिंसा हिमालय की सबसे ऊंची चोटी से भी ऊपर पहुंच चुकी, जहां पर मनुष्य जिन्दा भी नहीं रह सकता।

"नवीन झण्डा और नवीन आदर्श"

इस प्रकार हमारे पुराने आदर्श अर्थात् स्वतन्त्रता चर्खा, अहिंसा, और हिन्दू मुस्लिम एकता समाप्त होगए हैं। अब नये आदर्शों की आवश्यकता थी, नए झण्डे की जरूरत थी। नया झण्डा बन चुका है नए आदर्श छेड़े जा चुके है। नए झण्डे में वही तीन रंग हैं सफेद, केसरिया और हरा, जो शान्ति, उत्साह या वीरता और समृद्धि, इनके सूचक समझने चाहिएं—जो क्रमशः-ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य के आदर्श समझे जा सकते हैं। अब ये रंग हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रतीक नहीं हैं, क्योंकि पाकिस्तान बन चुका है, जहाँ इस्लाम अपने आदर्शों को क्रियात्मक रूप दे सकता है। मध्य में से चर्खा हटा दिया है और अशोक को आदर्श बनाकर उसका साँची के शिला लेख से चक्र को लाकर झण्डे के मध्य में लगाया है।

पहले तीन रंग तो अपने पुराने झण्डे की याद के लिये रखे हैं और मध्य में यह अशोक के चक्र को महात्मा जी से प्रभावित होकर रखा गया है। महात्मा जी अहिंसा को आदर्श मानते

हैं। मन्त्रणा-समिति ने सोचा कि सबसे बड़ा अहिंसावादी कौन हुआ है। इतिहास पर दृष्टि डालने से सम्राट् अशोक और महात्मा बुद्ध पर उंगली उठती है। परिणामतः अशोक को चुना गया। अब समिति ने सोचा कि उसके शिला-लेखों में महात्मा जी के चर्खे से सबसे अधिक क्या चीज मिलती है तब उन सबका ध्यान सांची के शिलालेख के चक्र पर पहुंचा। आदर्श वही महात्मा जी या अशोक अथवा अहिंसा ही रखा गया।

यह वही अहिंसा है जिससे प्रभावित होकर सम्राट् अशोक ने वीरभूमि भारत को नपुंसक बना दिया था। संसार के विजेता सिकन्दर को भारत की सीमाओं पर रोक देने वाला मौर्य साम्राज्य अशोक की अहिंसा से नपुंसक बनकर नष्ट हो गया। "वीरभोग्या वसुन्धरा" इस भूमि पर हिजड़ों की जरूरत नहीं है। यदि चक्र को रखना ही था तो महाभारत में श्री कृष्ण का वह चक्र सुदर्शन क्यों नहीं रखा, जिसने नीच शिशुपाल का सिर धड़ से अलग कर दिया था। जो सत्य-पक्ष-पाण्डवोंकी विजय के लिए प्रतिज्ञा तोड़ कर भीष्म पर छोड़ा गया था। इसी सुदर्शन चक्र के पीछे गीता का यह सन्देश है—

"क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते"

"क्षुद्रं हृदय दौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परंतप"

हे अर्जुन तू भीरु मत बन। यह तुम वीर को शोभा नहीं देता। हे शत्रुओं को नष्ट करने वाले अर्जुन! तू हृदय की कमजोरी को छोड़ कर उठ और "युध्यस्व विगतज्वरः" युद्ध कर। परमाणु बम के जमाने में अहिंसा की आवश्यकता नहीं है।

कितना अच्छा होता कि इस पावन अवसर पर अशोक को आदर्श न बना कर विक्रमादित्य का आदर्श बनाते। हमारा विक्रमीय संवत् उसी की पुरानी मधुर याद है। जैसे आज हमने अपनी प्यारी भारत माता को दुश्मन के पंजे से छुड़ाया है ठीक इसी तरह वीरविक्रमादित्य ने भी शक और हूण जैसी भयंकर जंगली जातियों को भारत की सीमा से परे धकेल दिया था। उसी की मधुर याद है हमारा विक्रमीय संवत्। उस समय के भारतवासी वीर थे उन्हें वीरता के चिन्ह ही पसन्द आते थे। मैं पूछता हूँ कि भारत को अहिंसा के चक्र में डाल कर उसे रसातल में पहुंचाने वाला अशोक अधिक अनुकरणीय था या वीर विक्रमादित्य अधिक अनुकरणीय था जिसने अपने आदित्य (सूर्य) के समान विक्रम (वीरता) से शत्रुओं को भगाया और अपने प्यारे देश की रक्षा की। काश कि मध्य में कोई वीर विक्रम की याद लगाई होती जिससे भारत का बच्चा २ यह प्रेरणा लेता कि हमने भी इस ध्वजा को हाथ में लेकर इस देश को दुश्मनों से बचाना है और वीरविक्रम के समान न्याय और सचाई के लिए युद्ध करना है।

(इस लेख में लेखक महोदय ने जो विचार उग्रभाषा में प्रकट किये हैं उनसे हम पूर्णतया सहमत नहीं। हम अपने विचार अहिंसादि विषयों में 'सार्वदेशिक' द्वारा प्रकट करते रहे हैं तथापि लेख विचारणीय है।

—सम्पादक सा०)

AN OPEN LETTER TO MAHATMA GANDHIJI

I have got the highest respect for you, but I was completely taken aback when I read in the papers that adressing the post prayer meeting on the 22th of July 1947 you were pleased to observe to the following effect :—

"Hindu religion prohibits cow slaughter for Hindus not for the world. India was the land not only of Hindus but also of Muslims,Sikhs, Parsis, Christians, Jains and all who claimed to be of India and were loyal to the union."

The observation is completely against the sentiments expressed by you less than a year and half ago. You perhaps remember that a cow conference was held at Wardha on 11th February 1946 under the presidentship of Dr. Rajendra prasad when the following resolution was passed with your support and approval:—

"This conference resloves that from the point of view of India's national wealth, slaughter of cows and bullocks is wholly injurious; therefore in the difficult circumstances of the present day, considering the vicious slaughter that is going on, this conference considers it necessary that the slaughter of calves, heifers and useful cows and bullocks be prohibited immediately by legislation."

Is it not surprising that only a year and half after that, a changed view is being expressed by you? I may be permitted to quote the order which had the force of law, promulgated by the late Emperor Shah Alam prohibiting the slaughter of cows through out his reign with the help of the great Maulvi Kutubudin the Emperor's religious guide and Maulvi Sabir Baksh. Here is English rendering of the order of the Emperor Shah Alam bearing the royal seal, dated 15th Zilhijja A. H. 1231 e i. . 1812 A. D.

"Be it known to all concerned. This mandate is issued at this time when justice is done to every one Among God's wonderful dumb creatures, cows or oxen are included. From them we take important ser-

vices and valuable products. The life of man and other creatures depends upon vegetables and corn; and production of corn and other agricultural produce depends entirely upon cultivation and cultivation is wholly dependent on cattle; therefore the killing of these animals (which are the gift of God) for personal gratification is not proper, when we should make use of them and take important services from them. Hence it is ordered that cows shall not be killed. If such an evil custom prevails any where it must be stopped at once. Any deviation from this order will meet with serious punishment (vide Mr. F Pincotts rendering in "An enquiry into the Truth" Aligarh 1893, Page 42,43)

Will it not be surprising if the National Government does not prohibit the killing of the cows which was done by Moghul Emperors like Babar, Humaun, Akbar and Shah Alam ? The plea that it would be an oppression on minorities if the slaughter of cows is prohibited by legislation, is untenable. Babar openly declared that Islam does not sanction the killing of cows. Not only in the time of the Moghul Emperors but even in British period slaughter of cows was prohibited in certain parts of India. For instance, the Right Hon'rable Victor the Great General Lord Lake the Commander of the British Forces passd the following order with regard to Brij Bhumi. "It is publicly proclaimed that nobody should kill the cows within the Brij Bhumi and that if any one is found guilty of the said offence he shall be severely punished and no excuse shall be attended to." By command signed I.J. Bansford, Acting Commissary of Supplies and Bazars dated 3rd July 1805.

What took my breath away was the astounding statement reported in papers that "If they could prohibit cow slaughter in India, on religious grounds, why could not the Pakistan Government prohibit idol worship in pakistan on similar grounds ?

I am at a loss to understand what similarility is there between cow killing and idol worship. The Prohibition on the slaughter of cows s not similar to prohibiting saying prayers in Mosques.

If the Pakistan Government could do any thing similar to the Prohibition of the slaughter of cows in India it was a ban on the

use and sale of pork meat. Even if such a ban was placed by law there could be no harm. Excuse me Mahatmaji your suggestion is absolutely uncalled for. It is unfortunate in as much as some may take shelter behind it. It could not have occured to any mind.

In the end, I respectfully and earnestly request you to kindly give your kind consideration to these submissions.

Yours Sincerely,
Madan Mohan Seth
Acting President.
Sarvdeshik Sabha, Delhi.

[सार्वदेशिक सभा के कार्यकर्ता प्रधान श्री मदन मोहनजी M. A. LL B. रि. चीफ जस्टिस ने महात्मा गान्धी जी के नाम जो खुला पत्र अंग्रेजी पत्रों में प्रकाशनार्थ भेजा था वह महत्वपूर्ण होने के कारण यहां प्रकाशित किया गया है। —सम्पादक सा दे.]

साहित्य-समीक्षा

विज्ञानकला—मासिक पत्रिका

सम्पादक—श्री निरंजनलाल जी 'गौतम' श्रद्धानन्द बाजार, देहली। वार्षिक मूल्य ५)

आर्यावर्त उद्योगसङ्घ देहली के संचालक श्री निरंजनलाल जी ने उद्योग व्यवसाय शिक्षा प्रधान इस मासिक पत्रिका को आर्य भाषा में प्रारम्भ करके एक प्रशंसनीय कार्य किया है अब जब हमारा देश स्वतन्त्र हो गया है उसे आर्थिक और साम्पत्तिक दृष्टि से उन्नत करने के लिये उद्योग व्यवसायादि विषयक शिक्षा की विशेष आवश्यकता है। इस प्रथम अङ्क में स्याही ग्राम उद्योग, गृह-उद्योग, तेल, दन्त मंजन, धूप-बत्ती आदि तय्यार करना, फल उद्योग संरक्षण, प्रश्नोत्तरी, विज्ञान की खोज आदि विषयक सभी उपयोगी लेख हैं। हम आशा करते हैं सब विज्ञान प्रेमी इस उत्तम पत्रिका से लाभ उठायेंगे तथा इस के संचालकों को प्रोत्साहित करेंगे।

The Greatest Betrayal—How to Redeem the Millat? by Choudhury Rahmat Ali, M.A. LL B, Bar-at-Law, London.

This is a provocative booklet of 12 pages written by an extremely fanatical Mohammedan who styles himself as Founder President of the Pakistan National Movement. The booklet deserves condemnation by all right thinking nationalists, but it is worth reading just to know what ideas an extremely fanatical well-read Mohammedan has got even in these days of 'enlightenment'. Choudhury Rahmat Ali condemns Mr Jinnah for accepting the British Plan of the 3rd June 1947 for in his opinion, by the acceptance of the Plan he (Mr. Jinnah) has betrayed, bastered and dismembered the whole Millat?" Mr Rahmat Ali's fanaticism may be brought to light by the words like the following found in the above booklet. What was and is the Millat's cause? It was and is no less than the security and *sovereignty of 100 Million Muslims in Dinia.* "What has his (Mr. Jinnah's) compromise achieved? In a word, British blight for the 50 Million in Pakistan and Bangistan and *Hindoo hell* for the 50 Million in the rest of Dinia? Can he deny that? If not, he must admit that his acceptance is not a compromise but a capitulation—a capitulation which is not only a crime against

the Millat but also a calamity for it? Condemning Mr. Jinnah down right in the above strain, Mr. Rahmat Ali urges upon the Muslims to follow into the footsteps of the heroes like Quasim, Mahmoud, Aurang Zeb and Tippu saying that the very names of these heroes spell duty and devotion to Islam and the Millat ?" Throughout this extremely provocative and useless pamphlet, Mr. Rahmat Ali calls India by the name of 'Dinia' and tries to create bad blood between Hindus and Muslims. Let us hope, no sane Muslim will take his words seriously and be goaded to do violent acts. It is a wonder why the British Government does not put a ban on the publication of such harmful pamphlets. The only effect of such pamphlets can be to create bitterness among the members of different communities.

Dharma Deva Vidya Vachaspati

मूर्तिपूजाजिज्ञासे—लेखक पं० सुधाकर जी सिद्धान्त विशारद प्रकाशक—वेदमन्दिर कृष्ण-राजेन्द्र रस्ता बसवनगुडी बंगलौर मूल्य ॥)

यह कर्णाटक भाषा (कनड़ी) में लिखी हुई लगभग १०० पृष्ठों की पुस्तक है जिसमें मूर्ति पूजा के विषय पर प्रमाण और युक्तियों से प्रश्नोत्तर रूप से विचार करते हुए उसकी निस्सारता, वेदादिसत्यशास्त्रविरुद्धता और हानिकारकता को भलीभांति प्रतिपादित किया गया है। प्रत्येक कर्णाटकवासी सज्जन को इसे अवश्य पढ़ना चाहिये।

स्वामी दयानन्दर सन्देश—(कनड़ी) लेखक—श्री चन्द्रशेखर जी बम्बई प्रकाशक—श्री लक्ष्मणदेव जी विद्यार्थी मंगलौर मूल्य ।≈)

श्री राम भक्तिय रहस्य (कनड़ी) लेखक—श्री चन्द्रशेखर जी बम्बई, प्रकाशक—श्री लक्ष्मणदेव जी विद्यार्थी मंगलौर मूल्य ≈)॥

ये दोनों कर्णाटक भाषा में लिखी छोटी पुस्तके हैं जिनमे ऋषिदयानन्द के सार्वभौम सन्देश पर बड़ा उत्तम प्रकाश डाला गया है। प्रत्येक कर्णाटक भाषाभिज्ञ को ये पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहियें। ध० दे०

स्वतन्त्रता दिवस

(१५ अगस्त को निर्मित)

१ स्वतन्त्रता का पुण्य दिवस है,
हर्ष मनावें सारे ।
वृक्ष वनस्पति पुष्प पत्र पशु,
खग नर - नारी तारे ॥

२ कौन जगत् में पराधीनता,
में जो रहना चाहे ।
पंजर हो तो पंजर है,
कांचन का वह होवे चाहे ॥

३ त्याग तपस्या नेताओं की,
है सुन्दर फल लाई ।
मना रहे जो शुभ दिन उनकी,
है वह पुण्य कमाई ॥

४ आओ सबको गले लगाएं,
भेद - भाव बिसराएं ।
कटी बेड़ियां हैं माता की,
उसको आज रिझाएं ॥

५ उत्तम से उत्तम शासन भी,
जो विदेशी - जन का है ।
मातपिता सम हित से पूरित,
जिसमें न्याय दया है ॥

६ वह भी कभी पूर्ण सुखदायक,
नहीं भाइ हो सकता ।
है स्वराज्य का स्थान न कोई,
भी सुराज्य ले सकता ॥

७ अमर शब्द ये जिन उच्चारे,
स्वतन्त्रता के प्यारे ।
दयानन्द ऋषि धन्य धन्य वे,
नेता पूज्य हमारे ॥

८ उनके चरणों के अनुगामी,
श्रद्धानन्द महात्मा ।
पर उपकारी दलितोद्धारी,
जग में अमर हुतात्मा ॥

६ शिक्षा समाज के क्षेत्रों में,
वे स्वराज्य को लाए ।
मातृभूमि की सेवा के हित,
बहुविध कष्ट उठाए ॥

१० है स्वराज्य यह जन्मसिद्ध,
अधिकार हमारा भाई ।
जेल यातनाएं सब सह कर,
जनता जोत जगाई ॥

११ लोकमान्य उन तिलक महात्मा,
को न भूल हम सकते ।
उनके चरणों में भी सबके,
सादर मस्तक झुकते ॥

१२ आज कौन पंजाब केसरी,
को नहिं याद करेगा ।
स्वतन्त्रता के परम पुजारी,
को है कौन बिसरेगा ॥

१३ कर्णधार है इस नौका के,
पूज्य महात्मा गान्धी ।
सत्य अहिंसा के बल पर जिन,
बेरा चलाई आंधी ॥

१४ भरी भावना स्वतन्त्रता की,
निर्भयता को लाकर ।
असहयोग का शस्त्र चलाना,
हमें सिखाया आकर ॥

१५ उनकी त्याग तपस्या ने है,
आगे देश बढ़ाया ।
स्वतन्त्रता के शुभ आङ्गण मे,
हम को लाय बिठाया ॥

१६ 'दिल्ली चलो' लगाकर नारा,
नई जान जिन फूंकी ।
प्रबल बनाई अपनी सेना,
स्वतन्त्रता की भूखी ॥

१७ जान हथेली में लेकर जो,
देश विदेशों विचरे ।
सुख अपने की नहिं चिंता की,
दशा देश की सुधरे ॥

१८ वीर शिरोमणि उन नेता जी,
के चरणों में सादर ।
श्रद्धांजलि अर्पण हम करते,
अपना सीस नवा कर ॥

१९ लाल क़िले पर राष्ट्र पताका,
फहरेगी कल सुन्दर ।
कौन न उनको याद करेगा,
जो नेता निर्भयवर ? ॥

२० तरस रही हैं सबकी आंखें,
उनके दर्शन करने ।
लालायित हैं श्रवण सभी के,
उनके भाषण सुनने ॥

२१ क्या ही पुण्य दिवस वह होगा,
यदि वे फिर आ जाएं ।
राष्ट्राधिपति स्वतन्त्रभारत,
के वे जब बन जाएं ॥

२२ खण्ड खण्ड माता का होना,
है यह शूल भयंकर ।
नेता जी आकर नायक बन,
इसे हटाए लग कर ॥

२३ हो अखण्ड फिर भारत प्यारा,
सब देशों स न्यारा ।
इस स्वतन्त्र भारत का अतिशय,
करे मान जग सारा ॥

२४ विद्या शिल्प कला कौशल म,
होवे सबस बढ़ कर ।
हो समृद्ध यह देश हमारा,
शुभ गुण गण का आकर ॥

२५ यही कामना भगवान् सबकी,
करो पूर्ण जगदीश्वर ।
नेताओं को अद्भुत बल दो,
रहें धम मे तत्पर ॥

२६ यही प्रार्थना करते सारे,
मिल कर देश दुलारे ।
दो उनको सन्मति उदारता,
हुए जो हम से न्यारे ॥

२७ अत्याचार करे नहि जिससे,
वे मतान्धता कारण ।
न्याय बुद्धि से समता से वे,
करें राष्ट्र का धारण ॥

२८ रहें प्रेम से सारे मिल कर,
न हो द्वेष का नाम ।
ऐसी कृपा करो जगदीश्वर,
तुम को लाख प्रणाम ॥

ब० दे०

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली

दान सूची

पंजाब पीड़ित सहायता फन्ड

१०) आर्य्य समाज आकलाव (खेड़ा)
१११) आर्य्य प्रादेशिक सभा कच्छ, काठियावाड़, जामनगर।
२२६) आर्य्य प्रादेशिक सभा कच्छ, काठियावाड़ जामनगर
९१) आर्य्य समाज सावर (अजमेर)
१००) आर्य्य समाज ग्वालियर सिटी
६०) श्री लाला मुकुन्दलाल ग्राम व पोस्ट मीरपुर (बुलन्द शहर) द्वारा संगृहीत
३०) श्री भोलाराम शर्मा आ० स० विसाऊ (जयपुर स्टेट)
९९९।≡) आर्य्य प्रतिनिधि सभा ईस्ट अफ्रीका आर्य्य समाज दारासलेम द्वारा
४१) आर्य्य समाज बिलासपुर (मध्यप्रदेश)
५) श्री उमाशंकर जी वकील बदायूँ
५०००) आर्य्य समाज नैरोबी पूर्वी अफ्रीका
५००) आर्य्य प्रतिनिधि सभा बिहार
१०) श्री पुरुषोत्तम दास कपूर बिजनौर
२०००) आर्य्य समाज दारासलेम ईस्ट अफ्रीका
७६) श्री० प्रियम्वदा देवी जी मन्त्रिणी महिला प्रचार विभाग आ० स० हरदोई।
२) श्री भोलानाथ जी रिवानी इलाहाबाद
५००) आ० स० साबुन बाजार लुधियाना
७००) श्री अमरनाथ जी प्रधान आ० स० उज्जैन
१०) ,, डा० भक्तराम गुप्ता टिरकी काशमीर स्टेट
८०) आ० स० कड़हौल (राजपूताना)
५०) ,, ,, रिशावा (हुगली)
५०) मुकन्दलाल गुप्त मीरपुर बुलन्दशहर द्वारा संगृहीत
१८) आ० स० बैरकपुर (बंगाल)
२५) श्री० गंगाप्रसाद जी
११ आ० स० पीपल पोस्ट पिपला नवाशहर (छिन्दवाड़ा)
२०) श्री० रामबहादुर गुरह वकील सरस्वती भवन एटा
२१॥) आ० स० हिरियड़का (दक्षिण भारत)
१००) गुरुकुल चित्तौड़ के ब्रह्मचारियों द्वारा
८६) आ० स० केमोर (मध्य प्रदेश)
१५५) कमालगंज (फर्रुखाबाद) की हिन्दू जनता से द्वारा श्री राजाराम जी गुप्त

११०८४॥≡)
१७४०७=)॥ गत योग

१८४९२–)॥

स्थापना दिवस का दान

५) आर्य्य महिला समाज सुजानगढ़ (राजस्थान)
५) ,, समाज आकलाव
३०) ,, ,, हरदोई (संयुक्त प्रान्त)
२०) ,, ,, खुर्जा (सं० प्रान्त)

४३॥।=) आर्य्य समाज नयाबाजार लश्कर ग्वालियर
१॥।=) आर्य्य समाज पुड़िया
२५) " " देहरादून
२५) " " मेरठ शहर
१४) " " बैरकपुर (बंगाल)

१६६॥)	गतयोग
६३६॥=)	
११०६।=)	

दान दाताओं को धन्यवाद।

जिन समाजों का भाग अभी तक अप्राप्त है उनको अविलम्ब भेज देना चाहिए। आशा है शीघ्र ही यह राशि ३-४ हजार तक पहुँच जायगी। प्रत्येक आर्य्य समाज को शिरोमणि सभा के इस विषयक आदेश का तत्परता से पालन करना चाहिये।

धर्मदेव विद्या वाचस्पति
स० मन्त्री सार्वदेशिक आर्य्य प्रतिनिधि सभा
देहली

स्वतन्त्रताभिनदन

[लेखिका- श्री वीरबालाजो स्नातका कन्या गुरुकुल सासनी]

कट गये बन्धन हमारे
आज अजंर प्राण पुलकित हंस पड़े क्रन्दन हमारे ॥
आज हिमगिरि की शिलायें मुदित सी जय बोलती हैं ॥
आज नभ की तारिकायें द्वार अपने खोलती हैं।
एक नूतन हास लेकर खिल रहे उपवन हमारे ॥
कुछ नवल सन्देश लेकर, वायु ने फेरी लगाई।
आज आजादी हमारे पास सहसा दौड़ आई।
होगये शव आज जीवित हैं अमर जीवन हमारे ॥
किन युगो के बाद है स्वाधीन यह अभिनव सबेरा।
मुदित शिशुओं ने प्रभाती धूप को स्वाधीन हेरा।
आज हम स्वाधीन हैं स्वाधीन हैं कन कन हमारे ॥
आज मां की चिर सुसंचित साध पूरी होगई है।
आज वह परतन्त्रता अभिशप्त हो कर सो गई है।
जग उठे हैं आज वे बलिदानमय बन्दन हमारे ॥
मिल गया प्रतिकार हमको आज जलियांबागवाला।
उन शहीदों की चिता की शान्त है यह आज ज्वाला।
उन शवों की राख में उड़ रहे गौरव कन हमारे ॥
कट गये बन्धन हमारे ॥

सम्पादकीय

काशी के विद्वानों की घोषणा

२१ जुलाई के 'हिन्दुस्तान' आदि पत्रों में काशी की विद्वन्मण्डली की ओर से ५० विद्वानों के हस्ताक्षरों से निम्न घोषणा प्रकाशित हुई है–

(१) यह विद्वन्मण्डल घोषणा करता है कि हिन्दूधर्म के विभेद का आधार साम्प्रदायिक असहिष्णुता नहीं अपितु मनोवैज्ञानिक दृष्टि-कोण से प्रवृत्तियां रुचिभेद है। प्रत्येक हिन्दू चाहे वह किसी भी मतमतान्तर को क्यों न मानता हो वह अपने को हिन्दू ही कहे और अपना सम्बन्ध प्राचीन हिन्दू-धर्म से माने।

(२) अपने-धर्म की प्राचीन शास्त्रीय घोषणाओं के आधार पर इस मण्डली का यह निश्चित मत है कि हिन्दू-धर्म स्वभावतः सार्वभौम है। अब वह समय आगया है कि हिन्दू धर्म के हरेक सम्प्रदाय को अपनी मर्यादा कायम रखते हुए हिन्दू-धर्म का सन्देश देश देशान्तर में पहुंचाना चाहिये।

[३] प्रथम प्रस्ताव के अनुसार यह मण्डली देश के नेताओं तथा सम्प्रदायों के अगुआओं का ध्यान इस ओर आकर्षित करती है कि वे लोग ऐसी सार्वजनिक प्रार्थना का निर्माण करें जो हिन्दूमात्र अपने पुण्य पर्वों पर गा सकें।

[४] हिन्दू-धर्म के प्रचार तथा रक्षार्थ यह मण्डली देशके सभी सम्प्रदायों से साग्रह अनुरोध करती है कि उपर्युक्त प्रस्तावों को सभी सार्वजनिक सभाओं में स्वीकृत करा कर उनका प्रचार करें।

हम विद्वन्मण्डली की इस घोषणा का जो हृदय की विशालता और उदारता की सूचक है अभिनन्दन करते हैं। वैदिकधर्म वस्तुतः सार्वभौम धर्म है। वह किसी विशेष जाति, वर्ग या देश के लिये नहीं है अपितु उसकी शिक्षाएं समस्त मानवों के लिए कल्याणप्रद हैं। जिस प्रकार की सार्वजनिक प्रार्थना के निर्माण की ओर काशी की विद्वन्मण्डली ने देश के नेताओं और सम्प्रदायों के अगुआओं का ध्यान आकर्षित किया है व वेदों के

"विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रं तन्न आसुव"

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम"

"भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥" इत्यादि मन्त्रों के आधार पर ही बनाई जा सकती है अन्यथा नहीं। इन मन्त्रों में दी हुई प्रार्थना कि

'हे! सर्वोत्पादक परमेश्वर हमारे सब दुर्गुणों और दुःखों को दूर करो। जो उत्तम गुण और सुखदायक पदार्थ हैं उन्हें हमें प्राप्त कराओ। आप उत्तम ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए हमें सदा धर्म मार्ग पर चलाएं। आप हमारे सब कर्मों को जानने वाले हैं इस लिये हम से कुटिलता तथा पाप को दूर भगाएं। हम आप की स्तुति इसी भाव से करते हैं। हम सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्व दुःखनाशक सुख स्वरूप, सर्वप्रकाशक परमेश्वर के श्रेष्ठ तेज का ध्यान करते और उसे अपने में धारण करते हैं ताकि वह परमेश्वर हमारी बुद्धियों और कर्मों को प्रेरित करे तथा पवित्र बनाये' सार्वभौम और सार्वजनिक है जिसे बिना किसी भेदभाव के सब कर सकते हैं यदि मूलमन्त्रों के साथ उनका देशीय भाषाओं में सुन्दर अनुवाद दे दिया जाए। ब्राह्म, शैव, वैष्णव, शाक्त आदि पौराणिक तथा साम्प्रदायिक आधार पर सार्वभौम तथा सार्वजनिक प्रार्थनादि का निर्माण असम्भव है। हमें आश्चर्य है कि इस घोषणा में विद्वन्मण्डली ने क्यों बार २ 'हिन्दू' शब्द का प्रयोग किया है जब कि वे विद्वान जानते ही होंगे कि 'हिन्दू' शब्द वेद, शास्त्र, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, भगवद् गीतादि किसी भी प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ में नहीं पाया जाता। मेरुतन्त्रादि यदि किसी वाममार्ग के प्रतिपादक नवीन तन्त्र में यह शब्द पाया जाता है तो उसकी कोई प्रामाणिकता नहीं। प्राचीन 'आर्य' शब्द को ही पुनः प्रचलित करना चाहिये और विद्वन्मण्डली को उसी का प्रयोग करना चाहिए। साम्प्रदायिक भेदभाव के आधार पर पूर्ण संगठन बनाना असम्भव है अतः जहाँ विद्वन्मण्डली ने पर्याप्त उदारभावना का परिचय इस घोषणा द्वारा दिया है हम चाहते हैं कि वह और भी आगे बढ़े तथा पौराणिक सम्प्रदायों और जन्मसिद्ध जातिभेद, अस्पृश्यतादि वेदविरुद्ध, समाज-विघातक प्रथाओं पर कुठाराघात कर आर्य धर्म को सचमुच सार्वभौम बनाने में सहायक बने तभी शुद्धिसंगठन आदि के आन्दोलन सबल और सफल बन सकेंगे अन्यथा नहीं।

अज्ञान या खुशामद ?—

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के "गुरु जी" [श्रीमाधवराव जी) ने भरतपुर महाराज की अध्यक्षता मे ३० जून को भरतपुर में सङ्घ के स्वयं सेवकों के शिविर मे जो भाषण दिया उसका वृत्तान्त हिन्दुस्तान टाइम्स के ५-७-४७ के अङ्क मे इन शब्दो मे प्रकाशित हुआ था:—

"The democratic form of Government is foreign to Hindu political conception. It is only the monarchical form that suits for the people of this ancient land of the Rishis" declared Shri Guruji, head of the Rashtriya Swayam Sevak Sangh addressing a mass Rally of Sangh Volunteers at Bharatpur on june 30. The Maharaja of Bharatpur presided. The Maharaja in his brief presidential address assured the Guruji that he would do his best to assist the Sangh.

['Hindustan times' 5-7-47]

अर्थात् संघ के श्री गुरुजी ने घोषणा की कि प्रजा तन्त्र शासन हिन्दू-राष्ट्र नैतिक विचार धारा के लिए सर्वथा नवीन वा उस के विरुद्ध है। ऋषियों की इस प्राचीन भूमि के निवासियों के लिए केवल राजतन्त्र शासन ही अनुकूल है।

महाराज भरतपुरने सङ्घ गुरुजी को विश्वास दिलाया कि वे संघ की सहायता अच्छी तरह से करेंगे। इत्यादि

यदि यह वृत्तान्त सत्य है तो सचमुच आश्चर्य जनक है। श्री "गुरुजी" संस्कृत के अच्छे विद्वान् माने जाते हैं। क्या उन्हें इस बात का ज्ञान नहीं कि वेदों के

सर्वास्त्वा राजन् प्रदिशो ह्वयन्तूपसद्यो नमस्यो भवेह। (अ० ३।२।१)

त्वां विशो वृणतां राज्याय त्वामिमाः प्रदिशः पञ्चदेवीः।' (अ० ३।२।२)

आ त्वा हार्षमन्तरेधि ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः। विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु मा त्वद् राष्ट्रमधिभ्रशत्॥ (ऋ० १०।१७३।१)

"विशिराजा प्रतिष्ठितः" [यजु० २०।५]

इमं देवा असपत्नं सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय॥ (यजु० ९।४०]

इत्यादि सैकड़ों मन्त्रों मे प्रजा द्वारा राजा के चुने जाने का अत्यन्त स्पष्ट विधान है। यह भी इन मन्त्रों में स्पष्टतया बताया गया है कि यदि प्रजा द्वारा चुने जाने पर भी कोई राजा ऐसे कार्य करे जो प्रजाहित के विरुद्ध हों तो उसे राज्यच्युत करने का भी प्रजा का अधिकार है क्योंकि 'विशिराजा प्रतिष्ठितः' राजा का आधार प्रजा पर है। क्या यह बिल्कुल स्पष्ट शब्दों में प्रजातन्त्र शासन का समर्थन नहीं है? वा० रामायण में भी लिखा है कि जब महाराज दशरथ वृद्ध होगये तो उन्होंने किसको युवराज बनाया जाए इस बात का निश्चय करने के लिये समस्त देशों की राजाओं की परिषत् बुलाई और उनसे सम्मति मांगी कि रामचन्द्र को ही आप युवराज बनाना चाहते हैं अथवा किसी अन्य को?

नाना नगर वास्तव्यान्, पृथग् जानपदानपि।
समानिनाय मेदिन्यां, प्रधानान् पृथिवीपतिः॥
यदिदं मेऽनुरूपार्थं, मया साधु सुमन्त्रितम्।
भवन्तो मेऽनुमन्यन्तां, कथं वा करवाण्यहम्॥
रामायण २-२-१५

इच्छामोहि महाबाहुं, रघुवीरं महाबलम्॥

इत्यादि श्लोकों से यह बात स्पष्ट है कि समस्त देशवासी राजाओं की परिषत् की अनुमति से ही श्रीराम को युवराज बनाया गया था। ऐसे ही सैकड़ों निर्देश महाभारत तथा उसके पश्चात् के संस्कृत साहित्य में प्रजातन्त्र शासन के समर्थन में उपलब्ध होते हैं। बौद्ध काल में भी प्रजातन्त्र राज्य के अनेक उदाहरण ऐतिहासिक ग्रंथों में पाये जाते हैं। यदि श्री 'गुरु जी' ने इस विषय का विशेष अनुशीलन नहीं किया जैसे कि उनके वक्तव्य की अशुद्धता से स्पष्ट है] तो उन्हें महाराष्ट्र के सुप्रसिद्ध विद्वान श्री नारायण भवानी राव पावगी कृत "Self Government in India-Vedic and post-vedic" नामक अत्युत्तम पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिये जो आर्य भूषण-

प्रेस पूना से सन् १६१८ में प्रकाशित हुई थी। 'श्री गुरुजी' जैसे प्रतिष्ठित उत्तरदायित्व पूर्ण महानुभावों को ऐसे अशुद्ध वक्तव्य न देने चाहिये। क्योंकि यह भाषण महाराज भरतपुर के सभापतित्व में दिया गया था अतः कई पाठकों ने यहां तक सन्देह किया कि सम्भवतः उन्हें प्रसन्न करने तथा संघार्थ सहायता लेने के लिए भी ऐसा भाषण किया गया हो। हम आशा करते हैं कि इस सन्देह में कोई सत्य न होगा तथापि ऐसे अशुद्ध वक्तव्य का प्रतिवाद करना हमें आवश्यक प्रतीत हुआ।

महात्मा गांधी जी के कुछ भ्रम जनक वक्तव्यः—

महात्मा गांधी जी के वैयक्तिक पवित्र जीवन और देश सेवार्थ किये गए उनके त्याग तथा सेवादि के लिए हमारे मन में बड़ा आदर का भाव है। भारत को स्वतन्त्र कराने में उनका बहुत ही बड़ा हाथ रहा है इस बात से कोई भी निष्पक्ष-पात व्यक्ति इन्कार नहीं कर सकता चाहे उसका महात्मा जी के राजनैतिक सिद्धान्तों और कार्यों से कितना भी मत भेद हो। किन्तु हमें यह देख कर अत्यन्त दुःख होता है कि महात्माजी ने पिछले दिनों जो वक्तव्य राष्ट्रभाषा राष्ट्र-लिपि और गोवध निषेध के सम्बन्ध में दिये हैं वे अत्यन्त भ्रम जनक हैं तथा उनसे जनता में असन्तोष की वृद्धि हो रही है। माननीय श्री पुरुषोत्तमदास जी जैसे अनेक सुप्रसिद्ध कांग्रेसी नेता भी इन वक्तव्यों से नितान्त असन्तुष्ट हैं। हम इन विषयों पर महात्माजी के वक्तव्यों की संक्षिप्त आलोचना करना अपना कर्तव्य समझते हैं।

प्रथम विषय स्वतन्त्र भारत की भाषा और लिपि का है। इस 'सार्वदेशिक' के सम्पादकीय स्तम्भों में अनेक बार इस विषय पर प्रकाश डाल चुके हैं कि संस्कृत निष्ठ हिन्दी ही हमारे देश की राष्ट्रभाषा हो सकती है क्योंकि गुजराती, मराठी, बंगाली, पंजाबी, मारवाड़ी, उड़िया, कन्नड़ी, तिलगु, मलयालम, तामिल आदि सभी प्रान्तीय भाषाओं में संस्कृत शब्द बहुत अधिक पाये जाते हैं और इसलिए संस्कृतनिष्ठ आर्यभाषा या हिन्दी को समझने वालों की संख्या बहुत अधिक है। भारतीय विधानप रिषत् की कांग्रेस पार्टी ने भी गत १७जुलाई को बहुत बड़े बहुमत से जो राष्ट्रलिपि के विषय में १८ के विरुद्ध ६४ और राष्ट्रभाषा के विषय ३३ के विरुद्ध ६४ का था यह निश्चय किया कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा और देवनागरी लिपि को राष्ट्रलिपि के रूप में घोषित किया जाए। यह आश्चर्य और खेद की बात है कि प्रजातन्त्र शासन के नियमों का सर्वथा उल्लङ्घन करते हुए पूज्य महात्मा गान्धी जी ने कांग्रेस पार्टी के इस बहुत बड़े बहुमत से स्वीकृत प्रस्ताव को विधान परिषत् के गत अधिवेशन में नहीं आने दिया था। हिन्दी या हिन्दुस्तानी शीर्षक लेख में जो ३ अगस्तके 'हरिजन सेवक' में प्रकाशित हुआ,महात्माजी ने लिखा कि राष्ट्रभाषा का सवाल करीब दो माह के लिये मुल्तवी हो गया है। जब विधान सभा फिर मिलेगी तब इस चीज का फैसला होगा। इस से लोगों को ठण्डे दिल और साफ दिमाग से सोचने का मौका मिलेगा।

● अगस्त के 'हरिजन' [अंग्रेजी] में महात्मा

जी-ने लिखा कि "The consideration of the question has been postponed by two or three months. Let us hope sanity will prevail"

महात्माजी ने अपने अद्भुत व्यक्तित्व के प्रभाव से इस अत्यावश्यक प्रश्न को २,३ महीनों के लिये लटका कर और खटाई में डाल कर हमारी सम्मति में कोई प्रशंसनीय कार्य नहीं किया और प्रजातन्त्रवाद के नियमों का स्पष्ट उल्लंघन किया है जैसे कि उन्हें २२ और २६ जुलाई के विस्तृत पत्रों में मैंने लिखा था। हमारा भारतीय विधानपरिषद् के समस्त सदस्यों से सानुरोध निवेदन है कि वे महात्मा गान्धी जी के व्यक्तित्व की पर्वाह न करते हुए अपने इस विषयक मत को स्पष्ट प्रकट करें और इस अत्यावश्यक विषय को लटका कर खटाई में न पड़ने दें। महात्मा गान्धीजी ने कोई प्रबल युक्ति इस पक्ष के समर्थन में नहीं दी कि क्यों हिन्दी को राष्ट्रभाषा और देवनागरी लिपि को राष्ट्र लिपि न घोषित किया जाए और क्यों एक कृत्रिम और कल्पित 'हिन्दुस्तानी, को राष्ट्र भाषा घोषित किया जाए। ३ अगस्त के 'हरिजन सेवक' में श्रीमती पेरीन बहन कैप्टेन के एक पत्र को उद्धृत करते हुए [जिस में आवेशवश ऐसे अशिष्ट शब्दों का प्रयोग है कि "कांग्रेस के कई पुराने लोग भी आज इस तरह अपना दिमाग़ खो बैठे हैं कि जिस चीज़ को उन्होंने मेहनत से बनाया, जिसे प्यार से अपनाया, उसी को तोड़ने पर उतारू हो गये हैं।"] महात्माजी ने लिखा है कि मैं पेरीनबहन की इस बात से सहमत हूँ कि न तो देवनागरी लिपि में लिखी हुई और संस्कृत शब्दों से भरी हुई हिन्दी और न फारसी लिपि में लिखी हुई फ़ारसी लफ्ज़ों से भरी हुई उर्दू ही हिन्दुस्तान की दो या ज्यादा जातियों को एक दूसरी से बांधनेवाली जंजीर बन सकती है। यह काम तो दोनों के मेल से बनी हुई हिन्दुस्तानी ही कर सकती है जो दोनों से ज्यादह स्वाभाविक है और देवनागरी या फ़ारसी लिपि में लिखी जाती है।...जिस तरह मैं उर्दू भाषा और लिपि सीख रहा हूँ उसी तरह मेरा मुसलमान भाई भी मेरी भाषा और लिपि सीखने-समझने की कोशिश करता है या नहीं, इसकी मुझे कोई परवाह नहीं है।...करीब-करीब सब मौलवी हिन्दी या हिन्दुस्तानी नहीं जानते। उस में नुक्सान उनका है, इत्यादि। १० अगस्त के 'हरिजनसेवक' में 'गरवीला गुजरात भी' इस शीर्षक लेख में महात्माजी ने यह स्वीकार किया है कि

"मैं यह कबूल करता हूँ कि हिन्दुस्तानी पर मेरा ज़ोर मुसलमान भाइयों के खातिर है।

यहां मैं गुजरात के मुसलमानों की बात नहीं करता। वे तो उर्दू जानते ही नहीं। वे बहुत मुश्किल से उर्दू सीखते हैं। उनकी मातृ भाषा गुजराती है।' इत्यादि। इस प्रकार स्पष्ट है कि महात्माजी केवल मुसलमान भाइयों को प्रसन्न करने के लिये हिन्दुस्तानी पर इतना जोर दे रहे हैं। उन्होंने यदि कोई युक्ति अपने पक्ष में दी है तो वह उनके अपने शब्दों में यह है कि "मुझे तो दिल्ली में रोज हिन्दू और मुसलमान मिलते रहते हैं। इनमें से ज्यादातर हिन्दुओं की भाषा में संस्कृत के शब्द कम से कम रहते हैं,

फारसी के हमेशा ज्यादा। नागरी लिपि तो वे जानते ही नहीं। उनके खत या तो उर्दू में या टूटी फूटी अंग्रेजी में होते हैं। अंग्रेजी मे लिखने के लिये मै उन्हे डाटता हूँ तो वे उर्दू लिपि मे लिखते हैं। अगर राष्ट्रभाषा हिन्दी हो और लिपि नागरी, तो इन सबका क्या हाल होगा ?" (हरिजन सेवक १०-८-४७) हम निष्पक्षपात पाठक महानुभावों से पूछते हैं कि क्या यह भी कोई युक्ति है ? यदि मुसलमानों के प्रभाव में आकर कुछ पजाब या सीमा प्रान्त के हिन्दू आर्यत्वसे इतने गिर चुके है कि वे हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि को नहीं जानते और फारसी भरी भाषा का प्रयोग करते हैं तो इस से यह कैसे सिद्ध हो गया कि हिन्दी राष्ट्र भाषा और देवनागरी राष्ट्र लिपी नही बन सकती ? प्रश्न कुछ थोडे से पजाब और सीमाप्रान्त के हिन्दुओं का नहीं बगाल, गुजरात, उडीसा महाराष्ट्र,आदि प्रान्तोंके निवासियों की बहु सख्या का है जो नि·सन्देह सस्कृतनिष्ठ हिन्दी औरदेव नागरी या उसके सदृश लिपि को ही समझ सकती है जो हिन्दु हिन्दी और देवनागरी नहीं जानते उन्हे इन दोनो का अभ्यास करने के लिए प्रेरित करना चाहिए न कि इन कुछ लोगों के लिये एक कृत्रिम हिन्दुस्तानी' भाषा को घड़ने और सभी को 'देवनागरी' और फारसी दोनों लिपियो को सीखने का अव्यवहार्य निर्देश देने का यत्न करना उचित है। महात्मा जी ने जैसे कि गुजरात के मुसलमानों के लिये लिखा है कि वे उर्दु जानते ही नहीं और बहुत मुश्किल से उर्दु सीखते हैं" वही बात पजाब और युक्त प्रान्त को छोड़ कर अन्य प्रान्त वासी मुसलमानों के लिये भी प्रायः चरितार्थ होती है। ऐसी अवस्था मे महात्मा जी का हिंदुस्तानी' और दोनों लिपियों के सीखने सिखाने विषयक आग्रह हमें सर्वथा अनुचित प्रतीत होता है। हम आशा करते हैं कि पूज्य महात्माजी इस अनुचित आग्रह का परित्याग करके जो उनके अपने ही ऊपर उद्धृत वचनानुसारन मुसलमा भाइयों के खातिर है' पूर्ववत् सस्कृतनिष्ठ हिन्दी के प्रचार मे तत्पर रहेगे। यदि उन के वैयक्तिक प्रभाव के दबाव मे आकर भारतीय विधान परिषद ने अविलम्ब हिन्दी के राष्ट्र भाषा और देवनागरी लिपि के राष्ट्र लिपि होने की घोषणा न की तो वतमान नेताओ और शासकों के प्रति जनता का रोष भयङ्कर रूप धारण कर लेगा ऐसा हमे स्पष्ट प्रतीत होता है।

कानून से गोवध निषेध का प्रश्नः—

दूसरा प्रश्न जिसके सम्बन्ध मे महात्मा गाधी जी के वक्तव्य हमे नितान्त असन्तोष जनक प्रतीत होते है वह कानून द्वारा गोवध निषेध का है। भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ यह स्वाभाविक ही था कि लोग गोवध निषेध विषयक कानून की माग भारतीय विधान परिषत् से करें। वस्तुतः आर्यावर्त के कोने २ से इस आशय के तार और पत्र व्यक्तियों तथा सावजनिक सस्थाओं की ओर से भारतीय विधान परिषत् के अध्यक्ष देशरत्न डा० राजेन्द्रप्रसाद जी के पास भेजे गये किन्तु महात्मा गाधी जी ने इस माग के सम्बन्ध में अपने विचार २५ जुलाई की प्रार्थना सभा मे [नई देहली] निम्न आशय के शब्दों में

रक्खे जिन्हें पढ़ कर हमें आश्चर्य और दुःख हुआ ।

"आज राजेन्द्र बाबू ने मुझ को बताया कि उनके यहां करीब ५० हजार पोस्ट कार्ड, २५-३० हजार पत्र और कई हजार तार आ गये हैं । इन में गो हत्या बाकानूनन बन्द करने के लिये कहा गया है । आखिर इतने खत और तार क्यों आते हैं ? इन का कोई असर तो हुआ ही नहीं है । हिन्दुस्तान में गोहत्या रोकने का कोई कानून बन ही नहीं सकता । हिन्दुओं को गाय का बध करने की मनाई है इस में मुझे कोई शक नहीं हैं । मैंने गो सेवा का व्रत बहुत पहले से ले रक्खा है मगर जो मेरा धर्म है वही हिन्दुस्तान में रहने वाले सब लोगों का भी हो यह कैसे हो सकता है ? इस का मतलब तो जो लोग हिन्दू नहीं हैं उनके साथ जबर्दस्ती करना होगा । हम चीख-चीख कर कहते आये हैं कि जबर्दस्ती से कोई धर्म नहीं चलाना चाहिये । जो आदमी अपने आप गोकुशी नहीं रोकना चाहता उसके साथ मैं कैसे जबर्दस्ती करूं कि वह ऐसा करें ? अगर हम धार्मिक आधार पर यहां गोहत्या रोक देते हैं और पाकिस्तान में इसका उलटा होता है तो क्या स्थिति रहेगी ? मान लीजिये वे यह कहें कि तुम मूर्ति पूजा नहीं कर सकते क्यों कि यह शरियत के अनुसार वर्जित है । ....इसलिये मैं तो यह कहूँगा कि तार और पत्र भेजने का सिलसिला बन्द होना चाहिये । इतना पैसा इन पर बेकार फैंक देना मुनासिब नहीं है । मैं तो आपकी मार्फत सारे हिन्दुस्तान को यह सुनाना चाहता हूँ कि वे सब तार और पत्र भेजना बन्द कर दें ।" ("हिन्दुस्तान" २६ जुलाई) १० अगस्त के अंग्रेजी 'हरिजन' और हरिजन सेवक में भी महात्मा जी के भाषण का लगभग ऊपर के आशय का किन्तु संक्षिप्त विवरण है । उसमें इतनी विशेष बात है कि हिन्दू धर्म में गोवध करने की जो मनाई की गई है वह हिन्दुओं के लिए है सारी दुनियाँ के लिये नहीं । ...अगर आप मजहब के आधार पर हिन्दुस्तान में गो कुशी बन्द कराते हैं तो फिर पाकिस्तान की सरकार इसी आधार पर मूर्ति पूजा क्यों नही बन्द करा सकती ।"

(हरिजन सेवक १०-८-४७)

महात्मा जी के उपर्युक्त वक्तव्य से हम नितान्त असहमत हैं । प्रजा जिस बात को देशहित के लिए अत्यावश्यक समझती है क्या अपने मान्य नेताओं से पत्र, तार आदि द्वारा उस विषयक निवेदन करने का भी उसे अधिकार नहीं है ? क्या देश के मान्य नेताओं का जिन के हाथों में स्वतन्त्र भारत के शासन की बागडोर आई है यह कर्तव्य नहीं कि वे प्रजा की न्याय सम्मत मांग को पूरा करने का पूर्ण प्रयत्न करें ? महात्मा जी का यह कहना कि प्रजा द्वारा प्रेषित हजारों तारों और पत्रों का कोई प्रभाव तो हुआ ही नहीं सचमुच आश्चर्य जनक है । क्या प्रजा की माँग की ऐसी उपेक्षा करना देश के मान्य नेताओं के लिये उचित है ? हिन्दुस्तान में गो-हत्या रोकने का कोई कानून बन ही नहीं सकता । ऐसा महात्मा जी का कहना कैसे उचित हो

सकता है ? क्या विधान परिषत् की सारी शक्ति महात्माजीने अपने हाथमे ले रक्खी है जो वे ऐसी घोषणा कर सकें ? यह युक्तिदेना कि ऐसा करने से हिन्दुओं के अतिरिक्त दूसरे लोगों पर जबर्दस्ती होगी सर्वथा अशुद्ध है। इस के आधार पर तो किसी भी विषय में कोई कानून नहीं बनना चाहिये क्यों कि बाल्यविवाह, अस्पृश्यता, मद्य-पान निषेध, चोरी निषेध, व्यभिचार निषेधादि विषयक किसी भी प्रकार के कानून बनाने से उन लोगों पर एक तरह से जबर्दस्ती होती है जो इन को मानने वा करने वाले हैं। जिस से समाज और देश को हानि पहुचती है उसे कानून का आश्रय लेकर भी अवश्य बन्द करना चाहिये। स्वयं महात्मा गाधीजी की अनुमति और समर्थन में गत वर्ष ११ फरवरी को वर्धा मे जो गोरक्षा सम्मेलन हुआ था उसमे एक प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृति किया गया था कि 'इस सम्मेलन का निश्चित विचार है कि भारत के राष्ट्रीय धन के दृष्टिकोण से गौओं, बैलों और बछड़ों का बध अत्यन्त हानिकारक है इसलिये यह सम्मेलन आवश्यक समझता है कि गौओं बछड़ों और बैलों का बध कानून द्वारा तुरन्त बन्द कर दिया जाए क्या यह आश्चर्यकी बात नहीं कि जो पूज्य महात्मा जी गत वर्ष तक गोवध को कानून द्वारा बन्द कराने के प्रबल समर्थक थे वही अब कहें कि इस विषयमे कानून नहीं बनाना चाहिए। गोवध निषेधऔर मूर्ति पूजा निषेध की कोई तुलना नहीं हो सकती। गोवध निषेध की मांग धार्मिक दृष्टि से नहीं किन्तु आर्थिक और सम्पत्ति से भी की जा रही है क्योंकि गोवध के कारण गोवंश का नाश होने से दूध घी आदि उपयोगी पौष्टिक वस्तुओं की कमी से हिन्दू मुसलमान ईसाई सिक्ख सभी को हानि उठानी पड़ती है। बाबर, हुमायूँ, अकबर, शाह आलम आदि मुगल बादशाहों ने इसी लिए अपने राज्य में इसे बन्द कर दिया था जैसे कि इसी अङ्क में प्रकाशित लेखों में सप्रमाण बताया जा चुका है। गोवध निषेध के समान कोई चीज पाकिस्तान सरकार कर सकती है तो वह सुअर के मांस के सेवन और बिक्री पर प्रतिबन्ध है। इससे कोई हानि न होगी यदि उसने ऐसा प्रतिबन्ध लगाना उचित समझा। पूजा, प्रार्थना, धर्म विषयक पूर्ण स्वतन्त्रता का तो पाकिस्तान के गवर्नर जनरल मियां जिन्ना साहेब ने अपने विधान परिषत् के अध्यक्ष भाषणमें विश्वास दिलाया ही है क्यों महात्मा जो ऐसा विचित्र और असङ्गत सा सुझाव उन के सामने रखते हैं यह आश्चर्य की बात है। विचार शील सभी मुसलमान गोवध के विरोधी रहे हैं।

स्व० हकीम अजमल खान ने कहा था कि न तो कुरान और न अरब की प्रथा ही गौ की कुरबानी का समर्थन करती है।"

मियां छोटानी ने कहा था कि गाय की कुर्बानी मुसलमानी धर्म का नियम नहीं।

मौलाना हयात साहब खान खाना हाजी समद साहब ने लिखा

"मुसलमान गाय न मारे। यह हदीस के खिलाफ काम है। शरीफ मक्काने गोवध बन्दकर दिया(खैरव बरकत मौ० फारूकी लिखित) ज्ञात हुआ है कि अफगानिस्तान में भी मुल्लाओं की अनुमति लेकर गोवध कानून बन्द कर दिया गया है। मौलाना अब्दुलकलाम आजाद, मौ० मुहम्मद

अली, मौ० शौकत अली, सैय्यद महमूद आदि सब विचार शील मुसलमानों ने गोवध का विरोध किया है। ऐसी अवस्थामे महात्माजी का कानून से गोवध निषेध का विरोध करना सर्वथा अनुचित है। गोवध निषेध विषयक प्रबल आन्दोलन अवश्य जारी रखना चाहिए।

शिक्षासचिव मौ० आजादका उर्दू पक्षपातः—

कई समाचार पत्रों द्वारा यह जान कर हमें अत्यन्त आश्चर्य और खेद हुआ कि भारत सरकार के शिक्षा सचिव मौलाना अब्दुलकलाम आजाद ने गतवर्ष सुप्रसिद्ध उर्दू प्रचारिणी संस्था अंजुमन तरक्की उर्दू को १।। लाख रु० की सहायता भारत सरकार से दिलाई जब कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के यह निवेदन करने पर भी कि उन्हें हिन्दी प्रचारार्थ कुछ तो सहायता दिलाई जाए एक भी पाई की सहायता न दिलाई हा, यह आश्वासन अवश्य दिया गया कि भविष्य में इसका ध्यान रक्खा जाएगा। यदि यह समाचार सत्य है तो वस्तुतः अत्यन्त आक्षेपास्पद है और इस से शिक्षा सचिव मौ० आजाद की उर्दू पक्षपातिनी नीति का परिचय मिलता है। हम भारत सरकार के प्रधान मन्त्री श्री प० जवाहरलालजी नेहरू, गृह सचिव सरदार वल्लभभाई जी पटेल और स्वयं मौलाना आजाद का ध्यान हिन्दी भाषा के प्रति इस अन्याय पूर्ण व्यवहार और उर्दू के पक्षपात की ओर आकर्षित करते हुए आशा करते हैं कि इस प्रकार का अन्याय शिक्षा विभाग में फिर न किया जायगा। ऐसी बातों से राष्ट्रीय सरकार की बड़ी अपकीर्ति होती है यह लिखने की आवश्यकता नहीं।

श्रावणी पर्व का सन्देश—

श्रावण शुक्ल पूर्णिमा [३१ अगस्त]को श्रावणी उपाकर्म उत्सव सब आर्यसमाजों और आर्य कुमार सभाओं को उत्साह पूर्वक मनाना चाहिये और उसे सत्याग्रह स्मारक दिवस के रूप में मनाते हुए सार्वदेशिक सभा की वेद प्रचार निधयर्थ अधिक से अधिक धनराशि संग्रह करके सार्वदेशिक सभा कार्यालय बलिदान भवन मे भिजवानी चाहिये। इसविषयक विज्ञप्ति सब समाजों को प्रतिष्ठित सभा की ओर से भेजी गई है। हम इस संक्षिप्तटिप्पणी द्वारा आर्य जनता का ध्यान श्रावणी के संदेश की ओर आकर्षित करना चाहते हैं जो नियमित स्वाध्याय के व्रत का है। उपाकर्म के विशेष यज्ञ में चारों वेदों के प्रथम और अन्तिम मन्त्रो का पाठ किया जाता है। नवीन यज्ञोपवीत धारण किये जाते हैं। यज्ञोपवीत मुख्यतया ज्ञान, कर्म, उपासना के समन्वय और इनविषयों का प्रतिपादन करने वाले वेदों के स्वाध्याय का स्मारक चिन्ह है जैसे कि गत अङ्क मे हम बता चुके हैं। शरीर को स्वस्थ रखने के लिये जैसे भौतिक भोजन की आवश्यकता होती हैं वैसे ही मन की शक्ति बढ़ाने के लिये वेदादि सत्य शास्त्रों के नियमित स्वाध्याय की आवश्यकता है। खेद है कि इस स्वाध्याय की ओर (जिसे शास्त्रों ने ब्रह्मयज्ञ का नाम भी दिया है) आर्यों का ध्यान अभी तक बहुत कम है। स्वाध्याय शील आर्यों की संख्या किसी भी आर्यसमाजमें अंगुलियों पर गिनी जा सकती है। यदि सच्ची आस्तिकता को बढ़ाना तथा आर्यत्व को जीवन में लाना है तो यह शोचनीय अवस्था अवश्य दूर होनी चाहिये। प्रत्येक आर्य नर नारी और कुमार कुमारी को स्वाध्याय का

दृढ़ नियम बना कर उसे पालन करना चाहिये। भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् द्वारा आयोजित धार्मिक परीक्षाओं में अधिक से अधिक संख्या में बैठ कर आर्य कुमार और कुमारियां, युवक युवतियां तथा अन्यनरनारियां स्वाध्याय से लाभ उठा सकती हैं। स्वाध्यायशीलता की प्रवृत्ति बढ़ाने तथा इस विषयक उन्नति करने का यही सरल उपाय हमें प्रतीत होता है। जो नर नारियां वृद्धावस्थादि के कारण इन परीक्षाओं में सम्मिलित न हो सकें उन्हें भी नित्य स्वाध्याय का नियम अवश्य बनाना ही चाहिए। "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है,, ये महर्षि दयानन्द के अमर शब्द स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य हैं। यही श्रावणी उपाकर्म का मुख्य सन्देश है जिसकी ओर प्रत्येक आर्य नर नारी को अवश्य ही ध्यान देना चाहिये। ध० दे०

देशरत्न डा० राजेन्द्र प्रसाद जी के बंगले पर वैदिक यज्ञ

यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि स्वाधीनता प्राप्ति के उपलक्ष्य में भगवान् को धन्यवाद देने और उसका आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए १४ अगस्त की रात को ८ से १० तक भारतीय विधान परिषत् के मान्य अध्यक्ष देशरत्न डा० राजेन्द्र प्रसाद जी के बंगले पर आर्य विद्वानों ने विशेष वैदिक यज्ञ कराया जिसमें प्रार्थना मंत्र. स्वस्तिवाचन, शान्ति प्रकरण के मंत्रों के अतिरिक्त यजुर्वेद के राज्य विषयक ६ म १० म अध्याय के मंत्रों का पाठ करके उनसे आहुति दी गई। मेरे अतिरिक्त पं० चन्द्र भानु जी सिद्धान्त भूषण पुरोहित आर्यसमाज हनुमान रोड, श्री० पं० वेद व्रत जी शास्त्री, श्री० चन्द्रकान्त जी साहित्य रत्न श्री० पं० गोपाल जी आदि ने इस वैदिक यज्ञ के कराने में विशेष रूप से भाग लिया। माननीय श्री० डा० राजेन्द्र प्रसाद जी, श्री० सरदार वल्लभ भाई जी पटेल, श्री० राजकुमारी अमृतकौर जी श्री० गाडगिल जी आदि ने पूर्णाहुति के समय श्रद्धा पूर्वक आहुतियां डालीं। यज्ञके अन्त में सर्वेभवन्तु सुखिनः इत्यादि और "आब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतां" इस वैदिक राष्ट्रीय प्रार्थना मंत्र का उच्चारण किया गया तथा उसकी व्याख्या नेताओं की उपस्थिति में की गई। यह यज्ञ शुद्ध वैदिक रीति से और आर्य विद्वानों द्वारा करवाया गया था जिसके अनेक चित्र भी पत्र प्रतिनिधियों ने लिए थे। इसके विषय में यह भ्रम जनक सूचना जो कुछ समाचार पत्रों में प्रकाशित हुई कि सनातन धर्म की पद्धति से यह पूजा कराई गई सर्वथा अशुद्ध है। वस्तुतः सनातन धर्म नित्य वैदिक धर्म ही है पर उसका आज कल प्रयोग भ्रम से पौराणिक मत के लिए किया जाता है अतः उससे भ्रम फैलने की संभावना है उसके निराकरणार्थ इस संक्षिप्त विवरण को जनता की सूचनार्थ प्रकाशित कराना अनेक सज्जनों के अनुरोध पर आवश्यक समझा गया है। सार्वदेशिक सभा की ओर से मैंने माननीय श्री० पं० जवाहर लाल जी नेहरू प्रधान मन्त्री, सरदार वल्लभ भाई जी पटेल गृह सचिव, राज कुमारी अमृतकौर जी, डा० अम्बेदकर जी तथा अन्य नवीन मन्त्रि मण्डल के सदस्यों को वैदिक राष्ट्र गान, (अथर्व वेदीय पृथिवी सूक्त का पद्यानुवाद) वैदिक स्वराज्य श्री० पं० चन्द्रमणि जी विद्यालंकार द्वारा संकलित तथा अपनी हमारी राष्ट्रभाषा की एक १ प्रति भेंट की। इस यज्ञ के आयोजन में स्व० चिरंजीव भारद्वाज जी (सत्यार्थ प्रकाश के सुप्रसिद्ध अंग्रेजी अनुवादक) के सुपुत्र डा० सत्य काम जी भारद्वाज तथा उनकी धर्मपत्नी और अन्य देवियों का विशेष भाग था। उपस्थित देवियों की संख्या १५।२० हजार होगी।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
स० मन्त्री सार्वदेशिक-सभा, देहली।

श्री प० रघुनाथप्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा
"चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार, देहली मे मुद्रित

सार्वदेशिकसभा पुस्तक भण्डार की उत्तमोत्तम पुस्तकें

नाम पुस्तक — लेखक व प्रकाशक — मूल्य

(१) वैदिक सिद्धान्त स० (सार्व० सभा) १)
(२) दयानन्द सिद्धान्त भास्कर ,, १।)
(३) आर्य सिद्धान्त विमर्श ,, ३॥)
(४) सार्वदेशिक सभा का इतिहास ,, अ० २)
(५) आर्य डायरेक्टरी ,, अ० १।)
(६) आर्य विवाह ऐक्ट की व्याख्या ,, ।)
(७) आर्य पर्व पद्धति प० भवानीप्रसाद जी १।)
(८) आर्यवीर दल शिक्षण शिविर 'ओमप्रकाशजी')
(९) आर्य वीरदल बौद्धिक शिक्षण (प०इन्द्रजी) ।=)
(१०) यम पितृ परिचय प० प्रियरत्न आर्य २)
(११) अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र ,, २)
(१२) वैदिक सूर्य विज्ञान ,, =)
(१३) वेद मे असित शब्द ,, -।
(१४) ऋग्वेद में देवृकामा ,, -)
(१५) वेद में दो बड़ी वैज्ञानिक शक्तिया ,, १)
(१६) विमान शास्त्र ,, ।=)॥
(१७) नया ससार श्री प० रघुनाथ प्रसाद पाठक ≥)
(१८) मातृत्व की ओर ,, ,, अ० १।)
(१९) कथा माला ,, ॥।)
(२०) आर्य जीवन गृहस्थ धर्म ,, ॥=)
(२१) आर्य शब्द का महत्व ,, -)
(२२) आत्म कथा श्री नारायण स्वामी जी २।)
(२३) श्री नारायण स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ ५)
(२४) योग रहस्य श्री महात्मा नारायण स्वामी जी १)
(२५) विद्यार्थी जीवन रहस्य ,, ॥)
(२६) प्राणायाम विधि , ≥)
(२७) उपनिषद् ईश ≥) केन ॥) कठ ॥)
प्रश्न ।=) मुण्डक ।≥) माण्डूक्य ≥), ऐतरेय ।)
तैत्तिरीय ॥।)
(२८) श्री नारायण स्वामी जी की सक्षिप्त जीवनी -)
(२९) नारायण सुधा सजिल्द १॥)
(३०) शहीदी पट्टिका ।=)
(३१) आर्यसमाज मन्दिर चित्र ।)
(३२) इजहारे हकीकत श्री ला० ज्ञानचन्द्रजी आर्य ॥।=)
(३३) बहिनों की बातें(प० सिद्धगोपाल जी कविरत्न) १)
(३४) दयानन्द जन्म स्थान निर्णय
(प० विजयशङ्कर नशङ्कर जी) ॥।)
(३५) भूमिका प्रकाश (श्री द्विजेन्द्रनाथ जी) १॥)
(३६) वेद और गोमेध श्री बा० श्यामसुन्दरलाल जी ≥)
(३७) सत्यार्थ प्रकाश आन्दोलन का इतिहास ।=) नेट-
(३८) सत्यार्थ प्रकाश गान(प० सत्यभूषणजी योगी)।=)
(३९) हमारे घर (श्री निरञ्जनलाल जी गौतम) ॥=)
(४० भारतवर्ष मे जाति भेद ,, ।)
(४१) हमारी राष्ट्र भाषा (प० धर्मदेव जी) ≥)
(४२) सत्यार्थ प्रकाश की सार्वभौमता -)
(४३) सत्यार्थप्रकाश और उसकी रक्षा -)
(४४) आर्य समाज के साप्ताहिक सत्सग का कार्य
क्रम -)
(४५) सरल सन्ध्योपासना ।)
(४६) एशिया का वेनिस (स्व० स्वामी सदानन्द जी)
॥।)
(४७) आर्यसमाज के नियमोपनियम -॥
(४८) वैदिक वीर गर्जना (श्रीरामनाथ वेदालङ्कार) ॥=)
४९) धर्मार्य सभा की घोषणानुसार दैनिक सन्ध्या
हवन की विधि -)
(५०) वीरमाता का उपदेश
(प्रो० विश्वनाथ विद्यालङ्कार) ।)
(५१ महाराणा सागा श्री हरविलास शारदा १)
(५२) सिन्धी सत्यार्थ प्रकाश ५)
(५३) वैदिक राष्ट्रीयता (स्वामी ब्रह्म मुनि) ।)
५४) वैदिक ज्योतिष शास्त्र १॥)



नवम्बर १९४७ ई० सम्पादक—पं० धर्मदेवजी सिद्धान्तालङ्कार विद्यावाचस्पति वार्षिक मूल्य स्वदेश ५)
कार्तिक सं० २००४ वि. [illegible] विदेश १० शि०

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख पत्र *

वर्ष २२ } नवम्बर १९४७ ई०] कार्तिक २००४ दयानन्दाब्द १२२ { अङ्क ९

* वैदिक प्रार्थना

वैदिक प्रार्थना

ओं ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः ।

ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥

शब्दार्थ—(ये) जो (यज्ञियानां देवानाम्) पूजनीय सत्यनिष्ठ विद्वानों में से भी (यज्ञियाः) अत्यन्त पूज्य (मनोः यजत्राः) मनुष्यों मे संगति करण-एकता उत्पन्न करने वाले अथवा ज्ञान के प्रदाता (अमृताः) अपने आत्मा की अमरता को अनुभव करने वाले (ऋतज्ञाः) वेद के यथार्थ स्वरूप को जानने वाले हैं (ते) वे ज्ञानी (नः) हमें (अद्य) आज—सदा (उरुगायम्) जिस की सब प्रशंसा करें ऐसा उत्तम ज्ञान (रासन्ताम्) प्रदान करें । इस

प्रकार के हे विद्वानो ! (यूयम्) तुम सब (नः) हमारी (स्वस्तिभिः) कल्याण कारक उपदेशों से (सदा) हमेशा (पात) रक्षा करो ।

विनय-हे परमेश्वर ! आप की कृपा से हमे ऐसे पूजनीय महात्माओं का उपदेश सदा प्राप्त होता रहे जो वेदों के ज्ञाता, मनुष्यों में प्रेम भाव उत्पन्न करने वाले आत्मदर्शी विद्वान् हों। महर्षिदयानन्द जी, जैसे पूज्य महानुभाव धर्मोपदेश द्वारा धर्मज्ञ और जगत का कल्याण करने वाले हों। ऐसे पूज्य महानुभावों के उपदेशों पर आचरण करने और उन के चरणचिन्हों पर चलने की शक्ति आप सब को प्रदान करें ॥

वैदिक स्वाध्याय मञ्जरी

(१) ओ३म् अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते संभ्रातरो वावृधुः सौभगाय।
युवा पिता स्वपा रुद्र एषां सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः॥
(ऋ. ५।६०।५)

शब्दार्थः—

(एते) ये सब मनुष्य (भ्रातरः) भाई हैं (अज्येष्ठासः) इन में जन्म के कारण बड़ा कोई नहीं (अकनिष्ठासः) छोटा भी कोई नहीं। इस भाव को रखने से ही वे (सौभगाय वावृधुः) सौभाग्य प्राप्त करके बढ़ते हैं। (एषाम्) इन सब का (स्वपाः) उत्तम कार्यों वाला (युवा) सदा युवा-शक्ति शाली तथा परमाणुओं को मिलाने व अलग करने वाला यु-मिश्रणामिश्रणयोः (रुद्रः) दुष्टों को रुलाने वाला परमेश्वर (पिता) पिता है (पृश्निः सुदुघा) भूमि उत्तम दुग्ध देने वाली गाय के समान माता है जो (मरुद्भ्यः) मनुष्यों के लिये (सुदिना) उत्तम दिन वा सौभाग्य देने वाली है—जिस में रह कर मनुष्य अपने को सौभाग्यशाली बना सकते हैं।

पद्यानुवादः—

ये मनुष्य सब भाई भाई
छोटा बड़ा न है कोई।
जो समाज यह भाव रखेगा
उन्नत नित होगा सोई।
कर्ता हर्ता वह ही ईश्वर
पिता एक है सब का।
माता भूमि सदा सुखदात्री
भाव भद्र हो सब का॥

(२) ओ३म् अकामो धीरो अमृतः
स्वयम्भू रसेन तृप्तो न कुतश्चनोनः।
तमेव विद्वान् न बिभाय मृत्यो-
रात्मानं धीरमजरं युवानम्॥

शब्दार्थः—

जो परमात्मा (अकामः) सब लौकिक कामना रहित (धीरः) अद्वितीय बुद्धिशाली सर्वज्ञ (अमृतः) अमर (स्वयम्भू) स्वयंसिद्ध (रसेन तृप्तः) आनन्द से परिपूर्ण (कुतश्च न ऊनः) किसी भी तरह की कमी वाला नही है (तम् एव) उसी परमात्मा को और (धीरम्) धैर्य युक्त (अजरम्) वृद्धावस्थादि रहित (युवानम्) सदा युवा अथवा कार्यों से अपने को संयुक्त करने वाले (आत्मानम्) अपने आत्मा को (विद्वान्) जानने वाला मनुष्य (न बिभाय) कभी किसी से नही डरता।

पद्यानुवादः—

परमात्मा जो काम रहित है
धीर अमर आनन्द निधान।
तृप्त, कमी जिस में नहि कोई
सर्वाधार गुणों की खान।
उस को जान निजात्मा को भी
धीर जरादिक रहित युवा।
मान मृत्यु के भय से ज्ञानी
मुक्त सर्वथा शान्त हुवा॥

(३) ओम् उद्यानं ते पुरुष नावयानं
जीवातुं ते दक्षतातिं कृणोमि।
आ हि रोहेममृतं सुखं रथ—
मथ जिर्विर्विदथमावदासि ॥
अथर्व ८।१।६

शब्दार्थः—

(पुरुष) हे मनुष्य (ते उद्यानम्) तेरी सदा उन्नत ही उन्नति हो (न अवयानम्) कभी अवनति न हो (ते जीवातुम्) तेरे दीर्घ जीवन के लिये मैं (दक्षतातिं कृणोमि) बल की वृद्धि करता हूँ। (इमम्) इस (अमृत सुखं रथम्) अमृत के समान सुखदायक शरीर रूप रथ पर आरोह (आ हि) तू निश्चय से सवार हो जा—इस को स्वाधीन कर (अथ) (जिर्विः) वृद्ध हो कर भी (विदथम् आवदासि) ज्ञान का उपदेश सदा करता रह।

पद्यानुवादः—

उन्नत ही उन्नत होता जा
हे मनुष्य तू कभी न गिर।
तेरे जीवन को मैं बल से
युक्त करूं तू निर्भय फिर।
देह रूप इस सुख कर रथ पर
तू सवार नित होता जा।
बूढ़ा हो कर भी प्रचार तू
शुभ विद्या का करता जा॥

(४) ओ३म् अपाम सोमममृता अभूम
अगन्म ज्योतिरविदाम देवान्।
किं नूनमस्मान् कृणवदरातिः
किमु धूर्तिरमृत मर्त्यस्य॥
ऋ० ८।४८।३

शब्दार्थः—

हमने (सोमम् अपाम) ज्ञानरूप अमृत का पान कर लिया है (अमृता अभूम) इस लिये अब हम अमर हो गये हैं। (ज्योतिः अगन्म) हम ज्योति को प्राप्त हो गये हैं और (देवान् अविदाम) दिव्य गुणों तथा भावों को हमने पा लिया है। (अरातिः) दान रहित शत्रु गण अब (नूनम्) निश्चय से (अस्मान्) हमें (किं कृणवत्) क्या कर सकता है? (अमृत) हे अमर ईश्वर (मर्त्यस्य धूर्तिः किम् उ) मरणशील मनुष्य द्वारा की गई हिंसा हमारा क्या बिगाड़ सकती है?

पद्यानुवादः—

ज्ञानामृत का पान किया है
अमर हो गये अब हैं हम।
दिव्य गुणों को तथा ज्योति को
पाया दूर भगा कर तम।
अमर ईश! रिपुगण मेरा क्या
कुछ बिगाड़ अब सकते हैं?
मर्त्यजनों की हिंसाएं कर
बाल न बांका सकती हैं॥

(५) ओ३म् त्रातारो देवा अधिवोचता नो
मानो निद्रा ईशत मोत जल्पिः।
वयं सोमस्य विश्वह प्रियासः
सुवीरासो विदथमावदेम॥
ऋ० ८।४८।१४

शब्दार्थः—

(त्रातारः देवाः) हे रक्षा करने वाले सत्यनिष्ठ विद्वानो! (नः अधिवोचत) हमें तुम उपदेश करो जिस से (नः) हमें निद्रा न ईशत) निद्रा न दबा दे (मा उत जल्पिः) बहुत बोलने का राजस गुण भी हम में न हो (वयम्) हम (विश्वह) सदा

(सोमस्य प्रियासः) शान्त स्वरूप परमेश्वर के प्रिय (सुवीरासः) उत्तम वीर हो कर (विदथम् आवदेम) ज्ञान का उपदेश करें।

पद्यानुवादः—

रक्षक देवो बोध हमें दो
निद्रा के होवें न अधीन।
रखो गुणी हो व्यर्थ न बोलें
रात दिवस होवें स्वाधीन।
शान्त रूप ईश्वर के हम नित
सारे प्यारे पुत्र बनें।
हो कर उत्तम वीर वेद के
निर्भय बोधक मित्र बनें॥

"महर्षि दयानन्द जी की वेद भाष्य-शैली पर कतिपय आधुनिक विद्वानों की सम्मतियां"

प्रो० रूडल्फ होर्नले लिखते हैं:—"He is an independent student of the Vedas and free from the trammels of traditional interpretations. The standard commentary of the famous Sayan is held of little account by him" ५६

दयानन्द वेदो को स्वतन्त्रता से पढ़ते हैं और परम्परागत (पौराणिक कालीन) पद्धति की परवाह नहीं करते। प्रसिद्ध सायण का भाष्य वे निष्प्रयोजन समझते हैं।

ट्रान्सवाल (प्रिटोरिया) के प्रसिद्ध विद्वान् टामिसफिट्ज़ ने अपने व्याख्यान मे कहा था:—"मुझे इस बात का पक्का विश्वास है कि एक दिन ऐसा आवेगा जब कि घर २ में वेदों का गुणगान और घर २ मे आत्म-तत्वज्ञान की चर्चायें होंगी।"

आगे चल कर यही विद्वान् पुनः अपने भाषण मे कहता है कि "कुछ पश्चिमी विद्वानों ने वेदों के सम्बन्ध मे कहा है। मुझे इन विद्वानो के कथन पर बिल्कुल विश्वास नहीं है। क्योंकि इन पण्डितो को संस्कृत भाष्य और वेदों का ज्ञान नहीं के बराबर है, इस बात पर हम केवल दयानन्द के भाष्य को प्रामाणिक समझते है।" ५७

आचार्य पं सत्यव्रत जी सामश्रमी के प्रिय-शिष्य आचार्य प० नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ लिखते हैं 'स्वामी दयानन्द जी ने वेद भाष्य भी किये हैं और अपने वैदिक भाष्यों मे पूर्ण प्रयत्न किया है कि वेदो मे से इतिहास की गन्ध भी न आने पावे। उनके भाष्यो को देखकर स्पष्ट प्रतीत होता है कि उनको आमरण यही चिन्ता लगी रही कि 'वेद सत्य विद्याओं का पुस्तक है और इसी बात की सिद्धि के लिये उनका परम पुरुषार्थ रहा। ५८

श्री आचार्य प० बलवीर शास्त्री, साहित्योपाध्याय, 'आयुर्वेद- शिरोमणि, आयुर्वेदाचार्य लिखते हैं:—"ऋषि दयानन्द तपस्वी भी थे, तथा पूर्ण तार्किक भी। इसीलिये ऋषि दयानन्द की व्याख्या मे अन्यो की अपेक्षा

---

५६. "क्रिश्चियन इन्टेलीजेन्सर सन् १८७० के मार्च मास का अङ्क।

५७. मासिक पत्रिका "पाखण्ड खण्डिनी पताका" काशी, वर्ष ४ काशी १५ जून १९३८ ई०, अङ्क ११ पृष्ठ ५, कालम १.

५८. मासिक पत्रिका "गङ्गा" का "वेदाङ्क" प्रवाह २, जनवरी १९३२ ई०, तरङ्ग १, पृष्ठ २२०. कौलम २ "वेद और आर्य समाज" शीर्षक लेख।

यही अन्तर है कि वह यौगिक है, रूढ़ एवं योगरूढ़ नहीं।।५९

काङ्गड़ी गुरुकुल महाविद्यालय के पू० वेदाध्यापक, वेदाचार्य पं० शिवशङ्कर शर्मा जी काव्यतीर्थ जी ने लिखा था, "सायण महीधर, कात्यायन, आपस्तम्ब, शौनक, आदिकोंने वेदों के अर्थ कर जो दुर्मार्जनीय, अकथनीय लाञ्छन वेदों पर लगा दिये हैं उनका निकालना दुःसाध्य सा हो गया है। यदि ये सब वेदों पर टीका टिप्पणी न कर जाते तो अच्छा था। परन्तु अब इन पर लोगों का इतना विश्वास हो गया है और भारतवासी ब्राह्मण इतने आलसी हो गये हैं कि ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण पूर्वक वेदों के सत्यार्थ का अन्वेषण करने में असमर्थ हैं। ऐसी घोर अन्धकार की अवस्था मे पिता दयानन्द ने ही वेदों की पुनः स्थापना की और वेदों के सत्यार्थ जानने के लिये पूर्ण विधि उपाय और संकेत बतला गये जिनकी सहायता से आप भारतवासी वेदों के सत्यार्थ निकाल सकते हैं यदि आप इस कार्य्य में तत्पर हो जायं।" ६०

पं० रामबिहारीलाल शास्त्री वेदतीर्थ एम.ए.,एल.एल.बी. लिखते हैं—

"स्वामी दयानन्द की वेदभाष्य शैली जो नैरुक्तिक है सर्वोत्तम है क्योंकि वह वैदिक व्याकरण और वैदिक कोष निघण्टु के अनुकूल अर्थ देती है। यह वेदभाष्य सब शैलियों से प्राचीन आदि ऋषियों की शैली है। इसके अनुसार किया गया भाष्य युक्ति वा तर्क से भी ठीक सिद्ध होता है।" ६१

चतुर्वेदभाष्यकार पं० जयदेव शर्मा 'विद्यालङ्कार' 'मीमांसातीर्थ' का विचार है—

"ऋषि दयानन्द ने जिस प्रकार के वेद-भाष्य प्रस्तुत किये उनकी अपनी अद्भुत विशेषता है। ऋषि दयानन्द अपने वेदभाष्यों से जहां जनता के बीच वैदिक संस्कृति का साम्राज्य स्थापित करना चाहते थे वहां साथ ही शिक्षित और अशिक्षित जनता के बीच में अपने से पूर्व के भाष्यकारों के भाष्यों से फैले अनेक भ्रमों को दूर भी करना चाहते थे। यही कारण है कि उनकी भाष्य शैली अन्य भाष्यकारों स कहीं भिन्न है। यदि ऋषि दयानन्द केवल भाष्य रचने के उद्देश्य से भाष्य रचते तो कदाचित् वे सायण, महीधर, उव्वट के समान कोरे टीकाकारों की शैली स अन्वय योजना के साथ २ पर्याय पद रखकर भावार्थ लिखते जाते, कई पक्ष दिखा देते, निश्चय स ऐसा करने से उनका भाष्य संस्कृतज्ञ पण्डित जन-समाज में बहुत भारी आदर पाता। यदि वे दार्शनिक शैली से वा अध्यात्म दृष्टि से व्याख्या करते तो वे एक अपूर्व आदर पाते। परन्तु ऋषि दयानन्द के समक्ष ऐसा विचार-क्षुद्र

५९. साप्ताहिक पत्र "दिवाकर" का "वेदाङ्क" आगरा भाग १, ता० २६-१०-१९३५ ई०, अङ्क २८, २९ पृष्ठ ८६ कालम २ "यास्कीय वेदार्थ शैली और महर्षि दयानन्द" शीर्षक लेख।

६०. "वैदिक-इतिहासार्थ-निर्णय भूमिका पृष्ठ ३४.

६१. "वैदिक सिद्धान्त" पृष्ठ ५८.

लवलेश मात्र भी न था। आपने अपने भाष्य में सर्व प्रथम पद पाठ को दर्शा कर अनन्तर पदार्थ-भाष्य किया है अर्थात संहिता क्रम से पढ़े वेद मन्त्र के पदों के पृथक् २ अर्थ संस्कृत में पर्याय दे देकर बतलाया है, फिर अन्वय योजना बतलाई है, इसके पश्चात् अन्वयानुसारी भावार्थ किया गया है और इसके अनन्तर भावार्थ दिया गया है"। ६२

काशी हिन्दू विश्व विद्यालय के प्रोफेसर पं० बलदेव जी उपाध्याय, एम० ए० साहित्याचार्य अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'आचार्य सायण और माधव' ६३ मे लिखते हैं:—"अब दूसरी पद्धति की रूप रेखा का निरीक्षण तथा परीक्षण कीजिये। इस पद्धति के उद्भावक भारत के प्रसिद्ध धर्म सुधारक स्वामी दयानन्द सरस्वती जी थे। इसके अनुकूल आपने ऋग्वेद के अनेक मण्डलों के ऊपर अपना नवीन भाष्य भी बनाया था। ऋग्वेद के लगभग दो तिहाई भाग पर आपका भाष्य है और यजुर्वेद की पूरी संहिता के ऊपर। स्वामी जी के निधन के अनन्तर समाज में अन्य वैदिक विद्वानों की कमी नहीं हुई और स्वामी जी का उद्दिष्ट कार्य विशेष अंश में परिपूर्ण सा दिखाई पड़ता है। अजमेर के वैदिक यन्त्रालय ने चारों संहिताओं को तथा शतपथ ब्राह्मण को सुलभ मूल्य में छाप कर, प्रकाशित कर बड़ा ही प्रशंसनीय कार्य किया है। आजकल अजमेर से ही अथर्ववेद का भाष्य हिन्दी में बड़े ठाटबाट से प्रकाशित हुआ है। इतना ही नहीं, आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान् आर्य मुनि जी ने ऋग्वेद के अवशिष्ट भाग पर अपनी नवीन टीका लिख कर स्वामी दयानन्द के कार्य की एक प्रकार से पूर्ति कर दी है। औंध के महाराष्ट्रीय आर्य समाजी पण्डित सातवलेकर ने विभिन्न संहिताओं का विशुद्ध संस्करण प्रकाशित कर हमारा बड़ा उपकार किया है। उन्होंने वेद के ऊपर, विशेषतः अथर्व पर स्वमतानुकूल व्याख्या लिखी है जिसका आदर और प्रचार आर्यसमाज की प्रेमी जनता में विशेष रूप से है। गुरुकुल से सम्बद्ध अन्य विद्वानों ने भी वेद के विभिन्न भागों पर विशेष परिश्रम के साथ ग्रन्थ लिखे हैं। इस प्रकार आर्यसमाज ने वेद प्रचार में बहुत कुछ योग दान किया है इसके लिये वे हमारी श्रद्धा के भाजन हैं।

स्वामी जी ने अपनेभाष्य में अनेक विशिष्ट बातों का उल्लेख किया है। इस भाष्य में वेदों के अनादि होने का सिद्धान्त प्रतिपादित है। आपकी दृष्टि में वेद में लौकिक इतिहास का सर्वथा अभाव है। वेदों के सब शब्द यौगिक तथा योगरूढ़ है रूढ़ नहीं। यह सिद्धान्त स्वामी जी की अर्थ निरूपण पद्धति की आधार शिला है। जितने इन्द्र, अग्नि, वरुण, आदि देवतावाचक शब्द हैं वे यौगिक होने से एक ही परमात्मा के वाचक हैं। स्वामी जी इस प्रकार आध्यात्मिक शैली के मानने वाले हैं। अंशतः यह सिद्धान्त ठीक है। निरुक्तकार ने स्पष्ट शब्दों में कहा है

६२ "नारायण अभिनन्दन ग्रन्थ पृष्ठ ३१६

६३ "आचार्य सायण और माधव "पृष्ट १११ से १२३ तक (संवत २००३ वि में हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण)

कि जितने देवता हैं वे सब एक ही महान् देवता परमेश्वर की विशिष्ट शक्ति के प्रतीक मात्र हैं। "महाभाग्यात देवातायां एक आत्मा बहुधा स्तूयते। एकस्यात्मनोऽन्ये देवाः प्रत्यङ्गानि भवन्ति" (निरुक्त ७।४)। ऋग्वेद का स्पष्ट प्रतिपादन है—"एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमंमातरिश्वानमाहुः (ऋ० सं १।१६४।४६)। अतः अग्नि इन्द्र आदि देवताओं को ऐश्वर्य शाली परमेश्वर का रूप मानना सर्वथा उचित है।"

योगिराज श्री अरविन्द जी की अमूल्य सम्मतिः—

"If Vedic god-heads express the power of a supreme eity who is creator, ruler and father of the universe, then there must inevitably be in the Vedas a large part of Cosmology, the law of creation and of cosmos. Dayanand asserts the presence of such a cosmic element; he finds in the Veda the secrets of creation and the law of nature by which the Omniscient governs the world."

अर्थात्—वेदों के देवता परमात्मा की दिव्य शक्तियों का प्रदर्शन करते हैं जो कि इस संसार का कर्त्ता, सञ्चालक तथा पिता है तो यह अनिवार्यतया मानना पड़ेगा कि वेदों में सृष्टि विज्ञान वर्णन अवश्य है। महर्षि दयानन्द इस तत्त्व को वेदों में पाते हैं। वेदों में वे सृष्टि विज्ञान के नियमों का प्रतिपादन करते हैं, प्राकृतिक विधान या नियामक तत्त्वों का विवरण ऋषि ने वेदों में प्रदर्शित किया कि जिन नियमों के द्वारा यह संसार यन्त्र सञ्चालित हो रहा है।

"There is nothing fantastical in Dayananda's idea that Veda contains truths of science as well as truths of religion, I will add my own conviction that Veda contains other trnths of science which the modern world does not possess at all; . ....immediately the character of the Veda is fixed in the sense Dayanand gave to it. the merely ritua mythylogical and polytheistie interpretation of Sayanacharya collapses, and the merely naturalistic and materiological interpretation of Europeans also collapses. We have instead, one of the world's sacred books and the divine werd of lofty and noble religion." ६४

अर्थात्—ऋषि दयानन्द की इस धारणा में कि वेद धर्म और पदार्थ-विद्या के भण्डार हैं, कोई अयुक्त या अनहोनी बात नहीं है। मै उनकी उक्त धारणा में अपना विश्वास और जोड़ना चाहता हूँ कि वेदों मे पदार्थ विद्या की अन्य

६४. मासिक पत्रिका "सुधा" का "दयानन्दाङ्क" वर्ष ७, अक्टूबर १६ सन १९३३ ई०, खण्ड १, संख्या ६ पृष्ठ ४६५.

ऐसी सचाइयाँ भी हैं, जिनको आजकल का संसार यत्किञ्चित् भी नहीं जान पाया है। एक बार वेदों की स्थिति स्वामी दयानन्द के अभिमतानुसार समासीन हो जाने दो तो फिर देखोगे कि सायणाचार्य का केवल रूढ़ि परक और कपोल-कल्पित अनेकेश्वर वाद पर आश्रित वेदों के भाष्य का भवन अपने आप गिर जायगा, और उसी के साथ २ पाश्चात्य विद्वानों का केवल भौतिक पदार्थ और प्राकृतिक पूजन-परक भाष्य भी धराशायी हो जायगा। और वेद एक उच्च तथा गौरवास्पद ईश्वरीय ज्ञान पुस्तक के रूप में हमारे पास शोभायमान होगा।

"In the matter of Vedic interpretation, I am convinced that whatever may be the final Complete interpretation, Dayanand will be honoured as the first discoverer of the right clues. Amidsr the chaos and obscurity of old ignorance and age-long misunderst anding, his was the eye of direct vision that pierced into the truth and fastened on that which was essential. He has found the keys of the doors that time had closed and rent asunder the seals of the imprisoned fountains." ६५.

"वेद भाष्य के सम्बन्ध में, मेरा यह पूर्ण विश्वास है कि अन्तिम और सर्वाङ्ग पूर्ण भाष्य चाहे कोई भी हो, परन्तु ऋषि दयानन्द का ठीक पद्धति के प्रथम खोजने वाले के रूप में सन्मान किया जाएगा। प्राचीन काल के अज्ञान अन्धकार में तथा चिरकाल प्रचलित भ्रान्तियों के मध्य में ऋषि दयानन्द की दिव्य दृष्टि सीधी वेदार्थ निहित सत्य के अन्दर प्रविष्ट हुई और वेदों के सत्यार्थ को आविष्कृत करने के लिये सच्ची कुञ्जी ढूंढ निकाली और उस सत्य को प्रकाशित किया जो चिरकाल से असत्य एवं भ्रमपूर्ण भाष्यों में बन्दी के समान पड़ा था।"

ऋषि की संस्कृत की अलौकिक विद्वत्ता के विषय में मैडम ब्लेवेस्टकी ने लिखा था कि—

Certainly there was no better or grander orator in Hindi or Sanskrit than Dayanand thronghont the breadth and length of this land." ६६.

अर्थात्—समस्त भारतवर्ष में. संस्कृत तथा हिन्दी में ऋषि दयानन्द के समकक्ष कोई भी विद्वान् प्रगल्भवक्ता नहीं हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट प्रकट हो गया कि ऋषि दयानन्द जी का वेद-भाष्य, सर्वोत्तम, नैरुक्त शैली के अनुकूल अद्भुत है।$

ओ३म् शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

---

६५. "भूमिका प्रकाश:" पृष्ठ १४८, "नारायण अभिनन्दन ग्रन्थ" पृष्ठ १३६.

६६. "Theosophist" 1883.

$ इस निबन्ध को प्रस्तुत करने में विद्वद्वर्य पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु तथा गुरुवर पं० धर्मदेव जी सिद्धान्तालङ्कार विद्या वाचस्पति, तथा आचार्य चन्द्रकान्त वेदवाचस्पति प्रभृति विद्वानों के लेखों से प्रचुर सहायता ली गई है, अतएव मैं उन विद्वानों का आभारी हूँ। इस में श्रीमान् जिज्ञासु जी के लेख ने पथ प्रदर्शक का काम किया।

यदि आज महर्षि होते तो ?

(श्री पं० चन्द्रकांत जी वेद वाचस्पति आचार्य गुरुकुल विद्या मन्दिर सूपा)

आज सारा हिन्दुस्तान अनुभव कर रहा है कि यदि महर्षि दयानन्द होते यदि उनके मार्ग पर हिन्दुस्तान चला होता तो, देश की यह दुर्दशा न होती। चन्द्रगुप्त मौर्य, समुद्रगुप्त, विक्रमादित्य, अशोक, बाबर, अकबर तथा अंग्रेजों के शासन काल में जो हिन्दुस्तान अखंड बना रहा, आज उसकी छाती पर घाव हो गये हैं, खून की नदियां बह रही हैं। मौरबी के टंकारा गांव में प्रणव—धनुष की टंकार करने वाले महर्षि दयानन्द ने तो हमे आर्यावर्त के लुटे गए सांस्कृतिक चक्रवर्ति साम्राज्य को लौटा कर विश्व-विजय के वे स्वप्न दिखाये थे, जिसमें मिश्र के भव्य मीनार खड़े थे, जरथुस्त के एक देव तथा गोमेध (गोमेजऋषि) के सुन्दर वर्णन थे; जावा, सुमात्रा, चीन, जापान के और खेतान के बौद्धों के धर्म विजय के कीर्ति-स्तंभ थे, अफ्रीका के हबशियों में मनाए जाते वेदारम्भ संस्कार के स्तुतिगान थे और अमरीका में फैले हुए आर्य समाज के कीर्ति-कलश थे। महर्षि ने हमें केवल हिन्दुस्तान का राज्य ही नहीं, अपितु आर्यावर्त का वह साम्राज्य सौंपा था जिसकी छत्र-छाया में समस्त मानवजाति ने शांति का जाप जपा था (एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः। स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन्, पृथिव्यां सर्वमानवाः।

(२)

महर्षि ने बच्चों द्वारा फेंके गए पत्थरों का उन्हें लड्डू देकर जबाब दिया, कर्णसिंह की तलवार को आत्मबल से गले का हार बनाया; जगन्नाथ के विष को शिव के गरल के समान पीकर उसे अभयदान दिया, राजाओं की गद्दियों को हंसते हंसते ठुकरा दिया, अंगुलियों को बत्ती बनाकर जलने और प्रकाश देने के लिये ऋषि जोधपुर गए। भोग-विलास में फंसे हुए राजाओं को धमकाते हुए भी उन्हें विदेशी उत्तम राजा की अपेक्षा देश के लिए अधिक उपकारक समझते थे। वर्तमान देश नायकों ने देशी राजाओं के बारे में बराबर अपने विचार बदले होंगे, परंतु महर्षि ने 'मिल की Liberty के विचारों का सार अपनी आर्षप्रतिभा से एक ही वाक्य में रख दिया था। महात्मा जी आज कहते हैं कि प्रजा ही राजा है, परन्तु महर्षि ने बहुत पहले ही यह बात सत्यार्थप्रकाश के षष्ठ समुल्लास में लिख दी थी। "विशि राजा प्रतिष्ठितः"। महर्षि का हृदय-परिवर्तन का सिद्धान्त इन्हीं राजाओं में देवत्व का संचार करके राम, भोज और विक्रमादित्य पैदा करने का था। क्या वर्तमान भारत इस ओर कदम बढ़ाएगा ?

(३)

महर्षि समझते थे कि राजनैतिक उत्थान का मूल सांस्कृतिक एवं सामाजिक स्वतंत्रता ही है। यूरोप में राजनैतिक उत्थान में लूथर की क्रांति का, शिवाजी की हिन्दू बादशाही की स्थापना में समर्थ गुरु रामदास की धर्म-प्रेरणा का हाथ है। १८५७ की क्रांति की असफलता का बीज इसी

ऐतिहासिक सत्य मे छिपा हुआ था इसी क्रांति के कुछ वर्ष बाद दिल्ली नगरी मे धर्मों के सुधारकों का एकत्रित करने का यत्न महर्षि ने किया था। परन्तु वेद की दृढ़ चट्टान से टकराकर वे सब छिन्न-भिन्न हो गए। सर सैयद अहमद, मेडम ब्लेवट्स्की, कर्नल औल्काट, श्री केशवचन्द्र सैन ये सब महर्षि का आदर करते थे। डीन इ ज और सेन्ट ओगस्टाइन की ईसाईयत, ख्वाजा कमालुद्दीन, सर सैयद अहमद, अब्दुल कलाम आजाद का इस्लाम, प० मदनमोहन मालवीय जी तथा दरभगा नरेश का हिन्दूधर्म, महर्षि के वेद भाष्य की आदर्श शैली के ऋणी हैं। नैष्ठिक ब्रह्मचारी का हृदय 'वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि' वज्र के समान कठोर और पुष्प क समान कोमल था।

(४)

महर्षि क अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश मे मानवजाति के उत्थान क समस्त मन्त्र विद्यमान हैं। विभिन्न मतमतान्तरों का मथन करके समीक्षा के द्वारा सत्य का प्रकाश करके वीतराग सन्यासी ने इस्लाम इसायत, जैनी, पुरानी सब मतों का महान् उपकार किया है। महर्षि ने यदि इस्लाम की समीक्षा न की होती तो लाखों हिन्दू और मुसलमान कुरान को उठाकर भी न देखते। जिस सिन्ध मे मुहमदीन कासिम ने मुट्ठीभर आदमियों की सहायता से दाहर को हरा कर हिन्दुस्तान के सीने को चीरा था। उसी सिन्ध मे सत्यार्थप्रकाश जैस पवित्र ग्रन्थ की जप्ती का कानून भी पास हुआ। महात्माजी एव उनक साथी भी चुप रहे। इसी मौन ने सिन्ध की राजधानी म पाकिस्तान का नारा बुलद किया और तैमूर एव नादिरशाह के कत्ले आम के नजारे दिखाए। आज यह स्पष्ट है कि अंग्रेज लोग दिल्ली की जगह कराची में बैठे हुए बलवा पैदा कर रहे हैं। अबदे आजम जिन्ना की हिम्मत ने सिन्ध के बाद पंजाब पर हमला किया। आर्यसमाज रूपी जिस मजबूत चट्टान से टक्कर खाकर अभी तक इस्लाम हिन्दु जाति को निगल नहीं सकता था, वही चट्टान अपने ही भाइयों की बुजदिली और बेवकूफी से सिन्ध और पजाब मे चकनाचूर हो गयी है। आज कहा है वह पवित्र गुरुदत्त भवन और कहाँ है महर्षि का जीता जागता स्मारक वह आर्य प्रतिनिधि सभा ? जिन आर्य वीरों ने अछूतों के साथ खान पान किया था उन्हें अपने गले लगाया था, जिन आर्य नेताओं ने पद एव कीर्ति को लात मारकर महर्षि की छत्र छाया मे मूक सेवाएं की थीं, लाखों विधवाओं को सनाथ किया था अबलाओं को बल दिया था, वे आज दर दर भटक रहे हैं। आज वही दिल्ली की नगरी जिसमे बेताज बादशाह शहीद श्रद्धानन्द जी ने जुम्मा मस्जिद के तख्त से 'वाएज' पढ़ी थी, जहा हिन्दू और मुसलमानों ने एक दूसरे को गले से लगाया था, उसी दिल्ली मे हिन्दू और मुसलमान खून की होली खेल रहे हैं।

(५)

आज दिल्ली मे अहिंसा के उपदेशक महात्मा गाधी जी विद्यमान हैं, फिर भी हिंसा का ताण्डव नृत्य क्यों हो रहा है, आज उन्हें अपनी घोषणाए क्यों बदलनी पड़ रही है। श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन के रूप म क्या स्वामी श्रद्धानन्द

जी की आत्मा नहीं बोल रही है ? सरदार पटेल के एक एक शब्द मे क्या दयानन्द का हृदय नहीं बोल रहा है ? क्या यह सत्य नहीं है कि महात्मा जी के जीते जी उनके शिष्यों ने उनके अहिंसा के सिद्धान्तों को ठुकराया है ? क्या स्वयं महात्मा जी यह अनुभव नहीं कर रहे कि अब उनसे अधिक शक्तिशाली नेता की आवश्यकता है "May it be not that a man purer more couragious, more far-seeeing is wanted for the final purpose' Hari-Jan) राजनीति का साधारण विद्यार्थी भी कह सकता है कि महात्मा गान्धी और कांग्रेस की नीति का ही परिणाम खण्डित भारत है। महर्षि का सत्यार्थप्रकाश कहता है 'रन्धय शासद व्रतान्' 'मा मत्स्यस्य मायनः' पापियों का नाश करना चाहिए। इस सच्चाई की पुकार करने वाली ब्राह्मण की गौ "महर्षि की पुकार का अपमान" करने वाले राष्ट्र की वह दशा होती है जो हिन्दुस्तान की हुई है। 'सा गवी पच्यमाना यावत् सा,ऽभिविजिङ्गते, तेजो राष्ट्रस्य निर्हन्ति न वीरो जायते वृषा '। सत्यार्थप्रकाश की अमर वाणी को कुचला जाता देखकर हंसने वाले हमारे नेताओं पर आज संसार हँस नहीं रहा तो क्या कर रहा है ? आज भारत की तथा कथित स्वतंत्रता का श्रेय क्या श्री सुभाषचन्द्रबोस को नहीं है ? मेरी विनम्र सम्मति में श्रीसुभाषचन्द्र बोस और टंडन जी महर्षि के मानसिक शिष्य है। आज ये ही सत्यार्थप्रकाश के मार्ग पर हिन्दुस्तान को चला रहे हैं। महात्मा जी ने महर्षि, स्वामी श्रद्धानन्द जी तथा सत्यार्थप्रकाश की खुले आम निन्दा करके जो अनुचित व्यवहार किया था उसका ही कड़वा फल आज सारा भारत वर्ष भोग रहा है।

(६)

आज शुद्धि और संगठन की आवश्यकता है, प्रजा मे सैनिकीकरण militarisation of the race) की आवश्यकता है क्या यही बात महात्मा मुन्शीराम ने नहीं कही थी ? यदि धर्म प्रचार करते हुए बुद्ध एवं कबीर की अहिंसा कटुता में परिणत हो सकती है, मूसा का न्याय संग सार (stoning) का ऐलान कर सकता है, हजरत ईसा का प्रेम तलवार उठा सकता है, मुहम्मद का इस्लाम आग लगा सकता है या खून की होली खेल सकता है, तो लूथर को यह अधिकार नहीं है कि वह पोप के आज्ञा पत्र (indulgence letters) को जलाकर होली मनावे ? क्या वीतराग, नैष्ठिक ब्रह्मचारी दयानन्द को इतना भी अधिकार नहीं कि वह पादरियों तथा मौलवियो को बाइबिल और कुरान की सच्ची व्याख्या बतावे ? यदि मूसा ईसा और मुहम्मद निरपराधों के खून की नदी बहा सकते है तो क्या महर्षि को धर्म की वेदी पर अपने जीवन की अमर फाग खेलने तक का हक नहीं है ? क्या उन्हे इमदाद हुसेन के गले लगाने से कोई रोक सकता है ? यदि पादरी, मौलवी वेद और गीता, कुरान तथा बाइबिल का कलम से विरोध कर सकते हैं, तो दयासागर दयानन्द को सत्यार्थप्रकाश लिखने से कौन रोक सकता है। यदि आज मुहम्मद, ईसामसीह, गुरु नानक महावीर, और बुद्ध होते तो महर्षि को प्रेम के फूलों का हार

पहिनाते, राम और कृष्ण होते तो ऋषि को साधुवाद देते।

(६)

आज कहीं कम्यूनिस्ट सिर ऊंचा कर रहा है, तो कहीं कौमवाद, कहीं राजशाही पैर पसार रही है, तो कहीं लोक शाही ऐसे समय मे हमें स्वामी के सर्वाङ्गीण विचारों की याद हो आती है। यदि ऋषि होते तो यह सब कुछ न होता। भारत की सांस्कृतिक आत्मा ने कभी का इसे स्वतन्त्र बना दिया होता। आज हमारे देश नायक यह भूल गए हैं कि उनके विजय-स्तम्भों के नीचे दयानन्द, विवेकानन्द, रामतीर्थ तथा सैकड़ों भगतसिंह बिछे पड़े हैं। आज जब कि देश भूखों मर रहा है तब हमारे देश नायको के सत्कार समारम्भों में हजारो रुपयो का पानी क्यों किया जा रहा है। आज इस बीसवीं सदी में महात्मा गांधी या सुभाषचन्द्र बोस की मूर्तियां की क्या आवश्यकता है? क्या उनके जीवन के प्रियतम सिद्धान्तों को दफना देने के लिए तो यह नहीं हो रहा है? क्या हमे वह करुण प्रसंग भूल गया है, जब कि मृत्युशय्या पर पड़े हुए महर्षि ने कविराज शामलदास को उपदेश दिया कि मेरी हड्डियों की राख जमीन में मिला दी जावे, इस पर मन्दिर न बने, विजय-स्तम्भ न बने, फूल न चढ़ाए जाय। देह की राख को भी प्रजा कल्याण की वेदी पर निछावर करने वाले इस संन्यासी के त्याग का उपमान कहीं मिलता है? महर्षि ने सब कुछ छोड़ा पर सत्य न छोड़ा; हंसते २ देह को छोड़ा पर "ओं कार का जप न छोड़ा। अपना यश ब्रह्मा से लेके जैमिनि तक के ऋषियों को दिया और अपयश को एवं अपमान के विष को अमृत की तरह पी गए। इस बीसवीं सदी मे यदि महर्षि होते तो संसार के महापुरुषों को सच्ची सेवा का मार्ग बता जाते। निरभिमानिता, ब्रह्मचर्य और त्याग की इस अद्वितीय मूर्ति पर भारत माता निछावर है।

(७)

महर्षि के जीवन का दीप निर्वाण नास्तिक मुनि गुरुदत्त विद्यार्थी जैसे लाखों जीवित दीपकों को जगाकर दीपावली को अमर कर गया है। (अग्निनाऽग्निः समिध्यते)। मृत्युञ्जय महर्षि जीते हुए अमर थे और मरकर सदा अमर हो गए। देह छोड़ते हुए स्वामी के तन के घावों ने जो दीपावली मनाई थी वह आज भी दुःखी भारत माता की आरती उतार रही है। दीपावली के दीपको! तुम जागो-जलो और इस अंधेरे में मेरे महर्षि को दिखाते जाओ, ताकि दीपावली के दीपक वह राग गावें जिसमे महर्षि का जयनाद हो। आर्य समाज! उठ—कमर कस, अन्दरूनी झगड़े बन्द करके, मतभेदो को भुलाकर महर्षि के झंडे के नीचे आओ। तभी देश का कल्याण होगा।

प्रमुख पत्रिका

पाकिस्तान में आर्य्य भाई

—***—

पाकिस्तान में ठहरे हुये आर्य्य समाजियों और वहां के आर्य्यसमाजों के विषय में भविष्य में क्या नीति होनी चाहिये यह एक टेढ़ा प्रश्न है। जब तक उस प्रदेश मे स्थिरता न हो जाय इस पर विचार करना असंभव है। वहां के पीड़ित आर्यों का वहां से निकाल कर लाना भी आर्य समाजों के हाथ में नहीं है। सरकार द्वारा ही यह काम हो सकता है। परन्तु जितने आर्य भाई पाकिस्तान से हिन्दुस्तान में आ गये हैं या आरहे हैं उनके प्रति हमारा एक कर्त्तव्य है जिसका पालन तुरन्त ही होना चाहिये। इससे पूर्व आर्य समाजों ने यथाशक्ति शरणार्थी शिविरों में अच्छा काम किया। दिल्ली के आर्य समाज मण्डल ने कई हजार शरणार्थियों की लगभग एक लाख रुपया व्यय करके सेवा की है। अन्य समाजों ने भी ऐसा ही किया है। अब कार्य की मात्रा को बढ़ते देख कर शरणार्थियों के शिविरों की देखरेख सरकार द्वारा हो रही है। उसमें भी जहां तक मुझे मालूम हुआ है कई आर्य समाजों ने सरकार को सहयोग दिया है और देना भी चाहिये। क्योंकि समाज का काम सेवा का है। सेवा जिस प्रकार हो करनी चाहिये। जहां अकेला हो सके अकेला, जहां अन्यों के साथ मिलकर हो सके मिलकर।

परन्तु इस समय प्रत्येक आर्यसमाज को यह चाहिये कि वह अपनी एक छोटी सी उप समिति बनाकर अपने नगर या गांव में पाकिस्तान से आये हुये आर्य भाइयों से एक-एक करके मिले। उनकी सूची बनावें उनका स्वागत करें। उनके निवास और व्यवसाय के निर्धारण में भरसक सहायता करें। और उनको अपने आर्य समाज का मेम्बर बना करके उनके उत्साह को बढ़ावें। इन सूचियों और कार्यों की दो संक्षिप्त रिपोर्टें बनाकर एक तो प्रांतीय प्रतिनिधि सभा के दफ्तर मे और दूसरी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा बलिदान भवन देहली के कार्यालय में भेज दें। इन नये मेहमानों को भी चाहिये कि वह पंजाब के पुराने मनमुटावों और दलबन्दियों को सब भुलाकर आर्यसमाज के नये युग के निर्माण करने में हमको मदद दें। यदि ऐसा किया गया तो इस आई हुई विपत्ति को संपत्ति में परिवर्तित करने का सौभाग्य हमको प्राप्त हो सकेगा। बुद्धिमत्ता यह नहीं है कि विपत्ति में रोवें-पीटें, अपितु उस विपत्ति से भी लाभ उठाने का प्रयत्न करना चाहिये। जो भाई पाकिस्तान से भाग कर आये हैं वह अपनी जायदाद ही तो छोड़ कर आये हैं योग्यता, परिश्रम, उत्साह और कार्यकौशल तो अब भी इनके साथ है। जिन आर्यों ने पिछले सांठ-सत्तर वर्ष में एक विशाल प्रान्त को समृद्धिशाली बना दिया क्या वे अब नई परिस्थिति में नये स्थानों को समृद्धिशाली नहीं कर सकते। बीज शक्ति तो विद्यमान है।

मेरा निवेदन है कि हिन्दुस्तान के नगरों और ग्रामों की सभी समाजें इस काम को तुरन्त प्रमुख समझ कर अपने हाथ मे लेंगे। अभी तक शरणार्थी केवल नगरों मे हैं। परन्तु नगरों के समाजों को चाहिये कि वे अपने जिलों के ग्रामों और कस्बों की भी छान बीन करें और उपर्युक्त योजना का अवलम्बन करें।

गङ्गाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०
मन्त्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली।

गीता और कुरान

[लेखक—डा० सूर्यदेव जी शर्मा साहित्यालङ्कार, सिद्धान्त शास्त्री एम. ए. एल टी., डी. लिट्, अजमेर]

लगभग पिछले ३० वर्षों से भारत के राजनैतिक क्षेत्र में एक नवीन लहर चल रही है। महात्मा गाँधी की अध्यक्षता और नेतृत्व ने जहाँ काँग्रेस को स्वतन्त्रता के ध्येय पर पहुँचाया है [वहाँ मुस्लिम लीग को अनुचित महत्व भी मिल गया है। मुस्लिम लीग और उसके कायदे आजम मि० जिन्ना को प्रसन्न करने के लिए महात्मा गाँधी और उनके कट्टर अनुयायियों की ओर से न मालूम कितनी बार कितने प्रयत्न किए गए है। कभी-कभी तो हिन्दू सभ्यता और वैदिक संस्कृति की तुलना मे कुरान की सभ्यता और शिक्षा को ऊँचा बतलाया गया है। आज हम ऐसा ही उदाहरण पाठकों के सामने उपस्थित करते हैं।

प्रयाग के महात्मा गाँधी के कट्टर भक्त श्री सुन्दरलाल जी ने कुछ मास पूर्व एक पुस्तक हिन्दुस्तानी कलचर सोसाइटी की ओर से प्रकाशित की है जिसका नाम है "गीता और कुरान"। पुस्तक प्रकाशन का उद्देश्य हिन्दू मुस्लिम प्रेम को बढ़ाना है। निस्सन्देह उद्देश्य बहुत उत्तम है और देश का प्रत्येक समझदार व्यक्ति इस उद्देश्य की सराहना करेगा किन्तु हमे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि श्री सुन्दरलाल जी ने अपने हिन्दू-मुस्लिम एकता के उद्देश्य के आवेश में उपरोक्त पुस्तक मे कहीं २ कुछ बातें ऐसी लिखी हैं जिनसे हिन्दू जाति की संस्कृति तथा वैदिक साहित्य के सम्बन्ध मे जनता में बहुत कुछ भ्रम उत्पन्न हो सकता है। इस भ्रम का निराकरण करना हम अपना कर्तव्य समझते हैं।

पुस्तक के मुख पृष्ठ पर ही खूबुल्लाहशाह कलन्दर का उद्धरण दिया है "गीता हिन्दुस्तान का कुरान है और कुरान अरब की गीता" इस प्रकार आपने कुरान और गीता को एक ही कक्षा मे रख दिया है और इसी बात को सिद्ध करने के लिए आगे पुस्तक मे एक अध्याय भी लिखा गया है। इससे भी पहले पुस्तक नाम के ऊपर एक शब्द ऐसा लिखा गया है जिसको सीधी ओर से "ओ३म्" पढ़ा जा सकता है और उल्टी ओर से "अल्लाह" भी। आगे मुख पृष्ठ पर ही एक कविता दी गई है जिसकी प्रारम्भिक पंक्तियां ये हैं :—

> तुम राम कहो या रहीम कहो,
> दोनों की गरज अल्लाह से है।
> तुम दीन कहो या धर्म कहो,
> मतलब तो उसी की राह से है॥

लेखक महोदय राम और रहीम को एक ही समझें, इसमे हमे कोई आपत्ति नही लेकिन उन्हें "ओ३म्" या "अल्लाह" को इस ढंग से एक ही में लिखकर जनता को धोखे में नहीं डालना चाहिये।

"दुनियां के सब मजहब एक ही हैं" नामक अध्याय में संसार के सब धर्मों को एक ही माना गया है लेकिन स्थान २ पर कुरान की आयतों के उद्धरण देकर पाठकों के मस्तिष्क में कुरान का महत्व भरने की चेष्टा की गई है जिससे लेखक की अपनी मनोवृत्ति का पता चलता है। पृष्ठ ९४ पर एक उद्धरण में कहा गया है "यह (कुरान) वह हक है जो अपने से पहले की मजहबी किताबों को सच बताता है" (तो फिर दुनियां में कुरान की विशेष आवश्यकता ही क्या थी!) "तुम्हें (मुहम्मद साहब को) कोई ऐसी बात नहीं कही गई कि जो पहले के रसूलों को न कही गई हो।" तो फिर मुहम्मद साहब ने नया इस्लामी मजहब क्यों चलाया?" "अल्लाह ने सबके लिये अलग-अलग शरअ और तरीके बना दिए हैं। अल्लाह चाहता तो तुम सब को एक ही फिरका बना देता।" (जब अल्लाह ने ही फिरके अलग २ बनाये हैं तो श्री सुन्दरलाल जी दुनिया के सब मजहबों के एक होने पर वह अध्याय क्यों लिख रहे हैं? यह परस्पर विरोधी वक्तव्य कैसे?)

एक स्थान पर आपने वेदों और उपनिषदों पर भी हाथ साफ किया है। पृष्ठ ६६ पर लिखा है "वेद इतनी बड़ी चीज है उनकी जबान इतनी पुरानी और अजीब है। और एक एक मन्त्र के इतने-इतने तरह के अर्थ लगाये जा सकते हैं कि बेपढ़े लोगों के लिये ही नहीं, विद्वानों के लिये भी हजारों वर्ष से वेद एक पहेली रहे हैं और हमेशा पहेली ही रहेंगे।" इसी प्रकार अगले पृष्ठ पर लिखा है "लेकिन उपनिषद् भी आम फहम नहीं है। उन्हें समझ सकना या उनका रस ले सकना विरलों को ही बदा है।" धन्य है! वेद और उपनिषदें तो जो प्राचीन काल से आर्य हिन्दुओं के महान् धर्म ग्रन्थ रहे हैं, सब लोगों के लिये आम फहम नहीं हैं, उनकी भाषा तो पुरानी और अजीब है, उनके तो अनेकों अर्थ मनमाने ढंग से लगाये जा सकते हैं, अर्थात् उनका पढ़ना तो बेकार है लेकिन कुरान शरीफ जिसकी प्रशंसा के गीत लेखक ने कदम २ पर गाये हैं और जो अरबी जबान में है वह सब लोगों के लिये शायद आम फहम है? वेदों की भाषा तो अजीब नहीं लेकिन हमें कहना पड़ेगा कि लेखक की सूझ जरूर अजीब है, जो वेद और उपनिषद् जैसे ज्ञान के सबसे बड़े भंडार की ओर से तो पाठकों का मन उचाट कर रहा है और कुरान के सैकड़ों उद्धरण देकर और उसकी खूबियाँ बतलाकर उसको पढ़ने के लिये लोगों को आकृष्ट कर रहा है। धन्य है ऐसे हिन्दुत्व को।

आगे पृष्ठ १७१ पर लिखा है "इस्लाम के पैगम्बर हजरत मुहम्मद की आत्मा दुनिया की सबसे बड़ी खोजी आत्माओं में से थी। बर्षों की तपस्या के बाद ईश्वर ने उन्हें तमाम दुनियां के भले का रास्ता दिखाया।" ठीक है यदि आप उन्हें दुनियाँ की सबसे बड़ी खोजी आत्माओं में से समझते हैं तो समझें, हमें कोई आपत्ति नहीं, लेकिन गीता के ऊपर अध्याय लिखते हुये भगवान कृष्ण के लिये भी तो ऐसा कोई वाक्य लिखा होता। आगे पृष्ठ १८१ पर कुरान की प्रशंसा में एक यूरोपियन लेखक का उद्धरण देते हुये आपने लिखा है, "If a book is to be gauged by its net result, then the Quran must neces-

ssarily take high rank as one of the world's greatest works"

"अगर किसी किताब की कीमत का अन्दाजा उसके नकद नतीजे से लगाया जा सकता है तो जरूरी है कि कुरान को दुनियाँ की बड़ी से बड़ी और ऊँची से ऊंची किताबों में गिना जावे।" पाठकों ने देखा कि वेद और उपनिषद् को तो कितना नीचे करने की चेष्टा की गई है और कुरान शरीफ के महत्व को पाठकों के दिमाग पर जमाने का कैसा प्रयत्न किया गया है?

अन्त में पृष्ट २४६ पर आपने लिखा है "इन सब मजहबों के कायम करने वालों को एक तरह ही उसी अल्लाह से रोशनी मिली है, इस लिये यह सब धर्म सच्चे हैं'। वाह खूब कही? अगर सबको एक ही रोशनी मिली है तो इन धर्मों के सिद्धान्तों में भेद क्यों है? ईसाई यहूदी और बौद्ध धर्मों के होते हुये फिर इस्लाम की जरूरत क्या थी? आगे फिर लिखा है "अलग २ मजहबों के कायम करने वालों में फर्क करना, यानी उनमें से किसी को मानना और किसी को न मानना गुनाह है" तो फिर सभी मजहबों को लेखक महाशय मानते होंगे। आगे आप सबका साराश लिखते हैं "प्रेम और ध्यान से देखने से मालूम होता है कि कुरान उसी मानव धर्म की तालीम देता है जो सारी दुनिया के लिये बराबर है और जो सब मजहबों का जौहर है।"

कहिये पाठकगण? आपने देख लिया न कि लेखक ने कुरान को सब मजहबों का जौहर सिद्ध करने के लिये इस पुस्तक की रचना की है। गीता और कुरान की तुलना करते हुये भी गीता के लिये "सब मजहबों का जौहर' शब्द नहीं लिखे गये कुरान के लिये लिखे गये हैं। इससे पाठको को लेखक के उद्देश्य का पता भली भाँति चल गया होगा। परमात्मा ऐसे लेखकों से हिन्दू जाति और वैदिक संस्कृति की रक्षा करे।

पितृ यज्ञ विमर्श

[लेखक—श्री मा० नत्थन लाल जी आर्य हरद्वार]

प्रार्थना:—

१– अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परिभूरसि।
सऽइद् देवेषु गच्छति॥ ऋ० १।१।४॥

हे ज्योति स्वरूप भगवन्! आप जिस हिंसा से रहित यज्ञ को सब तरफ से व्याप लेते हो, केवल वही यज्ञ दिव्य फल लाता है।

२– मा प्रगाम पथो वयम् मा यज्ञादिन्द्र सोमिनः।
मान्तः स्थुर्नो अरातयः॥ ऋ० १०-५७-१॥

हे परमेश्वर! हम सन्मार्ग को छोड़कर न चलें। ऐश्वर्ययुक्त होते हुए हम यज्ञ को छोड़ कर न चलें। अदान भाव हमारे अन्दर न ठहरें।

३– तमध्वरेषु ईळते देवं मर्ता अमर्त्यम्।
यजिष्ठं मानुषे जने॥ ऋ. ५.१४.२॥

सब यज्ञों में हम मरणशील मनुष्य उस अमर देव की ही पूजा करते है, जो कि देव प्रत्येक मनुष्य के अन्दर यजनीय है॥

नित्य कर्म:—

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम्।
होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनम्॥
मनु० अ. ३.७॥

वेद का पढ़ना पढ़ाना ब्रह्मयज्ञ, अन्न जलादि से पितरों को तृप्त करना पितृयज्ञ, अग्नि में हवन करना देव यज्ञ, भूतों (प्राणियों) को बलि (अन्न) देना भूतयज्ञ तथा अतिथि का पूजन (सत्कार) करना मनुष्य यज्ञ है॥

मनु ने यह पाँच कर्म प्रतिदिन करने की आज्ञा दी है और यह भी कहा है, कि:-

ऋषियज्ञं, देवयज्ञं, भूतयज्ञं च सर्वदा।
नृ यज्ञं, पितृयज्ञं च यथाशक्ति न हापयेत्॥
मनु० ४.२१

ऋषियज्ञ (ब्रह्मयज्ञ), देवयज्ञ, भूतयज्ञ, नृयज्ञ तथा पितृयज्ञ, इन पांचों कर्मों को यथाशक्ति कभी न छोड़े।

इन पांच महायज्ञों में से ब्रह्मयज्ञ,आध्यात्मिक-हवन यज्ञ-आधिदैविक, और शेष तीनों यज्ञ आधिभौतिक कर्म हैं, क्योंकि इन में अन्य मनुष्यों तथा जीवों की सेवा होती है।

पहले दो यज्ञों, अर्थात् ब्रह्मयज्ञ या सन्ध्या और देवयज्ञ या हवन की व्याख्या हम "सन्ध्या प्रदीपिका" तथा "हवन यज्ञ प्रदीपिका" नाम के दो ग्रन्थों मे प्रकाशित कर चुके हैं। अब हम शेष तीन आधिभौतिक यज्ञों की व्याख्या करना चाहते हैं। परमात्मा हमारे इस मनोरथ को सुफल करें।

१—पितृ यज्ञ॥

पितर:—

"पितरः" शब्द पिता का बहुवचन है। "पिता" पा रक्षणे धातु से बनता है। "यः पाति सर्वान् स पिता" जो सब की रक्षा करता है वह पिता कहलाता है, इसी से परमेश्वर भी सब का पिता है। निरुक्त में लिखा है:—

"पिता पाता वा पालयिता वा जनयिता"

निरु० ४.२१ ॥

रक्षा करने वाले, पालन करने वाले तथा पैदा करने वाले को पितर कहते हैं।

अतः, रक्षा करने वाले तथा पालन पोषण करने वाले सब ही पितर कहलाते हैं। इस लिये वेद में पितर शब्द अनेक अर्थों में आता है। जैसे, सूर्य वा सूर्य की किरणें, पर्जन्य (बादल) तथा. पृथ्वी. ज्ञानी जन, सैनिक जन, ऋतुएँ, इत्यादि। पर, पितृयज्ञ में प्रायः पिता, पितामह, प्रपितामह, माता, पितामही, प्रपितामही, आदि कुटुम्ब के वृद्धजन तथा गुरु आदि ज्ञानी जन ही पितर शब्द से समझे जाते हैं। गुरु भी पिता, * तथा गुरु-पत्नी माता के समान ही है जैसा कि मनु ने कहा है :—

अज्ञो भवति वै बालः पिता भवति मन्त्रदः।
अज्ञं हि बालमित्याहुः पितेत्येव तु मन्त्रदम्॥

मनु० २.१५३

अर्थात् अज्ञानी बालक कहलाता है और मन्त्र का देने वाला अर्थात् वेद को पढ़ाने वाला पिता होता है इस कारण अज्ञ को बालक [चाहे वह आयु में गुरु से बड़ा हो] और मंत्र दाता गुरु को पिता कहते हैं।

गुरु के पिता, पितामह, तथा माता, पितामही आदि जीवित हो, तो उन्हें भी अपने पितामह, प्रपितामह तथा पितामही प्रपितामही के समान ही समझना योग्य है। उसके अतिरिक्त अपनी स्त्री का पिता आदि, तथा

* यथा पिता तथाचार्यः समश्रेष्ठासने स्थितः।

शु. नी. १.१५८

अपनी बहन के श्वसुरादि, अपने गोत्र के तथा और कोई भद्र पुरुष वा वृद्ध $ हों, तो उनका भी अपने माता पिता आदि के समान ही सन्मान करना चाहिए। क्योंकि वे भी पितर ही हैं।

अन्नदाता, भयत्राता, पत्नीतात स्तथैव च।
विद्यादाता, जन्मदाता पंचैते पितरो नृणाम्॥

ब्रह्म वैवर्त प्र० आ० १०. १५१,

अन्न देने वाला, भय से तराने वाला, स्त्री का पिता, विद्या देने वाला तथा जन्म देने वाला, यह पाँच मनुष्यों के पिता कहलाते हैं।

पितरों के सोमसदः[1], अग्निष्वात्ताः[2], बर्हिषदः[3], सोमपाः[4], हविर्भुजः[5], आज्यपाः[6], सुकालिनः[7], तथा यमाः[8] आदि और भी भेद हैं। ये विद्वानों तथा विशेष गुण रखने वाले मनुष्यों की पदवियां (वा गुण वाचक नाम) ही है। इन के अर्थ निम्न प्रकार हैं।—

१—ये सोमे जगदीश्वरे पदार्थविद्यायां च सीदन्ति, ते सोमसदः।

अर्थात् जो जगदीश्वर और पदार्थ विद्या (रसायन विद्या, भूत विद्या, नक्षत्र विद्या, शरीर विद्या, वृक्ष विद्या) आदि में निपुण हों वे सोमसद् कहलाते हैं।

२—यैरग्नेर्विद्युतो विद्या गृहीता ते अग्निष्वात्ताः।

जो अग्नि अर्थात् विद्युदादि पदार्थों के जानने वाले हों वे अग्निष्वात्ताः कहलाते हैं।

३—ये बर्हिषि उत्तमे व्यवहारे सीदन्ति ते बर्हिषदः।

जो उत्तम विद्या बुद्धि युक्त व्यवहार में स्थित हों वे बर्हिषद् कहलाते हैं।

$ सत्यार्थप्रकाश ४ थं समुल्लास।

४—ये सोममैश्वर्यमोषधिरसं वा पान्ति पिबन्ति वा ते सोमपाः।

जो ऐश्वर्य के रक्षक और महौषधि रस के पान करने से रोग रहित और अन्य के ऐश्वर्य के रक्षक तथा औषधियों को देके रोग नाशक हो वे सामपा कहलाते हैं।

५—ये हविर्होतुमत्तु मर्हं भुञ्जते भोजयन्ति वा ते हविर्भुजः।

जो मादक और हिंसाकारक द्रव्यों को छोड़ के भोजन करने हारे हैं वे हविर्भुज कहाते हैं।

६—य आज्यं ज्ञातुं प्राप्तुं वा योग्यं रक्षन्ति वा पिबन्ति ते आज्यपाः।

जो जानने योग्य वस्तु के रक्षक, और घृत दुग्धादि खाने पीनेहारे हों वे आज्यपा कहलाते हैं।

७—शोभनः कालो विद्यते येषान्ते सुकालिनः।

जिनका अच्छा, धर्म करने का सुखरूप समय हो वे सुकालिनः कहलाते हैं।

८— ये दुष्टान् यच्छन्ति निगृह्णन्ति ते यमाः न्यायाधीशाः।

जो दुष्टों को दण्ड और श्रेष्ठों का पालन करने हारे न्यायकारी हो वे यम कहलाते हैं।

(सत्यार्थप्रकाश ४ थे समुल्लास।

ये समस्त विद्वान् तथा गुणिजन अपनी विद्याओं तथा गुणों से हमारी रक्षा करते हैं, इस कारण ये सब पितर कहलाते हैं। समय २ पर इन का भी मान तथा पूजा करनी योग्य है, किन्तु हमारे नित्यकर्म से इन का कोई विशेष सम्बन्ध नहीं इस लिए इन के सम्बन्ध में कुछ विशेष लिखने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती।

पितृ यज्ञ

"पितर" शब्द के सम्बन्ध में पर्याप्त लिख चुके हैं, "यज्ञ" शब्द के अर्थ देवपूजा, संगति करण तथा दान हैं "देवाः पितरः पितरो देवाः" । अथर्व ६.१२३.३ तथा "मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव" तैत्तरीय॰ प्रपा० ७ अनु०११ के अनुसार माता पिता आदि देव भी हैं और पितर भी, इस लिए इन पितर रूपी देवों की पूजा करना, उनकी संगति करके उन के उपदेशों से लाभ उठाना तथा उन को अन्नादि देना "पितृ यज्ञ" कहलाता है।

अतः पितरों—वृद्धों की सेवा करना गृहस्थियों का नित्य कर्तव्य है। क्यों कि:—

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयु र्विद्या यशो बलम्॥
मनु० २-१२१,

जो प्रतिदिन वृद्धों की सेवा करता तथा नमस्कार करने के स्वभाव वाला है उस की आयु, विद्या, यश और बल चार वस्तु बढ़ती है।

माता पिता तथा आचार्य की मुख्यता

पितरों मे माता पिता तथा आचार्य मुख्य हैं। क्योंकि:—

मातृमान् पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद॥
शतपथ

योग्य माता पिता तथा आचार्य से ही पुरुष विद्वान बनता है। इस के अतिरिक्तः—

यं माता पितरौ क्लेशं सहेते संभवे नृणाम्।
न तस्य निष्कृतिः शक्या कर्तुं वर्षशतैरपि॥
मनु० २-२२७,

मनुष्यों की उत्पत्ति तथा पालनादि मे जो क्लेश माता पिता सहते हैं, उस का बदला सौ वर्षों में भी नहीं उतारा जा सकता। इस लिये प्रत्येक मनुष्य को उचित है कि:—

तयोर्नित्यं प्रियं कुर्यादाचार्यस्य च सर्वदा।
तेष्वेव त्रिषु तुष्टेषु तपः सर्वं समाप्यते॥
मनु० २-२२८

माता पिता तथा आचार्य का सर्वदा प्रिय करे। इन तीनों की ही प्रसन्नता से सब तप पूर्ण होते हैं।

सर्वे तस्यादृता धर्मा यस्यैते त्रय आदृताः।
अनादृतास्तु यस्यैते सर्वास्तस्याफलाः क्रियाः॥
मनु० २-२३४

जिसने इन तीनों, अर्थात्, माता पिता और आचार्य का आदर किया उसको सब धर्म फल देने वाले होते हैं; और जिसने इन का अनादर किया उसके सब कर्म निष्फल जाते हैं। इस कारण:—

यावत्त्रयस्ते जीवेयुस्तावन्नान्यं समाचरेत्।
तेष्वेव नित्यं शुश्रूषां कुर्यात्प्रियहिते रतः॥
मनु० २-२३५॥

उन की प्रीति और हित में परायण होता हुआ, जब तक वे जीवें तबतक चाहे और कुछ न करे, किन्तु, उनकी नित्य शुश्रूषा अवश्य करे।

त्रिष्वेतेष्वितिकृत्यं हि पुरुषस्य समाप्यते।
एष धर्मः परः साक्षादुपधर्मोऽन्य उच्यते॥

माता पिता और गुरु की सेवा से पुरुष के सम्पूर्ण कर्म पूरे हो जाते हैं, इस कारण यही साक्षात् परम धर्म है, और अन्य सब उपधर्म हैं।

मनु के ऊपर के वचनों से माता पिता तथा आचार्य की सेवा का महत्व प्रकट है। यह पितृ यज्ञ मनुष्य का नित्यकर्म है।

पितृ यज्ञ के दो भेद

पितृ यज्ञ के दो भेद हैं 'श्राद्ध' और 'तर्पण'। माता पिता आदि की सेवा, पुत्र पौत्रादिकों को बड़े प्रेम और श्रद्धा अर्थात् पूज्यभाव से करनी चाहिये। इसी का नाम 'श्राद्ध'* है, और उनको उत्तम २ अन्नों, रसों, आदि से तृप्त करने का नाम 'तर्पण'× है। जो मनुष्य अपने माता पिता आदि वृद्धजनों को भोजनादि से दुःखी रखते हैं, अथवा लोक लाज से भोजनादि देते भी हैं किन्तु प्रेम तथा भक्तिभाव उनके मन में नहीं होता, वे माता पिता का सदा अनादर करते तथा कठोर वचनों से उनके मन को सदा क्लेशित करते रहते हैं तथा भोजन भी उनको बासी बचा हुवा अथवा स्वयं भोजन करने के पश्चात् निरादर पूर्वक देते है। स्वयं तो उत्तम २ पदार्थ खाते पीते, किन्तु उनको साधारण रोटी दाल ही देते और कोई अन्य पदार्थ मांगने पर उन्हें झिड़क देते और कठोर शब्दों से उनको अपमानित करते रहते हैं और मन से सदा यह चाहते रहते हैं कि बूढे कब मरें और पीछा छूटे। सब मनुष्यों को उनके माता पिता प्रसन्न

*श्रत् सत्यं दधाति यया क्रियया सा श्रद्धा, श्रद्धया यत् क्रियते तच्छ्राद्धम् स० प्र० समु० ४
×तृप्यन्ति तर्पयन्ति येन पितॄन् तत्तर्पणम्। स० प्र० स० ४।

होकर कभी आशीर्वाद नहीं देते और उनका यह कर्म श्राद्ध व तर्पण का पितृ यज्ञ नहीं कहला सकता। गीता मे कहा है.—

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत्।
असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह॥
गी० १०-२८

हे अर्जुन! अश्रद्धा से किया हुआ हवन, दिया हुआ दान, तपा हुआ तप और जो भी कर्म किया जाता है, वह सब असत् कहा जाता है। वह न इस लोक मे लाभदायक होता है और न मरने के पीछे।

पित्रोर्निदेशवर्ती यः स पुत्रोऽन्वथनामवान्।
श्रेष्ठ एकस्तु गुणवान् किं शतैरपि निर्गुणैः॥
शु० नी० अ० ४ प्र १-१४

जो पुत्र अपने माता पिता की सत्य आज्ञा में रहता है और विद्या सदाचरण आदि गुणों से युक्त है वही पुत्र कहलाने के योग्य है। गुणवान् पुत्र एक ही अच्छा है और गुण रहित पुत्र यदि सैंकड़ों भी हों तो भी किसी काम के नहीं।

एकेनापि सुपुत्रेण विद्या युक्तेन साधुना।
आह्लादितं कुलं सर्वं यथा चन्द्रेण शर्वरी॥१६॥
किं जातैर्बहुभिः पुत्रैः शोकसन्तापकारकैः।
वरमेकः कुलालम्बी यत्र विश्राम्यते कुलम्॥१७॥
चा० नी. अ० ३।

जैसे चन्द्रमा से अन्धकार दूर होकर रात्रि शोभायमान होती है, वैसे ही साधु स्वभाव, विद्या से युक्त एक पुत्र ही अपने कुल को आनन्दित कर देता है॥ शोक सन्ताप आदि दुःख देने वाले बहुत से पुत्र किस काम के, कुल को सुखी करने वाला एक ही पुत्र अच्छा है॥

इस सम्बन्ध में वेद कहता है—

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु सम्मनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम्॥
अथर्व का ३, अनुवाक ६

पुत्र पिता के अ ल कर्म करने वाला तथा माता के साथ उत्त मन रखने वाला होवे। पत्नी अपने पति के व मीठा तथा शान्त वचन बोले।

जो मनुष्य अपने माता पिता को प्रसन्न नहीं रखते, वे वृद्ध अवस्था में अपने पुत्र पौत्रों के हाथ से स्वयं भी दुःख उठाते हैं, क्योंकि, बच्चे अपने माता पिता को वृद्धों के साथ जैसा वर्ताव करते देखते हैं वैसा ही वर्ताव वे बड़े होकर अपने माता पिता के साथ करते हैं। इस प्रकार से वे अपने कुकर्मों का फल अपने पुत्रों के हाथ से इसी जन्म में प्राप्त कर लेते हैं।

श्राद्ध तर्पण विधि

अतः नव युवकों को चाहिये कि:—

१-नित्य प्रातः उठकर अपने माता पिता आदि समस्त वृद्धजनों को नम्रता पूर्वक हाथ जोड़ कर नमस्ते करें।

प्रातर्नत्वा प्रतिदिनं पितरं मातरं गुरुम्। शु० नी० २-४७

२-जब शौचादि से निवृत्त हो जावें तो उन्हें गर्म वा ताजा जल से, जैसा ऋतु वा उनकी प्रकृति के अनुकूल हो, अपने हाथ से स्नान करावें।

३- भोजन के समय उत्तम२ भोजनों से उनको प्रसन्न करें:—

कृशोदकं आहृत्याज्जोदकेन वा।
पयोमूल फलैर्वापि पितृभ्य प्रीतिमावहन्।
मनु० ३ ८२ ॥

अन्न, जल, दूध, मूल तथा फलों आदि खाने पीने योग्य उत्तम २ पदार्थों स पितरों के साथ प्रतिदिन प्रीति पूर्वक श्राद्ध करें॥

ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं पय कीलालं परिस्रुतम्।
स्वधा स्थ तर्पयत मे पितृन्॥ यजु०२।३४॥

हे मेरे पुत्र भृत्यादिको! (ऊर्ज) अनेक प्रकार के उत्तम २ रसों वा रस युक्त पदार्थों (वहन्ती) सुख प्राप्त कराने वाले स्वादिष्ठ जलों (अमृत) रोग नाशक वा जीवनशक्ति को बढ़ाने वाले (घृत पय) घृत दुग्धादि पदार्थों (कीलालम्) उत्तम रीति से पकाए हुए अन्नों पक्वान्नादि तथा परिस्रुतम् रस युक्त पक्के फलों द्वारा (स्वधा स्थ) स्वधा मे स्थिर (मे पितृन्) मेरे पितरों को (तर्पयत) तृप्त करो॥

ये निखाता ये परोप्ता ये दग्धा ये चोद्धिता।
सर्वां स्तानग्न आवह पितृन् हविषे अत्तवे॥
अथर्व० १८ २ ३४

जो पदार्थ जमीन मैं से खोद कर निकाले जाते हैं (जैसे आलू, मूली, गाजर आदि) और जो पदार्थ बीजे जाते हैं (गेहूं, जौ, चना आदि) जो भून कर खाये जाते हैं (धान आदि) और जो बाहर निकाले जाते हैं (सिंघाड़े कमलगट्टे आदि) वे सब प्रकार के भोज्य [illegible] को भोजनार्थ उपस्थित करो।

इस प्रकार से उत्तम स्वादिष्ट, [illegible] तथा रोग नाशक पदार्थों से पितरों को तृप्त रखना चाहिये सायंकाल के समय भी इसी प्रकार से उत्तम २ पदार्थों स सतुष्ट करो।

४—रात को अपने हाथ से उनके बिस्तरों को अच्छे प्रकार से झाड़ कर बिछावें, तथा उनके चरणों [illegible] दबा के सेवा करें, और जब आज्ञा दें, उनको नमस्ते करके अपने बिस्तर पर आ कर सो [illegible] वें, पुरुषों पिता, पितामह आदि) की सेवा पुत्र और स्त्रियों (सास दादी आदि) की सेवा [illegible] करें। दिन के समय भी [illegible] २ आज्ञा दवे २ काम करें। हर समय कार्य उन स पूछ कर उनकी आज्ञा के अनुसार करें। उनकी आज्ञा का कभी उल्लंघन न करें। पर वे धर्म से विरुद्ध कोई कार्य करने को कहें, तो वह कार्य कदापि न करें और नम्रता के साथ ऐसी आज्ञा मानने स इन्कार कर द और कारण भी समझा द।

माता पिता तथा गुरु आदि भी अपने पुत्रों तथा शिष्यों को सदा यही उपदेश किया करें कि

यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि नो इतराणि॥ तैत्तिरीय० प्र० ७ अनु० ११

हे पुत्रो तथा शिष्यो! जो हमारे अनिन्द्य-नीय- धर्म युक्त कर्म सत्यभाषणादि हैं उन को तुम भी किया करो। उन से भिन्न मिथ्याभाष णादि कर्मों को कभी न करो। जो हमारे सुचरित्र [illegible] धर्मयुक्त कर्म [illegible] उन को ग्रहण किया करो [illegible] जो हमारे [illegible] पाचरण हों उनको कभी मत करो।'

(शेष अगले अङ्क मे)

गाय तथा भारतीय मुसलमान

[लेखक—श्री मेधातिथि जी सदर बाजार नागपुर]

दुःख से कहना पड़ता है कि स्वतन्त्र भारत मे ईदे बकर के दिन फिर मुसलमानों की ओर से गाय की कुर्बानी की गई है। प्राय देखा गया है कि मुसलमान एक बात के लिए वचन तो देते हैं परन्तु उस वचन को निभाते नहीं हैं, हम ने दैनिक पत्रों मे मुसलमान नेताओं के वे वक्तव्य पढे जिन म कहा गया था कि अब मुसलमान गाय की कुर्बानी नहीं करेंगे। उन्होने वक्तव्य तो दे दिया परन्तु मुसलमानों को रोका नहीं। परिणामस्वरूप भारत मे फिर स्थान स्थान पर गाय की कुर्बानी हुई। पाकिस्थान मे वह जो जी चाहे करें परन्तु भारत निवासी आर्यो के लिए यह बात असह्य है कि इतनी कुर्बानिया देने के पश्चात् भारत स्वतन्त्र हो और स्वतन्त्र भारत में भी वही पाप होते रहें जिन को रोकने के लिए सत्ता अपने हाथों मे ली है यदि भारत मे स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भी यह सब कुछ होता ही रहा तो आर्यों के सामने यह प्रश्न उपस्थित हो जाना स्वाभाविक ही है कि क्या भारत निवासी हिन्दुओं की ओर से किए गए बड़े २ बलिदान व्यर्थ ही गए। भारत मे हो रहे इन अत्याचारों को रोकने के लिए हम ने भारत के विभाजन को अपने हृदयों पर पत्थर रखकर सहन किया था। क्या वही अत्याचार भारत में फिर भी होते ही रहेंगे और उन्हें रोका नहीं जायगा, और यदि न रोका गया अथवा न रोका जा सका तो फिर हमारे नेताओं ने भारत के विभाजन को स्वीकार किया ही क्यों

इस स्थान पर मुझे श्री महात्मा गाधी जी के वे शब्द याद आते हैं जो उन्हों ने पिछले दिनों इसी सम्बन्ध मे कहे थे। आपने अपनी प्रार्थना सभा में हिन्दुओं को समझाते हुए कहा था कि किसी के धर्म मे बाधा नहीं डाली जा सकती, न मुसलमान हिन्दुओं की पूजा बन्द कर सकते हैं और न हिन्दु मुसलमानों की गाय की कुर्बानी। मै महात्मा जी को भारत का सब से बड़ा पुरुष समझते हुए उनका आदर करता हूँ। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि मै महात्माजी के सब विचारों से सहमत भी होऊ, मै महात्माजी की सेवा में स्पष्ट निवेदन करना चाहता हूँ। गाय की कुर्बानी मुसलमानों के लिए कोई आवश्यक नहीं है। और यदि वह इस त्याग करदें तो क्या मत के दिन उन से किसी भी प्रकार की पूछ ताछ नहीं होगी। मेरे पास अपने इन शब्दों को सिद्ध करने के लिये प्रमाण भी हैं।

मैं इस स्थान पर कुर्आन तथा हदीस दोनों के हवाले देना उचित समझता हूँ अत दोनों के हवालों से बहस की जायगी। मेरे एक भाई श्री मौलवी महेशप्रसाद जी ने लिखा है कि हदीस को सारे मुसलमान नहीं मानते—उन का कहना ठीक है परन्तु मैं यहाँ यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि हदीस को न मानने

वाला केवल एक ही फिरका है अर्थात् "अह ल क़ुरान" जो स्वयं को अहले क़ुर्आन कहता है परन्तु तमाम दुनिया में उन की गिनती एक हजार से ऊपर नहीं है और वह भी केवल हिन्दोस्तान में ही हैं इस से बाहर नहीं। यह फिरका लाहौर में पैदा हुआ और उसके निकट के कुछ शहरों में ही कुछ समय तक फैल कर रह गया आगे नहीं बढ़ सका। मैंने यह गिनती भी कुछ अधिक ही लिख दी है यदि जन गणना की जाए तो वे इससे भी कम निकलेंगे परन्तु यदि वह एक हजार भी हों तो भी दुनियाँ की (५२) बावन करोड़ मुस्लिम आबादी में इसे कुछ महत्व नहीं दिया जा सकता। बाकी तमाम फिरके हदीस को मानते हैं और वहाबी [अहले हदीस] तो इ..ाए हा विशेष रूप से हदीस को देते हैं। अतः ह्रास के प्रमाणों को छोड़ा नहीं जा सकता।

अर्बी भाषा में बक्रतन् शब्द का प्रयोग गाय तथा बैल दोनों ही के लिए किया जाता है। जैसे मनुष्य शब्द का प्रयोग स्त्री तथा पुरुष दोनों ही के लिए किया जाता है-परन्तु बकरतुन् केवल गाय तथा अस्सौर केवल बैल के लिए बोला जाता है (इन तीनों नामों ५९ इस्म (नाम) होने के कारण से नह्वी लिहाज से अलिफ़ लाम तथा तनवीन लगाई गई है)। क़ुर्आन में गाय के काटने का वर्णन केवल दो ही स्थानों पर है और मुसलमान विद्वान इन हीं दो स्थानों से गाय को जिबह (वध) करने को सिद्ध करते हैं। प्रथम स्थल सूरः बकर में है और दूसरा स्थल सूरः अनआम में। परन्तु दूसरे स्थल को अधिक महत्ता नहीं दी जाती। क्योंकि उस स्थल से इस प्रश्न को हल करने के लिए इति-हास तथा तावीलात का सहारा लेना पड़ता है। अतः यवन विद्वान् प्रथम स्थल को ही अधिक महत्ता देकर इस से ही गाय जबह करने को सिद्ध करते हैं। अंतः बहस का स्थान प्रथम स्थल ही रह जाता है। परन्तु यदि इस स्थल की आयत के एक शब्द पर गम्भीरता से विचार किया जाए तो यही शब्द मुसलमानों के कथन के विपरीत बैठता है। और यह सिद्ध हो जाता है कि इतिहास मूसा के द्वारा विशेष कारण से जबह कराई गई एक गाय के बिना गाय के जबह किये जाने का कोई प्रमाण पेश नहीं करता।

वइज् काल मूसा लिकौमिहि इन्नल्लाह यअमुरुकुम् अन तज़बहू बकरतन् कालू अ तत्तखिज़ुना हुज़ुवन् सूरः बकर-रुकूअ८ आयत ६७ और जब मूसा ने अपनी जाति से कहा कि अल्लाह तुमको एक गाय जबह करने के लिए आज्ञा देता है [तब बनिइस्राईल] बोले क्या तू हमारे साथ हंसी मजाक करता है?

पूरी बहस इस हुज़ुवन् शब्द पर आकर समाप्त होजाती है। मूसा की जाति के लोग [बनि-इसराईल] गाय के जबह करने का शब्द सुनते ही एक दम अचम्भे में पड़ गए। और आश्चर्य करने लगे कि आज मूसा हमें यह क्या आज्ञा दे रहा है। वह गाय के जबह करने की बात कभी सोच ही नहीं सकते थे। अर्बी भाषा में क़ुर्आन के प्रकाशित भाष्य जलालैन तथा कश्शाफ को उठा कर देखा जाए तो सारी चीज स्वयं हल होजाती है। उन्होंने भी यही लिखा है कि मूसा की जबानी गाय के जबह करने की आज्ञा सुनते ही उन सब ने आश्चर्य प्रकट करते

हुए कहा कि ऐ मूसा क्या तू हम म हसी कर रहा है। चूंकि इस से प्रथम गाय जबह हुई ही नहीं थी। अत उनका आश्चर्य प्रकट करने करना स्वाभाविक ही था परन्तु जब मूसा ने अधिक जोर दिया और कहा कि यह आज्ञा केवल एक ही गाय के बारे मे है। और इस गाय का पूरा हुलिया बताया तब उन्होंने उस हुलिया की गाय को तलाश करके जबह किया। [यह गाय क्यों जबह की गई थी इस प्रश्न का सम्बन्ध बनीइसराईल तथा मिसर के पुराने इतिहास के साथ है। यदि आवश्यकता पड़ा तो फिर कभी इस के विषय मे कुछ लिखूंगा] मूसा के जमाने मे उस एक ही गाय के जबह करने का प्रमाण मिलता है इस के पश्चात् किसी गाय के जबह करने का प्रमाण नहीं मिलता।

यही वजह कि इतिहास मे गाय के जबह किये का प्रमाण न मिलना ही हजरत मुहम्मद साहिब के सामने एक विकट समस्या बन कर आ उपस्थित हुई। वे गाय को भी हलाल करके भोज्य पदार्थ बनाना चाहते थे। दूसरे पशु तो अरब में मार कर खाये जाने का रिवाज था। और प्रायः ऐसा भी हुआ करता था कि जीवित पशु का जबह किये बिना ही तलवार से उस की छाती फाड़ कर कलेजी निकाल ली जाती थी और उस को वे लोग भून कर खाया करते थे। यद्यपि जबह करने की बजाए इस प्रकार छाती फाड़ कर कलेजा निकाल लेने से पशु को अधिक कष्ट होता है। परन्तु अरब इस कष्ट की ओर ध्यान नहीं दिया करते थे। स्वयं हजरत मुहम्मद साहिब के चाचा हजरत हमजा ने हजरत अली के दो ऊंटों की शराब मे मस्त होने की दशा मे छाती फाड़ कर कलेजी निकाली और भून कर खा गए। इस प्रकार के प्रमाण तो अनेक मिलते हैं परन्तु गाय के काटने का इतिहास मे प्रमाण नहीं मिलता। और गाय के जबह करने विषयक प्रमाण का न मिलना ही इस बात को सिद्ध करता है कि हजरत मुहम्मद साहिब से पूर्व गाय जबह नहीं की जाती थी।

(शेष अगले अङ्क मे ,)

—✕—

महर्षि याद आते हैं।

[लेखिका—श्री सुशीलादेवी चन्द्रकान्त त्रिवेदी विद्यालंकृता, गुरुकुल सूपा, नवसारी]

कहा जाता है कि अंग्रेज लोग बिस्तर बाँधकर जारहे हैं, और हिन्दुस्तान स्वतन्त्र होगया है। यदि यह सत्य है तो सिन्ध और पंजाब से हिन्दू और सिक्ख भाई जान बचाकर क्यों भागदौड़ मचा रहे हैं? राज धानी दिल्ली की नगरी मे महात्मा, सरदार और पंडितजीकी आंखों के सामने हिंदू और मुसलमान दूसरे के गले पर क्यों छुरी चला रहे हैं? युग द्रष्टा महर्षि दयानन्दने अपने सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेद-दिभाष्य भूमिका तथा वेदभाष्य की पंक्ति २ में आर्यों के चक्रवर्ती साम्राज्य की जो घोषणा की थी आज उस साम्राज्य के स्वप्न तो दूर रहे, पश्चिमी पंजाब, सिन्ध, पूर्वबंगाल और न जाने क्या २ हमसे जुदा होगये हैं और हो रहे है? यह सब क्यों? पांचाल देश जिसमे ऋषियों ने वेदमन्त्रो का गान किया था, वह लवपुर, (लाहौर) तथा पुष्पपुर (पेशावर) तक्षशिला जिसमें हजारों विद्यार्थी सरस्वती की आराधना करते थे—महर्षि दयानन्द, ला० लाजपतराय महाराज रणजीतसिंह, गुरु तेग बहादुर तथा सरदार भगतसिंह के नारों से जिसका आकाश गुंज उठा था, आज उसी पंजाब की गली गली जलियान वाला बाग बन चुकी है। क्या हमारी यही स्वतंत्रता है? आज मुझे मेरे वे ऋषि याद आते हैं जिन्होंने के. पी. जायसवाला, विनयकुमार सरकार तथा आधुनिक इतिहासविज्ञो की उत्पत्ति से पूर्व चीन, जापान, अमेरीका, फारस और देश विदेशों के आर्य विजय के बृहत्तर भारत के स्वप्न सुनाये थे और हमारा सिर ऊंचा किया था। कहाँ है वह विशाल भारत और कहां रहा यह विच्छिन्न भारत?

वह बगाल जिसकी धूली मे चैतन्यदेव, परमहंस राम कृष्ण, स्वामी विवेकानन्द, कवीन्द्र रवीन्द्र तथा बंकिम खेले थे, जहां "हरे मुरारे मधु कैटभारे" की ध्वनि गुंजानेवाले खुदीराम बोस तथा कन्हैया लाल दत्तने माँ का दूध पिया था, जहाँ "वंदे मातरम्" गाकर भारत माँ की वन्दना की थी, जहां यतीन्द्रनाथ दास ने फांसी के शूल को गले का हार बनाया था, आज वही जगदीशचन्द्र तथा शहीद नेताजी का बंगाल सुहरावर्दी तथा निजामुद्दीन की तलवार की प्यास बुझारहा है।

अंधेरी रात में अपने इकलौते पुत्र की राख के साथ कफन को उठाकर ले जाती हुई गरीब विधवा को देख कर वे ऋषि रो पड़े थे, जिन्होंने मां बाप तथा भगिनी के वियोग मे एक भी आँसू न बहाया था। विधवा के आर्तनाद, गोमाता की पुकार तथा अबला के चीत्कार ने जिस ऋषि की समाधि के आनन्द को नीरस बना दिया था, वे ऋषि मुझे याद आते है। नोवाखाली, रावलपिंडी, लाहौर, अमृतसर, पेशावर, मुल्तान, और करांची मे अबलाओं के अपहरण, सतियों का सतीत्व-नाश, अवध्य बालक, स्त्री और बूढ़ों के खून की नदियाँ—ये सब क्यों हो रहा है? ऋषि

ने "स्त्री शूद्रौ नाऽधीयाताम्" के स्थान पर "यथे-मां वाचं कल्याणी मावदानि जनेभ्य" की घोषणा करके स्त्रियों को अमृत मन्त्र सिखाया था। स्त्रियों को बलवती, आदर्शमाता का बोध दिया था। आज हिन्दू जाति के अन्याय से और मुसलमानों के अत्याचारों से अबलायें दर २ भटक रही हैं। शूद्र तथा अन्त्यजों को गले लगा कर आर्य बनाया था, गुणकर्मानुसार ऋषि पद पानेका अधिकारी बनाया था। "देव्याय कर्मणे शुन्धध्वम्" का पाठ करके वैदिक धर्म की गङ्गा में स्नान करने के लिए आह्वान किया था। पर हाय !! ऋषि की बात किसी ने न सुनी। आज वे सब कुरान के कलमे पढ़ने लग गये और इस्लामी तेग को लेकर अपने हिन्दू भाइयो का बदला लेकर खून की होली खेल रहे हैं। तब मुझे वे ऋषि याद आते हैं जिन्होंने सर सैयद अहमद को गले से लगाया था, जिन्होने इमदाद-हुसैन को प्रेम का प्याला पिलाया था, जिनकी कृपा से उनके शिष्य शहीद श्रद्धानन्द ने गाजी बनने वाले अब्दुलरशीद की प्यास छाती के खून से बुझाई थी, सर सैयद अहमद ख्वाजा कमा-लुद्दीन चिश्ती तथा अब्दुलकलाम आजाद को कुरान का वैदिक सच्चा भाष्य सिखाया था।

आज जूनागढ़, तथा हैदराबाद के राजा लोग भारत के गौरव को ठुकराकर हमारा अपमान कर रहे हैं। काठियावाड़ के वीर और भक्तों की कथाओं पर, श्रीकृष्ण, महर्षि दयानन्द तथा महात्मा गान्धी की महत्ता पर पानी फेर देना चाहते हैं। ऐसे समय मुझे अपने वे ऋषि याद आते हैं जिन्होंने कश्मीर के राजा को अपने ब्रह्मचर्य का बल दिखाया था। राजपूताने के राजाओं की गद्दियों को ठुकराया था तथा मूर्ति पूजा का खण्डन कर के सच्चे भगवान की उपासना सिखाई थी। राजाओं को ठुकरा कर कहा था कि भोग-विलास मे पड़कर कुत्तों के समान अपना जीवन नष्ट कर रहे हो। उन्हें यह भी साफ साफ कहा था कि तुम्हारे राज्य को एक दौड़ में लाघ सकता हूँ। धन्य है वह तेज, धन्य है सत्य की धुन ! उस महर्षि पर लाख बार हम निछावर हो जाते है।

महात्मा गान्धी एक साथ ही राम और रहीम की धुन लगाते हैं। लीगी उसे सुनना नहीं चाहते, गान्धीजी राम का अपमान सुन कर चुप रह जाते है। क्या ही अच्छा हो कि महात्मा उन महर्षि के पीछे चलते हुए राम की जगह ओंकार की धुन लगावें और दशरथ राम की भी लाज बचावे। आज हमे ऋषि पद पद पर याद आते है और अनुभव होता है कि यदि हम ऋषि के पद चिन्हों पर चले होते तो हमारी यह दुर्दशा न होती।

भाइयो! भूल हुई सो हुई। अब हम कटि बद्ध होकर निश्चय पूर्वक बोलें "ऋषि की जय" "महर्षि दयानन्द की जय"। निराशा मे, आशामें, सम्पत्ति मे, विपत्ति मे, सुख मे, दुःख मे, हम सदा महर्षि की जय पुकारें।

महात्मा नारायण स्वामि वचनामृत

(१) मनुष्य का हृदय और मस्तिष्क ऐसे मिले होने चाहियें मानो वे एक दूसरे के साथ मिले हुए हैं। तात्पर्य यह है कि मस्तिष्क के काम तर्क और हृदय के काम विश्वास मे मेल होना चाहिये अर्थात् तर्क के द्वारा सत्यासत्य का विवेक प्राप्त करके जो सत्य हो उस पर विश्वास होना चाहिये ॥ (नारायणोपदेश पृ० १०)

(२) मनुष्य का चरित्र ही मनुष्यत्व है। इसी लिए विद्वानों ने कहा है कि मनुष्यत्व, चरित्र, सत्य तथा धर्म पर्याय वाचक हैं। चरित्र मनुष्य में किस प्रकार आवे ? उसके साधन ब्रह्मचर्य, तप और स्वाध्याय है। ब्रह्मचर्य से शरीर, अन्तःकरण और आत्मा सब पुष्ट होते हैं। ब्रह्मचर्य इन्द्रिय संयम का नाम है। तप से मनुष्य वीर और साहसी बन जाता है। स्वाध्याय उत्तम २ ग्रन्थों के नियम पूर्वक अध्ययन का नाम है। मनुष्य इन तीनों साधनों ब्रह्मचर्य, तप और स्वाध्याय से काम लेकर अपने को चरित्र वाला बना कर अपने को श्रेष्ठ मनुष्य बना लेता है।

(नारायणोपदेश पृ० ७२)

(३) आत्मबल की प्राप्ति से मनुष्य मृत्यु के भयसे स्वतन्त्र हो जाता है और इस नियमपर पूर्णतया अमल करने लगता है कि जब जीने की उपयोगिता हो जीना चाहिये, और जब मरने की उपयोगिता हो, मनुष्य को मर जाना चाहिये। (नारायणोपदेश पृ० ७३)

(४) ओंकार के जप की मर्यादा यह है कि मनुष्य हृदय मे यह विचार रखते हुए कि ओम् (रक्षक परमेश्वर) हृदय मे होते हुए उसकी रक्षा कर रहा है, ओंकार का वाणी से उच्चारण करे। पहली बात अर्थ की भावना और दूसरी बात (उच्चारण) जप है। इस जप से कोई श्वास जप काल में खाली नहीं जाने देना चाहिये। इस जप का मनोवैज्ञानिक प्रभाव यह होता है कि वाच्य का गुण जप करने वाले मे आ जाता है। इस प्रकार ईश्वर के जिस भी गुण वाचक नाम का मनुष्य जप करता है वह गुण उसके भीतर आता जाता है, और इस गुण वृद्धि से जपस्वी ईश्वर के समीप होता जाता है। इस जप से मनुष्य ईश्वर के साक्षात्कार करने की योग्यता प्राप्त करता है। (नारायणो० पृ० १६३)

(५) अच्छे और भले आदमी अपने विवेकमय, प्रेममय शब्दों द्वारा बिगड़े हुए मनुष्यों को सुधार कर देश को उन्नत बनाया करते हैं अच्छे और भले बनने के लिये आत्मनिरीक्षण (Self introspection) रामबाण औषध है। इस के द्वारा बड़े २ बिगड़े मनुष्य धर्मात्मा बने हैं। प्रायश्चित्त से पाप नष्ट नहीं होता, केवल पापजन्य भावना का ही नाश होता है। अतः प्रायश्चित्त से मनुष्य का भावी जीवन पवित्र होता है। (नारायण सुधा पृ० २०)

(६) अच्छे संकल्प मानसिक शक्ति बढ़ाने वाले हुआ करते हैं। मानसिक शक्ति के बढ़ जाने से मनुष्य का चेहरा प्रभावोत्पादक हो जाता और आंखों में तेजस्विता आ जाया करती है। दूसरे उससे निर्बल प्राणी, उसकी इन शक्तियों से प्रभावित हो जाया करते हैं।

(नारायण सुधा पृ० ३१)

(७) सेवा से मनुष्य में नम्रता, निरभिमानिता और सामाजिक प्रेम आया करता है जिस से मनुष्य जीवन ऊँचा हुआ करता है और उस में समता आया करती है। सेवा भाव से हम अन्यों से अनेक दोष छुड़ा सकते हैं। सेवा मनुष्य को उच्च और लोकप्रिय बनाने का मुख्य साधन है। जब मनुष्य शुद्ध अन्न का सेवन करता, आस्तिकता के ऊँचे भाव रखता और सेवा की वृत्ति बना लेता है तो इससे उसका जीवन उत्तम और श्रेष्ठ तथा ईश्वरमय बना करता है।

(नारायण सुधा पृ० ४२)

(८) आत्मनिरीक्षण से लाभः—

अपने को अच्छा बनाने और अपने दोष और गुणों को जानने के लिए मनुष्य का कर्तव्य है कि आत्मनिरीक्षण के नियम को अपनावे। मनुष्य जब इस नियम को अपनाता है तो शुरू में तो अपने किये कृत्य उसकी दृष्टि से ओझल रहते हैं परन्तु दो सप्ताह के अभ्यास के बाद ही अपना किया हुआ कृत्य मानो चित्र बन कर सामने आ जाता है। असफलता को सफलता में परिवर्तित करने के लिये यही अचूक औषधि है कि आदमी अपना दोष ढूंढे कि क्यों असफलता हुई है। ऋषि दयानन्द का जीवन इस शिक्षा का क्रियात्मक उदाहरण है।

नारायण सुधा पृ० ५४)

(९) केवल 'ओ३म्' के उच्चारण से लाभ नहीं हो सकता जब तक उस के अर्थ का चिन्तन भली भाँति न किया जाए। ओ३म् का मुख्यार्थ रक्षक है। रक्षक के रूप में परमेश्वर का ध्यान करने से चित्त के अन्दर निर्भयता आती है। जब सर्वशक्तिमान परमेश्वर हमारा रक्षक है तो भय, चिन्ता का क्या काम है? इस प्रकार 'ओ३म्' का जप मनुष्य को सर्वथा निर्भय बना देता है। (नारायण सुधा पृ० ६५)

(१०) हमारे देश मे जगन्मिथ्यावाद की शिक्षा ने एक मनोवृत्ति पैदा करदी है कि जिससे प्रत्येक मनुष्य जगत् को मिथ्या समझने लगा है। फ़ारसी भाषा के ग्रन्थों मे भी इस दूषित मनोवृत्ति का अनुकरण किया गया है, जगह २ बदकमीनी दुनियाँ कहा गया है। यह सब मत शङ्कराचार्य के उसी जगत् मिथ्यावाद का परिणाम है, वास्तव मे इस दूषितवाद ने आम तौर से देश को और विशेष रूप से हिन्दू जाति को बड़ी हानि पहुंचाई है। इस वाद पर ध्यान देने से स्पष्ट हो जाता है कि इस में रत्ती भर भी सच्चाई नहीं है। ......जगत् को मिथ्या कहना इसे न समझने के सदृश है। यह जगत् है जिस मे रह कर हम अभ्युदय निःश्रेयस दोनों की प्राप्ति किया करते हैं। फिर यह मिथ्या कैसे हो सकता है? इस लिये जगत् में आने को अपना सौभाग्य समझते हुए उसमें अधिक से अधिक लाभ उठाना चाहिये॥ (नारायण सुधा प० ६३)

श्री म० नारायण स्वामी जी और उनके स्मारक का प्रश्न

[लेखक—श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी एम० ए० रि० चीफ जज ज्वालापुर]



श्री महात्मा नारायण स्वामी

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी के देहावसान से आर्यसमाज की जो क्षति हुई है उस का पूरा होना सम्भव नहीं। श्री स्वामी जी आर्यसमाज के सर्वमान्य नेता थे। उन्होंने लगभग १५ वर्ष तक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के जो सब आर्यसमाजों की शिरोमणि सभा है प्रधान पद का उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य बड़ी योग्यता व लगन के साथ किया और अन्त समय तक उस कार्य भार को संभाले रहे। हैदराबाद सत्याग्रह और सिन्ध सत्याग्रह में जो सफलता हुई उस का श्रेय अधिकांश मे श्री स्वामी जी को ही था। सिन्ध सत्याग्रह की अन्तिम अवस्था मे जब उन को कराची जाना पड़ा तो उन का वह रोग जिस के कारण उन का प्राणान्त हुआ आराम हो चुका था। कराची जाने से वह रोग बढ़ गया। हैदराबाद सत्याग्रह के बाद और वहां के जेल निवास के कारण स्वामी जी के शरीर में कुछ दुर्बलता आ गई थी। उन के भक्त और मित्र एवं डाक्टर लोग उन को यही सलाह देते रहते थे कि वे पूर्णतया आराम करें। दो या तीन वर्ष हुए स्वामी जी ने आर्य पत्रों द्वारा य घोषणा भी क दी थी कि उन का स्वास्थ्य अब ऐसा नहीं कि वे बाहर आने जाने की यात्रा कर सकें इ लि आर्यसमाजों को चा िए कि अपने उत्सवों पर उन को निमन्त्रित न किया करें, परन्तु आर्यसमाज कब मानती थी? कुछ आग्रह-वश उन को बुलाती ही रहीं और पूज्य स्वामी जी अपना कर्तव्य समझ कर बहुधा उन की प्रार्थनाओं को स्वीकार कर लेते थे। इस प्रकार शरीर छोड़ने से कुछ मास पहले तक श्री स्वामी जी प्रचार तथा साहित्य लेखन का कार्य करते ही रहे और आर्यसमाज का कार्य करते हुए ही शरीर छोड़ा।

श्री स्वामी जी ने अपना सारा जीवन आर्यसमाज की सेवा में व्यतीत किया और उन का जीवन वास्तव में आर्यसमाज के गत ५० वर्ष का इतिहास रूप ही था। मेरा परिचय श्री स्वामी जी से लगभग ४० वर्षों से था। नारायण आश्रम रामगढ़ मे जहां स्वामी जी ने २५ वर्ष स्वाध्याय तप और योग मे व्यतीत किए और वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर मे मेरी भी कुटी है। इन दोनों आश्रम मे समय २ पर रहने से भी श्री स्वामीजी के साथ विशेष सम्पर्क

का अवसर मिला। स्वामी जी वास्तव में एक आदर्श आर्य्य और सन्यासी थे। उनकी साहित्य सेवा और मौखिक प्रचार तो आर्य्य जनता के समझने मे स्पष्ट रूप स आ जाती थी परन्तु उनक बहुत स चरित्र सम्बन्धी गुण ऐसे थे जिनको साधारण जनता नहीं जान सकती थी। दो एक बातों का उल्लेख करना पर्याप्त होगा। स्वामीजी समय क बड़े पाबन्द थे। रामगढ जैसा छोटी समाज के साधारण सत्सङ्गों मे (रामगढ मे रहते हुए) कभी अनुपस्थित नहीं होते थे और कभी एक मिनट की भी देरी नहीं होने देते थे। जिस काम करने का सकल्प कर लेते थे उसको अवश्य पूरा करते थे चाहे उसक करने मे कितनी ही कठिनाई क्यों न झेलनी पड़े। स्वामी जी का तप और त्याग की भावना अच्छी थी। हैदराबाद के सत्याग्रह के बाद जब उनका शरीर कुछ दुर्बल हो चला था, उनक भक्तो ने और सार्वदेशिक सभा के अधिकारियो ने कई बार निवेदन किया कि उनके लिए एक नौकर उनकी सेवा क लिए रख दिया जाये परन्तु उन्होंने स्वीकार नहीं किया। अपनी सेवा अपन आप ही करना पसन्द करते थे। रामगढ आश्रम मे निवास करते हुए अपना दैनिक भोजन भी कूकर की सहायता स अपने आप बनाते थे।

स्वामी जी के स्वर्गवास स उनके स्मारक बनाने का प्रश्न आर्य जनता के सामने है। आर्यमित्र के सम्पादक ने २३ अक्टूबर १९४७ क अङ्क मे यह सलाह सयुक्तप्रान्त की आर्य प्रतिनिधि सभा व आर्यसमाजों को दी है कि उक्त सभा में जो अपना भवन "नारायण स्वामी भवन" के नाम से पूर्व से ही तय्यार किया है उस को एक विशाल और सर्वाङ्गपूर्ण भवन बना कर स्मारक का रूप देवें। नारायण स्वामी विद्यालय रामगढ ने यह निश्चय किया है कि यह स्वामी जी की स्मृति म रामगढ़ हाईस्कूल को एक अच्छा कालेज बनादेवें और उस के साथ एक कन्या विद्यालय और शिल्प विद्यालय भी जोड़ जावें। विचार अच्छा है वास्तव में स्वामी जी के स्मारक के लिए रामगढ़ से बढ कर और कौन हो सकता है जहाँ कि स्वामी जी ने सन्यास आश्रम मे प्रवेश करने स अन्त काल तक २८ वर्ष तक तप और त्याग का जीवन बिताए और वह आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त की जिस स आर्यसमाज की सब प्रकार सेवा कर सकें

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा और दयानन्द सन्यासी वानप्रस्थ मंडल हरिद्वार दो बड़ी संस्थायें है जिनके प्रधान श्री स्वामी जी थे। वे भी अपने २ दृष्टिकोण से इस प्रश्न पर विचार करें कि श्री स्वामी जी के स्मारक का क्या रूप हो। दयानन्द सन्यासी वानप्रस्थ मंडल जिसकी स्थापना स्वामी जी ने थोड़े वर्ष हुए की थी एक महत्वपूर्ण संस्था है, यद्यपि आर्य जनता को उसका बहुत कम परिचय है क्योंकि उसकी ओर स अभी तक बहुत थोड़ा काम आर्य जनता के सामने आया है। वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर जिस म स्वामी जी बहुधा निवास करते थे उसी मंडल क आधीन है, जिसका उद्देश्य वानप्रस्थ और सन्यासाश्रम का सुधार करना है। गृहस्थाश्रम को मनु जी ने ज्येष्ठाश्रम कहा है क्योंकि शेष तीनों आश्रमों का पालन उसी के द्वारा होता है। इन तीनों आश्रमों के सुधार की आवश्यकता थी। ब्रह्मचर्याश्रम क सुधार के लिये अन्य समाज

ने गुरुकुलों की स्थापना की। वानप्रस्थ आश्रम को लोग सर्वथा भूले हुए थे उसको आर्यसमाज ने ही पुनर्जीवित किया। सन्यासाश्रम की भी बहुत गिरी अवस्था हो चुकी थी। सन्यासी व साधुओं की संख्या तो लाखों है परन्तु उन मे सौ मे दो चार भी ऐसे कठिनता से मिलेंगे कि जो सच्चे साधु वा संन्यासी कहला सकें। शेष बहुधा केवल भीख मांगना अपना कर्त्तव्य समझ कर समाज के ऊपर भार रूप बने हुए हैं। यदि संन्यासियों मे सुधार हो जाय तो देश का बहुत कुछ कल्याण हो सकता है। अतः वानप्रस्थ और संन्यासाश्रमों का सुधार बड़े महत्व का प्रश्न है। इन्हीं दो आश्रमो मे से आर्यसमाज के लिये सच्चे प्रचारक और गुरुकुलादि के लिये योग्य अध्यापक आदि मिल सकते हैं।

सन्यास आश्रम के सुधार का प्रश्न कुछ टेढ़ा और जटिल है। किन्तु वानप्रस्थ आश्रम के सुधार का कार्य अभी केवल प्रारम्भिक दशा मे है ज्वालापुर का आश्रम पहिला आश्रम है जिस को स्वर्गीय स्वामी जी ने स्थापित किया था। अभी हाल मे एक ऐसा ही आश्रम बिहार प्रान्त मे स्थापित हुआ जिस के प्रधान श्री रामानन्द स्वामी और प्रधान मन्त्री श्री भजनानन्द जी वानप्रस्थी है और आश्रम का स्थान शायद अभी निश्चित नहीं हुआ। ज्वालापुर का वानप्रस्थाश्रम भी स्वर्गीय स्वामी जी का एक अच्छा स्मारक हो सकता है आशा है कि मण्डल से उस को आवश्यक सहायता मिलेगी और ईश्वर मे प्रार्थना है कि उस आश्रम के सदस्यों को ऐसी शक्ति प्रदान करे कि वे पूज्य स्वामी जी के गुणों का अनुकरण करते हुए अपने जीवन को उन्नत करें जिस से उन का आश्रम स्वामी जी का अच्छा स्मारक बनने के योग्य हो जाय।

ज्वालापुर गङ्गाप्रसाद

३० १० . ४७

महात्मा नारायण स्वामी जी

[श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम. ए. मन्त्री सार्वदेशिक सभा, देहली ।]

आज श्री स्वामीजी संसार में नहीं हैं। उनका १५ अक्टूबर १९४७ को १-५५ मिनट पर दोपहर के बाद बरेली में देहावसान हो गया। मुझे इलाहाबाद मे १५ अक्टूबर को प्रात काल वीकर द्वारा ज्ञात हुआ कि श्री स्वामीजी की अवस्था अत्यन्त चिन्ताजनक है। मै अगली गाड़ी से बरेली चल पड़ा परन्तु मेरे पहुंचने के पहले ही वे शरीर त्याग चुके थे। बरेली में तीन मास से श्री डाक्टर श्यामस्वरूप जी श्री स्वामीजी की चिकित्सा कर रहे थे। और श्री स्वामीजी महाराज उनकी भक्ति से अत्यन्त प्रसन्न थे। कभी२ ऐसी आशा हो जाती थी कि स्वामीजी अच्छे हो जायंगे। परन्तु रोग भयानक था। जब-से स्वामीजी बीमार पड़े थे, श्री जीवन मुनिजी उनकी सेवा कर रहे थे। श्री मुनिजी के साथ स्वामीजी का गत ३६ वर्ष का प्रेम था। उन्हीं की प्रेरणा से मुनिजी ने आत्म-विद्या का अध्ययन किया तथा संन्यास लिया। श्री मुनिजी ने इस रुग्ण अवस्था में स्वामीजी की २४ घण्टे शुश्रूषा की। रात-दिन एक कर दिया। कभी-कभी तो रातों रुक चक बैठ कर देख भाल करते थे। आर्य समाज श्री डा० श्यामस्वरूप और श्री जीवन मुनिजी का अत्यन्त आभारी है।

आर्य समाज को श्री स्वामीजी के निधन पर अत्यन्त शोक है। स्वामीजी को आर्य समाज मे ठोस काम करते हुये ५० वर्ष से अधिक हो गये। उन्होंने सदा आर्य समाज के उच्च तल पर काम किया। २० वर्ष से समस्त आर्य जगत् के वे एकमात्र नेता थे। वे आर्य सार्व देशिक सभा सभा के कई बार प्रधान रहे और अब कई वर्ष से प्रधान थे। उनका विद्युत्सम प्रभाव समस्त आर्य समाज पर था। उनकी त्याग और तपस्या का सब लोहा मानते थे। भिन्न-भिन्न मत रखने वाली पार्टियां उनके समक्ष दब जाती थीं। उन में सहन शीलता बहुत थी। परन्तु वे अत्याचार का प्रतिरोध बड़े बल से करते थे। हैदराबाद सत्याग्रह और सिन्ध के सत्यार्थ-प्रकाश आन्दोलन में उन्होंने समाज का बड़ा अच्छा और सफल नेतृत्व किया। वे बड़े निर्भीक थे। बहादुराबाद में जब अंगरेजी सैनिक ने ओ३म् का झण्डा उतार लिया तो स्वामीजी ने उसका इतना घोर प्रतिरोध किया कि सरकार ने उस सैनिक से खुले क्षमा याचना कराई। स्वामीजी के जीवन को सैकड़ों घटनायें बड़ी शिक्षाजनक हैं। ऐसे शुद्ध हृदय नेता ससार मे बहुत कम होते हैं। आवश्यकता है कि हम स्वामीजी के जीवन से शिक्षा लेकर आपस मे सद्भावना उत्पन्न करें। भेद-भाव को मिटावें और वेद-प्रचार के कार्य को आगे बढ़ावें। ———

भूल सुधार

अगस्त के सार्वदेशिक मे सभा की दान सूची मे आर्य समाज सावर (अजमेर) के नाम से पजाब फण्ड के दान में ६१) दिखलाए गये हैं। यह दान वास्तव मे आर्य समाज सरवाड़ (अजमेर) का है। कृपया पाठक सुधार कर पढ़ें।

मन्त्री सार्वदेशिक सभा।

आर्य जगत्

आर्य समाज नैरोबो

४४ वा वार्षिकोत्सव

इस वर्ष का वार्षिकोत्सव यजुर्वेद पारायण यज्ञ से २९ जुलाई १९४६ को प्रारम्भ हुआ। प्रतिदिन सायंकाल श्री प० सत्यपाल जी सिद्धान्तालङ्कार अथर्वण सूक्त से वेद कथा करते रहे जिसका जनता पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। ३० तथा ३१ को शिशु स्वास्थ्य प्रदर्शनी हुई जिसमें ९१ शिशुओं ने भाग लिया। २ अगस्त को श्री माननीय बाबू मथुरादास जी ने अपने पवित्र कर कमलों से 'ओ३म्' की ध्वजा फहराई। उसी दिन शिक्षाविभाग के सहायक सर्वाधिकारी (Deputy Director) श्री. W. D. Wadley ने आर्य कन्या पाठशाला की कला प्रदर्शनी का उद्घाटन किया इस बार की प्रदर्शनी को सब तरह से आकर्षक और सफल बनाने का पूरा प्रयत्न किया गया जिस के लिये पाठशाला के आचार्य श्री मा. आर्यमुनि जी तथा अनेक उनके सहयोगी धन्यवाद के पात्र हैं। उसी दिन उन दोनों अध्यापकों को विदाई दी गई जो हिन्दु विश्व विद्यालय मे भारत सरकार की ओर से पढ़ने के लिये जा रहे थे। पूज्य श्री म बद्रीनाथ जी द्वारा शुक्र और शनि (पहली तथा दूसरी अगस्त) को किया हुआ मैजिक लैन्टन शो भी अच्छा रहा। पाठशाला की छात्राओं द्वारा नेता श्री सुभाषचन्द्र जी बोस के जीवन की मुख्य घटनाओं का संगीतमय अभिनय दिखाया गया जिसे जनता ने बहुत पसन्द किया। आर्य कुमारों की ओर से किया हुआ 'धर्म पर मुकद्दमा' नाम का अभिनय अपने ढंग की नयी चीज थी। वाग्वर्धिनी सभा द्वारा किया हुआ कैबिनेट मिशन के बाद की विचार धारा का प्रदर्शन भी जनता के ज्ञानवर्धन की दृष्टि से उपयोगी था। इस बार प्रतिनिधि सभा की वार्षिक साधारण बैठक में 'आर्यन प्रैस' के लिये दो लाख के शेयर चालू करने का निश्चय किया गया। जनता ने भी इस सामूहिक प्रवृत्ति को पूरी २ सहायता दी। श्री मा कृष्णदेव जी तथा श्री प० धर्मेन्द्रनाथ जी वेदालङ्कार के व्याख्यानों को भी जनता ने ध्यान से सुना। इस अवसर पर लगभग २२,००० शि. एकत्र हुए।

उत्सव के कार्यक्रम को सफल बनाने के लिये जो निष्काम सहायता आर्य परिवार के बन्धुओं ने दी है उस के लिये उन सबका मैं हार्दिक धन्यवाद करता हूँ। मन्त्री आर्यसमाज

सस्ते ट्रैक्ट कैसे फैलें

सस्ते ट्रैक्टो को बेचने या बाटने के लिये आर्य भाइयों को आगे आना चाहिए जो भाई १०० ट्रैक्ट बेच या बाट सकते हों उनके लिये हमें अपने यहां से छपा सकते है या उनकी मर्जी के मुताबिक ट्रैक्ट विद्वानो से लिखा कर उन्हें बेचने को दे सकते है। अधिक हमसे लिखा पढ़ी करें। भजन रामायण –)॥ हवन –)॥ सन्ध्या –)॥ तीव्र ज्ञानमाला –)॥ बाटने तथा थोक मे ३) रु० सकड़ा पर अन्य छप रहे है।

वैदिक पुस्तकालय माईथान, आगरा।

वार्षिक चुनाव

आर्य प्रतिनिधि सभा पू. अफ्रीका की वार्षिक साधारण सभा २ अगस्त १९४७ शनिवार को रात के ८-३० बजे हुई, जिस में १९४७-१९४८ के लिये निम्न अधिकारी चुने गये

प्रधान और ट्रस्टी - श्री बी. आर. शर्मा

संयुक्त प्रधान -- डा रामरक्खाजी

उप प्रधान प० ऋषिराम जी शर्मा

(अभी चुने जाने हैं)

मन्त्री गुरुदास राम भंडारी

उपमन्त्री श्रीमती विद्यावती जी खन्ना

कोषाध्यक्ष श्री बाबूराम भल्ला

अन्तरंग सभा के सदस्य

सर्व श्री प. प्रीतम जी, कृष्णदेव जी कपिल लालचन्द प्यारेलाल जी खोसला, त्रिलोकनाथ जी श्रीमती चननदेवी श्रीमती रामरक्खी जी.

मन्त्री

आर्य प्रतिनिधि सभा

हर्ष समाचार

आगरे का प्रसिद्ध प्रेम-प्रेस तथा प्रेम-पुस्तकालय जो सन् ४२ में ज़ब्त हो गया था। उसके पचास हज़ार के क्लेम में सरकार ने ५०००) रुपया पुन कार्य प्रारम्भ के लिये दिया है बाकी के लिये विचार का वायदा किया है।

आर्य समाज और कश्मीर

सार्वदेशिक सभा के मान्य मन्त्री श्री० पं० गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय एम० ए० ने निम्न वक्तव्य समाचार पत्रों में प्रकाशनार्थ भेजा है।

The Government of Indian Dominion's Prompt response to the appeal of Kashmir has been received in India with great satisfaction. The marauaing activities of the allies of Pakistan and the most provocative statements of the Pakistan leaders could not but evoke a wave of Indignation in the minds of all reasonable people. Kashmir's is a just cause and the help of pandit Jawaharlal's Government has not come a minute too soon. The Aryasamajists have never spared themselves in the fight for a just cause. I would advise all the Aryasamajists of Indian Dominion to strengthen the hands of the Government by joining the army or any national militia that the Indians or the Kashmir Government may decide to raise. Kashmir is an ancient centre of Aryan civilization. The great historian Kalhan was a Kashmiri. The great grammarian Kayyat hailed from Kashmir. Kashmir's recent contribution to India's freedom cannot be ignored. It is the duty of every Indian to protect Kashmir from Pakistan marauders.

Gangaprasad Upadhyaya M. A.
Secretary
International Aryan League. Delhi.

अर्थात् कश्मीर को अपील के भारत सरकार की ओर से अविलम्ब क्रियात्मक उत्तर पर समस्त भारत में बड़ा सन्तोष प्रकट किया गया है। पाकिस्तान के साथियों की आक्रमणात्मक प्रवृत्तियों और पाकिस्तानी नेताओं के अत्यधिक उत्तेजक वक्तव्यों से सभी विचारशील व्यक्तियों के मन में मन्यु और रोष मय तरङ्गों का उत्पन्न होना अनिवार्य था। काश्मीर का पक्ष न्याय संगत है और पं० जवाहरलाल जी की सरकार की सहायता सर्वथा सामयिक है।

आर्य समाज ने किसी भी न्याय संगत बात के लिए युद्ध करने में कभी संकोच नहीं किया। मैं भारत सङ्घ के सब आर्यों को परामर्श दूंगा कि वे भारतीय सेना अथवा काश्मीर के भारतीय जो राष्ट्रीय सेना बनाने का निश्चय करें उसमें सम्मिलित होकर सरकार के हाथों को दृढ़ करें। काश्मीर आर्य सभ्यता का प्राचीन केन्द्र है। सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक कल्हण काश्मीर निवासी था। विख्यात वैयाकरण कैयट भी काश्मीर वासी था। भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में काश्मीर वासियों के आधुनिक भाग को कभी नहीं भुलाया जा सकता।

काश्मीर की पाकिस्तानी आक्रमणकारियों से रक्षा करना प्रत्येक भारतीय का कर्तव्य है।

धर्मदेव विद्यावाचस्पति,
स० मन्त्री सार्वदेशिक सभा, देहली।

Swami Dayanand and Arya Samaj

[By Justice N. Chandra Shekha Iyar Madras]

Swami Dayanand belongs to the class of reformers; and the work he did for the social and religious reformation of India cannot be exaggerated. If Hinduism is today a living force and a religion which sustains the faith and inspires the hope of millions of our countrymen, it is due in large measure to the efforts of men like Swami Dayanand Saraswati and Swami Vivekananda, whose interpretation and exposition of its cardinal tenets made, what till then looked almost a dead and inert mass of meaningless creed of dogma and ritualism to the average Hindu an effulgent ball or orb of fire instinct with life and dynamic vigour. Possessed of vast intellectual and physical powers and gifted with fluency of speech and readiness of repartee in debate, Swami Dayanand spent a major part of his life in social and religious controversies and in espousing the cause of what he believed was the real core of Hindu religion and faith. If one may say so, he fought a courageous battle on two fronts; he stemmed the forces of aggressive and proselytizing alien religions; at the same time, he waged war with the bigoted exponents of Hindu orthodoxy in trying to exorcise what he thought were unnecessary and unwholesome excrescences in the Hindu faith. This double fight gave him no rest practically and he died a martyr so to say to the cause he held sacred, namely the re-establishment of the Aryan religion in its pristine purity, as he conceived it.

The Arya Samaj is the living embodiment of his great endeavours. The institution he thus founded has achieved a great deal in the task of the renovation and regeneration of Hindu Society and the Arya Samajists as a class may well be proud of the part they have played in the building up of Modern India. It appears to me that at this juncture especially in our country's affairs, we want fearless reformers and prophets of the type of Swami Dayanand to keep the Hindu fold intact and proclaim the greatness as well as the uniqueness

of the Hindu religion. Forces of evil and disruption are rampant everywhere; a dull apathy if not a sense of despair has settled down on most of us. This stupor and listlessness has to be cast off. There is no doubt a sense of smug self-satisfaction in thinking th t Hinduism has been the most tolerant of all faiths and has never been a proselytizing religion. But this satisfaction cannot hold good for ever and is not healthy either, When times are rapidly changing before our very eyes, when politics ane unstabl , as they are bound to be for many more decades to come, and when power is passing into the hands of surging democracy which in its turn divides itself, most unfortunately but none-the-less truly, into groups professing different religious faiths and creeds, I venture to express the view that there must be a re-orientation of Hindu religion in its outlook towards worldly affairs and that it should become potent and dynamic instead of being the lofty philosophy of a few intellectuals or the superstitious creed of the masses. If a tree is to flourish, it requires pruning from time to time. Hinduism has had m ny such pruners in its long history. Swami Dayanand was one of them. The tree that he has left behind has been green and growing but the necessity for the pruner's knife appears to have come. We want many men of the stamp of Swami Dayanand now and I feell pretty sure that we will have them in required measure not only from the Arya Samajists but from other sections of the Hindu faith, provided we seek them earnestly and prepare the way for their work. Religion may, as held in Russia, serve as a dope for the people, but at the same time it is a great unifying factor. We in India need such solidarity now. Before we can aspire to world unity, we must have unity at least among our-selves. Have we got it ? and if not, must we not strive for it ? Social and religious reformers, gifted with true insight and vision and fired with zeal and dauntless courage can with benediction and not curses on their lips, bring about such unity. Let us then welcome such men when we see them; let us help them each in our own little way; and may institutions like the Arya Samaj serve as potent influences in moulding a new and great destiny for us in this land !

सार्वदेशिक सभा का आदेश
समस्त आर्यसमाजों के प्रति

देश और समाज की वर्तमान परिस्थिति को ध्यान में रखकर सब आर्यसमाजों का ध्यान इस आवश्यक विषय की ओर आकर्षित किया जाता है कि वे सम्प्रति शुद्धि को अपनी समस्त शक्ति का केन्द्र बिन्दु बनाएं। जो व्यक्ति किसी भी निर्बलता व प्रलोभनादि वश विधर्मी बन गए थे उन्हें शीघ्र शुद्धि द्वारा प्रेम और उत्साह पूर्वक पुनः अपने में मिलाने में विशेष रूप से तत्पर हों ताकि वैदिक धर्म और आर्य संस्कृति की रक्षा तथा विस्तार हो। इस विषयक आन्दोलन की प्रगति को खूब बढ़ाते हुए यह ध्यान रक्खा जाए कि खण्डनात्मक साधनों का प्रयोग न करके प्रेम, सेवा, उत्साह और शान्ति से बिना आवश्यक कोलाहल या विज्ञापनबाजी के इस कार्य को नगरों व ग्रामों में किया जाए जिससे किसी प्रकार की अशान्ति की शिकायत करने का किसी निष्पक्ष व्यक्ति को अवसर न मिले। शुद्धि और दलितोद्धार आन्दोलन की प्रगति को तीव्र करने के लिए जातपात और छूआछूत के कृत्रिम भेदों को दूर करना और शुद्ध व्यक्तियों को प्रेमपूर्वक बन्धुवत् अपने साथ मिलाना अत्यावश्यक है। इस दिशा में आर्यसमाजें जो कुछ कर रही हों उसकी सूचना सार्वदेशिक सभा कार्यालय देहली में अवश्य पहुंचाती रहें ताकि सभा आवश्यक निर्देश दे सके।

इन्द्र विद्यावाचस्पति
उपप्रधान सभा

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
स० मन्त्री सभा

—*—

आर्य कुमार जगत्

आर्य कुमार परिषद् की अन्तरङ्ग सभा के कई महत्वपूर्ण निश्चय—

भारतीय आर्य कुमार परिषद् की अन्तरङ्ग सभा का द्वितीय अधिवेशन ६ नवम्बर को मध्याह्न १ बजे परिषत् के प्रधान पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति के सभापतित्व में आर्य समाज मण्डी मुरादाबाद में हुआ जिसमें अनेक महत्त्व पूर्ण निश्चय परिषत् के भावी कार्य क्रमादि के विषय में किये गये, जिन्हें अगले अङ्क में प्रकाशित किया जायेगा। आर्य कुमार डायरी दिसम्बर के मध्य से पूर्व २ प्रकाशित हो जायेगी जिसका मूल्य १) होगा। इसलिये आर्य कुमार सभायें तथा समस्त आर्य कुमारों के हितैषी आवश्यक प्रतियों की संख्या से आर्य कुमार-परिषत् कार्यालय मुरादाबाद को अभी से सूचित करदें। परिषत् ने सांस्कृतिक केन्द्र स्थापना की अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण योजना पूर्ण विचार विमर्श के अनन्तर स्वीकृत की जिसको सफल बनाने का यत्न करना प्रत्येक आर्य संस्कृति प्रेमी का कर्तव्य है।

राम मोहन सिद्धान्त शास्त्री
प्रधान मन्त्री आर्य कुमार परिषत्।

वैदिक स्वाध्याय के ग्रन्थ

वैदिक विनय तीन भागों में

गुरुकुल कांगड़ी के पूर्वाचार्य स्वामी अभयदेव जी की यह अमर कृति है। इस में प्रति दिन के लिए उपयोगी वैदिक प्रार्थनाओं की सुन्दर, सरल भाषा में व्याख्या की गई है।

सेट का दाम ४॥)

वैदिक ब्रह्मचर्य गीत

वेद के ब्रह्मचर्य सूक्त की स्वामी अभयदेव जी द्वारा सुन्दर व्याख्या। इसे पढ़ कर आप ब्रह्मचर्य के महत्त्व को समझेंगे।

मूल्य २)

ब्राह्मण की गौ

स्वामी जी ने इस पुस्तक में वेद के ब्रह्मगवी सूक्त की व्याख्या की है। महात्मा गांधी जी ने इस पुस्तक को स्वाध्याय के लिये सर्वोत्तम बतलाया है। मूल्य ॥)

वरुण की नौका मूल्य १)

गुरुकुल के वर्तमान आचार्य पण्डित प्रियव्रत जी आर्यसमाज में वेदों के माने हुए विद्वान् हैं। उन्होंने इस पुस्तक में वरुण सूक्त की जो व्याख्या की है उसे पढ़ कर आपको वैदिक स्वाध्याय के प्रति रुचि पैदा होगी।

बृहत्तर भारत मूल्य ७)

हिन्दू जाति के स्वर्गीय नेता श्री चन्द्रगुप्त वेदालङ्कार ने इस पुस्तक में पूर्वी एशिया में फैले भारतीय राज्य व संस्कृति का विस्तृत इतिहास दिया है। इतिहास प्रेमियों को यह पुस्तक अवश्य अपने पास रखनी चाहिए।

भारतवर्ष का इतिहास (तीन भागों में

आचार्य रामदेव जी ने बड़ी शोध के बाद यह इतिहास लिखा है। इसे अवश्य पढ़िये। मूल्य ७)

मैनेजर पुस्तकभण्डार गुरुकुल कांगड़ी (सहारनपुर)

साहित्य समीक्षा

(समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तकादि की दो प्रतियां भेजनी चाहियें)

जीवन और मृत्यु—लेखिका श्री कुमारी भारती जी। प्रकाशक—गीता मंदिर आगरा मूल्य ।)

इस ४८ पृष्ठ की पुस्तिका में 'जीवन और मृत्यु' आध्यात्मिक भूख, जागरूक रहिये, आगे बढ़ने का रहस्य, प्रशंसा से बचो, भूल को स्वीकार करो, कृतज्ञ बनो, विश्वास करो, अपने आप को हीन न समझो अपने आप को देखो "इन शीर्षकों से छोटे २ निबन्ध हैं जो बड़े उत्तम विचारों से पूर्ण हैं।

ईश्वर से मिलने का समय निश्चित करो उस समय प्रभु मिलन की तुम में आतुरता होनी चाहिये। प्रभु तो सदा तुम्हारे संग ही है। ऐसा करने से तुम में भूख जागेगी।" (पृ० ७)

"यदि तुम आगे बढ़ना चाहते हो तो परिश्रमी और अध्यवसायी बनो, थोड़ा सा इस मार्ग पर चल कर देखो" (पृ० १७)

"अपनी भूल को स्वीकार करना बड़प्पन की निशानी है। ऐसा करने में किसी प्रकार की हीनता नहीं।" (पृ० २१)

"विश्वास करो कि तुम जगत् में महान् कार्य के लिए आए हो, तुम्हारे भीतर महान् आत्मा का निवास है।" तुम ईश्वर का निमित्त बन कर प्रभु को आत्म समर्पण करदो, समर्पण करने से तुम्हें बड़ी शक्ति मिलेगी।" (पृ० ३२)

"श्रद्धा के बिना तुम्हारा जीवन वैसे ही नीरस होगा जैसे पानी के बिना नदी, और सुगन्ध के बिना पुष्प, तुम्हें श्रद्धा माता की गोद में अनिर्वचनीय आनन्द मिलेगा।" (पृ० ३६)

इत्यादि बड़े २ उच्च विचार इस छोटी सी पुस्तिका में पाये जाते हैं जो गम्भीर मनन और अनुभव का परिणाम प्रतीत होते हैं। केवल एक वाक्य हमें भ्रमजनक और आक्षेप योग्य प्रतीत हुआ जो प्रथम पृष्ठ में है कि 'जब मनुष्य अनेक जन्मों का एक ही शरीर में ज्ञान प्राप्त कर लेता है तब वह आत्मा से परमात्मा बन जाता है।' लेखिका का तात्पर्य संभवतः साधारण आत्मा से परमात्मा बनने का होगा यदि सचमुच परमात्मा बनने से ही उनका तात्पर्य हो तो हम इससे सहमत नहीं हो सकते क्योंकि यह विचार वैदिक सिद्धान्त और तर्क के प्रतिकूल है। सम्पूर्णतया यह पुस्तक बड़ी उपयोगी और जीवन उच्च बनाने में सहायक और अतएव उपादेय है। धo देo।

प्रवासी—(अंग्रेजी हिन्दी मासिक पत्र)

सम्पादक श्री स्वामी भवानी दयाल जी संन्यासी 'प्रवासी भवन' आदर्श नगर अजमेर वार्षिक चन्दा भारत में १०) विदेशों में २० शि०।

श्री स्वामी दयाल जी प्रवासी भाइयों के एक मान्य नेता हैं जो आर्य जगत् में भी सुप्रसिद्ध हैं। उनके जीवन का अधिकांश दक्षिण अफ्रीका में प्रवासियों की सेवा करते हुए व्यतीत हुआ है। गत कुछ वर्षों से अत्यधिक अस्वस्थ होते

हुए भी उन्होंने अन्तरात्मा की प्रेरणा से इस प्रवासी नामक मासिक पत्र को विजय दशमी से निकालना शुरू किया है जिसका उद्देश्य उनके अपने शब्दों में "प्रवासी भारतीयों की धार्मिक; राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक और शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं पर प्रकाश डालना, संकट-विपद् में उनकी खोज खबर लेना और भारत में उनकी तरफ से सन्देशवाहक का काम करना है।"

प्रस्तुत अङ्क में शाहपुराधीश राजाधिराज श्री उम्मेद सिंह जी तथा अन्य अनेक सुप्रसिद्ध महानुभावों के संदेशों के अतिरिक्त अंग्रेजी भाग में 'श्री आश्विन चौधरी, डा० सत्यसुन्दरम् M. A. PH. D. श्री एस० एल० सिंह आदि के द० अफ्रीका के घेट्टो ऐक्ट इत्यादि विषयक विचार पूर्ण लेख हैं। हिन्दी में सन्देशों के अतिरिक्त बड़ी उत्तम सम्पादकीय टिप्पणियां हैं। हम अपने सहयोगी की पूर्ण सफलता चाहते तथा भगवान से प्रार्थना करते हैं कि इसके सुयोग्य सम्पादक श्री भवानी दयाल जी संन्यासी को वे शीघ्र पूर्ण स्वास्थ्य प्रदान करें। च० दे०

सम्पादकीय

माननीय गुप्तजी का अभिनन्दनीय कार्यः—

हम जैसे कि कई बार सम्पादकीय स्तम्भ तथा अन्य लेखों मे लिख चुके है, संस्कृत निष्ठ हिन्दी ही (जिसे स्वनाम धन्य महर्षि दयानन्द जी आर्यभाषा के सुन्दर नाम से पुकारते और जिस का समस्त भारत में वे प्रचार चाहते थे) भारत की राष्ट्र भाषा होने का वास्तविक दावा कर सकती है। हमारा विश्वास है कि भारतीय विधान परिषद् के सदस्य श्री सेठ गोविन्द दास जी के विधान परिषत् के आगामी अधिवेशन मे प्रस्तुत किए जाने वाले हिन्दी को राष्ट्रभाषा और देवनागरी लिपि को राष्ट्र लिपि घोषित करने विषयक प्रस्ताव का अवश्य समर्थन करके इसे स्वीकृत करा देंगे। इस विषय में संयुक्त प्रान्त की सरकार ने जो आदर्श स्थापित किया है वह अनुकरणीय है। देव नागरी लिपि मे लिखी हिन्दी ही विधान सभा (लेजिस्लेटिव ऐसम्बली) की भाषा होगी यह संयुक्तप्रान्तीय सरकार की घोषणा सर्वथा अभिनन्दनीय है किन्तु इससे समस्त हिन्दी प्रेमियों की उत्तरदायिता बढ़ जाती है और विद्वानों का कर्तव्य हो जाता है कि समस्त वैज्ञानिक तथा अन्य उपयोगी शब्दों का उत्तम संग्रह हिन्दी में प्रकाशित करावें। सब से प्रथम आवश्यकता इस समय विधान सभाओं में प्रायः प्रयोग में आने वाले अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी पर्यायों की है। सार्वदेशिक सभा के भू० पू० प्रधान तथा मध्य प्रान्त विधान सभा के अध्यक्ष माननीय श्रीघनश्यामसिंह जी गुप्त ने इस विषयक उपयुक्त शब्द माला का प्रथम भाग प्रकाशित करके एक अत्यन्त अभिनन्दनीय कार्य किया है। आपने संस्कृत भाषा का आश्रय लेकर प्रचलित अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी पर्याय इस १२ पृष्ठों की पुस्तक में दिये हैं। उदाहरणार्थ "लेजिस्लेटिव ऐसम्बली" के लिए विधान सभा (धारा सभा नहीं क्योंकि धारा विधान के एक अंश को कहते हैं) Constituent Assembly के लिए संविधान सभा, कौंसिल के लिये परिषत्, पार्लिमेंट के लिये संसत्, म्युनिसिपल कमेटी के लिये नगर समिति, पार्लियामेन्टरी सेक्रटरी के लिये संसत् सचिव, एजेन्डा के लिये कार्यावली, गैलरी के लिये 'वीथी' गवर्नर के लिये 'प्रान्तपति' सुपरिटेन्डेन्ट के लिये 'अधीक्षक' क्लर्क के लिये 'लिपिक' सेलेक्ट कमेटी के लिये 'प्रवर समिति' लौ के लिये 'विधि', पोलीस डिपार्टमेन्ट के लिये 'आरक्षी विभाग' 'आर्डिनेन्स' के लिये अध्यादेश इत्यादि शब्दों का प्रयोग किया गया है। इन में से किसी २ शब्द के चुनाव के विषय में कुछ मतभेद सम्भव है किन्तु जैसे कि भूमिका में मान्य लेखक महोदय ने बताया है बड़े गम्भीर

विचार के बाद उन शब्दों को चुना गया है अतः उन्हें सहसा परिवर्तित व निराकृत नहीं किया जा सकता। संस्कृत से ही ऐसे शब्दों को लेने का (न कि उर्दू से) मुख्य कारण उन्होंने ठीक ही बताया है कि ये शब्द प्रायः भारत की सब प्रान्तीय भाषाओं में सामान्य रूप से प्रचलित हो सकते हैं और सुगमता से समझे जा सकते हैं। हम माननीय गुप्त जी के इस प्रयत्न का हार्दिक अभिनन्दन करते हैं और आशा करते हैं कि वे इस पर्याय शब्दावली विषयक माला को सुयोग्य विद्वानों की सहायता से शीघ्र पूर्ण कर के एक तात्कालिक आवश्यकता की पूर्ति करेंगे। जैसे कि भूमिका में उन्होंने लिखा है विद्वानों द्वारा प्रेषित निर्देशों का वे स्वागत करेंगे।

मैसूर महाराज का अनुकरणीय कार्यः—

मैसूर महाराज तथा उन के दीवान महोदय ने जनता की न्याय सम्मत मांग का आदर करते हुए (जिस को प्रबल बनाने के लिए मैसूर रियासत कांग्रेस की ओर से सत्याग्रह जारी किया गया था) अन्तःकालीन मन्त्रिमण्डल की स्थापना करके जिस में प्रधानमन्त्री श्री चंगल रायरेड्डी (भू. पू. प्रधान मैसूर स्टेट कांग्रेस) विधान सचिव श्री के. टी. भाष्यम् श्री पी. सुब्बराम चेट्टी तथा अन्य सुयोग्य सार्वजनिक कार्यकर्ता तथा नेता मन्त्री हैं बड़ा प्रशंसनीय, अनुकरणीय और बुद्धिमत्तापूर्ण कार्य किया है। काश्मीर महाराज ने भी उस का अनुकरण करके न केवल अपने राज्य को नष्ट भ्रष्ट होने से बचा लिया है किन्तु अपनी रियासत को भारतीय संघ में प्रविष्ट करा के बड़ा बुद्धिमत्ता पूर्ण कार्य किया है। अन्य सब रियासतों को भी इसी दूरदर्शिता और बुद्धिमत्ता का परिचय देना चाहिए। निरङ्कुश एकाधिपत्य सर्वथा अवाञ्छनीय है और प्रजातन्त्र शासन ही प्रजा की सच्ची उन्नति के लिए विशेष सहायक हो सकता है अतः उत्तरदायित्व पूर्ण शासन की व्यवस्था सब देशीय राज्यों के शासकों को स्वयम् अविलम्ब कर देनी चाहिये।

विधान परिषद् के सदस्यों का कर्तव्यः—

भारतीय विधान परिषत् के आगामी अधिवेशन में श्रीयुत बाल कृष्णजी शर्मा 'नवीन' आदि हिन्दी को राष्ट्रभाषा और देवनागरी को राष्ट्र-लिपि घोषित करने तथा गोवध निषेध विषयक प्रस्ताव प्रस्तुत करेंगे यह जान कर हमें बड़ी प्रसन्नता हुई है। विधान परिषत् के समस्त सदस्यों से हमारा अनुरोध है कि वे इन दोनों न्याय संगत प्रस्तावों का हार्दिक समर्थन करके भारतीय जनता के धन्यवाद और अक्षय्य कीर्ति के भागी बनें। यह खेद की बात है कि महात्मा गान्धी जी अब भी हिन्दुस्तानी व दोनों लिपियों (देवनागरी और उर्दू) को राष्ट्रीय घोषित करने विषयक रट लगाते चले जाते हैं किन्तु उनका इस विषयक 'आग्रह' (हम इसे सत्याग्रह का नाम देने के लिये सर्वथा उद्यत नहीं हैं क्योंकि हमारे विचारानुसार यह यथार्थता तथा न्याय पर आश्रित नहीं है) इस बात से सूचित हो जाता है कि 'रेहाना बहिन तायब जी' के इस कथन का भी कि "नागरी लिपि अपेक्षया अधिक पूर्ण है जब कि उर्दू लिपि अपूर्ण और कठिन है। संस्कृत शब्दों का उर्दू में लिखना असम्भव प्राय

है" महात्मा जी ६ नवम्बर के 'हरिजन' मे खण्डन करने का निष्फल प्रयास करते हुए लिखते हैं कि रैहाना बहिन के लिये इस आरोप को सिद्ध करना बड़ा कठिन है। मेरे पास उर्दू में छपी हुई गीता विद्यमान है। यह सब जानते है कि उर्दू लिपि मे संस्कृत शब्दों को ठीक२ लिखना सर्वथा असम्भव है। महात्मा जी ने स्वयं स्वीकार किया है कि रैहाना बहिन उर्दू की बड़ी विदुषी है और यरवदा जेल मे उन्होंने ही महात्मा जी को उर्दू सिखाई थी। वे हिन्दी भी अच्छी जानती है ऐसी अवस्था मे उनके (सब निष्पक्ष विद्वानो द्वारा प्रमाणित) उर्दू लिपि विषयक कथन को अवश्य प्रामाणिक मानना चाहिये पर महात्मा जी जो अभी तक उर्दू का बिलकुल सामान्य ज्ञान ही रखते हैं उस मानने को तैयार नहीं इस से बढ़ कर आश्चर्य की बात क्या हो सकती है ? हम इस विषय मे रैहाना बहिन के विचार से सहमत हैं कि नागरी लिपि को ही राष्ट्रलिपि घोषित किया जाए किन्तु उन के तथा श्री शंकरराव देव इत्यादि के इस विचार से सहमत नहीं कि हिन्दुस्तानी को राष्ट्रभाषा घोषित किया जाए क्योंकि हिन्दुस्तानी एक कल्पित, घड़ी जाती हुई भाषा है जिसका कोई अस्तित्व नहीं और भारत की अन्य प्रान्तीय भाषाओं तथा प्राचीन संस्कृति के साथ जिसका कोई सम्बन्ध नहीं। अतः महात्माजी तथा अन्यों के व्यक्तित्व की चिन्ता न करते हुए विधान परिषत् को संस्कृत निष्ठ हिन्दी को (जिस को समझने वालों की संख्या भारत सङ्घ मे अब ६० प्रतिशतक के लगभग होगी) राष्ट्रभाषा और देवनागरी लिपि को राष्ट्र लिपि घोषित करने मे तनिक भी संकोच न चाहिये। यह दुःख की बात है कि महात्मा जी इस भाषा विषयक प्रश्न को साम्प्रदायिक दृष्टि कोण से देखकर भ्रम जनक वक्तव्य देते चले आते हैं। युक्त प्रान्त सरकार के प्रधान मन्त्री माननीय श्री गोविन्द वल्लभ पन्त तथा अर्थ सचिव श्री युत कृष्णदत्त जी पालीवाल आदि ने इस विषय मे जिस दृढ़ता का परिचय दिया है वह प्रशंसनीय और अनुकरणीय है।

गोवध को विधान द्वारा बन्द कराने के प्रश्न को भी व्यर्थ में धार्मिक व साम्प्रदायिक रूप देकर महात्मा जी उसका विरोध करते हुए कहते है कि केवल मुसलमानो को मित्र बनाने से ही गोहत्या बन्द हो सकती है। हम जैसे कि कई बार स्पष्ट कर चुके हैं गोहत्या बन्द कराने का प्रश्न केवल धार्मिक नहीं अपितु साम्पत्तिक है। इसी दृष्टि से प्रयाग विश्व विद्यालय के डॉ० सईद मुहम्मद एम. ए. पी. एच. डी. ने Stop the Cow slaughter शीर्षक उत्तम लेख में जो देहली के Indian News Chronicle के २४ अक्टूबर के अङ्क मे प्रकाशित हुआ है यह बताते हुए कि गाय की बलि देना इस्लाम का कोई अनिवार्य अङ्ग नहीं है तथा गोहत्या के कारण दूध घी आदि की दुर्लभता से सबको हानि पहुचती है गोवध को विधान (कानून) द्वारा बन्द कराने का प्रबल समर्थन किया है। यदि सब मुसलमानों की मैत्री पर ही इस गोहत्या को रोकने के प्रश्न को छोड़ दिया जायगा तो हमें भय है कि वर्तमान परिस्थिति मे "न नौ मन तेल न राधा नाचे" वाली कहावत चरितार्थ होगी। अतः विधान द्वारा गोवध निषेध कराने विषयक

प्रस्ताव का भी विधान परिषद् के सदस्यों को प्रबल समर्थन करना चाहिये तभी वे जनता के प्रति अपने कर्त्तव्य का सच्चा पालन कर सकेंगे।

माननीय सरदार पटेल का सिंह गर्जन:—

भारत सरकार के उपप्रधान मन्त्री माननीय सरदार वल्लभ भाई जी पटेल भारत माता के उन सुपुत्रों में से हैं जिनकी योग्यता, निर्भयता, साहस और कर्मवीरता पर सब देशवासी वस्तुतः गर्व कर सकते हैं और जिनके लिये प्रत्येक भारतीय (पीड़ित शरणार्थी भाई भी) विशेष श्रद्धा तथा आदर का भाव रखता है। काश्मीर और जूनागढ़ के विषय में जो सिंह गर्जन उन्होंने पिछले दिनों पाकिस्तान सरकार के प्रधान मन्त्री श्री लियाकत अली खां आदि के "असत्य, अपक्षन और शरारत भरे" वक्तव्यों की बड़ी आलोचना करते हुए किया है वह प्रशंसनीय है। काश्मीर के आक्रमणकारियों को पाकिस्तान सरकार को विशेष सहायता प्राप्त होती रही और जूनागढ़ के विषय में किस प्रकार शरारत की गई इत्यादि बातों पर निर्भयता से प्रकाश डालते हुए माननीय पटेल ने हैदराबाद के बारे में हस्तक्षेप न करने की जो चेतावनी पाकिस्तान सरकार के अधिकारियों को दी है वह सर्वथा समयोचित है। गतमास की सम्पादकीय टिप्पणियों में 'उग्रता से शासन की आवश्यकता' पर लिखते हुए हमने कहा था कि 'जूनागढ़ और हैदराबाद इत्यादि के मामले में दृढ़ता दिखाने से भारत सरकार को अवश्य सफलता मिलेगी।" जूनागढ़ के विषय में भारत सरकार को शानदार विजय प्राप्त हुई है और हमें निश्चय है कि हैदराबाद को भी अन्ततः प्रबल जनमत के आगे झुककर भारत संघ में सम्मिलित होना पड़ेगा। माननीय सरदार पटेल जिस दृढ़ता का परिचय दे रहे हैं वह नितान्त अभिनन्दनीय है। पाकिस्तानी सरकार की निन्दनीय कार्यवाहियों के क्रियात्मक प्रतीकार के लिये माननीय पटेल जैसे अध्यवसायी पुरुष सिंहों की ही आवश्यकता है।

बिहार सरकार का प्रशंसनीय प्रस्ताव:—

बिहार की सरकार ने नवयुवकों में तमाखू के बीड़ी, सिगरेट इत्यादि के रूप में सेवन की अत्यन्त हानिकारक प्रवृत्ति को बढ़ते हुए देख कर उसके निवारणार्थ एक बिल बिहार परिषत् (कौन्सिल) में प्रस्तुत करने का निश्चय किया है जिसके अनुसार १६ वर्ष से कम आयु के नवयुवकों के तमाखू के किसी भी रूप में सेवन पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाएगा। पोलिस अधिकारियों को अधिकार होगा कि वे बीड़ी सिगरेट जैसी किसी भी वस्तु को नवयुवकों से छीन सकें तथा इस विधान को क्रियात्मक रूप देने के लिये विशेष अधिकारी नियुक्त किये जाएंगे।

हम इस प्रस्ताव को अत्यन्त उपयोगी समझते हुए इसका समर्थन करते हैं किन्तु जो १६ वर्ष की आयु इसमें रक्खी गई है उसे सर्वथा अपर्याप्त समझते हैं। यदि सभी पर इस विधान को लागू करना अभी कठिन हो तो कम से कम २१ वर्ष की आयु तक तो यह प्रतिबन्ध प्रारम्भ से ही रखना चाहिये। दुर्भाग्यवश विद्यालयों, महाविद्यालयों के बहुत से शिक्षक तथा अनेक राष्ट्रीय नेता भी सिगरेट आदि का सेवन करके एक बुरा उदाहरण जनता के सन्मुख रखते हैं जिससे युवक युवतियों में यह कुप्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। हमारा समस्त शिक्षकों तथा सामाजिक और राष्ट्रीय क्षेत्र के नेताओं से अनुरोध है कि वे इस प्रकार के दुर्व्यसनों से अपने को दूर रक्खें जिससे युवक युवतियां भी व्यसन रहित जीवन बनाकर उत्तम स्वास्थ्य लाभ करें।

अन्य प्रान्तीय सरकारों को भी ऐसा विधान बनाना चाहिये। ध० दे०

श्री पं० रघुनन्दन प्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिये लाला सेवाराम चावला द्वारा "चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस" श्रद्धानन्द बाजार, देहली में मुद्रित